# १ओंकार सतिगुर प्रसादि

*शान..................................................................................... ।*

*सतिनामु श्री वाहिगुरू, धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज।*

*डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।*
*डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे कर हथ॥ पृष्ठ - 256*

*फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।*
*नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ पृष्ठ - 289*

*सरगुन निरगुन निरंकार सुंन समाधी आपि।*
*आपन कीआ नानका आपे ही फिरि जापि॥ पृष्ठ - 290*

*धारना - खेले स्वामी मेरा, निरगुण हो के,*
*सरगुण हो के.-2,2*
*निरगुण हो के, सरगुण हो के,*
*निरगुण हो के, सरगुण हो के.- 2*
*खेले सुआमी मेरा,............2, 2*

*मै नाही प्रभ सभु किछु तेरा।*
*ईघै निरगुन ऊघै सरगुन केल करत बिचि सुआमी मेरा॥*
*नगर महि आपि बाहरि फुनि आपन प्रभ मेरे को सगल बसेरा।*
*आपे ही राजन आपे ही राइआ कह कह ठाकुरु कह कह चेरा॥*
*का कउ दुराउ का सिउ बल बंचा जह जह पेखउ तह तह नेरा।*
*साध मूरति गुरु भेटिओ नानक मिलि सागर बूंद नहीं अन हेरा॥*
*पृष्ठ - 827*

*अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखन हारा।*
*नाना रूपु धरे बहुरंगी सभ ते रहै निआरा॥ पृष्ठ - 537*

साध संगत जी! गर्ज कर बोलना जी, सतिनाम श्री वाहिगुरू। आप कारोबार से निवृत्त होकर गुरू दरबार में पहुँचे हो। जितने कदम कोई चलकर आता है, उतने यज्ञों का फल श्रद्धा सहित आने वाले को प्राप्त होता है। शरण में आने से दुर्भाग्य में लिखे लेख मिट जाते हैं तथा अच्छे कर्म लेख निखर आते हैं। चित्त एकाग्र करके हरि यश सुनता है तो -

*कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम। पृष्ठ - 546*

कई करोड़ों यज्ञों का फल, अकेले अकेले को प्राप्त होता है, जो चित्त को एकाग्र करके, हरि यश कानों से श्रवण करते हैं, बुद्धि से विचार करते हैं और विचार करके हृदय में धारण करते हैं। यह कोई मनोरंजन का कार्यक्रम नहीं होता, यह जो सत्संग है, यह पाठशाला है जैसे स्कूल होता है। इसमें

वाहिगुरू जी से मिलने का रास्ता बताया जाता है ताकि यह जीव, जो करोड़ों करोड़ों वर्षों से दुखी होता चला आ रहा है, किसी तरह से सुखी हो जाए क्योंकि दुख देख लो संसार में कितने हैं? पैसा हो पर साथ ही कोई दुख हो, यह धन दुख को दूर नहीं कर सकता। स्वास्थ्य ठीक न हो तो भी दुख, स्वास्थ्य हो पर और झंझट साथ हों, फिर भी आदमी दुखी रहता है। सभी पदार्थ भी यदि मनुष्य को प्राप्त हो जाएं, महाराज कहते हैं, फिर भी यह सुखी नहीं होता -

*सुन्दर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे।* *पृष्ठ - 707*

सुन्दर सेजें हों, सुखों की कोई गिनती न हो, पूरे रसों को भोग सकता हो-

*ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे।* *पृष्ठ - 707*

घर में चन्दन की सुगन्धियाँ आती हैं, कमरे सोने की पर्तें चढ़ाकर, हीरे जवाहारातों से Decorated (सजाये हुये) हों -

*मन इछे सुख माणदा किछु नाहि विसूरे।* *पृष्ठ - 707*

मन में जिस सुख की इच्छा हुई, उसी सुख को भोग लिया, कोई कमी न आये -

*सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे।* *पृष्ठ - 707*

यदि वाहिगुरू चित्त में नहीं आता, कहते हैं, विष्टा के कीड़े के समान है-

*बिनु हरि नाम न सांति होइ कितु बिधि मनु धीरे॥* *पृष्ठ - 707*

सो कलह तथा क्लेश का दुनियाँ में यदि कोई इलाज है, दुख का इलाज है यदि कोई, वह एक ही है कि यह जीव तत्व, परम तत्व के साथ weld हो जाये (पक्की तरह से जुड़ जाये) क्योंकि वाहिगुरू सत्त-चित्त-आनन्द है, प्यार है, निरा ही प्यार है और सत्य है, वह कभी भी बदलता नहीं, फिर वह चेतन है, पूर्ण जागरूकता है उसके अन्दर, पूरा आनन्द है उसके अन्दर। जिससे आगे आनन्द की डिग्री कोई होती ही नहीं, इतना आनन्द है। सो जब हमारा सम्पर्क contact उसके साथ हो जाता है, जुड़ जाता है उसके साथ फिर उसके गुण qualities जो खूबियाँ परमेश्वर में हैं, वह हमारे अन्दर आनी शुरू हो जायेंगी। यदि हम बुरी संगत से जुड़ जाते हैं, निराशाजनक लोगों के साथ हाय हाय करने वाले आदमियों के साथ संगत करते हैं, रोना आना शुरू हो जायेगा, frustrated निराश लोगों के साथ सम्पर्क हो जाए, हम भी निराश हो जायेंगे, खुशी नाम की वस्तु जाती रहेगी। हंसमुख लोगों के साथ मिलकर चेहरे की झुरियाँ मिटनी शुरू हो जायेंगी, माथे पर पड़े बल कम होने शुरू हो जायेंगे, नेत्रों की क्रूरता मिठास में बदल जायेगी, होंठो पर मुस्कराहट आ जायेगी क्योंकि संगत ऐसी मिल गई हमें।

इसी प्रकार यदि हम परमेश्वर की संगत में जुड़ जाएं तो हमारे सारे दुखों का खातमा हो जायेगा, कोई भी दुख नहीं रहता। महाराज कहते हैं उसकी संगत क्या है? उसके साथ अनवरत याद में जुड़ जाना। लगातारी याद, ऐसे नहीं कि कभी याद आ गया, कभी फिर भूल गया, फिर कभी याद आ गया, कभी फिर भूल गया। ऐसी अवस्था को नहीं कहा। महाराज कहते हैं -

***पूरन प्रेम प्रभाउ बिना पति सिउ किन स्त्री पदमापति पाए।***

***तव प्रसादि सवये - पातशाही 10***

यानी continuous love के साथ, प्यार के साथ, वह जो प्यार का मालिक है, वह प्राप्त हो जायेगा। फिर कभी भी हृदय में frustration (झुन्झलाहट) निराशा नहीं आती। सो सदा ही जो उसके साथ जुड़ा रहता है, उसके कलह तथा क्लेश खत्म हो जाते हैं।

पाँच क्लेश हैं संसार में जो बड़े बड़े चिन्तकों ने माने हैं। एक बड़ा क्लेश **अविद्या** है। अविद्या को अंग्रेज़ी में कहते हैं 'Ignorance'। वस्तु है और, पर दिखाई और कुछ देती है। जैसे रस्सी पड़ी है अन्धेरे में, साँप ही दिखाई देती रहती है। सारी रात डरता रहता है कि साँप पड़ा है दरवाज़े के सामने। फिर झरोखों में से देखता है, पर्दा दूर हटाकर देखता है कि साँप चला गया। कहता है दरवाजे के सामने ही है, अब नहीं निकलना बाहर, पता नहीं कब डंक मार दे - कितना बड़ा क्लेश मन में पड़ गया। शयन कक्ष (Bed room) के अन्दर रस्सी पड़ी है, चटकीली चान्दनी में देख ली, डरा हुआ है, चारपाई से नीचे पैर नहीं उतारता कि साँप देखा है वहाँ, क्योंकि Ignorance है। भ्रम पड़ गया है। सो यह सबसे बड़ा क्लेश है।

दूसरा होता है **अभिनिवेश**। अभिनिवेश क्लेश वह होता है कि मौत ने मुझे मार देना है। मेरा जो ज़िन्दगी का प्रोग्राम है, वह सारा नष्ट-भ्रष्ट कर देना है, उलट-पुलट कर देना है, कोठियाँ कहीं धरी रह जायेंगी, कारें कहीं जायेंगी, छोड़ कर मैंने चले जाना है पर बहुत बुरा काम है, मौत होनी ही नहीं चाहिये थी। मौत का भय पड़ा हुआ है। सो यह क्लेश मनुष्य के मन पर सदा ही हावी रहता है। जब भी यह सोचता है, उस समय सारा शरीर सिर से लेकर पैरों तक काँप उठता है। इसका क्या लाभ हुआ जब चले ही जाना है संसार से।

तीसरा क्लेश **अस्मिता** का होता है। कभी गुस्से हो गये, कभी खुश हो गये, कभी हंसने लग पड़े, कभी क्रोध में आ गये, कभी शान्त हो गये, कभी गर्म हो गये यानी समवृत्ति न रहना। देह, धन सम्बन्धी आदि में अहंकार, इसी क्लेश के कारण होता है।

चौथा क्लेश **राग** (Attachment) का है। परिवार की Attachment जायदाद की सलंग्नता अपनी प्रभुता की अटैचमैन्ट, अपने यौवन की सलंग्नता। यह अटैचमैन्ट पूरे दुखों का कारण हुआ करती है। इस क्लेश के कारण पदार्थों में प्रेम रहता है।

पाँचवा हुआ करता है **द्वैष भाव**। जो अच्छे नहीं लगते, उनके साथ विरोध होना, वैर हो जाना कि इसने मेरा नुकसान किया है।

इन पाँच कलेशों का कोई इलाज नहीं है इस संसार में। न तो बहुत अधिक धन प्राप्त करके इसका इलाज है, न पिकनिकों में जाने से। घूम आओ, देशों विदेशों में, अमेरिका घूम आओ, कैनेडा की सैर कर आओ, इसका इलाज नहीं होता। ये चीज़ें human mind (इन्सानी दिमाग) के अन्दर अपना स्थान बनाये बैठी हैं। स्थान बदल देने से इन्होंने नहीं बदलना। महाराज! फिर कौन सा तरीका है? महाराज कहते हैं एक और केवल एक ही विधि है। संसार में एक ही हस्ती है, जो सभी जगह परिपूर्ण है -

***जिमी जमान के बिखै समसत एक जोत है।***
***न घाट है न बाढ है न घाट बाढ होत है।*** ***अकाल उस्तति***

तेरे चौगिर्दे, तेरे अन्दर, तेरे बाहर, एक प्यार भरी हस्ती फैली हुई है। तुझे दिखाई नहीं देती है। वह दृष्टा रूप में है। तू भी दृष्टा रूप में है, तू देखने वाला है, दिखने वाला नहीं। आँख देखती है सभी चीज़ों को पर अपने आपको नहीं देख सकती। निगाह सब को देखती है पर निगाह ने आज तक अपने आप को नहीं देखा क्योंकि वह दृष्टा है।

इसी प्रकार वाहिगुरू दृष्टा है, मैं भी दृष्टा हूँ, तुम भी दृष्टा हो पर हम दृष्टिमान बने हुए हैं - Body (शरीर) को 'मैं' कहकर। उसके साथ जब हमारी वृत्ति जुड़ जाती है क्योंकि वह सत्त-चित्त-आनन्द है उस समय हमारे अन्दर वही प्रभाव पड़ना शुरू हो जाता है। जितना जितना हम उसके पास जायेंगे उतना ही उस सत्त-चित्त-आनन्द स्वरूप के गुण हमारे अन्दर आते चले जाएंगें। जैसे आग के निकट बैठने से सर्दी दूर हो जाती है और यदि हम वातानुकूलित (Air Conditioned) कमरे से निकलकर बाहर धूप में आ जाएं तो गर्मी महसूस होनी शुरू हो जाती है क्योंकि हम इस वातावरण में आ जाते हैं जहाँ वैसा ही प्रभाव हम पर पड़ता है।

सो जब हम वाहिगुरू के माहौल में जाते हैं, दुखों का अन्त हो जाता है। दुख चाहे रहते हैं उसी तरह पर उनकी परिभाषा बदल जाती है। मनुष्य को दुख महसूस नहीं होता। सो इस सब का इलाज जितना हमने विचार किया है, महाराज जी ने एक ही बताया है। प्यार से पढ़ो और याद रखना -

*धारना - सिमरि पिआरे नूं, सिमरउ सिमरि सिमरि सुख पावउ -2, 2*
*सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ,*
*सिमरउ सिमरि सिमरि सुख पावउ - 2*

*सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ।*
*कलि कलेस तन माहि मिटावउ।*
*सिमरउ जासु बिसुंभर एकै। नामु जपत अगनत अनेकै।*
*बेद पुरान सिम्रिति सुधाख्यर। कीने राम नाम इक आख्यर।*
*किनका एक जिसु जीअ बसावै। ता की महिमा गनी न आवै।*
*कांखी एकै दरद तुहारो। नानक उन संगि मोहि उधारो॥*

*पृष्ठ - 262*

'याद करो, याद करो, याद करो' तीन बार महाराज जी ने कहा। कितना जोर दिया 'सिमरउ' पर 'याद रखो, याद रखो, याद रखो'। क्या होगा याद रखने से? कहते हैं, सुखों की प्राप्ति हो जाएगी, जिसके लिये तू दिन रात जफर जलाता (भागा फिरता) है, देश विदेश में भागा फिरता हैं, बहुत परिश्रम करता है पर सुख आया भी है तेरे पास? एक सुख आता है, हज़ार दुख खड़े हो जाते हैं। यदि राई के समान सुख प्राप्त हो भी गया तो एक मन (भार) जितना दुख भी साथ लेकर आता है क्योंकि प्रकृति की प्राप्ति में, सभी महापुरुष कहते हैं कि सुख है ही नहीं। महाराज कहते हैं -

*ऐसा जगु देखिआ जूआरी। सभि सुख मागै नामु बिसारी॥*

*पृष्ठ - 222*

नाम की बात, जो नाम सुख देने वाला है, उसे भूल कर जुआरी बाजी दाव पर लगाकर हार गया लेकिन सुख न इसे प्राप्त हुआ। सुख तो सिमरण में है - ***'सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ। कलि कलेस तन माहि मिटावउ।'*** कलह और क्लेश जो मन में खलबली मचाये रहते हैं वे मिट जायेंगे। ***'सिमरउ जासु बिसुंभर एकै। नामु जपत अगनत अनेकै। बेद पुरान सिम्रिति सुधाखर।'***

जितने भी पवित्र शबद हैं - वेद, पुरान, स्मृतियाँ, क़ुरान शरीफ़ तौरेत, जम्बूर, अंजील और बाईबल तथा गुरू ग्रन्थ साहिब; सभी पवित्र शबद हैं। इन सभी का यदि कोई सार (तत्व) है, गुरू ग्रन्थ साहिब जी के 1430 पृष्ठों को यदि एक अक्षर में लाना है, चारों वेदों को यदि एक ही शब्द में बन्द करना है, चारों कतेबों को एक अक्षर में समावेश करना है, महाराज कहते हैं तू राम कह दे, अल्लाह कह दे, वाहिगुरू कह दे, एक अक्षर है। ये सभी इसी में समा जाएंगे। यह अक्षर नहीं है साध संगत जी! पहला तो इसका लक्षण है 'राम' का 'अल्लाह' का 'वाहिगुरू' का; एक

ही चीज़ है। फिर इसके पीछे शक्ति है, force (बल) है। इस बल के पीछे बल देने वाला है। तीनों चीज़ें इसके अन्दर हैं, एक अक्षर में। सो पहले अक्षर में आना पड़ता है। अक्षर के बाद फिर शक्ति महसूस होती है फिर वह जो ताकत है जिसे यह denote करती है, वह हरि है, वह इसके अन्दर से प्रकट हो जाती है। कहते हैं एक अक्षर में आ जायेगा सारा कुछ -

***एक अखरु हरि मनि बसत नानक होत निहाल॥*** *पृष्ठ - 261*

कहते हैं यदि मन में एक अक्षर बस जाये 'वाहिगुरू' 'राम' 'अल्लाह' फिर निहाल हो जायेगा। कहाँ ले गई हमें बाणी? एक अक्षर की तरफ ले कर जाती है। गुरू ग्रन्थ साहिब जी का सारा निचोड़ सिद्धान्त 'जपुजी साहिब' है। दस पाठ प्रतिदिन जपुजी साहिब के करने वाला महीने में श्री गुरू ग्रन्थ साहिब के पाठ का फल प्राप्त कर लेता है। जपुजी साहिब का निचोड़ है -

***१ओंकार सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु***
***अकाल मूरति अजूनी सैभं गुरप्रसादि॥ जपु॥***
***आदि सचु जुगादि सचु है भी सचु नानक होसी भी सचु॥***
*पृष्ठ - 1*

अब इसका सार तत्व क्या है? इसका सार है 'वाहिगुरू' अक्षर। अब वाहिगुरू अक्षर का भी तत्व (सार) आगे होना चाहिए, वह किसके अन्दर है? कहते हैं यह अनुभव में है? वहाँ अक्षर नहीं है, वहाँ वह है जिसे अक्षर denote कर रहा है (प्रकट कर रहा है) बता रहा है, जिसके बारे में संकेत कर रहा है। वह परम ज्योति है -

***पूरन जोत जगै घट मै तब खालसा ताहि निखालस जानै।***
***सवयै पातसाही 10***

सो ये सभी एक अक्षर में समा गये - ***'बेद पुरान सिंम्रिति सुधाखर। कीने राम नाम इक आखर। किनका एक जिसु जीअ बसावै।'*** यदि इसके अन्दर एक किनका भी बस जाये। पूरा तो असम्भव (Impossible) है। किसी किसी के हृदय में पूरा बसता है और वह फिर पूरा हो जाता है। अधूरा नहीं रहता यदि एक अक्षर भी एक कण के समान भी अन्दर बस जाये ***'ता की महिमा गनी न आवै'*** फिर उसकी महिमा को कोई नहीं कह सकता -

***साध की महिमा बेद न जानहि। जेता सुनहि तेता बखिआनहि।***
*पृष्ठ - 272*

फिर उसकी महिमा को कोई नहीं जान सकता 'कांखी ऐकै दरस तुहारो।' लालसा लगी हो जिसके हृदय में कि मुझे दर्शन हो जाएं उस परिपूर्ण

परमेश्वर का। यदि उसकी संगत मिल जाये लालसा वालों की फिर वह संगत क्या प्रभाव डालती है? महाराज कहते हैं 'नानक उन संगि मोहि उधारो।' उद्धार हो जाता है मेरा, हमारा। उनकी संगत मिल जाये जो दर्शनों के लिये तड़पते फिरते हैं, जिनके अन्दर हर समय एक ही लगन है -

*सीने खिच्च जिन्हां ने खाधी, उह कर आराम नहीं बहिंदे।*
*निहुं वाले नैणां की नींदर, उह दिने रात पए वहिंदे।*
*इको लगन लग्गी लई जांदी, है टोर अनंत उन्हां दी।*
*वसलों उरे मुकाम न कोई सो चाल पए नित रहिंदे।*

*चशमा इछावल ते डूंघीआं शामां*
*(डा. भाई वीर सिंह जी)*

ऐसों की संगत मिल जाये उद्धार हो जाता है। सो इस सारी व्याख्या को यदि हम एक ही बात में कहें तो निचोड़ क्या हुआ? तो हम कहते हैं बन्दगी करना, नाम जपना।

गुरू दशमेश पिता महाराज आनन्दपुर साहिब में अनेक संगतों का उद्धार कर रहे थे। माता जीतो जी बचपन से ही बहुत सूझ बूझ वाली थीं पहले ही पूर्ण आई थीं संसार में। बहुत महती हस्ती थीं और महान देन है उनकी हमें। गुरू महाराज जी ने अमृत तैयार किया। चिड़ियाँ ले गई एक एक बूँद, आपस में लड़ लड़ कर वहीं शहीद हो गईं। माता जी के पास बात पहुँची कि बहुत शक्तिशाली अमृत तैयार हो रहा है माता जी। कहा भी किसने? जिनके तिलक करने से गुरू गद्दी पर बैठा करते थे बाबा बूड्डा जी की सन्तान, बाबा राम कुइर जी। आप ब्रह्मज्ञानी थे, समझ गये कि इतनी शक्ति तो सम्भाली नहीं जायेगी। यह जो 'अजर' को 'जरना' है। नाम की ही शक्ति नहीं सम्भाली जाती, कोई बिरला है जो नाम शक्ति को सहन कर सकता है, सब लोग नहीं जर (सहन करना) सकते। सोचा कि साथ अमृत भी आ गया, इसकी शक्ति कैसे सहन की जाए क्योंकि मनुष्य में समर्था नहीं है। जितने वाट का बल्ब हो, उतने वाट की बिजली सहन कर सकता है। 240 वाट वाला 240 की, 220 वाट वाला 220 की, 440 वाट वाला 440 की। पर यदि 110000 वाट की बिजली लगा दें, सारे बल्ब फ्यूज़ हो जायेंगे, टयूबें भी फट जायेगी, सारी मोटरें भी जल जायेंगी क्योंकि उनमें शक्ति नहीं होती सहन करने की, जर सकने की।

माता जी! कुछ करो। इतना तेज़ सहन नहीं हो सकेगा किसी से भी, इतना करारा तेज़ भर दिया है। माता जी गये, पताशों की झोली भर कर ले गये। महाराज जी की ओर देखा। महाराज जी ने पताशे देखे और कहने लगे ''यह क्या?'' माता जी कहते है, ''महाराज! माँ का प्यार भी इसमें होना चाहिए, प्यार लेकर आई हूँ मैं।'' महाराज कहते ''तूने बहुत

अच्छा किया क्योंकि वीर रस के साथ शान्त रस भी होना चाहिए। वीर रस शान्ति के बिना बहुत भयानक बन जाया करता है। सो, बहुत अच्छा किया, तू शान्ति के लिए पताशे लेकर आई है।''

सो माता जी एक दिन कहने लगीं महाराज दसवें पातशाह को कि गुरू नानक देव जी महाराज जी की बाणी के अन्दर नाम की बड़ी महिमा है। नाम ही नाम है और इस बात का पता चलता है कि नाम एक परिपूर्ण शक्ति है जिसने सारे ब्रह्मांड को रचा हुआ है -

*नाम के धारे सगले जंत। नाम के धारे खंड ब्रहमंड।*
*नाम के धारे सिम्रिति बेद पुरान। नाम के धारे सुनन गिआन धिआन।*
*नाम के धारे आगास पाताल। नाम के धारे सगल आकार।*
*नाम के धारे पुरीआ सभ भवन। नाम कै संगि उधरे सुनि स्रवन।*
*करि किरपा जिसु आपनै नामि लाए।*
*नानक चउथे पद महि सो जनु गति पाए॥* *पृष्ठ - 284*

नाम के ही धारण किये हुये हैं सभी, नाम शक्ति ही सभी जगह कार्य कर रही है। हमारे अन्दर भी और हर एक में। उस नाम तक पहुँचने की कोई विधि तो कृपा करके बताओ और नाम मार्ग का कोई ज्ञान बख्शो क्योंकि पहले जितने भी मार्ग चल रहे हैं बहुत complicated (गुझंलदार) हैं। यदि हम हठ योग करते हैं, नेती धोती, निऊली कर्म इत्यादि कपाली आदि ये बड़े कठिन साधन हैं। साधन करने भी कठिन हैं। गृहस्थी आदमी नहीं कर सकता।

प्राणायाम करना शुरू कर दो आजकल। दस हज़ार आदमियों में से एक पार होगा पर 9999 आदमी पागल खाने में जाकर भर्ती हो जायेंगे या पागल हो जायेंगे क्योंकि मनुष्य के अन्दर ताकत नहीं है। न कोई फालतू समय है न proper guidance (उचित मार्ग दर्शन) है। गर्मी और खुश्की दिमाग में इतनी बढ़ जाती है कि उसे भला बुरा दिखाई देना ही बन्द हो जाता है। बाकी जो योग के अन्य साधन हैं ज्ञान आदि, उनमें से अकेला ज्ञान भी आदमी को खुश्क बना देता है, नास्तिक की तरह हो जाता है, कुछ भी उसके हृदय में नहीं रहता। एक जानने वाली चीज़ के बारे में जान लिया, केवल जानने से भी बात नहीं बनती। यदि आम के बारे में हमें पता चल गया कि बनारसी लंगड़े आम में इतनी calories (उष्मा ऊर्जा) होती है, इतना शूगर होता है, इतनी मात्रा में एसिड होता है, इस तरह यह पैदा होता है आदि आदि। यदि उसका विश्लेषण (Analysis) कर दिया जाये तो इसका अर्थ यह नहीं कि हमने आम चूस लिया। ज्ञान और practice (अभ्यास) में अन्तर होता है।

सो महाराज! जो ज्ञानवान थे, वे केवल ज्ञानी बन गये खोखले ज्ञानी। कृपा करके आप विस्तार पूर्वक बताओ कि किस तरह से जिज्ञासु परम सुख तक पहुँच सकता है? महाराज यह सुनकर कुछ गम्भीर हो गये और कहने लगे, देखो, यह छोटा सा विषय नहीं है। सारी जिन्दगी का एक बड़ा भारी संघर्ष है। इसे यदि मनुष्य ध्यान से करे तो आगे बढ़ सकता है अन्यथा ऊपर चढ़ेगा फिर नीचे गिरेगा, ऊपर चढ़ता है फिर नीचे आ गिरता है। 10 कदम आगे बढ़ा, 50 कदम पीछे फिसल गया। इसे पता नहीं रहता। वहीं का वहीं रहता है क्योंकि सावधान नहीं है, पूरी तरह से नाम के साथ जुड़ा नहीं है ऐसे ही अर्ध सुप्त सा चलता रहता है। जब तक सावधानी नहीं प्रयोग करता purpose (उद्देश्य) पूरी तरह समझ में नहीं आता और लगन नहीं लगती, दृढ़ता नहीं आती। महाराज कहते हैं इस रास्ते पर चलना बड़ा कठिन है।

बड़ी कठिनाई से मनुष्य जिस लाईन पर पैदा हुआ है माँ के पेट में से, वहीं पर भी यदि स्थिर रह जाये तो भी बहुत भाग्यशाली है। पर होता क्या है? हम ऐसी चीज़ें बो दिया करते हैं कि पैदा होने के साथ साथ बहुत भारी हो जाते हैं और जब भारी होकर जाते हैं फिर हम higher planets (उच्च ग्रहों) पर नहीं जा सकते। हम फिर पाताल में जाएगें lower planets (निचले ग्रहों में) में जिन्हें नर्क कहा जाता है। छोटी छोटी यौनियों में जाएगें क्योंकि हमने अपने आपको नर्क का अधिकारी बना लिया। कहते हैं, इस तरफ पूर्ण सावधानी हो, लगन हो, ज्ञान हो और फिर कदम-दर-कदम चले, तब बात बनती है, अन्यथा नहीं।

महाराज कहते हैं देखो! मोटी सी बात बताते हैं कि शेरनी के दूध में इतना तीक्ष्ण तेज़ाब होता है, पीतल के बर्तन में रख दो मोरियाँ (छिद्र) कर देता है, लोहे के बर्तन में रख दो सुराख कर देता है। ऐसा पात्र होना चाहिए जिसमें यह वस्तु रखी जाये। कहते हैं सोने के बर्तन में शेरनी का दूध रह सकता है; अन्यथा अन्य किसी बर्तन में नहीं टिकता। इसी प्रकार जो नाम है उसके लिए भी जरूरी है पात्र कैसा होना चाहिये? पहले बर्तन का पता हो हमें, कि कौन से बर्तन में नाम टिक सकता है? सो उसके बारे में महाराज जी फ़रमान करते हैं, जरा समझो -

***भांडा धोइ बैसि धूपु देवहु तउ दूधै कउ जावहु।*** ***पृष्ठ - 728***

यदि दूध लेने जाना हो कहीं खट्टा न हो जाये, फट न जाये, इसलिए बर्तन पहले धो लिया करते हैं। सियानी जो स्त्रियाँ हुआ करती थी, वह बर्तन में जो थोड़ी बहुत दुर्गन्ध हुआ करती थी उसे दूर करने के लिए बर्तनों को धूप में रख दिया करती थी। इसलिये कहते हैं कि बर्तन को पहले धूप में सुखाओ, फिर दूध लेने जाओ -

*दूधु करम फुनि सुरति समाइणु होइ निरास जमावहु।* *पृष्ठ - 728*

अब दूध की जगह कर्म बना लो शुभ कर्म और जो (जामन) खट्टा लगाना है दूध को, उसे सुरत बना लो और जिस बर्तन में जमाना है वह आशा निराशा से बाहर हो। उसमें कोई भी desire (वासना) न हो केवल एक लगन हो। कहते हैं कि ऐसा बर्तन जब तक इस हृदय का नहीं बनता, तब तक नाम स्थिर नहीं रहता। सो नाम के लिये कुछ रहतें (नियम) हैं साध संगत जी!

प्रारम्भिक रहतें तो हमें पाँच प्यारे बताते हैं जिन्हें हम समझते हैं कि वह ही पूरी हो गईं, बस अब हमने पार हो जाना है। महाराज जी की quotations (उद्धहरण) देते हैं हम रहतनामों में से -

***रहिणी रहै सोई सिख मेरा। ओह साहिब मैं उसका चेरा।***

***रहितनामा, भाई देसा सिंह जी***

यदि विचार की कसौटी पर कस कर देंखे, गुरू ग्रन्थ साहिब जी की बाणी के साथ इसकी तुलना करें तो महाराज जी कहते हैं -

***भेख दिखाए जगत कौ लोगन को बस कीन।***
***अंतकाल काती कटयो बास नरक मो लीन।*** ***बचितर नाटक***

कहते हैं, केवल भेष धारण करने से पार नहीं हो सकता; इतना ही हो गया कि स्कूल में entry (प्रवेश) लेकर तू कहता है कि मैं पास हो गया। पढ़ाई है - पहली क्लास है, दूसरी है, तीसरी है, मिडल है, हाई स्कूल है फिर एफ. ए. है, ग्रेजुएशन है, फिर एम. ए. की डिग्री है, फिर पी, एच. डी. है। स्कूल की वर्दी पहन कर तो तू वहाँ तक नहीं पहुँच सकता। यह ठीक है, insignia (छाप) है स्कूल की पहचान हो जाती है कि अमुक स्कूल का student (विद्यार्थी) है। वह विद्यार्थी यदि कोई गलती करे तो उस स्कूल की बदनामी हो जाया करती है और बदनामी के डर से वह ठीक रहता है। इसी प्रकार गुरू का होकर यदि कोई गलतियाँ करता है; बदनाम हो जाता है गुरू, नाराज़ हो जाता है, पता चल जाता है कि अमुक गुरू का है। पर यही सब कुछ नहीं होता।

सो महाराज कहते हैं, नाम की रहतों में इन पाँच रहतों को plus (जमा) करो, यहीं पर ही न भटक जाना। सबसे पहली जो रहत है, वह यह है कि वाहिगुरू पर पूर्ण विश्वास होना चाहिये। परमात्मा क्या चीज़ है? मेरा और उसका क्या सम्बन्ध है। मैं उसे मिलना क्यों चाहता हूँ। ये तीन बातें जब तक मन में नहीं बैठती, तब तक हमारे जितने भी कर्म हैं, वह लक्ष्यहीन ही चल रहे हैं।

Target (लक्ष्य) सामने है, राईफल भी है हाथ में, कन्धे के साथ

राईफल लगी हुई है और trigger (घोड़े) पर भी हाथ रखा हुआ है, कोहनी को धरती पर रख कर उसे hold (पकड़ा) भी किया हुआ है। देखता भी है सामने पर निशाना नहीं साध रहा। परिणाम क्या होगा? चाहे 100 गोलियाँ चला ले Target (गुलज़री) में नहीं लगती जाकर। यदि सावधान है, सांस रोका हुआ है और Target सामने है, पूरी एकाग्रता है शरीर में कोई हरकत नहीं है, सांस रोक लिया है, हरकत खत्म कर ली, फिर जब Trigger (घोड़ा) दबाता है तब Target में गोली फिर एकदम जाकर लगती है। गोली तो एक ही बहुत है सैकड़ों हज़ारों की ज़रूरत नहीं।

सो पहली बात तो यह है कि हमें Target (लक्ष्य) का पता होना चाहिये कि हमारे सामने कौन सा लक्ष्य है? वह जो वाहिगुरू है, उसे मिलने की हमें क्या ज़रूरत पड़ गई? दुनियाँ को हम जानते हैं, कोठियों की हमें ज़रूरत है, पैसे की हमें ज़रूरत है, अच्छे स्वास्थ्य्य की ज़रूरत है, बाल बच्चों की ज़रूरत है, कारोबार की ज़रूरत है, राजसी शक्ति की ज़रूरत है क्योंकि इन्हें हम जल्दी समझ जाते हैं। पर जिसकी वास्तव में ज़रूरत है उसकी ओर हमारा ध्यान ही नहीं। जब तक यह बात समझ में नहीं आती और वाहिगुरू के बारे में समझ नहीं आती, तब तक बात आगे नहीं बढ़ सकती और न ही विश्वास आयेगा। सो पहली बात है वाहिगुरू पर विश्वास करना, उसके बारे में समझना।

गुरू ग्रन्थ साहिब से पूछो कि सच्चे पातशाह महाराज! वाहिगुरू कहाँ रहता है? साँतवे आसमान में है या अर्शो-कुर्शो में रहता है? मनुष्य जैसा है या किसी और तरह का है? चार भुजाओं वाला है या केवल light (प्रकाश) ही है? क्योंकि सबके अपने अपने विचार हैं। मूसा जी को लाईट के रूप में दिखाई दिया, भगतों को चतुभुर्ज रूप में दिखाई दिया और किसी को क्षीर समुद्र में रहता दिखाई दिया। अनेक प्रकार के विचार हैं। आदमी भ्रमित (confuse) हो जाता है। जब दूसरों के विचार परमात्मा के बारे में सुनता है तो अपने पर शक हो जाता है। इस्लाम में साँतवें अर्श पर परमेश्वर नज़र आया था।

सो अब किस तरह का परमेश्वर है? जब हम जानते ही नहीं तो फिर हमारी उसके साथ लिव कैसे लगेगी? महाराज कहते हैं, देखो! वाहिगुरू कहीं दूर नहीं है, तुम्हारे अन्दर रहता है, साथ रहता है। इस शरीर के अन्दर भी रहता है, बाहर भी रहता है। उसे ढूँढने के लिए इधर उधर अपनी सुरत को मत घुमाओ, दूर दराज़ मत जाओ थकावट ही पल्ले पड़ेगी तुम्हारे -

*कबीर हज काबे हउ जाइ था आगै मिलिआ खुदाइ।*

*सांई मुझ सिउ लरि परिआ तुझै किन्हि फुरमाई गाइ॥*  *पृष्ठ -1375*

कबीर जी कहते हैं कि परमात्मा काबा में रहता है। लोग भी यही कहते थे और मैंने भी इस बात पर विश्वास कर लिया, तो मैंने कहा कि हज करके आना चाहिये। जब मैं चलने लगा तो मुझे परमात्मा मिल गया और मुझे झिड़क कर कहने लगा, ''ओ कबीर! तू किधर जा रहा है, कहाँ चला है?'' कहता है, ''मैं तो तेरे दर्शन करने चला हूँ?'' परमात्मा कहता है, ''इतना अनजान!'' कबीर जी कहते हैं कि परमात्मा ने मुझे बुरा भला कहना शुरू कर दिया ***'सांई मुझ सिउ लरि परिआ'*** मेरे साथ झगड़ने लगा। झगड़ते हुये आदमियों के बारे में हम जानते ही हैं, कितना बोलते हैं वे ***'तुझे किनि फुरमाई गाइ।'*** परमात्मा कहने लगा, ''तुझे किसने बताया है कि मैं अमुक स्थान पर रहता हूँ? कोई जगह है मेरी? मुझे ला-मुकाम कहते हैं। मैं कहीं नहीं रहता फिर मैं सभी जगह हूँ -

*काहे रे बन खोजन जाई।*

*सरब निवासी सदा अलेपा तोही संगि समाई॥*  *पृष्ठ - 684*

तेरे साथ रहता हूँ हर समय। ऐसे ही मत भागता फिर; इधर जाता है, उधर जाता है; वहाँ दर्शन होते हैं, यहाँ दर्शन होते हैं।'' अनजान बातें सुनकर तेरे मन में अनजान निश्चय धारणाएं पैदा हो जायेंगी। गुरू ग्रन्थ साहिब जी को छोड़ देगा। यह उजाला है, प्रकाश है, यदि शोर शराबा मच जाये, दौड़कर उजाले में आ जाओ, पूछ लो बापू से कि सच्चे पातशाह! ऐसा कहते हैं। उसी समय बोलकर बता देंगे। नहीं, ऐसे नहीं हैं। गाईड करते हैं हमें -

*पुहप मधि जिउ बासु बसतु है मुकर माहि जैसे छाई।*  *पृष्ठ - 684*

''जैसे शीशे में परछाई (प्रतिबिम्ब) रहता है प्यारे! ऐसे ही मैं तेरे अन्तसकरण में बैठा हूँ, जैसे सुगन्धि रहती है फूलों में ऐसे हूँ।''

*बाहरि भीतरि एको जानहु इहु गुर गिआनु बताई।*  *पृष्ठ - 684*

कहते हैं, गुरू ने बता दिया कि तेरे अन्दर भी रहता है, बाहर भी रहता है। कोई जगह ऐसी नहीं, जहाँ वह नहीं है। Space (अन्तरिक्ष आकाश) सारा परिपूर्ण है। हवा सभी जगह नहीं है Air (वायु) कुछ ऊँचाई तक ही है, उससे ऊपर हवा नहीं है। तीस मील के करीब पार कर जाओ, उससे ऊपर कोई हवा नहीं, सांस भी नहीं लिया जा सकता, न वहाँ आक्सीजन है, न हाइड्रोजन, न कोई कार्बन कुछ भी नहीं है। वहाँ ब्रह्मांण्ड है सारा और ब्रह्मांण्ड ही समाया हुआ है खरबों खरबों मीलों तक। जैसे यह समाया हुआ है सभी जगह ऐसे ही मैं समाया हुआ हूँ सभी जगह।''

जहाँ आकाश नहीं भी है, वाहिगुरू जी वहाँ स्वंयमेव हैं –

*जन नानक बिनु आपा चीनै मिटै न भ्रम की काई।* *पृष्ठ - 684*

''तू जब तक अपने अन्दर analyse (विश्लेषण) नहीं करता, खोज नहीं करता तब तक भ्रम का पड़ा हुआ पर्दा उतरेगा नहीं भाई।'' फिर तुम्हारा स्वभाव कैसा है, आकाश तो सुनसान है? परमेश्वर कहता है ''मैं सुनसान नहीं हूँ। मैं निरा प्यार हूँ। प्रेम में ही संसार को सम्भाल रहा हूँ।''

*जत्र तत्र दिसा विसा हुइ फैलिओ अनुराग॥* *जाप साहिब, पा: 10*

गुरू दशम पातशाह फरमाते हैं कि ऊपर, नीचे, इधर, उधर जहाँ तक तू सोच सकता है, वह प्यार का स्वरूप धारण करके फैला हुआ है – निरा ही प्यार। कहते हैं कि माँ का प्यार limit (सीमा बद्ध) है, स्त्री का प्यार limit में है, प्यार करने वालों का प्यार सीमित है, पर वाहिगुरू का प्यार unlimited (असीमित) है, वह कुछ नहीं माँगता। Appreciation (प्रशंसा) नहीं चाहता। मानो, चाहे न मानो, आस्तिक रहो, चाहे नास्तिक रहो, उसका तो प्यार का स्वभाव है, प्यार किये जाता है। हुक्म की उल्लघंना मत करो, मनुष्य दुखी नहीं होता, बीमार नहीं होता क्योंकि वह निरा प्यार का स्वरूप है। प्यार का स्वरूप बनकर फैला हुआ है। फिर आनन्द है, खुशियाँ ही खुशियाँ हैं, peace (शान्ति) है, prime peace (परमशान्ति) है जिसके आगे peace होती ही नहीं। अन्तिम सीमा है peace की जिसे आनन्द कहते हैं, full capacity (लबालब भरा हुआ)।

फिर वह 'सत' है, कभी बदलता नहीं। धरती बदलती है, सूरज बदलता है, चँन्द्रमा बदलता है, तारे बदलते हैं, हम पल-पल बदलते हैं। सारी प्रकृति पलक झपकने से कम समय में भी करोड़ों गुणा कम समय में बदलती चली जाती है। यह जो प्रकाश देखते हो तुम, यह एक सैकिण्ड में दो खरब लहरें बना देता है। कितना बदल गया, 'सत' तो न हुई; बदलती रहती हैं, लहरें बनती जाती हैं और साथ ही कम होती जाती हैं। यह धरती भी क्षण-क्षण में घटती रहती है। ऐसे ही शरीर घटता है-

*चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी।*
*छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी॥* *पृष्ठ - 726*

पलक झपकने के समय के साथ तू बदलता चला जा रहा है। सो यह परिवर्तनशील है पर वह नहीं बदलता। वह अपरिवर्तनीय है। उसे 'सत' कहते हैं।

फिर वह 'चित्त' है पूर्ण ज्ञान है, पूर्ण अनुभव है, सब कुछ जानता है। करोड़ों ब्रह्मण्डों को एक ही समय में जानता है। हम नहीं जानते, क्या हो रहा है? हमें नहीं मालूम कि हमारे पीछे पर्दे की ओट में क्या

हो रहा है? परमेश्वर सब कुछ जानता है। इसके साथ जब तक तुम्हारा मेल नहीं होता, हमारे अन्दर ध्यान नहीं आता कि इतनी महान जो हस्ती है शक्ति है फिर इसके साथ क्यों न मिलें? यह चीज़ सबसे आवश्यक होती है। दूसरा फिर इसे मिलाने वाला बिचौला जिसे गुरू कहते हैं उस पर पूरा विश्वास होना चाहिए। जब तक विश्वास नहीं आता, तब तक कोई बात नहीं बनती। ऐसा फ़रमान करते हैं –

*धारना – गुर की प्रतीत जी, जिसदे मन विच है भाई-2,2*
*जिस दे मन विच है भाई, जिसदे मन विच है भाई – 2*
*गुर की प्रतीत जी,.................-2, 2*

*जा कै मनि गुर की परतीति। तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति।*
*पृष्ठ – 283*

Condition (शर्त) रख दी, यदि यह बात है तो फिर यह ऐसे होगी। यह शर्त समझने का प्रयत्न करो कि गुरू पर प्रतीति हो। प्रतीति भरोसा, यकीन, faith, श्रद्धा – ये सभी एक ही शब्द के समानार्थक नाम हैं। यदि प्रतीति नहीं है, गुरू कुछ और कहता है हम कुछ और किये जाते हैं क्योंकि मन हमारा प्रतीति से खाली है। महाराज कहते हैं कि जिसका मन प्रतीति से खाली है, वह गला सड़ा हुआ होता है, उसमें क्या हरा होगा, कुछ नहीं। सो प्रतीति ज़रूरी होती है, भरोसा ज़रूरी होता है। भरोसा हो, तो बात बन जाती है। ऐसे ऐसे उदाहरण हैं कि बहुत सारे प्रेमियों को केवल प्रतीति के कारण ही सब कुछ प्राप्त हो गया। ऐसी बात है महापुरुष बताया करते हैं, उनके अनुभव हैं।

एक कोई राजा था। उसके मन में विचार आया कि मैंने राज्य कर लिया मेरी उम्र 50 वर्ष की हो गई। अब मैं भजन बन्दगी करके जीवन सफल करूँ। जिस काम को करने के लिये मैं आया हूँ संसार में, वह काम करूँ। यह बात समझना बहुत ज़रूरी है कि मैं क्या करने आया हूँ। यदि हम यह नहीं समझ सके तो हमें मनुष्य कौन कहेगा? महाराज कहते हैं देखने में तो लगता है मनुष्य है, पर है क्या? पशु। ऐसा फ़रमान है –

*धारणा – आवण नूं जग्ग विच आ गए ने – 2, 2*
*बिन बूझे पशु ढोर, आवण नूं जग्ग विच आ गए ने -2*

*आवन आए स्रिसटि महि बिनु बूझे पसु ढोर।*
*नानक गुरमुखि सो बुझै जा कै भाग मथोर॥ पृष्ठ – 251*

संसार में पैदा हो गया, मनुष्य का रूप धारण कर लिया, पढ़ लिख गया। पढ़ाई भी बहुत कर ली, पी. एच. डी. कर ली, specialist (विशेषज्ञ) बन गया। पैसा भी बेअन्त कमा लिया। पूरा आनन्द भोग रहा है। बाल

बच्चे भी हो गये, सब सुख प्राप्त कर लिये। पर महाराज कहते हैं कि यदि तूने यह बात न जानी कि तू क्यों संसार में आया है तो तू अभी मनुष्य के level (स्तर) पर नहीं आया। प्रेत स्तर पर ही है या भूत, पशु स्तर पर हैं ***'आवन आए स्रिसटि महि बिन बूझे पसु ढोर।'*** किसलिये आया हैं? कहते हैं, याद रख –

*भई प्रापति मानुख देहुरीआ। गोबिंदु मिलण की इह तेही बरीआ।*
*अवरि काज तेरै कितै न काम। मिलु साध संगति भजु केवल नाम।*
*सरंजामि लागु भवजल तरन कै। जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै॥*

*पृष्ठ - 12*

माया के साथ प्यार करते हुए तेरा जन्म रोज़ बीतता जा रहा है। तू इसके महातम को समझ प्यारे! तुझे मानस देही क्यों मिली है? तुझ में और जानवरों में क्या अन्तर है? हैं तो वे भी बहुत सुन्दर। तू कपड़े पहनता है, उन्हें परमात्मा ने कपड़े पहनाकर भेजा है। कितने सुन्दर हैं? न उनका रंग कभी fade (मद्धम) पड़ता है, जब मन करता है, जहाँ जीअ करता है, पंछी उड़ान भर कर भाग जाते हैं। तू तो कारें ढूढेंगा, हवाई जहाज़ के टिकट लेगा। इन बातों में तो तेरे से अच्छे हैं न –

*नरू मरै नरु कामि न आवै। पसू मरै दस काज सवारै॥*

*पृष्ठ - 870*

मरने के बाद तेरा शरीर तो कुछ भी काम नहीं आता। उनकी तो हड्डियाँ भी बिकती हैं। तेरी यदि विशेषता है तो केवल यही है कि तेरे अन्दर नाम धुन सुनती है। वह परमेश्वर तेरे अन्दर आवाज़ दे रहा है। उनके अन्दर भी दे रहा है पर उन्हें इस बात का अनुभव नहीं। तुझे एक अनुभव का फालतू organ (अंग) मिला हुआ है, Tool (यन्त्र) मिला है, जिसकी सहायता से तू परमात्मा को देख सकता है पर तू उस यन्त्र का प्रयोग नहीं कर रहा जिसे Third Eye (तृतीय नेत्र) कहते हैं, तीसरी आँख, तीसरा तिल कहते हैं, बिअन्न अखंड़ियाँ कहते हैं। तू यदि उसका प्रयोग नहीं कर रहा, तो तू उनसे श्रेष्ठ नहीं है। तू खाता पीता वैसे ही है जैसे पशु खाते पीते हैं। उनके भी बच्चे हैं, तेरे भी बच्चे होते हैं। वे यदि अच्छे हैं तेरे से तो पाल-पोस कर कहते हैं, जाओ कमाओ और खाओ। तू तो सारी जिन्दगी उनके साथ चिपटा रहता है फिर चिपटता भी ऐसा है कि जगह नहीं छोड़ता पर वे तो घौंसला छोड़ कर ऐसे जाते हैं फिर नहीं आते उस घौंसले में। तुझे तो घर (घौंसले) ने जकड़ लिया और जकड़ भी ऐसा लिया कि जब तू संसार से जायेगा, तेरी याद में से यह कोठी नहीं निकलेगी, प्रापर्टी नहीं निकलेगी और तुझे इसकी सजा मिलेगी–

*अन्त कालि जो मंदर सिमरै ऐसी चिंता महि जे मरै।*
*प्रेत जोनि वलि वलि अउतरै॥* *पृष्ठ - 526*

प्रेत बनकर ही रह जायेगा यहीं। यदि 'माया-माया' जिन्दगी में करते तेरा अन्तिम श्वांस खत्म हो गया तो माया ने पता है क्या करना है?

*अन्त कालि जो लछमी सिमरै ऐसी चिंता महि जे मरै।*
*सरप जोनि वलि वलि अउतरै॥* *पृष्ठ - 526*

साँप बना देगी माया।

इन बातों में से पशु तेरे से अच्छे हैं, पन्छी अच्छे हैं, उन्हें बन्धन कोई नहीं है। फिर उन्हें भरोसा है परमेश्वर पर कभी कोई चीज़ संग्रह नहीं करते। तू संग्रह करता है, दुनियाँ की दौलत को छिपाता है। इतना अनाज पैदा करता है, उसे संग्रह करके दूसरों को भूखा मारता है कि महंगा हो जायेगा तब बेचूँगा। पशुओं में तो ये आदतें नहीं वे अपना खाते हैं और चले जाते हैं। उन्हें तो सन्तों ने देखकर appreciate (प्रशंसा) की। उनकी प्रशंशा की अपने साथ तुलना करके बलिहारी जाते हैं। भाई तुम्हारे अन्दर यह हमारे जैसी लालसा नहीं है संग्रह करने की। तुम free (आज़ाद) हो लेकिन परमेश्वर तुम्हें फिर देता है, आज खाकर चले जाते हो, कल का पता नहीं कहाँ रोज़ी रोटी पड़ी मिलेगी क्योंकि वह राज़क (दाता) है और हम बलिहारी जाते हैं तुम्हारे पर। इस प्रकार फ़रमान करते हैं -

*धारना - कंकर चुगदे, थलां दे विच वसदे, कंकर चुगदे,*
*कंकर चुगदे, थलां दे विच वसदे,*
*रब्ब दी न आस छडदे, पंछी, पंछी*
*रब्ब दी न आस छडदे, कंकर चुगदे - 2*
*कंकर चुगदे थलां दे विच वसदे, कंकर चुगदे - 2, 2*

*फरीदा हउ बलिहारी तिन्ह पंखीआ जंगलि जिंन्हा वासु।*
*ककरु चुगनि थलि वसनि रब न छोडनि पासु।* *पृष्ठ - 1383*

'बलिहार बलिहार' उन पन्छियों पर जो जंगलों में रहते हैं। क्या चुगते हैं? कहते हैं कंकर बगैरा चुगकर पेट भरते हैं और थल (धरती) पर रहते हैं और परमात्मा पर भरोसा नहीं छोड़ते। मनुष्य को तो परमात्मा पर भरोसा ही नहीं। यह तो कहता है यह भी इकट्ठा कर लूँ, वह भी जमा कर लूँ। यदि बैंक में पचास हज़ार रूपया हो गया तो कहता है, थोड़ा सा ही है, लाख तो होना चाहिए। जब लाख हो गया, कहता है कम है, दस लाख होना चाहिए। फिर कहता है दस लाख तो कुछ भी नहीं है, करोड़ चाहिए। यह तो पन्छी को ज्ञान है सूझ है कि मैंने तो यहाँ से उड़ जाना है। साथ तो मेरे कुछ भी नहीं जाना पर मनुष्य को इतनी समझ नहीं है।

फिर महाराज प्रश्न करते हैं कि यह पशु हुआ या मनुष्य? कहते हैं आप फैसला कर ले। यह मनुष्य तभी है यदि यह नाम की बात समझ ले अन्यथा पशुओं से भी बदतर है। पशु किसी का नुक्सान तो नहीं करते। यह इन्सान अपनी जाति को ही मारने पर तुला हुआ है। मनुष्य की एक ही जात है -

***मानस की जाति, सबै एकै पहचानबो।*** ***अकाल उस्तति***

बाँट लिया इसने अपने आपको। ये कबूतर कभी नहीं बांटते कि हम चण्डीगढ़ के हैं, हम मोहाली के हैं। पर एक मनुष्य ही है, जो कहता है कि मैं पंजाब का हूँ, यह पाकिस्तान का है, वह अफगानिस्तान का है, यह इंगलैंड का, यह अमेरिका का। फिर उससे भी आगे बांट लेते हैं जी मैं सिख हूँ, वह हिन्दू है, यह मुसलमान है, यह ईसाई है। महाराज तो कहे जाते हैं कि तुम ऐसा क्यों समझते हो। ***'मानस की जाति, सबै एकै पहचानबो।'*** दशमेश पिता आवाज़ें दिये जा रहे हैं कि एक ही है सभी जगह, दो क्यों बनाते हो? कहते हैं इन बातों में पन्छी तेरे से अच्छे हैं भाई, बुरे नहीं। उन्हें भरोसा रहता है परमात्मा पर, तेरे मन में तो भरोसा ही नहीं है।

सो इस प्रकार मनुष्य को यह सूझ नहीं आती कि मैं संसार में क्या करने आया हूँ? बार बार बाणी समझाती है कि हे प्रेमी!

***गुर सेवा ते भगति कमाई। तब इह मानस देही पाई।*** *पृष्ठ - 1159*

कहता है, जी यह तो मुझे याद है, बहुत बार सुना है मैंने। कहते हैं याद तो है, अन्दर भी गया है कि बाहर बाहर से ही याद है? कहता है, जब आप पढ़ते हो फिर हमें याद आ जाता है। धारना भी हमें याद आ जाती है, जो ऐसे बोली थी -

***धारना - जिहड़ी देही नूं लोचदे देवते, जिहड़ी देही नूं,***
***जिहड़ी देही नूं लोचदे देवते, उह देही तैनूं मिल गई,***
***बंदिआ बंदिआ, उह देही तैनूं मिल गई, जिहड़ी देही नूं -2***
***जिहड़ी देही नूं लोचदे देवते, जिहड़ी देही नूं - 2***

***इस देही कउ सिमरहि देव। सो देही भजु हरि की सेव।***

*पृष्ठ - 1159*

देवता मनुष्य से करोड़ों गुणा अच्छे हैं। करोड़ों शक्तियों के मालिक हैं। करोड़ों करोड़ों गुणा यानी खरबों गुणा सुखों के मालिक, फिर क्यों मानस देही की लालसा करते हैं? कितना सुख है साध संगत जी! समझने की कोशिश करो।

हमारे सबसे nearest (निकट) जो upper sphere (बाहरी मण्डल) है, उसका नाम **गन्धर्व लोक** है। संसार में पुण्य करने वाले लोग वहाँ

चले जाते हैं। उन्हें सौ गुणा, यहाँ के बादशाह से अधिक सुख मिलते हैं। बादशाह भी जो सारी दुनियाँ का हो और जिसे सारी दुनियाँ परमात्मा के रूप में मानती हो, जिसके खजाने कभी खाली न हों, जिसके राज्य में मौसम कभी खराब न होता हो, कोई बीमार न हो, बूढ़ा न हो, सभी वफादार ही वफादार मिलते हों, कोई भी उसका विरोध करने वाला न हो। इसे एक यूनिट (इकाई) सुख की कहते हैं। इससे भी सौ गुणा सुख गन्धर्व लोक में है।

गन्धर्व लोक से सौ गुणा अधिक सुख **देव गन्धर्व लोक** में है, अर्थात 10,000 गुणा यहाँ से अधिक।

इससे भी 100 गुणा अधिक सुख **पितृ-लोक** में है अर्थात यहाँ से 10 लाख गुणा अधिक।

इससे भी 100 गुणा अधिक सुख **स्वर्ग लोक** में है अर्थात यहाँ से 10 करोड़ गुणा सुख स्वर्ग के देवताओं को प्राप्त है। उससे भी सौ गुणा अधिक सुख **इन्द्र लोक** में है। जो इन्द्र लोक में रहते हैं हमारे से दस अरब गुणा अधिक सुखी हैं पर फिर भटकते हैं।

उससे भी सौ गुणा अधिक सुख **कर्म देव लोक** में है। फिर इसी तरह से **अजान देव लोक** है, **प्रजापति लोक** है, फिर **ब्रह्म लोक** है, फिर **शिव लोक** है, फिर **बैकुण्ठ धाम** है। बैकुण्ठ धाम में करोड़ खरब गुणा अधिक सुख है पर वे भी कहते हैं कि कब हमारा पूरा होगा स्वर्ग का समय और हम मनुष्य बनें।

महाराज कहते हैं कि हमने ऐसे ही यह कविता नहीं लिख दी और न ही पद्य जोड़ दिये हैं, यह 'सत' है। जितनी भी बाणी है, साध संगत जी! इसे कोई challenge (चुनौती) नहीं कर सकता, सारे ब्रह्मण्डों में, करोड़ों ब्रह्मण्डों में क्योंकि यह अकाल पुरुष की बाणी है -

***जैसी मै आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी गिआनु वे लालो।***

*पृष्ठ - 722*

गुरू महाराज कहते हैं कि यह मैं वही ज्ञान देता हूँ जो मुझे ऊपर से दरगाह में से आ रहा है। यह बाणी अकाल पुरुष की आ रही है। वह बाणी यह कहती है ***'गुर सेवा ते भगति कमाई। तब इह मानस देही पाई।'*** गुरू की सेवा तथा भक्ति करने के लिए तुझे यह देही प्राप्त हुई है ***'इस देही कउ सिमरहि देव। सो देही भजु हरि की सेव।'*** इसे तो देवता भी तरसते हैं और तू परमेश्वर के भजन में लगा इसे -

***भजहु गोबिंद भूलि मत जाहु।*** *पृष्ठ - 1159*

देखना, साध संगत जी! भूल न जाना, महाराज ऐसे कहते हैं। कैसे बार बार समझाते हैं हमें। देखना, कहीं भूल न जाना। प्यार से कहते हैं -

*भजहु गुोबिंद भूलि मत जाहु। मानस जनम का एही लाहु।*

*पृष्ठ - 1159*

यही लाभ है तेरा। बाकी जिन बातों में तू फंसा हुआ है -

*अवरि काज तेरै कितै न काम।* *पृष्ठ - 12*

वे तेरे किसी काम के नहीं -

*जब लगु बिकल भई नही बानी। भजि लेहि रे मन सारिगपानी।*

*पृष्ठ - 1159*

भज ले, जैसे पपीहा, 'पिऊ पिऊ' करता है, तू भी 'वाहिगुरू वाहिगुरू' 'अल्लाह अल्लाह' 'राम राम' कहे जा; रुक मत, उसका भजन कर -

*अब न भजसि भजसि कब भाई। आवै अंतु न भजिआ जाई।*

*पृष्ठ - 1159*

कहता है जी मैं नाम जपूंगा। कब जपेगा? कहता है जी मैं लड़के का ब्याह कर लूँ, मैं जी पैनशन ले लूँ, रिटायर होकर फिर जपूँगा। भाई! नहीं जपा जाता फिर ज़ोर लगाकर देख लो, जिसका मन करता हो। यह तो एक तीर है जिसके हृदय में लग गया, लग गया। वह तो फिर बेसुध हो जाता है। जो सलाह ही करता रहता है, उसे अभी बाण ही नहीं लगा। जब बाण लग जायेगा फिर देर नहीं हुआ करती -

*आवै अंतु न भजिआ जाई।*
*जो किछु करहि सोई अबु सारु। फिरि पछुताहु न पावहु पारु।*

*पृष्ठ - 1159*

*करणो हुतो सु ना कीओ परिओ लोभ कै फंध।*
*नानक समिओ रमि गइओ अब किउ रोवत अंध।* *पृष्ठ - 1428*

अब क्यों रोता है अब तो काल ने आकर गले में फांसी डाल दी, अब तो रोने धोने का कोई लाभ नहीं। यह काल ऐसा छिपा हुआ शत्रु है, इसका कुछ भी नहीं पता -

*नह बारिक नह जोबनै नह बिरधी कछु बंधु।*
*ओह बेरा नह बूझीऐ जउ आइ परै जम फंधु।* *पृष्ठ - 254*

पता नहीं किस समय यमों का फन्दा गले में आ पड़े।

सो इस प्रकार उस राजा ने राज पाट छोड़ दिया। बहुत अच्छा था। हमसे करोड़ों गुणा अच्छा था। इतना सुख छोड़कर परमेश्वर के मिलाप के लिए राज-पाट छोड़कर एक तरफ हो गया। ऐसा विचार मन में लेकर जंगल में आ गया।

महात्मा रहा करते थे उन दिनों जंगलों में। सारा प्रबन्ध होता था। इतना कन्द मूल फल होता था कि और किसी चीज़ की ज़रूरत ही नहीं पड़ती थी। कन्द-मूल ही इतने हुआ करते थे, जड़ों वाले फल जो धरती के अन्दर होते हैं तथा धरती पर भी होते थे ऐसे फल।

सो राजा वहाँ गया। पहले विचार आया मन में कि फिर भी मैं राजा हूँ, कहीं ज़रूरत पड़ सकती है। तीन लाल ले गया अपने साथ करोड़ों रूपयों के मूल्य वाले। एक चोर को पता चल गया जो पाखण्डी था। उसने सोचा कि राजा जा रहा है, इससे लाल लेने चाहिए किसी तरीके से। वह राजा जंगल में चला गया लेकिन उसे महात्मा नहीं मिल रहा। जहाँ भी जाता है संगत में वे कहते हैं कि जब तक तू गुरू धारण नहीं करता, तेरा नाम नहीं चलेगा और निगुरे की भक्ति किसी काम की नहीं होती। आज मन में इरादा कर लिया पक्का कि आज मैं सुबह सुबह 2 बजे स्नान करके आऊँगा नदी से, जो आज पहले मिल जायेगा, उसे मैंने गुरू धारण कर लेना है, चाहे कोई भी हो। उस समय वह जो पाखण्डी पीछे पीछे फिरता था, हर समय सोचता रहता है कि वह कपड़े उतार कर रखे तो मैं उठाकर ले जाऊँ, लाल भी उठा कर ले जाऊँ, उसने ही मिलना था। सो वह खड़ा है आगे। राजा ने जाकर नमस्कार कर दी और वह आर्शीवाद देने लगा। राजा कहने लगा, ''महाराज! मुझे दीक्षा दो।'' सुनी सुनाई बात थी, कहता है, ''देखो बेटा! ऐसा करो, पहले गुरू दक्षिणा दो।'' राजा कहता है, ''मेरे पास तो कुछ भी नहीं।'' वह चोर बोला, ''जो तीन लाल (रतन) लेकर आया है, वह दक्षिणा में दे दे।'' राजा समझ गया कि यह तो अन्तर्यामी है, भरोसा हो गया उस पर पूरा पूरा। चोर ने रतन ले लिये और बोला, ''यहीं पर ही खड़े रहना, जब तक मैं वापिस लौट कर न आऊँ।''

अब राजा का दृढ़ विश्वास था, वहीं पर ही खड़ा रहा। दिन बीतते चले गये, महीने बीत गये, श्रद्धा भावना ऐसी चीज़ है कि यदि गुरू अपूर्ण भी हो तो भी परमेश्वर अन्याय नहीं करता। परमेश्वर ने उसी समय पहुँच कर मनुष्य का रूप बना लिया और कहने लगे ''प्यारे! तू यहाँ खड़ा है?'' कहता है, ''मेरे गुरू महाराज कह गये।'' परमेश्वर कहता है ''वह तो ठग था।'' राजा कहने लगा, ''न, मेरे पास मेरे गुरू की निन्दा मत करो, वह तो पूर्ण थे।'' बहुत बहकाया पर बहकावे में न आया। हम तो तुरन्त ही बहकावे में आ जाते हैं। मामूली सी निन्दा कर दो, तुरन्त भागते हैं छोड़ छाड़ कर।

सो जब देखा कि इतना दृढ़ इरादा था, कहने लगे, ''मैं तेरे गुरू को लेकर आता हूँ।'' गुरू के पास पहुँच गये और बोले, ''ओ पाखण्डी!

वहाँ तू उसे खड़ा कर आया है, रतन लेकर यहाँ बैठा है? तुझे पता है नरकों के डर का?'' दिखा दिया कि यह नरक है तेरे लिए। ''जा! राजा को जाकर कह।'' वह वहाँ चला गया राजा के पास और कहने लगा, ''अब तू कहीं भी जाकर बैठ सकता है, भजन कर सकता हैं।'' वह कहता है, ''मैं तो चोर हूँ, ठग हूँ।'' बहुत कहा उसने पर राजा नहीं मानता। अन्त, परमेश्वर प्रकट हो गये और कहने लगे, ''यह ठग है।'' राजा कहता है, ''न प्रभु, यही है जिसने तेरे साथ मिला दिया। मैं तो इसके चरणों पर गिरता हूँ, इसमें यदि कोई कमी आप बताते हो, आप जानो यह जाने।''

सो इस प्रकार गुरू पर भरोसा नहीं बनता जब तक मन के अन्दर, तब तक कोई बात नहीं बनती -

***जा कै मनि गुर की परतीति। तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति।***

*पृष्ठ - 283*

पर यदि गुरू पूरा मिल जाये फिर तो भरोसा हो जाना चाहिए साध संगत जी! कितना भरोसा होना चाहिए? चार प्रकार के भरोसे होते हैं -

पहला यह कि मेरा गुरू एक बहुत अच्छा सन्त है। दूसरा होता है कि मेरा गुरू सारे सन्तों से अच्छा सन्त है। तीसरा होता है कि जो मेरा गुरू है वह परमात्मा जैसा है। चौथा होता है कि मेरा गुरू स्वंय ही परमेश्वर है, इसमें तो गुंजायश ही नहीं कोई।

गुरू अंगद साहिब महाराज जी संगत में सुशोभित हैं। पूछने लगे, ''क्यों बाला जी! आप गुरू नानक पातशाह जी के साथ नौ खण्डों, सातों द्वीपों जहाँ तक भी धरती थी, उनके साथ रहे और सारे कौतुक आपने देखे। आप गुरू नानक पातशाह को क्या समझते रहे?'' कहने लगे, ''महाराज! वह तो पूर्ण सन्त थे।'' महाराज चुप हो गये। कहने लगे, धीरे से, ''अच्छा भाई! तू सन्त हुआ।'' बाबा बूढ्ढा जी से पूछा, ''आप भी आठ वर्ष के थे जब आये थे महाराज जी की संगत में। बड़े कौतुक आप जी ने सुने और बहुत सारे देखे और करतारपुर में जब आप रहे, आपने उनकी पूरी संगत की, 20 वर्ष तक रहे उनके साथ तो आपने गुरू नानक पातशाह को क्या समझा?'' ''महाराज! मैंने तो बहुत परख परख कर देखा, वह तो पूर्ण ब्रह्मज्ञानी थे।'' और भी सभी से पूछा, सभी ने अपना अपना विश्वास बता दिया। अन्त में सारी संगत ने पूछा, ''महाराज! सच्चे पातशाह! आप भी बताओ, आप गुरू नानक पातशाह को क्या समझते रहे?'' उस समय महाराज के नेत्रों में जल भर आया, पलकों के पास से आँसू नीचे गिरे, भाव बदल गया, नेत्र खोले रस से भरे हुए, हाथ जोड़े हुए हैं, कहते

हैं, ''साध संगत जी! गुरू नानक पातशाह के बारे में आप पूछते हो? वह तो करोड़ों ब्रह्माण्डों के स्वामी स्वंय परमेश्वर थे -

*आपि नराइणु कला धारि जग महि परवरियउ।* *पृष्ठ - 1395*

वह तो स्वंय परमेश्वर ही आये थे गुरू रूप होकर।'' सभी ने नमस्कार की, पातशाह! हमें यह ज्ञान न मालूम हुआ। कोई कहता है हम तलवण्डी वाले समझते रहे, कोई कहता है हम कालू जी का बेटा ही समझते रहे, कोई कहता है हम करतारपुर वाला महात्मा समझते रहे।'' हमें नहीं मालूम था, यह निश्चय भरोसा तो हमें आया ही नहीं। इसलिये हम भटकते फिरते हैं। पातशाह! आप इस निश्चय के कारण आप ही परमेश्वर बन गये।'' सो बाणी क्या कहती है? बाणी कहती है कि गुरू ज्योति जो हुआ करती है, उसके अन्दर और वाहिगुरू में कोई भेद नहीं हुआ करता -

*धारना - गुरू गोबिंद, गोबिंद गुरू है, नानक भेद न भाई - 2, 2*
*नानक भेद न भाई, नानक भेद न भाई - 2, 2*
*गुरू गोबिंद, गोबिंद गुरू है............-2, 2*

*बीस बिसवे गुर का मनु मानै। सो सेवकु परमेसुर की गति जानै।*
*सो सतिगुरु जिसु रिदै हरि नाउ। अनिक बार गुर कउ बलि जाउ।*
*सरब निधान जीअ का दाता। आठ पहर पारब्रहम रंगि राता।*
*ब्रहम महि जनु जन महि पारब्रहमु। एकहि आपि नही कछु भरमु।*
*सहस सिआनप लइआ न जाईऐ। नानक ऐसा गुरु बडभागी पाईऐ।*
*पृष्ठ - 287*

वाहिगुरू गुरू में रहता है और गुरू वाहिगुरू में रहता है -

*समुंदु विरोलि सरीरु हम देखिआ इक वसतु अनूप दिखाई।*
*गुर गोविंदु गुोविंदु गुरू है नानक भेदु न भाई।* *पृष्ठ - 442*

*नानक सोधे सिंम्रिति बेद। पारब्रहम गुर नाही भेद॥* *पृष्ठ - 1142*

*पारब्रहमु परमेसरु अनूपु। सफल मूरति गुरु तिस का रूपु॥*
*पृष्ठ - 1152*

*सतिगुर जेवडु अवरु न कोइ। गुरु पारब्रहमु परमेसरु सोइ।*
*पृष्ठ - 1271*

इससे नीचे जिसका निश्चय है वह डांवाडोल हो जाता है, साध संगत जी!

*ब्रहमु बिंदे सो सतिगुरु कहीऐ..............॥* *पृष्ठ - 1264*

पहचान क्या है? कहते हैं वह हर समय ब्रह्म में रहता है। उसकी निशानी इस प्रकार विस्तार से भी लिखी है -

*धारना - निरवैर निराला जी - 2, 2*
*सतिगुर पुरख अगंम है - 2*
*निरवैर निराला जी,........।*

***सतिगुर पुरखु अगंमु है निरवैरु निराला।***
***जाणहु धरती धरम की सची धरमसाला।***
***जेहा बीजै सो लुणै फलु करम सम्हाला।***
***जिउ करि निरमलु आरसी जगु वेखणि वाला।***
***जेहा मुहु करि भालीऐ तेहो वेखाला।***
***सेवकु दरगह सुरखरू बेमुखु मुहु काला॥***

***भाई गुरदास जी, वार 34/1***

निरवैर और निराला है सतगुरू! ऐसे सतगुरू और वाहिगुरू में कोई भेद नहीं हुआ करता -

***ब्रहमु बिंदे सो सतिगुर कहीऐ हरि हरि कथा सुणावै।***
***तिसु गुर कउ छादन भोजन पाट पटंबर***
***बहु बिधि सति करि मुखि संचहु***
***तिसु पुंन की फिरि तोटि न आवै॥***
***सतिगुरु देउ परतखि हरि मूरति जो अंम्रित बचन सुणावै।***

***पृष्ठ - 1264***

ऐसे गुरू पर जब तक निश्चय नहीं बनता कि अकाल पुरुष तथा इसमें कोई भेद नहीं है, दोनों इकमिक हुआ करते हैं, बात नहीं बनती। वह वाहिगुरू का सगुण स्वरूप है, वाहिगुरू का अपना निज स्वरूप निर्गुण है और सभी जगह समाया हुआ है।

सो गुरू दशमेश पिता जी कहने लगे माता जीतो जी को कि जब तक मनुष्य में ऐसा भरोसा पैदा नहीं होता, दूसरी सीढ़ी नहीं चढ़ सकता नाम की। सो पहला डण्डा होता है वाहिगुरू पर निश्चय (भरोसा) और दूसरा होता है गुरू पर भरोसा। तीसरा भरोसा होता है कि जिसे 'नाम जपना' कहते हैं, यह कौन सी चीज़ हुई अर्थात नाम पर भरोसा होना कि सबसे बड़ी शक्ति 'नाम' है। आदि में भी नाम था, उसे शबद कहते थे। इसाईयत में भी शबद कहते हैं कि एक शबद था सारी रचना से पहले आवाज़ थी, एक शबद ही था। आज साईंस भी कहती है कि यह तमाम जो कुछ दिखाई देता है, यह एक शब्द में से निकला है, वह Big-Bang (बहुत बड़ा धमाका) कह देते हैं। लेकिन उस Big-Bang की stage (अवस्था) आगे जाकर आती है, पहले नहीं। पहले 'ऐकंकार था एक' एक के बाद 'ओंकार' से जब प्रसार हुआ '१ओंकार'। फिर वह 'सत' है, फिर

'नाम' है। उस नाम की महिमा पर जब तक भरोसा नहीं होता, यह नाम नहीं जप सकता।

हमें नाम की महिमा का कैसे पता चले? पैसे की महिमा को तो जानते हैं, पौण्ड की कितनी कीमत है, डालर की कितनी कीमत है, रूपये की कितनी कीमत है? इसलिये बच्चे भागे जा रहे हैं डालरों के देश में क्योंकि उनकी कीमत मन में बस गई है हर एक के। बेईमानी करता है, धोखा देता है। पता भी है इसका लेखा जोखा देना पड़ेगा पर पैसे की महिमा बसी हुई है मन के अन्दर कि पैसा कमा ले। जोत जलाता है, धूप आदि देता है कि और आ जाये और आ जाये, जैसे मर्जी हो, आ जाये चाहे ब्लैक द्वारा आये। दवाई कोई ठीक नहीं मिलती यहाँ, सभी दुखी हैं कि दवाई नहीं मिलती, क्या करें, कहाँ से लायें, problem (समस्या) खड़ी हो गई? खुराक नहीं मिलती, दूध नहीं मिलता, कोई वस्तु तो शुद्ध मिले। मिलावट ही मिलावट है, धोखा ही धोखा है। Character (चरित्र) ही गिर गया हमारा, क्योंकि हम परमात्मा के faith (भरोसे) में नहीं रहे। हम माया के पुजारी हो गये, अच्छाईयाँ हमारी खत्म हो गईं। महाराज कहते हैं -

*जिस नो आपि खुआए करता खुसि लए चंगिआई॥ पृष्ठ - 417*

उसकी फिर अच्छाईयाँ खत्म हो जाती हैं। सो महाराज कहते हैं, नाम की महिमा हृदय में बसानी चाहिए।

गुरू नानक पातशाह आज बिहार में जा रहे हैं। चलते चलते मरदाना ने प्रश्न कर दिया, कहने लगा, ''महाराज! सच्चे पातशाह! जब से हम घर से निकले हैं, जब से मैं तुम्हारा मित्र बना हूँ, पहली बार आपसे एक बात पूछता हूँ कि ''मैं आपके मुख से नाम-नाम-नाम सुने जा रहा हूँ और कोई बात तो आप बहुत कम ही करते हो, नाम की ही बात करते हो। यह संसार फिर नाम को क्यों नहीं मानता, क्यों नहीं जपता?''

जब दिन रात 'नाम' गाया जाता है, लाऊडस्पीकर यहाँ लगे हुए हैं, नाम ही नाम गाया जा रहा है सारे गुरू ग्रन्थ साहिब में, सुखमनी साहिब पढ़ लो, नाम ही नाम आयेगा फिर क्या कारण है क्यों नहीं मनुष्य का मन लगता नाम की ओर? महाराज कहते हैं, ''मरदाना! कीमती वस्तुओं की कदर, कदरदानों के बिना नहीं हुआ करती, यह आदमी को पता नहीं।'' ''महाराज! आप इतना तो बताते हो।'' कहते हैं, ''बताते तो हैं, पर यह विश्वास नहीं करता इस बात पर। अपने मन के इसने अटे सट्टे (नाप तोल) बना रखे हैं Measurement (नाप तोल) इसके अन्दर ही लगे हुए हैं। यह नाम की अपेक्षा वासना का मूल्य अधिक समझता है, विषय विकारों

का मूल्य अधिक समझता है, भोगों की कीमत ज्यादा समझता है पर नाम के रस को नहीं जानता कि नाम का रस supreme (सर्वोत्तम) रस होता है। एक बार आ जाये फिर किसी अन्य रस की ज़रूरत नहीं रहती पर इसे पता नहीं चलता।'' मरदाना कहता है, ''महाराज! बार बार तो आप बताते हो। महाराज चुप हो गये कि यह तो एक ही बात पर अटक गया। हम कहे जाते हैं कि नहीं, संसार को पता नहीं चलता। कहता है, ''महाराज! पढ़े लिखों के साथ आपका contact (सम्पर्क) होता है, बड़ों-बड़ों के साथ मेल होता है। मैं देखता हूँ कि उस समय तो सभी झूमते हैं। उसके बाद फिर वहीं के वहीं वैसे के वैसे ही हैं। यह इतनी कीमती चीज़ है नाम, आप कहते हैं कि इसका कोई मूल्य नहीं दे सकता -

*सांई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो।* *पृष्ठ - 81*

फिर कारण क्या है, यह मनुष्य के मन में क्यों नहीं बसता?'' कहते हैं, ''मरदाना! तुझे practically (प्रत्यक्ष रूप में) समझायेंगे। ऐसे तो हम वही बात किये जा रहे हैं, तू फिर वही प्रश्न कर देता है। जब तुझे कह दिया कि मनुष्य का मन इस बात को मानने के लिये तैयार ही नहीं, इसे और चीज़ें चाहिएं। जिसे नाम की महिमा का पता चल गया, उसका attitude of mind (मन की स्थिति) totally (पूर्णतया) बदल जाता है। नाम रह जाये उसके पल्ले, चाहे शेष सारा संसार छूट जाये वह कहता है कि मैं तो बादशाह हूँ -

*राजा सगली स्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना।* *पृष्ठ - 707*

*बसता तूटी झुंपड़ी चीर सभि छिंना।* *पृष्ठ - 707*

टूटी हुई झौंपड़ी में रहता हो, कपड़े फटे हुए हों -

*जाति न पति न आदरो उदिआन भ्रमिंना।* *पृष्ठ - 707*

Adverse Circumstances (बहुत बुरे हालात) हो जायें पर यदि नाम के साथ उसका मन रंग गया तो कहते हैं, उसकी अवस्था क्या होती है? 'राजा सगली स्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना।' भीगा पड़ा है मन - नाम के रंग से, सृष्टि का बादशाह है वह -

*मित्र न इठ धन रूप हीण किछु साकु न सिंना।*
*राजा सगली स्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना।*
*तिस की धूड़ि मनु उधरै प्रभु होइ सु प्रसंना।* *पृष्ठ - 707*

पर यह संसार नहीं जानता, इसे नहीं पता कि सांई का नाम कितना कीमती है -

*बहु सासत्र बहु सिम्रिती पेखे सरब ढढोलि।*
*पूजसि नाही हरि हरे नानक नाम अमोल॥* *पृष्ठ - 265*

*धारना - नाम अमोला जी, मेरे साहिब दा - 2, 2*
*नाम अमोला, नाम अमोला! नाम अमोला। नाम अमोला*
*नाम अमोला जी,......................।*

*साई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो।* *पृष्ठ - 81*

कोई संसार में आज तक पैदा नहीं हुआ जो नाम का मूल्य बता सका हो।

*जिना भाग मथाहि से नानक हरिरंगु माणदो॥* *पृष्ठ - 81*

जिनके मस्तक के भाग्य खुल गये वे इस प्यार में जीते हैं। कहने लगे, ''मरदाना! यह संसार माया के प्यार में जीता है, विषय विकारों के प्यार में जीता है, वासना के प्यार में, सम्बन्धियों के प्यार में जीता है, नाम का इसे नहीं पता। इसलिये कदर नहीं है।'' मरदाना कहने लगा, ''महाराज! आप इतना समझाते हो।'' महाराज कहते हैं, ''फिर वही बात कर दी न मरदाना! कदर ही नहीं इन्हें, बात समझने की कोशिश ही नहीं करते।'' हम दिन रात चलते रहते हैं, आगे चलकर भी प्रचार होगा, 500 सालों से 'नाम-नाम'-

*नानक कै घरि केवल नामु।* *पृष्ठ - 1136*

नाम की बात हो रही है फिर क्यों नहीं सारे जप रहे? क्योंकि गुरू के वचनों पर विश्वास नहीं है और नाम की कदर नहीं है। यदि जबरदस्ती विश्वास कर भी लें तो हृदय के अन्दर नहीं बैठती appreciation (पूरी कदर)। जब तक अन्दर नहीं आती तब तक बात नहीं बनती। जिनके अन्दर आ जाती है उनके लिये तो सभी कुछ नाम है। उनका Attitude of mind (मानसिक दृष्टिकोण) इस प्रकार का है -

***धारना - किते भुल्ल न जाईं ओ मना नाम नूं,***
***मोतीआं दे मंदर देख के - 2, 2***
***मेरे पिआरे, मोतीआं दे मंदर देख के - 2, 2***
***किते भुल्ल न जाईं ओ मना नाम नूं,...........।***

***मोती त मंदर ऊसरहि रतनी त होहि जड़ाउ।***
***कसतूरि कुंगू अगरि चंदनि लीपि आवै चाउ।*** *पृष्ठ - 14*

Impossible (असम्भव) हैं दुनियाँ में यह उपलब्धियाँ। ईटों की जगह पर और किसी वस्तु की बजाये या लकड़ियों की जगह पर मोतियों की चिनाई हो फिर रतन जो इससे भी ज्यादा कीमती होते हैं जगह जगह पर जड़े हुये चमक मारते हों, कस्तूरी, कुंगु, अगर, चन्दन इन चीज़ों का लेप हुआ हो, पलस्तर हुआ हो जैसे सिमेन्ट का होता है ***'.......लीपि आवै चाउ।'*** इनकी जब सुगन्धि आती है, उस समय मन में चाव पैदा हो, कहते हैं, फिर क्या होगा? मन की अवस्था है कि जिस चीज़ को यह देखता है,

उसी की ओर भागता है, वृति का स्वभाव है, साध संगत जी! होता क्या है इतनी गति के साथ हमारे अन्दर को बिजली की current (धारा) है, नेत्रों के द्वारा बहुत फुर्ती के साथ बाहर निकलती है, चाहे एक मील दूर हो, चाहे तारे हैं करोड़ों मील पर। एकदम देखकर उसके चौगिर्दे घूम कर अन्दाज़ा लगाकर बता देती हैं कि यह घर है, मनुष्य है, गाड़ी है, कार है, साँप है। उसने अपना काम करना ही करना है।

महाराज कहते हैं कि मोतियों के मन्दिर जब देखेगा, उसका फिर analysis (विश्लेषण) करेगा कि इतने मोती कहाँ से आ गये, कहाँ से कमाई कर ली; बहुत सुन्दर हैं ये तो, कोई चोर न सेंध लगाकर ले जाये। कहता है, इसी में ही इसका ध्यान लगा रहेगा, फिर बुलायेगा दुनियाँ को कि मेरी कोठी देखो, मेरा महल देखो, मोतियों का बना हुआ है फिर नाम भूल जाना है इसने -

*मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ।* *पृष्ठ - 14*

दूसरी प्राप्ति दुनियाँ की बड़ी से बड़ी कहते हैं -

*धरती त हीरे लाल जड़ती पलघि लाल जड़ाउ।* *पृष्ठ - 14*

कोठी का आँगन हीरों तथा लालों से जड़ा हुआ हो, कहीं संगमरमर न लगा हो, झिलमिल झिलमिल करता हो, अनेक रंग झिलमिल झिलमिल करें, प्रकाश दें अलग अलग तरह के और पलंग भी इसी तरह के हों decorated (सजाये हुये) -

*मोहणी मुखि मणी सोहै करे रंगि पसाउ।* *पृष्ठ - 14*

और स्त्रियाँ मणियों से जड़ित, पदमनी स्त्रियाँ जिनके माथों पर मणियाँ लटकती हों, उनका रूप दस दस गुणा अधिक हो जाये ***'करे रंगि पसाउ।'*** उनके अन्दर लीन पड़ा हो पर ***'मतु देखि भूला वीसरै............॥'*** कहते हैं, होगा क्या? भूल जायेगी यह सारी चीज़। वृत्ति उसी बात में अटक जायेगी नाम की धारा टूट जायेगी ***'तेरा चिति न आवै नाउ।'*** फिर रिद्धि-सिद्धि शक्तियाँ आ जाती हैं। ये जब आती हैं मनुष्य पूरी तरह से भूल जाता है क्योंकि उनके रूप होते हैं। बाहरी माया को तो आदमी छोड़ देता है बुद्धि द्वारा। ये शरीर क्या है? गन्दगी के थैले बने फिरते हैं, इनमें कुछ नहीं है विचार कर देख लो -

*बिसटा असत रकतु परेटे चाम। इसु ऊपरि ले राखिओ गुमान।*
*पृष्ठ - 374*

महाराज कहते हैं कि विष्टा लपेटा हुआ है प्लास्टिक की तह में गन्दगी लपेटी हुई है। साढ़े तीन करोड़ रोम हैं मनुष्य के शरीर पर जिनमें से हर समय मैल गन्दगी निकलती रहती है। इसकी कौन सी चीज़ पवित्र है? कहते हैं -

*एक वसतु बूझहि ता होवहि पाक। बिनु बूझे तूं सदा नापाक॥*

*पृष्ठ - 374*

नापाक है, हर समय गन्दगी उठाये फिरता है, इसे ही beautiful (सुन्दर) कहता है। इसी में ही उलझ जाता है लेकिन यह यहीं पर ही छोड़ जायेगा। आन्तरिक जो Beauty है सुन्दरता है, रिद्धि-सिद्धि जब सूक्ष्म रूप में प्रकट होती है, उसमें बहुत सुन्दरता है।

सन्त महाराज (राड़ा साहिब वाले) एक बार दास को बता रहे थे कि पहले तो हमें आवाज़ें सुनाईं दीं फिर रूपमान होकर प्रत्यक्ष सामने आनी शुरू हो गई कि मेरे अन्दर अमुक शक्ति है, यदि आप मुझे अपना लो तो मैं यहीं पर ही आपको बता दूँगी कि अमेरिका के जिस शहर में दिल करता हो, देख लेना कि अमुक आदमी क्या कर रहा है, बिल्कुल vision (दृष्टि) दे देती हूँ जैसे यहीं पर ही हो रहा हो। महाराज कहते हैं, ऐसे आवाज़ें लगाती हैं। कोई कहती मैं प्रेरणा शक्ति हूँ, बड़े से बड़े व्यक्ति, बादशाह को भी जब जी चाहे, तुम्हारे चरणों में हाज़िर कर दूँगी। कोई कहती कि मैं अन्तर्यात्मा हूँ, मुझे अपना कर हर एक के दिल की बात जान जाया करोगे, गुप्त बातों का पता लग जाया करेगा। महाराज जी कहते, हमारा तो निशाना ही और था। परमेश्वर के मिलाप का था इस तरफ का था ही नहीं। यह तो रास्ते की रूकावट थी। वैराग था उच्च कोटि का, उसकी ताकत से हम इन शक्तियों को पार कर गये लेकिन यह छल कितना बड़ा है।

सो इसलिये महाराज कहते हैं -

*सिधु होवा सिधि लाई रिधि आखा आउ।*
*गुपतु परगटु होइ बैसा लोकु राखै भाउ।* *पृष्ठ - 14*

लोग फिर बहुत आदर करते हैं, बहुतेरे आते हैं स्वार्थी लोग तेरे पास। फिर क्या होगा? जितने लोगों को तू अधिक मिलेगा, उतना ही परमेश्वर को भूलता जायेगा क्योंकि उनके साथ तेरा वासता पड़ता है, पाला पड़ता है। जब संसार के साथ पाला पड़ेगा तो संसार के दुख सुख अपने अन्दर आयेंगे। जितना अधिक इस ओर झुकाव होगा उतने अधिक सुख दुख अपने अन्दर आने शुरू हो जायेंगे। दुख सुख तो उसके कर्मों का फल मिल रहा है उसे। कर्म किए हैं -

*ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करंमा आपणिआ।*
*जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना।* *पृष्ठ - 433*

यदि कहे कि यह परोपकार है, तो महाराज कहते हैं -

*जैसा बितु तैसा होइ वरतै अपुना बलु नाही हारै॥* *पृष्ठ - 679*

यदि तो इसके साथ शुभ इच्छा है तेरे पास, फिर तो कर दे लेकिन फंस मत। रात को ठण्डी आहें मत भर। इसमें फंस जायेगा तू। लोगों का तेरे पास आना जाना शुरू हो जायेगा। दुख लेकर आते हैं, लदे हुए, भरे हुए आते हैं, दुखों के - दु:ख तेरे पास छोड़ जायेंगे, परेशानियाँ तेरे पास छोड़ जायेंगे, मुसीबतें तेरे पास छोड़ जायेंगे और यह हुआ कैसे? औरों के पास क्यों नहीं जाते? क्योंकि वहाँ निवृत्ति नहीं हुआ करती थी। तेरे पास शक्ति है, जिससे निवृत्ति होती है। महाराज कहते हैं, परिणाम क्या होगा?

*मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ॥* *पृष्ठ - 14*

चौथी बड़ी प्राप्ति होती है दुनियाँ में राजसी शक्ति, राजा बन जाये सारी दुनियाँ का -

*सुलतानु होवा मेलि लसकर तखति राखा पाउ।*
*हुकमु हासलु करी बैठा नानका सभ वाउ।* *पृष्ठ - 14*

सारे हुक्म हैं पर कोई कानून मुझ पर लागू नहीं होता। जो शब्द मुख से निकल गया, वह हुक्म बन गया precedent बन गया। उसके कहने के अनुसार ही कानून बनाया जायेगा कि बादशाह के मुख से ये शब्द निकले हैं। महाराज कहते हैं कि इसके साथ अभिमान आ जायेगा हृदय में, उसने नाम को भुला देना है -

*मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ॥* *पृष्ठ - 14*

फिर 'नाम' कितनी बड़ी वस्तु है? महाराज कहते हैं यदि तेरे अन्दर नाम है तो जीवित हैं, यदि नाम नहीं फिर तू मरा हुआ आदमी है, चलती फिरती लाश है -

*सो जीविआ जिसु मनि वसिआ सोइ। नानक अवरु न जीवै कोइ।*
*जे जीवै पति लथी जाइ। सभु हरामु जेता किछु खाइ।* *पृष्ठ -142*

नाम को भूलकर जितना तू खाता है, पहनता है, कहते हैं मृतक का श्रृंगार है, मुर्दे का श्रृंगार कर रहा है क्योंकि तेरे अन्दर जिन्दगी की धारा नहीं चली, जीवन नहीं है तेरे अन्दर। यह तो खाने पीने वाली एक मशीन है, इसका श्रृंगार किये जा जितना तेरा जी करे। तेरा आन्तरिक कमल फूल जला पड़ा है, रस नहीं है frustration (झुझंलाहट) है तेरे अन्दर; क्यों? क्योंकि तू 'नाम' को भूला हुआ है -

*धारना - जल बल जावे जिऊड़ा, नाम तों बिनां - 2, 2*
*नाम तों बिनां, जिऊड़ा नाम तों बिनां - 2*
*जल बल जावे, जिऊड़ा.............।*

*हरि बिनु जीउ जलि बलि जाउ।* *पृष्ठ - 14*

जिस चीज़ ने खुशी अनुभव करनी है अन्दर वह तो नाम के बिना जल

गया। कोठियों में बैठे हुए और इतनी प्राप्तियों के होते हुए frustration (निराशा) कितनी आ गई, कितना damage (नुक्सान) हो गया brain, nervous system (नाड़ी संस्थान) सारा ही upset (उलट पुलट) हो गया, इन चीज़ों को प्राप्त करने से। प्राप्त हो गये सुख; क्या फिर नाड़ी संस्थान ठीक हो गया? नहीं होता –

*मै आपणा गुर पूछि देखिआ अवरु नाही थाउ॥* *पृष्ठ - 14*

महाराज कहते हैं, ''मरदाना! संसार इन चीज़ों में गुलतान है। इसे 'नाम' का नहीं पता।'' मरदाना कहता है ''पातशाह! आप इतना समझाते हो फिर भी इन्हें पता नहीं चलता?'' कहते हैं, ''है नहीं इनके भाग्यों में यह चीज़। बिना अच्छे भाग्यों के गुरू नहीं मिलता, गुरू के बिना 'नाम' नहीं मिलता। भाग्यहीन पुरुष बने फिरते हैं। हम तो आवाज़ें लगा लगा कर बताते हैं।'' कहता है ''महाराज! आप इतना समझाते हो, इतने discourses (वचन) करते हो, इतना कीर्तन करते हो फिर क्यों नहीं समझते? वहीं के वहीं रहते हैं।'' कहते हैं ''मरदाना! कदर दान नहीं हैं। रूचि नहीं है इधर, किसी अन्य चीज़ों में लग गई। बात समझने की कोशिश नहीं करते। पशुओं की तरह खाने पीने में लगे हुए हैं।'' जब फिर कहा मरदाना ने, महाराज कहने लगे, ''अब तू चुप कर। तुझे समझायेंगे practically (प्रत्यक्ष रूप में), फिर तेरी समझ में आयेगा।''

आगे चलते चलते दूसरे दिन महाराज कहते हैं, ''मरदाना! देख वह क्या है?'' कहता है ''महाराज! वह तो शहर की ममटिया (घरों की चोटियाँ) ऊपर वाली जो ऊँची ऊँची इमारते हैं, उनके ऊपर बनाये गये बुर्ज़ से दिखाई देते हैं।'' कहते हैं ''फिर शहर आ गया, बिशम्भर पुर जिसे पटना कहते हैं, पाटली पुत्र कहते थे पहले। हम तो यहीं बैठते हैं, तू जाकर भोजन खाकर आ।'' मरदाना हंस पड़ा और बोला, ''महाराज! भोजन खा आऊँ?'' महाराज कहते हैं, ''हंसता क्यों है?'' बाल सखाई था, हर समय साथ रहने वाला और गुरू नानक साहिब ऐसे ही किसी को नहीं डराया करते थे। वह तो निरे प्यार की मूरत थे, humorous (हंसमुख) थे, डराते नहीं थे किसी को कि भौहें चढ़ी हुई हैं और माथे पर बल पड़े हुए हैं। नहीं, गुरू नानक तो खिले रहते थे, फूल की तरह। जो भी देखता – चाहे पशु थे, चाहे पन्छी उसका दिल करता कि उनके पास आ जायें; आकर्षण पैदा होता था हरेक को कि इनके पास आ जायें। बड़े बड़े डाकुओं ने देखा, दर्शन करते ही आकर्षण पैदा हो कि गया ऐसा तो आज तक नहीं देखा। सो ऐसे गुरू नानक के साथ दिल खोलकर बातें कर लिया करता था, मरदाना। महाराज कहते हैं, ''हंसा क्यों?'' कहता है महाराज! आपने तो ऐसे कह दिया, जैसे वहाँ मेरे कोई रिश्तेदार जानकार सम्बन्धी

बैठे हों।'' महाराज कहते हैं, ''फिर क्या करता है?''

कहता है, ''सच्चे पातशाह! पहले मैं बड़ी सावधानी के साथ बातचीत करता हूँ। आपके साथ रहते हुए मुझे कई अनुभव हो चुके हैं क्योंकि विदेशों में घूम फिर रहे हैं। मुझे मनुष्य के मस्तक पढ़ने की कला आ गई। पहले मैं देखता हूँ कि मस्तक खिला हुआ है किसी भाग्यशाली का। कोई कोई मिलता है, जिसका smiling face (हंसमुख चेहरा) होता है।

हमारे देश में तो smiling face (हंसमुख चेहरा) मिलना ही बड़ा कठिन है। अमेरिका चले जाओ, वहाँ तुम्हें मुरझाए हुये चेहरे का मिलना कठिन हो जायेगा। हंसमुख घूमते हैं जैसे फूल खिले रहते हैं। जब एक दूसरे की ओर देखते हैं मुस्करा कर हैलो...हाय...ऐसी आवाज़ देते हैं, मित्र कहते हैं, friend कहते हैं। कोई ऐसा नहीं है दबा हुआ सा घूमता फिरता हो, प्रसन्नचित्त घूमते हैं लेकिन हमारे माथों पर तो त्यौरियाँ चढ़ी रहती हैं। पता नहीं कौन सी परेशानियों में हम घिर गये। स्वभाव ही ऐसा होता है।

दुकानदार आते हैं, ''जी, मेरी दुकान नहीं चलती।'' मैंने कहा ''तेरी दुकान कहाँ से चलेगी?'' कहता है, ''जी, क्यों मेरे अन्दर कोई कमी है?'' मैंने कहा, ''तेरे माथे पर त्यौरियाँ चढ़ी हुई हैं, ग्राहक देखते ही भाग जाता है। आँखे देख, तेरी कितनी डरावनी हैं, मेरे पास आकर भी डरा डरा कर देखता है। थोड़ा सा माथे पर पड़े बलों को कम तो कर, होंठो पर ला मुस्कराहट।'' बड़ी मुश्किल से देखी उसकी मुस्कराहट। मैंने दस बार कहा, तू हंस कर तो दिखा दे मुझे; फिर भी आँखे बड़े ज़ोर से बन्द कर रखी हैं, डर लगता है इन आँखों से। मैंने कहा, ''तुझे देखकर तो औरतें भाग जाती होंगी, तेरे पास कहाँ से आती होंगी, तेरा पाला तो बीबियों (स्त्रियों) के साथ पड़ता है। क्योंकि अन्दर खुशी नहीं है, frustration (निराशा, झुझंलाहट) है अन्दर, जले पड़े हैं अन्दर से।

सो मरदाना कहता, ''महाराज! मैं ऐसे को तो नहीं बुलाता। smiling face (हंसमुख चेहरा) कोई आ जाता है, वहाँ फिर मैं सत करतार की आवाज़ लगाता हूँ और वे भी मुझे सतकार करके बुलाते हैं। फिर हम आपस में बातचीत करते हैं, कहाँ से आया है वगैरा वगैरा सभी कुछ पूछते हैं। फिर महाराज! वे मुझे स्वंय ही पूछ लेते हैं कि कोई सेवा बताओ। फिर मैं बता देता हूँ कि इस तरह हम तीन आदमी हैं, चार आदमी हैं, हमने भोजन करना है फिर वे बड़े प्रेम सहित, महाराज! आपके दर्शन करते हैं और साथ ही भोजन बनाकर यहाँ ले आते हैं।''

महाराज कहते हैं, ''मरदाना! मान लो ऐसा कोई न मिले तो?'' कहता है, ''महाराज! फिर मेरे सामने कोई चारा नहीं। मुझे गालियाँ सुनने को

मिलती हैं। मैं जाकर माँग लेता हूँ। भूख तो लगी होती है।'' कहते हैं, ''हट्टा कट्टा घूमता फिरता है, कोई काम नहीं कर सकता?'' कोई कहता है, ''चोर होगा, अन्दर झांक कर देख रहा है। महाराज! जो बात नहीं सुननी चाहिये, वह भी सुननी पड़ती है।

महाराज जलाल में आ गये। कहते हैं, ''मरदाना! निरंकार की करते हों चाकरी, फिर दुनियाँ के आगे हाथ फैलाएं?'' खड़ाऊँ में से पैर निकाला, अँगूठे से ज़मीन खोदी। कहते हैं, ''यह उठा ले लाल (रतन); यह बहुत कीमती लाल है। जा, इसका मूल्य पूछ कर आ, साथ ही भोजन भी कर आना, बेचना मत इसे।''

शहर में चला गया। पहले सब्जी वालों के पास गया। वहाँ पहुँच कर मूल्य पूछा और कहा, भाई! मुझे सवा सेर फल दे दे। साथ ही इसका मूल्य बता दे, यह मेरे पास बहुत कीमती वस्तु है। वह सिर से लेकर पैरों तक मरदाना को देखे जा रहा है और सोचता है, इसका दिमाग फिर गया है, पत्थर उठाये फिरता है। कहता है, भाई! तू परदेसी लगता है। दो मूलियाँ ले जा, यह पत्थरी सी मेरे पास छोड़ दे। इसका मूल्य कोई नहीं, ये तो नदियों समुद्रों में से ऐसे ही मिल जाती हैं क्योंकि तू उठाकर लाया है ज़रा सुन्दर लगती है, मुझे दे दे।

आगे चला गया हलवाई के पास। उसने आधा सेर मिठाई इसका मूल्य बताया। बहुत कहा कि यह बड़ी कीमती है। जितने ग्राहक खड़े थे, सारे देखकर हंस पड़े। एक ने उसके पास आकर कहा कि इसका दिमाग फिर गया लगता है। हलवाई ने फिर कहा आधा सेर मिठाई ले ले, यह तो पांसग (पासकू) है मेरी तराजू का और ऐसे तो हमारे बच्चे गंगा स्नान पर जाने के बाद बेअन्त उठा लाते हैं।

मरदाना चला गया वहाँ से। आगे बजाज (कपड़े बेचने) वाले के पास गया, वह दो गज़ कपड़ा देता उसके बदले। उसने भी वैसे ही कहा, बहुत समझाया। इसके बाद जौहरी के पास गया। दस रूपये मूल्य बताया उसने। ''शुक्र है'' कहता है ''दस रूपये तो मूल्य बना।'' उससे और आगे बढ़ गया और पूछता पूछता सालस राय जौहरी के पास पहुँच गया। उसके द्वार पर जाकर bell (घंटी) बजाई, रस्सी लटक रही थी, उसने खींची तो अन्दर घंटी बजी। नौकर आया, जिसका नाम अधरका था मरदाने ने समझा शाह जी आ गये। कहता है शाह जी! सत करतार। वह कहने लगा, भाई मैं शाह नहीं मैं तो नौकर हूँ। क्या नाम है तुम्हारा?

''मेरा नाम मरदाना है?''

''कहाँ से आए हो?''

‘‘हम पंजाब देश, मद्र देश से आए हैं।’’

‘‘क्या काम है?’’

‘‘यह मेरे पास एक चीज़ है, इसका मूल्य पूछना है।’’

देखकर हैरान हो गया; अनुमान लगाता है कि कितना मूल्य होगा इसका। इतनी देर में ऊपर चला गया मरदाने को साथ लेकर। सालस राय पूछता है, ‘‘क्या बात है?’’ उसने बताया कि भाई मरदाना जी आए हैं। यह चीज़ है इनके पास अति सुन्दर, शाह जी! मैंने तो आज देखी है, पहले मैंने कभी भी ऐसी नहीं देखी क्योंकि काफी समय हो गया यहाँ सेवा करते करते। सालस राय कहता है, ‘‘बेटा, कितना मूल्य होगा?’’

कहने लगा, ‘‘हज़ार रूपये के करीब लगता है मुझे।’’ उस समय के एक हज़ार रूपये का मूल्य आज के एक लाख रूपये के बराबर था। अब यदि कह दें कि लाख रूपये है इसका मूल्य, हम हैरान रह जायेंगे।

सालस राय कहता है, ‘‘दिखा तो मुझे।’’ जब उसने हाथ में लाल (रतन) पकड़ा, मुँह ताकता ही रह गया। छाती में सांस अन्दर को खींचता चला गया, बाहर निकालना भूल गया अर्थात सांस भी एक तरह से रूक गई हैरानी से, कमीज़ के बटन टूटने लग गये अर्थात आपे से बाहर होने लगा। बोला नहीं जाता इशारा करता है हाथ से तिजौरी की तरफ। थोड़ी देर बाद आया और बोला, ‘‘बेटा, किस्मत खुल गई। यह तो वह नायाब (अमुल्य) लाल है जिसके बारे में हमारे बुजुर्ग और उस्ताद (अध्यापक) बताया करते थे। शुक्र है, मेरी ज़िन्दगी में देखना नसीब हो गया। नायाब है। ऐसा नहीं मिला करता। सुना करता था इस लाल की कहानियाँ पर आज अपनी आँखो से देख लिया। बेटा सौ रूपये ला तिजौरी में से निकाल कर।’’ लाल को सामने फट्टी (चौकी) पर रख दिया और सौ रूपया लेकर शीश झुकाया। मरदाना ने इसकी ओर देखा, भांपने का यत्न किया और उसने समझा कि शायद ऐसा समझता है कि इसका मूल्य सौ रूपये है।’’ कहता है भाई मरदाना! मैं इसका मूल्य नहीं दे रहा। यह तो नायाब लाल है, इसके दर्शनों की भेंट ही सौ रूपये है और यह कीमत नहीं है इसकी।

‘‘तुम्हारा है यह, भाई मरदाना?’’

‘‘नहीं जी, मेरे मालिक का है।’’

‘‘क्या नाम है, तुम्हारे मालिक का?’’

‘‘उन्हें नानक निरंकारी कहते हैं। हम सतगुरू नानक देव कहते हैं। संसार ‘नानक निरंकारी’ कहता है।’’

‘‘नानक वह तो नहीं जो संसार को पार लगाने के लिये कलयुग में प्रकट हुये हैं?’’

‘‘हाँ, वही हैं।’’

बहुत प्रसन्न हुआ कि दो चीज़ों के आज दर्शन हो गये। कहता है, ‘‘मरदाना जी, भोजन इत्यादि?’’

‘‘भोजन इत्यादि का तो अभी तक कोई प्रबन्ध नहीं हुआ।’’

‘‘कितनी मूूतयाँ हैं आप?’’

‘‘कभी कभी तो हम हज़ारों की संख्या में होते हैं पर आज तो तीन आदमी ही है – मैं हूँ, गुरू नानक जी हैं और भाई बाला जी हैं।’’

‘‘चलो आप; यह ले लो सौ रूपये, हम जल्दी आपके पीछे पीछे आये, और न किसी के घर भोजन करना मान लेना।’’

मरदाना वापिस चल पड़ा। इधर सालस राय ने कहा, बेटा अधरक्का! बाग में जाकर ताज़े फल तोड़ कर ला और बढ़िया बढ़िया शुद्ध घी की तथा नारियल की मिठाई; साफ और स्वच्छ बर्तनों में डालकर लाना। घर जाकर कह कि आठ दस अतिथियों का भोजन जल्दी तैयार करके दें। सब कुछ तैयार हो गया।

उधर गुरू नानक जी के पास मरदाना वापिस पहुँच गया। जाकर सौ रूपये रख दिये महाराज जी के चरणों में और लाल भी रख दिया। कहते हैं, ‘‘मरदाना! यह क्या बात?’’ कहता है, ‘‘महाराज! आपकी लीला आप ही जानें। मेरा तो सिर चकरा रहा है।’’ महाराज कहते हैं, ‘‘तेरे सिर को क्या हो गया?’’ ‘‘महाराज! इतने अनजान लोगों के साथ माथा पच्ची! पहला कहता है मुझे दो मूलियाँ ले जा। दूसरा कहता है आधा सेर मिठाई ले जा, तीसरा दो गज़ कपड़ा ही मूल्य बताता था और जौहरी कहता दस रूपये ले जा।’’ महाराज कहते हैं, ‘‘मरदाना! तूने बताना था इसके बारे में। तुझे हमारे वचनों पर विश्वास नहीं। ‘‘यकीन था, महाराज! पर यह संसार मानता है किसी की बात?’’ वे तो मेरे अन्दर ही दोष निकालने लग पड़े कि दिमाग फिर गया है इस आदमी का। महाराज! हैरान हूँ, मैं सालस राय जौहरी के पास गया और वह कहता, इसका तो मूल्य ही कोई नहीं। यदि बेचना है तो दो चार महीने रूको । भारत वर्ष में से दूर दूर से बड़े बड़े जौहरी बुलाऊँगा, पारखू बुलाऊँगा पर फिर भी इसका मूल्य कोई नहीं पायेगा। सारी दौलत यदि बादशाह दे दे तब भी इसका मूल्य पूरा नहीं होगा। महाराज! ऐसे अनजान लोग? ‘‘महाराज कहते हैं, ‘‘मरदाना! तभी तो हम तुझे कहते थे कि कीमती चीज़ों की कदर कदरदानों के बिना

कोई नहीं कर सकता। क्या जानता है सब्जी फरोश इन लालों के बारे में? हलवाई को क्या पता कि लाल (रतन) क्या होते हैं? बजाज को क्या पता कि लाल (रतन) क्या होते हैं? मरदाना! जिस प्रकार पूरा जौहरी (कदरदान) लालों के मूल्य को पहचानता है, उसी तरह से 'नाम' की कदर का संसार को नहीं मालूम। ये तो गाय भैसों का मूल्य जानते हैं; जायदादों, प्लाटों को जानते हैं। कारखानों को जानते हैं; फार्म को जानते हैं, ट्रकों को जानते हैं, बाल बच्चों की कदर जानते हैं; नौकरियों की जानते हैं, अपनी हउमै की कदर जानते हैं। इन्हें क्या पता कि 'नाम' की क्या कदर, मूल्य होता है?'' कितनी बार बता दो, नहीं बदलते, वहीं के वहीं रहते हैं। इसकी कदर का यदि पता है मरदाना; तो परमेश्वर के प्यारे ही जानते हैं -

*धारना - महिमा हरि नाम दी, सन्तां दे हिरदे वसदी - 2, 2*
*सन्तां दे हिरदे वसदी, सन्तां दे हिरदे वसदी - 2*
*महिमा हरि नाम दी,............।*

*नाम की महिमा संत रिद वसै।* *पृष्ठ - 265*

सन्तों के बिना पता नहीं चलता -

*सन्त प्रतापि दुरतु सभु नसै।* *पृष्ठ - 265*

तमाम दुर्मति तथा द्वैत का नाश हो जाता है, सन्तों को मिलकर।

इतने में सालस राय भी आ गया और लाल के बारे में कहने लगा। महाराज कहते हैं, ''सालस राय! यह तो कुछ भी नहीं, कांच का टुकड़ा है; मिट्टी का टुकड़ा है। इसका मूल्य क्या डालना है; इससे अधिक तो तेरे श्वांस कीमती हैं, तेरा शरीर कीमती है, तेरे नेत्र कीमती हैं।'' सो कहते हैं, नाम की कदर कीमत मरदाना! सन्तों को पता होता है। पूछ नामदेव को; पूछ कबीर को जाकर; पूछ रविदास जी को; पूछ ले सैण जी को; पूछ धन्ने को जाकर; और महात्माओं को पूछ ले। कितनी बड़ी हस्ती थी। बादशाह चक्रवर्ती जो भारत वर्ष में हुए हैं - नामदेव के साथ कौन था दक्षिण का बादशाह, कौन था जो उस समय राज्य करता था, कोई जानता है? बता सकता है कोई इगलैण्ड का बादशाह कौन था, अमेरिका का कौन था, ईरान का बादशाह कौन था उस समय? कोई नहीं जानता। साधुओं को सभी जानते हैं। सेन्ट पाल के बारे में पूछ लो, सभी जानते हैं पर बादशाह का नाम नहीं जानते कि इस समय कौन था? Jesus (यीशु मसीह) के बारे में पूछ लो, सभी जानते हैं। बादशाह के बारे में पूछो जिसने सूली पर चढ़ाया था, उसका कोई नाम नहीं जानता। मौहम्मद साहिब को सभी जानते हैं पर जिन्होंने इन्हें जख्मी करके फैंक दिया था, उनका कोई नाम नहीं जानता। सो नाम के बारे में नाम जपने वालों को पूछो वे सदा कायम

रहते हैं, बड़ी हस्ती बन जाते हैं -

*जिसनो बखसे सिफति सालाह। नानक पातिसाही पातिसाहु।*

*पृष्ठ - 5*

*धारना - नाम जप के लखां दा हो गिया,*
*नामा अद्धी दमड़ी दा - 2, 2*
*मेरे पिआरे नामा अद्धी दमड़ी दा।*
*पिआरिओ नामा अद्धी दमड़ी दा - 2*
*नाम जप के लखां दा हो गिया,.................................।*

*गोबिंद गोबिंद गोबिंद संगि नामदेउ मनु लीणा।*
*आढ दाम को छीपरो होइओ लाखीणा॥* *पृष्ठ - 487*

कितना बड़ा हो गया? करोड़ों ब्रह्मण्डों का मालिक कभी छप्पर बना रहा है आकर, कभी मरी हुई गाय को जीवित करने आया, कभी देहुरा फेरने के लिये, सारे ही काम.....जब याद करते हैं, उसी समय आ जाता है। 72 बार दर्शन हुए नामदेव जी को, साकार रूप में।

पूछ लो, महाराज कहते हैं, कबीर को नाम की महिमा। गरीब आदमी की ऐसी financial (आृथक) हालत लिखी है बाणी में कि हमें तो चने दे देता है और सन्तों को भोजन बना बनाया खिलाता है; कैसा हो गया है, वह। शिकायत करती है माता -

*सुनहु जिठानी सुनहु दिरानी अचरजु एकु भइओ।*
*सात सूत इनि मुडींए खोए इहु मुडीआ किउ न मुइओ।* *पृष्ठ -856*

यह घर को खराब करने में लगा हुआ है -

*जब की माला लई निपूते तब ते सुखु न भइओ।* *पृष्ठ - 856*

गालियाँ निकालती है, गुरू को कि ऐसे सन्तान-हीन का अपना तो बेटी बेटा कोई नहीं, कोई आकर इसे ऐसी माला दे दी कि दिन रात माला ही घुमाता रहता है, 'वाहिगुरू-वाहिगुरू' 'राम-राम' करता रहता है और कहती है हमें सथर (घास) दे देता है, उन्हें चारपाईयां दे देता है। घर में चारपाईयां भी फालतू नहीं थी सोने के लिए और वे आ जाते हैं साधु फिर चारपाईयाँ निकलवा कर उन्हें सोने के लिये दे देता है। तीन ही चारपाईयाँ हैं घर में, फालतू नहीं। उनकी (कबीर जी की) हालत कितनी बड़ी हो गई साढ़े सात करोड़ मनुष्यों का उद्धार कबीर साहिब ने किया और अमर अवस्था को प्राप्त कर चुके हैं। कितनी बड़ी बड़ी सल्तनतों से टक्कर ली आपने। पानी में फैंक दिये गये - पत्थर बान्ध कर ज़न्जीरें बान्ध कर -

*गंगा की लहरि मेरी टुटी जंजीर। म्रिगछाला पर बैठे कबीर॥*

*पृष्ठ - 1162*

हाथी के सामने फैंक दिया और हाथी झुक झुक कर सूंड से नमस्कार करता है, कहता ही नहीं कुछ उल्टा कुछ काज़ियों की तरफ ही भाग खड़ा हुआ। आग में फिंकवा दिया, लकड़ियाँ जल गईं, सब कुछ जल गया; कबीर को कुछ भी न हुआ। लाल सुर्ख होकर निकल आए, 'राम-राम' करते करते। धरती में दबा दिया, देखते हैं वह तो बाज़ार में घूमता फिरता है -

*जल अगनी विचि घतिआ जलै न डुबै गुर परसादि।*

*भाई गुरदास जी वार 10/2*

परमेश्वर Remote control (रिमोट कन्ट्रोल) के साथ कार्य कर रहा है, उसके सारे काम स्वंय कर रहा है - कहीं यज्ञ कर रहा है, कहीं कुछ कर रहा है। इस प्रकार महाराज फ़रमान करते हैं -

*धारना - भइओ गुणी गहीरा जी, भइओ गुणी गहीरा जी -2, 2*
*नीच कुला जुलाहरो, नीच कुला जुलाहरो - 2*

*बुनना तनना तिआगि कै प्रीति चरन कबीरा।*
*नीच कुला जोलाहरा भइओ गुनीय गहीरा॥ पृष्ठ - 487*

तनना-बुनना छोड़ दिया; गहर गम्भीर हो गया; प्रीत चरणों में लग गई परमेश्वर के। भूलता नहीं है कभी भी। जैसे मछली पानी के बिना जीवित नहीं रहती ऐसे ही नाम कबीर की जिन्दगी बन गया ***'नीच कुला जोहालरा भइओ गुनीय गहीरा।'*** इतना ही नहीं हुआ, संगत करने वाले भी हो गये।

आज कबीर साहिब कहीं बाहर गये हुए हैं और कोई दुखी आदमी कोई राजा, जिसका शरीर पीड़ित था कुष्ट रोग से, बदबू आ रही थी - घर आ गया। राजा खड़ा है दरवाज़े के आगे, भीख मांगता है। किस चीज़ की भीख मांगता है? जो सन्तों के पास हुआ करती है। कहता है, मैंने कबीर साहिब को मिलना है।'' अन्दर से स्त्री बाहर आई माता लोई। कहने लगी, ''वे तो बाहर गये हुए हैं।'' राजा कहने लगा, ''मैं बहुत दुखी हूँ, बड़ी दूर से आया हूँ। शरीर को कुष्ट हो गया है, मेरे से कष्ट पीड़ा सहन नहीं होती, कृपा करो, मुझे बता दो कबीर साहिब कहां हैं?'' कहती है, ''वह तो बहुत दूर गये हैं। पर तू दुखी है, चलो कोई बात नहीं, दवाई दे देती हूँ तुझे।'' वह कहता है। बीबी! दवाइयाँ तो मैंने बहुत खा लीं। दवाईयों से ठीक होना होता तो मैं इस दर पर क्यों आता? दवाईयाँ सब फेल हो गईं हैं, कोई दवाई काम नहीं करती।'' वह कहने लगी, ''जो सन्तों के पास दवाई होती है वही देने लगी हूँ।''

जैसे अमृतधारा कहते हैं, 32 बिमारियों का इलाज होता है इससे, ऐसे ही सन्तों के पास एक ही दवाई होती है, वह सारी बिमारियों का

एक ही इलाज होता है -

*धारना - तेरे सारिआं दुखां दी दारू, इको नाम वाहिगुरू दा -2, 2*
*मेरे पिआरे, इको नाम वाहिगुरू दा।*
*वाह वाह वाह वाह, इको नाम वाहिगुरू दा।*
*तेरे सारिआं दुखां दी दारू,................................।*

कहने लगी, ''राजन! तैयार हो जा। जो दवाई हमारे पास है, बर्तन जो है उसका, वह विश्वास है। है तेरे पास विश्वास?'' कहता है, ''बीबी जी! मैं तो विश्वास करके ही यहाँ आया हूँ?''

अमेरिका में मैंने देखा न्यूयार्क में टी. वी. पर आता है, शायद 26 चैनल पर। वहाँ बीमार आदमी सत्संग में आते हैं। जो भाषण देता है, इतना सुन्दर बोलते हैं कि हमें भी सुनने को बहुत प्यारा लगता है। नेत्रों में आँसू आ जाते हैं, इतना जीसस का प्यार है उसके हृदय में और फिर जितनी संगत audience (दर्शक) होते हैं, नेत्रों में जल आ जाता है सभ के भावपूर्ण माहौल बन जाता है। सारा माहौल भर जाता है रूहानी waves (तरंगों) के साथ। वह फिर कहता है, बीमार आदमी आ जाओ; विश्वास करने वाले आओ। उस समय स्ट्रैचरों पर लिटा कर ले आते हैं फिर वह पूछता है, ''विश्वास है?'' ''हाँ 100 प्रतिशत विश्वास है।'' फिर उठ कर खड़ा हो। फिर बिठा लेते हैं और कहते हैं उठकर मेरे पीछे पीछे चल। धीरे धीरे चलता है पहले, फिर दौड़ पड़ता है। सारा चक्कर संगत के चारों ओर लगाने के बाद दूर फैंकता है स्ट्रेचर को। 10-15 आदमी प्रतिदिन ठीक हो जाते हैं।

सो माता लोई कहने लगी, ''राजन! चित्त में पक्का विश्वास होना चाहिए। दवाई का 100 प्रतिशत प्रभाव है। पर बर्तन जो है, कैपसूल है ऊपर का खोल, वह विश्वास का होना चाहिए क्योंकि इस दवाई ने तेरे मन में बस जाना है और मन में बसते सार ही तू ठीक हो जायेगा -

*जिसु मनि वसै पारब्रहमु निकटि न आवै पीर।*
*भुख तिख तिसु न विआपई जमु नही आवै नीर॥ पृष्ठ - 1102*

यमदूतों का भी इलाज है, हउमै का इलाज है जो जन्म-मरण के चक्करों में डाले रखती है; ईर्ष्या का इलाज है; निन्दा का, तृष्णा का, सारी मानसिक बिमारियों का इलाज है एक ही -

*सरब रोग का अउखदु नामु। पृष्ठ - 274*

परमेश्वर का नाम दारू (औषधि) है। शारीरिक बिमारियाँ मन से पैदा होती हैं -

*खसमु विसारि कीए रस भोग। तां तनि उठि खलोए रोग।*
*पृष्ठ - 1256*

बहुत से महात्मा तो ध्यान ही नहीं देते कि अपने किये हुए कर्म भोग भाई! हमारे से क्या लेने आया है? नाम जप, अन्यथा तुझे अगले जन्म में भुगतने पड़ेंगे लेकिन गुरू नानक पातशाह ने तो कौढ़ियों को ठीक कर दिया, नाम की दवाई देकर। आगे के लिये सीधे रास्ते पर चला दिया।

Problem (समस्या) यह होती है कि ठीक तो हो जाते हैं। जब ठीक हो जाते हैं, उसी समय आ जाते हैं, बाबा जी! पाठ अब बन्द कर दूँ? भाई! जिस पाठ ने तुझे ठीक कर दिया है, तेरे अन्दर विश्वास होना चाहिये कि मैं तो अब सारी जिन्दगी इस पर लगा दूँ पर तू ठीक होते ही छोड़ गया इस चीज़ को। यह कमी है हमारे अन्दर।

राजा कहने लगे, ''मुझे विश्वास है?'' माता लोई कहती है ''दवाई है केवल एक नाम।'' महाराज कहते हैं -

*अवरि उपाव सभि तिआगिआ दारू नामु लइआ।*
*ताप पाप सभि मिटे रोग सीतल मनु भइआ॥* *पृष्ठ - 817*

मन भी शीतल हो गया, तीनों तापों का अन्त हो गया, सारे पापों का भी अन्त हो गया।

अब दवाई देती है माता लोई। राजा को कहा, ''बैठ जा सामने।'' आप भी बैठ गई। पूरे भाव में आ गई, वृत्ति एकाग्र करके रस में लीन हो गई। नेत्रों का तेज़ सहन नहीं हो पाता। कहती मेरी तरफ देख। राजा नेत्र करता है पर टिकते नहीं, इतना जलाल (भाव पूर्ण) है। कहती है, ''कह राम।'' राम कहलवा दिया। कहते ही सारे शरीर में रोमान्च होने लग पड़ी। कहती है, ''फिर कह राम।'' फिर कहलवा दिया और कष्ट दूर हो गया। हैरान हो गया कि 'राम' कहते ही दर्द बन्द हो गया। कहती है, ''फिर कह राम।'' तीसरी बार कहलवा दिया। ''जा, अब स्नान कर, 'राम-राम' कहते रहना।'' भेज दिया। राजा ने आकर स्नान किया। प्रसन्न हो गया, उछलता-कूदता फिरता है, साथी पड़ौसी कहते हैं भेदी आदमी कि तुम कैसे ठीक हो गये? कहने लगा ''मुझे साधुओं ने दवाई दे दी।'' कहते हैं ''कोई स्पैशल उनके पास अकसीर (सर्व रोगों की एक औषधि) होती है?'' राजा कहता है, ''अकसीर नहीं दवाई का नाम और है -

*धारना - दित्ती साधूआं ने, मैंनू नाम दी दवाई - 2, 2*
*नाम दी दवाई, मैंनूं नाम दी दवाई - 2*
*दित्ती साधूआं ने मैंनू,....................।*

*नामु अउखधु मो कउ साधू दीआ।* *पृष्ठ - 101*

दवाई मिल गई सबसे बड़ी जिससे कोई रोग नहीं रहता। यहाँ तक कि यमों का रोग भी खत्म, हउमै का रोग भी खत्म -

*किलबिख काटे निरमलु थीआ।* *पृष्ठ - 101*

सारे पाप काट दिये -

*कोटि अघा सभि नाम होहि सिमरत हर नाउ।* *पृष्ठ - 707*

करोड़ों पाप खत्म कर दिये इस दवाई ने -

*अनंदु भइआ निकसी सभ पीरा।* *पृष्ठ - 101*

अब मन आनन्दित हो गया, सब प्रकार की पीड़ा दूर हो गई -

*सगल बिनासे दरदा जीउ।* *पृष्ठ - 259*

अब कोई दर्द नहीं - न मानसिक दर्द, न शारीरिक पीड़ा, न कोई और दर्द। कितनी बड़ी दवाई है। महाराज कहते हैं, यह दवाई यदि लग जाये-

*लला लावउ अउखध जाहू। दूख दरद तिह मिटहि खिनाहू।*
*पृष्ठ - 259*

एक क्षण भर में सारे दुख मिट जाते हैं यदि यह दवाई लगा ले।

*नाम अउखधु जिह रिदै हितावै।* *पृष्ठ - 259*

जिसके ह्दय में नाम की दवाई हित कर जाये, प्यार लग जाये और फिर इसमें से निकले न, फिर क्या होता है? कहते हैं वह रोगी नहीं होता -

*ताहि रोगु सुपनै नहू आवै।* *पृष्ठ - 259*

सपने में भी कभी बीमार नहीं होता -

*हरि अउखधु सभ घट है भाई।* *पृष्ठ - 259*

सभी के अन्दर ही दवाई रखी हुई है -

*नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु। देही महि इस का बिस्रामु।*
*सुंन समाधि अनहत तह नाद। कहनु न जाई अचरज बिसमाद।*
*पृष्ठ - 293*

ऐसी दवाई हम निकाल नहीं रहे अन्दर से। अन्दर रख दी है परमेश्वर ने कि बीमार न हो जाएं कहीं, क्योंकि -

*फिरत फिरत बहुते जुग हारिओ मानस देह लही।*
*नानक कहत मिलन की बरीआ सिमरत कहा नही॥* *पृष्ठ - 631*

करोड़ों वर्षों बाद मिली मनुष्य की देही कहीं रोगी होकर न चली जाए। नाम जप ले, दवाई साथ ही दे दी है। महाराज कहते है -

*हरि अउखधु सभ घट है भाई।* *पृष्ठ - 259*

पर बने कैसे? कहते हैं गुरू धारण कर ले, फिर पता चल जायेगा -

*गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई।*
*गुरि पूरै संजमु करि दीआ।* *पृष्ठ - 259*

उसने संयम साथ लगा दिये कि ऐसा नहीं करना, वैसा नहीं करना, यह नहीं खाना, खट्टा नहीं खाना, ऐसा मत करना। गुरू कहते हैं, निन्दा मत करना, चुगली मत करना, ईर्ष्या मत करना, द्वैत भावना मत लाना मन में। इस दवाई के उसने संयम कर दिये –

*नानक तउ फिरि दूख न थीआ॥* *पृष्ठ - 259*

जब दवाई खा ली, महाराज कहते हैं, फिर दुख का खातमा हो गया।

सो राजा अब सब जगह बातें करता जा रहा है कि साधुओं ने नाम की दवाई दे दी। माता लोई ने नाम की दवाई दे दी, तीन बार ही कहलाया 'राम'।

कबीर साहिब कुछ दिनों के बाद जब वापिस आए तो रास्ते में सुनाई दिया,"धन्य कबीर, धन्य कबीर, धन्य माता लोई, धन्य माता लोई"। कहते हैं 'कबीर-कबीर' तो पहले भी सुनते थे, यह माता लोई कहाँ से आ गई? कोई भेदी मिल गया।

कबीर साहिब कहते हैं,"यह, माता का क्या होने लग पड़ा? कुछ कर दिया लगता है उसने। कोई कौतुक दिखा दिया?" कहता है "महाराज! कोढ़ी आया था, राजा था अमुक देश का। केवल तीन बार राम कहलवाया, उस समय कुष्ट रोग दूर हो गया।" चुप कर गये, त्यौरियाँ चढ़ गई माथे पर, कहते "हैं, नाम! इसने इतनी संगत की, इसे अभी तक यह पता नहीं चला कि 'सांई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो।' इतना सस्ता लुटा दिया?"

घर आ गये। उस समय घर आकर बोले नहीं। माता लोई आगे बढ़ी, नमस्कार की। गले में पड़ा साफा और चिप्पी हाथ से लेने का प्रयत्न करती है; साफा आप ही टाँग दिया और अपने आप चिप्पी रख दी और पीठ करके बैठ गये। दूसरी तरफ गई वहाँ से भी पीठ मोड़ ली। आज पहला दिन था कबीर साहिब के नाराज़ होने का। आज तक कभी नाराज़ नहीं हुए थे, बार-बार उसे कहे जाते थे। सुनते ही नहीं थे, न माँ की, न बाप की, न अपनी घरवाली की, न किसी अन्य की। यदि कोई कहता था, तो कह देते थे –

*हम मंदे मंदे मन माही। साझ पाति काहू सिउ नाही॥*
*हम अपतह अपुनी पति खोई। हमरै खोजि परहु मति कोई॥*

*पृष्ठ - 324*

ऐसे कह कर चले जाते, पर गुस्से नहीं होते थे किसी के साथ। आज पहले दिन गुस्से हुए। साधु का गुस्सा ठीक नहीं होता साध संगत जी! पता नहीं क्या कर दें? डर होता है साधु के गुस्से का। सो उस

समय नेत्रों से जल बह चला, माता के। कहने लगी, ''स्वामी जी! मुझे आप मार दो, खत्म कर दो; यदि तुम मुझे आरे से भी चिरवा दो, मै ज़रा भी दुख नहीं मानूंगी, पर यह जो पीठ है, यह मैं सहन नहीं कर सकती। प्रार्थना करती है -

*धारना- आरे नाल चीर दो, करवट न दे के मारो -2, 2*
*करवट न दे के मारो, करवट न दे के मारो।*
*आरे नाल चीर दो,...............................।*

कहने लगी, महाराज -

*करवतु भला न करवट तेरी।* *पृष्ठ - 484*

'करवत' आरे को कहतें हैं, 'करवट' कहते हैं पीठ देकर मारना, गुस्से हो जाना -

*लागु गले सुनु बिनती मेरी॥* *पृष्ठ - 484*

''मेरी प्रार्थना तो सुनो! आपने यह इतना क्रूर रूप धारण कर लिया है, यह तो मैं सहन नहीं कर सकती -

*हउ वारी मुखु फेरि पिआरे।* *पृष्ठ - 484*

इधर को मुँह तो कर लो।'' फिर भी गुस्से नहीं होती -

*धारणा- मुख फेर पिआरे, हउ वारी, हउ वारी - 2, 3*

***'हउ वारी मुखु फेरि पिआरे'।*** गुस्से नहीं होती, क्रोध में नहीं आती। ऐसे नहीं कहती कि खाना है तो खा, नहीं तो मौज कर। बाहर से घूमता फिरता आया है, अब मुझ पर गुस्से..........। पतिव्रता थी - साध संगत जी! मामूली सा भी गुस्सा नहीं सहन कर सकती थी।

*करवटु दे मोकउ काहे कउ मारे।* *पृष्ठ - 484*

मुझे मारो मत -

*जउ तनु चीरहि अंगु न मोरउ।* *पृष्ठ - 484*

आप आरा चला कर देख लो - मेरे सिर पर, मैं कभी जरा सी भी 'चीख' निकालूं या हाथ भी उठाऊँ -

*पिंडु परै तउ प्रीति न तोरउ॥* *पृष्ठ - 484*

शरीर मेरा खत्म हो जाएगा, पर मेरा प्यार तुम्हारे से दूर नहीं जा सकता। फिर भी मैं प्यार करूंगी मरती मरती, जान देती देती।

*हम तुम बीचु भइओ नही कोई। तुमहि सुकंत नारि हम सोई।*
*पृष्ठ - 484*

यह हो क्या गया? कोई चुगलखोर आ गया हमारे बीच में? मैं आपकी पत्नी हूँ। आप मेरे पति हो। बताओ तो सही, बात क्या है? क्योंकि गुरमुखों

का गुस्सा पानी की लकीर की तरह होता है, पत्थर की लकीर नहीं हुआ करता। आता है, तुरन्त खत्म हो जाता है, बहुत देर तक नहीं रहता। उस समय कबीर साहिब, क्योंकि नियम भंग हो गया था, इस पर थोड़ा सा नाराज़ थे। आप फरमाने लगे कि गुस्से का कारण सुनना है? इस तरह पढ़ लो -

*धारना- लोईए राम पिआरीए, तैं राम सवल्लड़ा लाइआ - 2, 2*
*तिंन वारी राम कहा के, रोगी दा रोग हटाइआ।*

कहने लगे ''मेरे गुस्से का कारण! इतनी तूने संगत की साधुओं की, नाम के बारे में तूने इतने वचन सुने साधुओं के, तुझे नाम पर विश्वास ही नहीं आया कि नाम का इतना ही मूल्य है? एक बार ही यदि तू राम कहलवाती, उसी से ही रोग दूर हो जाना था।''

*कहतु कबीरु सुनहु रे लोई। अब तुमरी परतीति न होई॥*

*पृष्ठ - 484*

मेरे दिल में तेरे प्रति बहुत regard (आदर) था पर मुझे क्या पता था, तू अभी अनजान ही बैठी हैं, नाम इतना सस्ता खर्च कर देगी। गुस्सा भी जायज़ था, साध संगत जी! क्योंकि 'सांई नाम अमोलु कीम न कोई जाणदो।' इतनी बहुमूल्य वस्तु, इतनी सस्ती लुटा दी। उस समय दोनों हाथ जोड़कर कहने लगी,''मेरी प्रार्थना सुनो। मैंने सस्ता तो नहीं लुटाया। पहली बार कहलवाया 'राम' कि इसके सारे पाप, जिनके कारण इसे कोढ़ हुआ था, खत्म हो जायें। जड़ से उखाड़ दिया उनको। सो मैंने एक बार राम कहलवाया। दूसरी बार इसका शरीर दुखी था, मैंने उसे दूर करने के लिये कहलवा दिया। फिर मुझे यह ख्याल आया कि कहीं ठीक हो जाने के बाद फिर पापों में प्रवृत न हो जाए इसकी सुरत को नाम की ओर लगाने के लिये मैंने तीसरी बार राम कहलवा दिया और नाम 'गुरू मन्त्र' दे दिया।'' कबीर साहिब प्रसन्न हो गये, कहते हैं ठीक है, ठीक किया।

सो इस प्रकार महाराज गुरू दशमेश पिता, माता जीतो जी को कहने लगे, देखो, जब तक नाम की रहतों (नियमों) को हम नहीं मानते, इस का पालन नहीं करते, नाम नहीं चल सकता। यही Problem (कठिनाई) है क्योंकि नाम तो पाँच प्यारे दे देते हैं, उसके बाद पूर्ण क्यों नहीं होता, चलता क्यों नहीं क्योंकि हमारी रहत नहीं है। वह वस्तु हमारे पास नहीं जिसके base (आधार) पर नाम ने जारी रहना है। सो पहली चीज़ होती है, 'वाहिगुरू पर पूरा विश्वास आ जाना' कि वह मेरे साथ है, हर समय मेरे साथ रहता है -

*पेखत सुनत सदा है संगे मै मूरख जानिआ दूरी रे।* *पृष्ठ - 612*

है मेरे साथ, पर मुझे दिखाई नहीं देता क्योंकि अभी मेरी आखें नहीं खुलीं। दूसरा होता है कि जो मेरा गुरू है वह स्वंय ही परमेश्वर है, वाहिगुरू आ गया मेरा गुरू बनकर। मेरे से अधिक सौभाग्यशाली शायद ही कोई और हो जिसे गुरू परमेश्वर मिल गया। तीसरा है जिस नाम की प्राप्ति करनी है उस पर विश्वास होना चाहिए कि अब मुझे नाम मिल गया, अब मैं दिन रात इसको जपता रहूँ, अब सुस्त होकर न बैठूँ, चलते फिरते, काम करते हुए, खाते पीते, ऐसी अवस्था में आ जाऊँ कि एक सैकिण्ड के लिए भी मुझे परमेश्वर न भूले।

*जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामां मनि मंतु।*
*धंनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु।* *पृष्ठ - 319*

साधु बना देता है यदि नाम न भूले। सो उस नाम पर विश्वास होना चाहिये। महाराज कहते हैं, और कौन-कौन सी रहते हैं? बहुत सारे नियम हैं, एक-दो-चार नहीं, दर्जनों हैं।

अब क्योंकि समय इजाज़त नहीं देता, अगली बार महाराज जी ने कृपा की, जो रहतें (नियम) रह गई हैं, उन पर विचार करेंगे। बहुत सारे प्रेमी यह कहते हैं जी, वृति नहीं लगती, नाम नहीं जपा जाता। अकेले अकेले से बात करनी पड़ती है। सो भाई ये बातें नोट कर लो, हृदय में बसा लो। जब इनका पालन करेंगे, नाम तो अन्दर से फुव्वारें की तरह फूट पड़ेगा स्वत: लहरें चल पड़ती हैं नाम की। फिर चाहे सोया रहे, या जागता रहे, नाम ने अपने आप चलते रहना है, अपना काम करना है, पर्दा हट जायेगा। अब सभी प्रेमी गुरू सतोतर में बोलो, पहले आनन्द साहिब में बोलो।

- आनन्द साहिब -

- गुरू सतोतर -

- अरदास -

# १ओंकार सतिगुरू प्रसादि

*शान.......................................................................................................।*

*सतिनामु श्री वाहिगुरू, धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज।*

*डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।*
*डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ पृष्ठ - 256*

*फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।*
*नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ पृष्ठ - 289*

*भई परापति मानुख देहुरीआ। गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।*
*अवरि काज तेरै कितै न काम। मिलु साध संगति भजु केवल नाम।*
*सरंजामि लागु भवजल तरन कै। जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै॥*
*पृष्ठ - 12*

*धारना - हरि के सन्त बतावहु मार्ग, प्रभ के मिलणे का 2, 2*
*प्रभ के मिलणे का, प्रभु के मिलणे का - 2, 2*
*हरि के सन्त बतावहु मार्ग...............।*

*मेरो सुंदरु कहहु मिलै कितु गली।*
*हरि के सन्त बतावहु मारगु हम पीछै लागि चली।*
*प्रिअ के बचन सुखाने हीअरै इह चाल बनी है भली।*
*लटुरी मधुरी ठाकुर भाई ओह सुंदरि हरि ढुलि मिली।*
*एको प्रिउ सखीआ सभ प्रिअ की जो भावै पिर सा भली।*
*नानकु गरीब किआ करै बिचारा हरि भावै तितु राहि चली।*
*पृष्ठ - 12*

***'हरि के सन्त बतावहु मारगु'*** प्रश्न आया कि प्यारे! है कोई संसार के अन्दर जो यह बता दे कि प्रभु का मिलाप कैसे होता है? क्योंकि महाराज जी का फ़रमान है कि 'भई परापति मानुख देहुरिआ। गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।' बारी आ गई है, चिन्ता है कहीं बारी न बीत जाये। कोई है संसार में जो रास्ता बता दे?

सो यह उस जिज्ञासु के मन की अवस्था है जिसके मन में चाव हुआ करता है कि मानस जन्म कहीं ऐसे ही न बीत जाये। हमारे मन में यह दृढ़ता नहीं आती। हमारे मन में तो कुछ और ही सोच चलती रहती है बेकार की सोच चलती है कि मैं धन कमा लूँ, कोठियाँ बना लूँ, बहुत बड़ा आदमी बन जाऊँ। फिर क्या होगा? यहीं रखा रह जाता है सब कुछ, कोई चीज़ साथ नहीं जाती। प्रभु के द्वार पर जाकर यदि कोई वस्तु साथ जाकर सुख देती है, महाराज फ़रमान करते हैं कि उस बात को समझने की कोशिश कर। लायक आदमी ही ऐसा सोचता है, जिसका मामूली सा

भी दिमाग हो कि जो कुछ मैं काम कर रहा हूँ, यह मुझे कहाँ तक करना चाहिए और जो काम मैं कर नहीं रहा उसके बारे में भी मुझे सोचना चाहिये।

सो हम सारे काम जो भी कर रहे हैं, दुनियादारी के काम कर रहे हैं जिसे महाराज ने सुआह (राख) कहा है 'राख' कि मनुष्य राख के पीछे लगा हुआ है, विष इकट्ठी कर रहा है। अभी ही बीबी ने शब्द पढ़ा था –

***घर ही महि अंम्रितु भरपूरु है मनमुखा सादु न पाइआ।***
***जिउ कसतूरी मिरगु न जाणै भ्रमदा भरमि भुलाइआ।***
***अंम्रितु तजि बिखु संग्रहै करतै आपि खुआइआ। पृष्ठ - 644***

अमृत तो छोड़ दिया विष इकट्ठी करने लग गया। कितना बड़ा भ्रम पड़ गया। फिर हम कहते हैं कि सभी ऐसा करते हैं। सियाने सियाने आदमी, पढ़े लिखे व्यक्ति, जिन्हें संसार समझता है कि ये हमें रास्ता दिखाने वाले हैं, वे भी गलत रास्ते पर चल पड़े।

कहते हैं दो प्रकार की पढ़ाई होती है – एक आध्यात्मिक एक सांसारिक। सांसारिक पढ़ाई जो पढ़ता है वह रोज़ी रोटी कमाने की पढ़ाई है। महाराज कहते हैं जो जीविका के लिये पढ़ता है वह मूर्ख आदमी है क्योंकि रोटी तो परमेश्वर ने देनी ही है। गुरू नानक पातशाह ने पान्धे को यही कहा था कि बाबा! मुझे कोई ऐसी पढ़ाई पढ़ा जो दरगाह में साथ जाकर मदद करे। क्या ये तेरे जोड़ करना, हिसाब-किताब निकालना, गुणा भाग करना, जमा करना, लाभ हानि निकालना, सवाया, डयोढ़ा, औटा, पौंचा, ढौंचा के जो पहाड़े हैं मुझे याद करवाने हैं, ये दरगाह में भी काम आयेंगे? सात साल के बच्चे के मुखारविंद से ऐसा प्रश्न सुनकर वह हक्का बक्का रह गया। अन्त में कहने लगा, ''नानक! ऐसी पढ़ाई मेरे पास नहीं है। तू जानता है यह पढ़ाई?'' महाराज कहते हैं, ''हाँ, दादा जी, पढ़ाई तो है पर उसका अध्यापक भी और है स्कूल भी और है, कागज भी और, कलम भी और, तख्ती भी और है।'' सो वहाँ समझाया –

***जालि मोहु घसि मसु करि मति कागदु करि सारु। पृष्ठ - 16***

और सारे शब्द में बताया है कि ऐसी पढ़ाई कर जो साथ निभाये, विष मत इकट्ठी कर। संसार तो विष इकट्ठी करता है। काल का कोई पता नहीं कि किस समय आकर गुलेला मार दे, फिर पछताता है कि मैंने तो कुछ भी नहीं किया।

बहुत सारे ऐसे प्रेमी होते हैं, इतना उनका माया से प्यार होता है कि मरते वक्त तक यह कहते हैं कि न तो बैकों में रखे धन के बारे में बच्चों को बताऊँ, न जायदाद, न कोठियों, न ही कारखानों का कोई अधिकार

(हक) बच्चों को दूँ। मैं साथ लेकर जाऊँगा। मर जाते हैं, सभी कुछ यहीं रह जाता है। Complication (उलझनें) शुरू हो जाती हैं बच्चों के लिए, क्योंकि मोह पड़ गया इन चीज़ों में, छोड़ने को तैयार नहीं होता।

सो महाराज कहते हैं कि मनुष्य ने ज़हर के साथ मोह डाल लिया, poison के साथ, विष के साथ। अब इसे समझाये कौन? कि तू तो ज़हर इकट्ठी किये जा रहा है। नाम का इसे ज्ञान कोई नहीं है, कोई पता नहीं कि नाम का धन क्या होता है? हैरानी होती है, बजाय इसके कि संसार में महापुरुष एक ही आवाज़ देते हैं कि प्यारे! जहाँ तेरी कोई सहायता करने के लिये नहीं आयेगा, वहाँ यदि पहुँचना है तो नाम ने ही पहुँचना है, और किसी ने नहीं पहुँचना। इस बात को मानने को तैयार नहीं होता। महाराज ऐसा फ़रमान करते हैं -

***धारना - तेरी नाम ने सहायता करनी, औखी वेला, औखी वेला- 2,3***

*जा कउ मुसकलु अति बणै ढोई कोइ न देइ।*
*लागू होए दुसमना साक भि भजि खले।*
*सभो भजै आसरा चुकै सभु असराउ।*
*चिति आवै ओसु पारब्रहमु लगै न तती वाउ॥ पृष्ठ - 70*

यदि उसके हृदय में, चित्त में नाम समा जाये तो लेश मात्र भी नुकसान नहीं हो सकता। आग जला नहीं सकती, पानी डुबो नहीं सकता, तलवार काट नहीं सकती। बहुत सारे प्रेमी कहेंगे यह तो Unscientific (अवैज्ञानिक) बात है, ऐसा हो नहीं सकता पर जो आध्यात्मवाद का इतिहास है वह यह बताता है कि सात साल के बच्चे ने नाम की शरण ले ली जिसका नाम प्रहलाद था। सारे राज्य का कानून, सारी फौजों की ताकत, राजा की आज्ञा एक तरफ है और वह बच्चा अपने इरादे पर दृढ़ है। कितने कष्ट दिये, साँपो के बीच बिठा दिया, ज़हरीले नाग जहर से भरे हुये, फुंकारे मारते हुए, जले हुये दिमाग की ज़हर निकालते, बच्चे के पास जाते ही ठण्डे पड़ गये क्योंकि नाम का प्रभाव, नाम की फुंहार उन पर पड़नी शुरू हो गई। नाम एकदम शीतल घड़ा है। तन मन शीतल हो जाता है और जब फुंहारें उन पर पड़ी - जलते हुये सापों पर, ज़हर उन्हें भूल गई, खेलने लग पड़े प्रहलाद के साथ। अन्त में सोचा कि चलो उसकी लाश को निकाल कर ले आओ। वहाँ जाकर देखा तो साँप खेल रहे हैं - कोई किसी ढंग से, कोई किसी तरीके से। हैरान हो गये कि साँप क्यों नहीं डंक मार रहे, अपना स्वभाव क्यों बदल गये? इस बात को न समझते हुए कि इसके अन्दर कोई शक्ति है नाम की। कोई भी संसार में नहीं समझ सकता।

दूसरा महाराज कहते हैं, एक स्त्री स्टेट की कोर्ट में घिर गई, जुल्म

में घिर गई, जिसका नाम द्रौपदी है। उसके पति वचन बद्ध हुए देख रहे हैं और उस राजा ने जिसका नाम दुर्योधन है हुक्म कर दिया कि इसे सारी सभा के सामने नग्न कर दो। यह पहला ऐसा घृणित कर्म था जो संसार ने सुना और हैरान हो गये कि ऐसा भी हो सकता है? यहाँ तक कि इतने नीच इरादे पर तुला हुआ है। उस समय उसने अपने पतियों की ओर देखा, सिर झुकाए बैठे हैं, कुछ नहीं कर सकते; फिर उसने अपने बल की ओर देखा कि नहीं, मेरा बल तो इनके सामने कुछ भी नहीं है। उस समय उसने क्या किया? महाराज कहते हैं उस समय वह शक्ति जो सभी के अन्दर परिपूर्ण है हमारे अन्दर, तुम्हारे अन्दर, सभी के अन्दर, पन्छियों के अन्दर, सारे संसार में, वृक्षों में, पहाड़ों में, समुद्रों में, उपग्रहों में, वह जो शक्ति है, वह नाम शक्ति है -

*नाम के धारे सगले जंत। नाम के धारे खंड ब्रहमंड। पृष्ठ - 284*

सभी चीज़ों में नाम की शक्ति एक रस परिपूर्ण है। कहते हैं उस तरफ उसका ध्यान चला गया, उसने शरण ले ली नाम की। उस समय क्या हुआ -

*पंचाली कउ राज सभा मै राम नाम सुधि आई। पृष्ठ - 1008*

पूरे दिल के साथ पूरे faith (विश्वास) के साथ नाम की शरण ले ली -

*ता को दूखु हरिओ करुनामै अपनी पैज बढाई॥ पृष्ठ - 1008*

उसी समय उसका दुख दूर कर दिया -

*कपड़ कोटु उसारिओनु थके दूत न पारि वसाँदी।*

*भाई गुरदास जी, वार 10/8*

कपड़ों का किला खड़ा कर दिया। दूत उतारते उतारते थक गये -

*हथ मरोड़नि सिरु धुणनि...........॥ भाई गुरदास जी, वार 10/8*

कपड़े उतारने वाले, हाथ मलते हैं, पछताते हैं, सिर धुनते हैं -

*.......... पछोतानि करनि जाहि जाँदी॥ भाई गुरदास जी, वार 10/8*

पश्चाताप करना शुरू कर दिया कि इतनी महान शक्ति के साथ जा सिर खपाया जिसे 'नाम' कहते हैं परमेश्वर का। उसे हार न दे सके। सो वह 'नाम' साध संगत जी -

*नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु। देही महि इस का बिस्रामु।*

*पृष्ठ - 293*

यह देही में बसता है। पिछली बार मैंने प्रार्थना की थी कि मरदाना को गुरू नानक पातशाह ने यह बात practically (व्यवहारिक) रूप में समझाई थी एक लाल देकर। एक सालस राय जौहरी था जिसने उस लाल की

कीमत देखकर कहा कि इस लाल का कोई मूल्य नहीं दे सकता। शेष तो कोई दो मूलियां इसकी कीमत बताता था, कोई दो गज़ कपड़ा, कोई आधा सेर मिठाई। संसार का नाप तोल उनके अपने हिसाब किताब द्वारा हुआ करता है। हित हो, ज़मीन खेत के साथ लगती हो फिर तो दस हज़ार रूपये एकड़ का मूल्य और अधिक बढ़ जायेगा, 20 हज़ार अधिक दे देगा क्योंकि हित (स्वार्थ) आ गया वहाँ। जिस चीज़ में स्वार्थ न हो, कौड़ियों के भाव बिकती हुई चीज़ भी कोई मोल नहीं लेता। इस प्रकार 'नाम' में कोई हित नहीं क्योंकि यह समझता नहीं, नाम क्या है? गुरू महाराज समझाते हैं कि नाम ही सबसे बड़ी वस्तु है। जहाँ तेरी कोई सहायता नहीं करेगा वहाँ -

***जे को होवै दुबला नंग भुख की पीर।***
***दमड़ा पलै ना पवै ना को देवै धीर।***
***सुआरथु सुआउ न को करे ना किछु होवै काजु।***
***चिति आवै ओसु पारब्रहमु ता निहचलु होवै राजु॥ पृष्ठ - 70***

कहते हैं बाबा जी! नौकरी नहीं मिलती, बहुत दुखी हैं, बहुत तंग हैं महाराज जी ने तो नुस्खे लिखे हुये हैं; गुरबाणी की विचार करो, इसमें लिखा हुआ है ***'चिति आवै ओसु पारब्रहमु ता निहचलु होवै राजु।'*** कहते हैं ऐसा गरीब आदमी एक पैसा उसके हाथ में नहीं आता, कोई भी उपाय उसका कामयाब नहीं होता, सकार्थ नहीं होता। कोई दुनियाँ में ऐसा आदमी नहीं जो उसे धीरज बन्धाता हो। कोई स्वार्थ किसी काम नहीं आ रहा, कोई किसी की सिफारिश भी काम नहीं आ रही। महाराज कहते हैं सबसे बड़ी सिफारिश परमेश्वर के नाम की है और तू एक एक पैसे को ढूँढता फिर रहा है; तेरे लिए तो राज गद्दी तैयार है।

ऐसे बेअन्त उदाहरण हैं, जिन्होंने नाम की शरण ली। सो नाम को छोड़ दिया जो धुर दरगाह का साथी है। संसार का ही साथी नहीं, दरगाह का भी साथी है। उसे छोड़कर विष इकट्ठी कर रहा है क्योंकि मनुष्य को अभी नहीं पता। यहीं तक ही रहता है कि 'eat drink and be merry for we shall have to die' खाओ पीयो, ऐश करो, 'बाबर आलम दोबारा नेसत' महाराज कहते हैं अन्धे हैं, अन्धे। आँखो के होते हुए अन्धे हैं यह -

***अन्धे एहि न आखीअनि जिन मुखि लोइण नाहि।***
***अन्धे सेई नानका खसमहु घुथे जाहि॥ पृष्ठ - 954***

जिसे खसम (परमात्मा) की पहचान नहीं, वाहिगुरू की पहचान नहीं, वे सब blind (अन्धे) घूमते फिरते हैं क्योंकि पता नहीं है। पास रहते हुए

नाम का मूल्य (कदर) नहीं जानते, न उसके साथ का इन्हें पता है। उसे छोड़ कर विष इकट्ठी किये जा रहे हैं। सो धुर दरगाह का यदि कोई साथी है संसार में तो नाम है। यदि नाम को साथी न बनाया फिर क्या होता है? –

*ओथै सतिगुरु बेली होवै कढि लए अंती वार।* *पृष्ठ - 1281*

वहाँ फिर जिन्दगी रोती है, डरती है क्योंकि यह समय तो आना ही आना है साध संगत जी! इसे कोई avoid (टाल) नहीं कर सकता। मौत का फल सभी को खाना पड़ता है, किसी को बुरा लगता है, किसी को अच्छा। सो जिसने वह रास्ता सँवार लिया अपना, वहाँ के लिये तोशा (प्रशाद) इकट्ठा कर लिया, वह तो है आदमी। जिन्होंने नहीं किया, महाराज कहते हैं बिल्कुल ही बेअक्ल हैं, अन्धे हैं, blind हैं, मूर्ख लिखा है महाराज ने –

*आवन आए स्रिसटि महि बिनु बूझे पसु ढोर।* *पृष्ठ - 251*

कहते हैं, दुनियाँ में तो आ गये पर पशु हैं, पशु भी ढोर। सबसे मूर्ख गधे को कहते हैं जो गोबर में सने हुये डक्के (भूसा) खा जाता है। कहते हैं ऐसी बुद्धि उन पुरुषों की है जिन्होंने यह जाना ही नहीं कि मैं क्या करने के लिए आया हूँ। नाम इसके साथ है, परमेश्वर इसके साथ है, दोनों चीज़ें साथ हैं, इसे दोनों ही नहीं दिखाई देतीं और दुखी होता फिरता है। यदि नाम की कमाई नहीं करता फिर कहते हैं, भाई! तुझे बहुत पछताना पड़ेगा, बहुत रोना पड़ेगा फिर, ये बातें सुनी हुई तुझे याद आया करेगीं। वह समय तेरा बीत गया जब तूने नाम जपना था –

*अब न भजसि भजसि कब भाई। आवै अंतु न भजिआ जाई।*
*जो किछु करहि सोई अब सारु। फिरि पछुताहु न पावहु पारु॥*
*पृष्ठ -1159*

*करणो हुतो सु ना कीओ परिओ लोभ कै फंध।*
*नानक समिओ रमि गइओ अब किउ रोवत अंध॥* *पृष्ठ - 1428*

Bilnd (अन्धे)! अब तू रोने लगा है। सख्ती के साथ महाराज समझा रहे हैं कि ऐसे आदमी कहते हैं हम अक्लमन्द हैं, हमारे पास बहुत पैसे हैं, हमारे पास बड़ी बड़ी पदवियाँ हैं, हम दुनियाँ को खरीद सकते हैं – बातों से, पर जिसे अपना ही नहीं पता, अपने हित का ही नहीं पता, उससे बढ़कर पागल कौन है? वह तो मूर्ख है –

*कलि महि प्रेत जिन्ही रामु न पछाता।* *पृष्ठ - 1131*

कहते हैं वह प्रेत है जिसने राम की पहचान नहीं की क्योंकि रोना पड़ेगा, फिर कुछ बनेगा भी नहीं –

*धारना - रोवेंगी जिंदे वेला हत्थ नहीओं आउणा - 2, 2*
*हत्थ हईओं आउणा, वेला हत्थ नहीओं आउणा - 2, 2*
*रोवेंगी जिंदे वेला..........................*

*आपीन्है भोग भोगि कै होइ भसमड़ि भउरु सिधाइआ।*
*वडा होआ दुनीदारु गलि संगलु घति चलाइआ।*
*अगै करणी कीरति वाचीऐ बहि लेखा करि समझाइआ।*
*थाउ न होवी पउदीई हुणि सुणीऐ किआ रूआइआ।*
*मनि अंधै जनमु गवाइआ॥* *पृष्ठ - 464*

*कपड़ु रूपु सुहावणा छडि दुनीआ अंदरि जावणा।*
*मंदा चंगा आपणा आपे ही कीता पावणा।*
*हुकम कीए मनि भावदे राहि भीड़ै अगै जावणा।*
*नंगा दोजकि चालिआ ता दिसै खरा डरावणा।*
*करि अउगण पछोतावणा॥* *पृष्ठ - 470-71*

*जिह मारग के गने जाहि न कोसा। हरि का नामु ऊहा संगि तोसा।*
*जिह पैडै महा अंध गुबारा। हरि का नामु संगि उजीआरा।*
*जहा पंथि तेरा को न सिञानूं। हरि का नामु तह नालि पछानू।*
*जह महा भइआन तपति बहु घाम। तह हरि के नाम की तुम ऊपरि छाम।*
*जहा त्रिखा मन तुझु आकरखै। तह नानक हरि हरि अंम्रितु बरखै।*
*पृष्ठ - 264*

वह जो नाम साथी है धुर दरगाह का, उसकी तरफ से तो चुप है। जो poison (ज़हर) है वहाँ जाकर जिसने दुख दिलवाने हैं और लेखा जोखा दिलवाना है उसके लिये होशियार हो गया। महाराज कहते हैं, कमला (पागल) है। इसकी बुद्धि को क्या कहा जाये? सियाना कहा जाये या पागल कहा जाये। जो काम करना था वह तो कर नहीं रहा, जो नहीं करना था जिसके बारे में सारे महापुरुष कहते हैं शराब मत पी, दुखी होगा दरगाह में जाकर, बहुत दुखी होगा। गुरू नानक साहिब को काबा शरीफ में पूछा, ''हे नानक! यह तो बताओ जो नशे करते हैं, उनका क्या हाल होता है?'' महाराज कहते हैं, ''जो परमेश्वर को भूलकर नशे करते हैं, उनका जब जीव आत्मा वहाँ जायेगा तो एक हज़ार मन सिक्का रोज़ घोल कर गर्म करके इसके गले में से निकाला करेंगे, फिर चीखें मारेगा, अब तो यह आवाज़ भी नहीं सुनता -

*जितु पीतै मति दूरि होइ बरलु पवै विचि आइ।*
*आपणा पराइआ ना पछाणई खसमहु धके खाइ।*
*जितु पीतै खसमु विसरै दरगह मिलै सजाइ।* *पृष्ठ - 554*

दरगाह में सजा मिलेगी। अब तो आवाज़ें मार मार कर बुलाते हैं, यह आवाज़ तो सुनता ही नहीं बल्कि शेर की तरह बन जाता है। इस प्रकार महाराज फ़रमान करते हैं -

*धारना- बुरिआं कंमां नूं शेर बण जावे, चंगिआं नूं आलस करे*
*मेरे पिआरे, चंगिआं नूं आलस करे - 2, 2*
*बुरिआं कंमां नूं.....................।*

*चंगिआई आलकु करे बुरिआई होइ सेरु।*
*नानक अजु कलि आवसी गाफल फाही पेरु॥* *पृष्ठ - 518*

इतना समझाने के बावजूद भी यदि फिर भी आदमी न समझ सके सीधी सी बात, फिर तो उसे कह नहीं सकता कोई भी कि यह अक्लमन्द है। स्वंय ही अपने दिल के अन्दर सही अनुमान लगा लेना चाहिए। यदि कहे हम गुरू साहिब की बात तो मानते नहीं यदि कोई वैज्ञानिक कहे, कोई मैडिकल वाला कहे; मैडिकल वालों से पूछ लो, वे कहते हैं तम्बाकू का प्रयोग करेगा.......अमेरिका में बहुत पीछे पड़े हैं तम्बाकू के। पीने नहीं देते। जहाज़ों में बन्द कर दिया, बड़े बड़े दफ्तरों में बड़े बड़े भण्डारों में बन्द कर दिया No smoking- No smoking (सिगरेट पीना मना है) होटलों में बड़े बड़े अक्षरों में लिखा होता है Warning! you are entering No smoking zone यदि सिगरेट पीनी है, इधर जाईये, उधर मत जाओ। वातावरण शुद्ध रहे, तहरीकां (movements) चलती हैं कि हमारी वायु दूषित मत करो, यह प्रकृति ने हमें सांस लेने के लिए दी है - हवा pure (शुद्ध)। ये कारखानों ने दूषित कर दी, धूएं ने खराब कर दी। भारत का तो हाल ही बुरा है, यहाँ और सिगरटों के धूएं आ रहे हैं। वे कहते हैं कैंसर हो जायेगा इससे। 70 प्रतिशत कैंसर वाले, तम्बाकू प्रयोग करने वाले हुआ करते हैं, बाकी 20 प्रतिशत शराब के नशों वाले हुआ करते हैं, 10 प्रतिशत जिन्हें कोई खानदानी बिमारी होती है या कोई वैसे ही हो जाते हैं। सो इस तरह वे भी कहते हैं कि इसका प्रयोग मत करो। धर्म भी यही कहता है कि तेरी बुद्धि मलीन हो जाएगी, लिव कायम नहीं रहेगी, तमोगुण प्रधान हो जायेगा। मत तू ऐसी चीज़ें खा। तू सतोगुणी पदार्थ खा - जैसा अन्न वैसा मन। उसके साथ तेरा भजन बन्दगी करने वाला मन बनेगा अन्यथा फिर छलाँगे लगाने वाला मन बनना है दो गुणों से - तमोगुण और रजोगुण। उसने भजन में नहीं बैठने देना, गुटका तेरे हाथ में धरा ही रह जायेगा, छलांगे लगाता फिरेगा - कभी इधर कभी उधर क्योंकि खुराक में फर्क है, पोशाक में फर्क है, रहन सहन में फर्क है, बातचीत में अन्तर है। इस तरह से समझाते हैं पर यह समझता नहीं।

सो विचार यह चल रही थी कि आदमी को मुसीबत की घड़ी साध संगत जी! ज़रूर आयेगी। आज के हालातों में फंसा हुआ कोई बिरला ही सुखी है। पैसा उसके पास है, बाल बच्चे उसके हैं, रिश्तेदार हैं, आस पास प्रसन्नता है। महाराज कहते हैं भ्रम है यह तो ऐसे है जैसे बादल आ जाये भादों के महीने में थोड़ी देर के लिये छाँव हो जाये, उसमें तू मस्त मत रह, सदीवी नहीं रहने वाली ये चीज़े –

*धारना - धन जोबन फुल्लां दीआं वाड़ीआं,*
*खिड़ीआं न सदा रहिणीआं - 2, 2*
*मेरे पिआरे खिड़ीआं ना सदा रहिणीआं - 2, 2*
*धन जोबन फुल्लां दीआं वाड़ीआं,...............।*

*धनु जोबन अरु फुलड़ा नाठीअड़े दिन चाहि।*
*पबणि केरे पत जिउ ढलि ढुलि जुंमणहार॥*
*रंगि माणि लै पिआरिआ जा जोबनु नउहुला।*
*दिन थोड़ड़े थके भइआ पुराणा चोला॥* *पृष्ठ - 23*

सदा एक जैसी अवस्था नहीं रहती। इसी में आदमी खो गया है कहता है मेरा शरीर सदा कायम रहे, तन्दरूस्त रहे। कोई accident (दुर्घटना) हो जाता है। चलते फिरते कोई अंग टूट जाता है, कोई गलत बात हो जाती है। बाल बच्चों में खुश है, झपट्टा पड़ता है पर कोई पता ही नहीं रहता कि क्या हो गया? 1984 में एक रात पहले किसी को नहीं पता था कि कल क्या हो जाने वाला है। कितना बड़ा झपट्टा पड़ा साध संगत जी –

*फरीदा दरीआवै कंन्है बगुला बैठा केल करे।*
*केल करेदे हंझ नो अचिंते बाज पए।*
*बाज पए तिसु रब दे केलां विसरीआं।*
*जो मनि चिति न चेते सनि सो गाली रब कीआं॥* *पृष्ठ - 1383*

यदि चीज़ें सदा रहने वाली होती फिर रख लेता आदमी परंतु ये नहीं रहती। सो इस प्रकार मनुष्य समझता नहीं। इन्हीं पदार्थों में उलझा हुआ है, ज़हर इकट्ठा किये जा रहा है और जो वस्तु साथ जायेगी उसे इकट्ठी नहीं करता। कहता है जी हमें तो पता नहीं कि साथ क्या जायेगा? शरीर भी नहीं हमारा साथ देता, कपड़े भी साथ नहीं जाते, कोठियाँ भी साथ नहीं जातीं, बैंक का पैसा भी साथ नहीं जाता फिर क्यों इन चीज़ों में फंसा हुआ है। यदि साथ नहीं जानीं? यदि तुझे नहीं पता फिर गुरू से पूछ ले कि महाराज! कोई चीज़ साथ भी जाती है? साथ तो बहुत कुछ जाता है – तेरे बुरे कर्म भी साथ जाते हैं, भारी पत्थर, तेरे अच्छे कर्म भी साथ जाते हैं पर यह दोनों weight (भार) हैं। पहाड़ की चढ़ाई पर चाहे एक मन रूईं

उठा लो, चाहे एक मन भारी पत्थर उठा लो एक ही बात होती है और सुख देने वाली कोई चीज़! वह नाम है परमेश्वर का -

*जह मात पिता सुत मीत न भाई। मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई।*

*पृष्ठ - 264*

वहाँ तो नाम ने सहायता करनी है तेरी और किसी चीज़ ने सहायता नहीं करनी। जब तू बहुत दुखी होगा वहाँ यह कमाया हुआ धन तेरे काम आयेगा। जैसे यहाँ से अमेरिका जाना है पैसे इकट्ठे कर लो, डालरों में convert (बदलवा) करवा लो, वहाँ जाकर आसानी रहती है, अन्यथा वहाँ जाकर किस से माँगे। इन रूपयों का बैग भर कर ले जायें, वहाँ कोई नहीं पूछता कि ये तो कागज़ हैं क्योंकि उस देश का यह सिक्का नहीं है। जो सिक्का जिस देश का होता है, वही वहाँ चलता है। सो दरगाह में यदि कोई सिक्का है भारी सिक्का, जिसका थोड़े से का ही बहुत मूल्य है, वह नाम का सिक्का है। महाराज कहते हैं वह धन कमा ले प्यारे -

*धारना - पिआरे जी, दरगह विच माण पावेंगा - 2, 2*
*साथी दरगह दा नाम धन खट्ट लै - 2, 2*
*पिआरे जी, दरगह विच...................।*

*साथि न चालै बिनु भजन बिखिआ सगली छारु।*
*हरि हरि नामु कमावना नानक इहु धनु सारु॥* *पृष्ठ - 288*

तत्व जो पल्ले रहता है जिसे न कोई चोर लूट सकता है, न यमदूत लूट सकता है, न ही धर्मराज इस पर कोई दण्ड लगा सकते हैं - ऐसा धन है, जो भी कमा कर दरगाह में जाते हैं महाराज कहते हैं -

*रे रे दरगह कहै न कोऊ। आउ बैठु आदरु सुभ देऊ।* *पृष्ठ - 252*

सब आदर करेंगे क्योंकि नाम की जो कमाई करने वाला है। जिसने नाम का धन कमा लिया वह कोई मामूली आदमी नहीं हुआ करता। संसार की नज़रों में हो सकता है क्योंकि इसका गज़ सोने का है, पैसा टका, जायदाद से किसी आदमी को मापा जाता है। रिश्ता करने जाना हो, पहले पूछते हैं कितनी जायदाद है? ट्रक चलते हैं जी, ज़मीन इतनी है, ट्रैकटर चलते हैं, घर तो अच्छा है। पहले जैसी बातें नहीं। आगे तो देखते ही नहीं कि character (चरित्र) भी है उसका? शराबी कबाबी है या कैसा है? लम्पट है, झूठा है, जुआरी है। ये बातें वहाँ है नहीं क्योंकि दुनियाँ का जो नाप है वह सोने के गज़ से नापा जाता है। प्रत्येक के व्यक्तित्व को गुरू नहीं मापता। गुरू का नाप दरगाह का नाप है जहाँ पहुँच कर इज्ज़त प्रवान होती है -

*जिन की लेखै पति पवै चंगे सेई केइ॥* *पृष्ठ - 469*

वहाँ दरगाह में जाकर इज्ज़त प्रवान होती है, वट्टे और है वहाँ अन्य विधियों से तोला और मापा जाता है। वहाँ जो नाम धन वाला है वह सबसे बड़ा हुआ करता है। इस प्रकार फ़रमान करते हैं -

*धारना - चित्त हरी दे नाम नाल लगिआ,*
*राजा सारी दुनीआं दा - 2, 2*

*बसता तूटी झुंपड़ी चीर सभि छिंना।*
*जाति न पति न आदरो उदिआन भ्रमिंना।*
*मित्र न इठ धन रूप हीण किछु साकु न सिंना।*
*राजा सगली स्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना।*
*तिस की धूड़ि मनु ऊधरै प्रभु होइ सु प्रसंना॥ पृष्ठ - 707*

इतने adverse (बुरे) हालात; संसार की नज़रों में टूटी झौंपड़ी में रहने वाला, फटे हुए कपड़ों वाला, कोई जात बढ़िया न हो, इज्ज़त न हो, कोई मित्र न हो, जंगलों में घूमता फिरता हो, क्या कहेंगे, बैठने भी नहीं देता पास कोई, कि यह तो ऐसे ही फालतू आदमी है, कुछ नहीं है। सो महाराज कहते हैं यदि उसके चित्त में परमेश्वर का नाम बसा हुआ है वह राजा है सारी सृष्टि का, ब्रह्माण्ड का। उसका हुक्म यहाँ पर ही नहीं चलता-

*जा का कहिआ दरगह चलै। सो किस कउ नदरि लै आवै तलै॥*
*पृष्ठ - 186*

बड़े बड़े बादशाहों के उदाहरण हैं -

जहाँगीर हिन्दुस्तान का बादशाह - आपकी काफी आयु हो जाने तक भी कोई सन्तान न हुई। उस समय पूछा कि है कोई परमेश्वर का प्यारा? बेअन्त थे उस समय लेकिन पता चला एक महात्मा का जो लुधियाने से थोड़ी दूर 'जगरांवा' रहा करते थे। जहाँगीर वहाँ अपने बहुत सारे हाथी घोड़ों के साथ उनके दीदार करने चला गया। आवाज़ सुनी उन्होंने, भोरे (समाधिस्थान) में रहा करते थे। एक स्त्री पहरा दिया करती थी जिसका नाम बानो था। अन्दर से आवाज़ लगाई -

''यह कौन है? इतना शोर क्यों है?''

''हजूर! आप की जिआरत (पवित्र दर्शनार्थ) के लिये शहनशाह-ए-हिन्द आ रहे हैं।''

''शहनशाह का मेरे से क्या काम। मुझे उससे कोई काम नहीं।''

''नहीं हजूर, आ रहे हैं, आगे बढ़ते आ रहे हैं।''

''जाओ! आगे बढ़कर रोको उन्हें क्योंकि खटका वटका.........।''

बाबा बुड्ढा जी जब बीड़ में बैठे हैं। माता गंगा जी मिलने जाते हैं। उस समय आपने खटका सुना - आप समाधि में लीन थे। सेवादार को कहने लगे "यह कैसा शोर शराबा है, घंगरालें (घन्टियों की आवाज़ें) खनकती आ रही हैं, जंग खड़कते हैं रथों के, यह क्या बात है, इतना शोर शराबा क्यों है?" कहने लगा, "महाराज! गुरू के महल आ रहे हैं।" कहते हैं, "गुरू के महलों को भाजड़ (भगदड़) कहाँ से मच गई?" वरदान लेने जाते थे। सहज स्वभाव वचन हो गये। अब उस वचन को कोई टालने वाला नहीं है। भगदड़ पड़ गई। सो इस तरह like (पसन्द) नहीं करते महात्मा।

सो उस समय कहने लगे, "रोको इसे क्या चाहते हैं, पूछो इसे।" बीबी आगे बढ़ी, दूर जाकर रोका। रोको सभी, क्योंकि मंगता बन कर नहीं आ रहा, बादशाह बन कर आ रहा था। वह चीज़ नहीं मिलती, बाकी चीजें सभी मिल जाती हैं। जो सन्तों के दर से चीज़ मिलती है वह न तो पैसों से मिलती है न किसी हकूमत के बल से मिलती है। वह तो बख्शीश हो उनकी तब मिलती है। सो महाराज फ़रमान करते हैं कि जो सन्तों के पास चीज़ें हैं वे पैसे टकों से नहीं मिला करतीं। वह तो शुद्ध भावना हो, सेवा में लगे, फिर कहीं जाकर प्राप्त हुआ करती हैं -

***धारना - जे तैं चार पदारथ लैणे, सेवा कर लै साधूआं दी - 2,2***
***मेरे पिआरे सेवा कर लै साधूआं दी - 2, 2***
***जे तैं चार पदारथ लैणे.......................।***

***चारि पदारथ जे को मागै। साध जना की सेवा लागै॥ पृष्ठ -266***

डाक्टर जवाब दे देते हैं। दुख दूर नहीं होता। पैसा खर्च करके पुत्र नहीं प्राप्त हुआ करते, पैसे से धर्म नहीं प्राप्त हुआ करता, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, वासनाएं, कामनाएं पूरी नहीं हुआ करतीं। चार चीज़ें पूरी हो जाया करती हैं। बादशाह भी मंगता बन कर ख़ड़ा होता है।

हुमायूँ बाबर का बेटा। बाबर के बाद उसने हिन्दुस्तान पर राज्य किया। उस समय शेरशाह अफगान, शेर शाह सूरी - उससे हुमायूँ हार गया। भागा जा रहा है, कहीं टिकाना न मिला। पता चला कि हमारे कदम यहाँ पर कैसे जमे (टिके) थे। कहने लगा कि वायदा किया था एक जमानत दी थी; कौन था? वह गुरू नानक था। यह गवाही दी थी कि हे गुरू नानक! हमें हिन्दुस्तान का राज्य बख्श दे। हम हिन्दू, मुसलमान सभी को एक समान देखेंगे, दो नज़रों से नहीं देखेंगे। इन्साफ का राज्य करेंगे, जुल्म नहीं करेंगे और उसकी बख्शीश की वज़ह से हमें राज्य की प्राप्ति हुई थी। उसने यह भी कह दिया था -

*आवनि अठतरै जानि सतानवै होरु भी उठसी मरद का चेला।*

*पृष्ठ - 723*

कौन सा सन है? कहते हैं 98 है। कहता है अब वहीं पर चलो गुरू महाराज के पास। वहीं पर आ गये खडूर साहिब। वहाँ पर महाराज अपने ध्यान में लीन थे स्व स्वरूप में मग्न थे। नेत्र खुले हुये हैं सृष्टि का रंग ढंग कुछ और दिखाई दे रहा है। बादशाह पहुँच गया। महापुरुषों के लिये बादशाह कुछ नहीं हुआ करता। फिर बादशाह भिखारी बन कर माँगने के लिये आया है। महाराज ने कोई ध्यान न दिया, 15 मिनट खड़ा रहा। हउमै जाग्रत हो गई कि यदि मैं हार भी गया हूँ शेर शाह सूरी से, इतना तो मैं नहीं गिरा हुआ कि यह मेरे साथ बात ही न करें। Ego (हउमै) पैदा हो गई फतूर घुस गया दिमाग में और तलवार निकाल ली। महाराज ने दृष्टि डाली। हाथ नहीं चलता, बाज़ू वहीं की वहीं रूक गई। हैरान होता है कि साधुओं पर तलवार का वार नहीं चल रहा। महाराज कहते हैं, ''हुमाँयू! यह तेरी बहादुरी उस समय कहाँ चली गई थी जंगे मैदान में। वहाँ तो न चल सकी तेरी तलवार। अब सन्तों पर आकर तलवार उठाता हैं?'' शर्मन्दा हो गया चरणों में गिर पड़ा। कहने लगा, ''प्रभु! गलती हो गई, मेरे से भूल हो गई, बादशाही की हउमै आ गई।'' कहते हैं ''जा तुझे अभी ही बादशाही बख्श दी जानी थी। 14 साल तक भटकते फिरना इस बात की सज़ा पाकर, चौदहवें वर्ष में आना। इन्साफ का राज्य करना, राज्य मिल जायगा तुझे। राज तो किसी न किसी ने करना ही है।''

यदि कोई कहे महाराज दशमेश पिता ने मुगलों को राज्य क्यों दे दिया? राजा तो किसी न किसी ने बनना ही है। गुरू दशमेश पिता जी के पास भाई नन्द लाल जी बिमौर में आते हैं। प्रार्थना करते हैं, ''महाराज! इस समय शहज़ादा मुअज्ज़म बहुत संकट में है। बड़ा पुत्र है, राज्य का अधिकारी है। उसका right (अधिकार) है गद्दी पर बैठने का। जबरदस्ती तारा आज़म राज्य का अधिकारी बन रहा है। आप कृपा करो, मुझे आपके पास भेजा है।'' महाराज कहते हैं, ''कसाई को हमने गद्दी पर नहीं बिठाना, यदि वह सचमुच राजा बनकर बैठना चाहता है तो ठीक है, किसी न किसी ने तो गद्दी लेनी ही है, फिर तेरी सोहबत है उसको।'' नन्द लाल जी ने सिफारिश की। महाराज कहते हैं ''जा पूछकर आ पहले यह बातें?'' दोबारा फिर आ जाते हैं फिर आकर उसने कहा, ''जैसे गुरू महाराज कहेंगे वह वैसे ही राज्य करेगा।'' ''जाओ फिर गवाही देते हैं, राज्य हम दिलवा देंगे। अपने हाथों से तारा आज़म को मारेंगे।''

ऐसी बात नहीं कि राज्य गुरू महाराज ने किसी को मुगलों को, मुसलमानों को क्यों दिलवा दिया। पहाड़ी राजा कौन थे जिन्होंने गुरू महाराज को तंग कर दिया था जिनकी बदौलत चारों साहिबजादों को शहीद होना पड़ा, आनन्दपुर साहिब को बर्बादी के दिन देखने पड़े, बेअन्त सिख ब्रह्मज्ञान की अवस्था के मैदाने-ए-जंग में शहीद हो गये। किसने करवाये? महाराज ने तो कहा था कि तुम सत्य की रहनी सहनी कबूल कर लो तुम्हें राज्य पूरे भारत वर्ष का दिलवा देते हैं। सो ऐसी बात नहीं है।

महाराज कहने लगे 14 वर्षों तक भटकना पड़ेगा। 14 वर्ष बाद फिर आया। सो वह बादशाह होते हैं सारी सृष्टि के। संसार की चाल को, बहते दरिया को, कह दें रुक जा.......। महाराजा रणजीत सिंह जी को सूचना मिली जमरौद से कि यदि शीघ्रतिशीघ्र फौज़ें लेकर न पहुँचे, आदि सामग्री न लाये तो यह शाह शुज़ाय जो हमने रोका हुआ है काबुल का बादशाह; इतने हज़ार हैं इतना मुलखईया (तोपखाने) दो लाख से अधिक संख्या है, रास्ते में कोई सरदार ऐसा नहीं जो इसका मुकाबला कर सके। हरि सिंह नलुआ शहीद हो चुके हैं और आप जल्दी से जल्दी पहुँच जाओ। उस समय बहुत जल्दी से सफर दिन रात एक करके तय कर लिया। दरिया सिन्ध के किनारे पर पहुँच जाते हैं जिसे उस समय अटक कहा करते थे। सभी को अटकाता था। कोई नहीं था ऐसा जो अटक के किनारे पर न अटका हो। उस समय रणजीत सिंह घबरा गये, कहने लगे कि क्या किया जाये? सृष्टि का बादशाह साथ चल रहा था 'बाबा बीर सिंह जी' ''हे महापुरुषो! बहुत बड़ा संकट सामने आ गया, कृपा करो।'' बार बार प्रार्थना करते हैं। तब उस समय बाबा जी कहने लगे, ''कोई नहीं -

***भै विचि पवणु वहै सद वाउ। भै विचि चलहि लख दरीआउ।***
***भै विचि अगनि कढै वेगारि। भै विचि धरती दबी भारि॥***

*पृष्ठ - 464*

ये सभी परमेश्वर के भय में चलते हैं, कोई बात नहीं, हम कह देते हैं।'' किनारे पर जाकर कहने लगे, ''लो भाई, हम दो घंटे के लिए सुखमनी साहिब का पाठ करते हैं तेरे अन्दर खड़े होकर और तू रास्ता दे दे।'' उस समय अटक दरिया में किनारों पर उछलता हुआ पानी टखनों तक रह गया। बाबा जी कहने लगे, ''हम हाथी पर बैठकर पाठ करेंगे, आप पार कर जाओ।'' सारी फौज पार कर गई, एक कम्पनी रह गई। वह कम्पनी नास्तिक थी, सारी की सारी। एक ही बात कहते थे कि दरिया की धारा कैसे कम हो सकती है, ऐसा कभी हो सकता है कि दरिया में बाड़ सी आ गई हो और प्रवाह कम हो जाये? सो उस समय बाबा जी, जब अन्तिम अष्टपदी पर पहुँचें, झण्डी हिलाई कि हम जा रहे हैं, आ जाओ जल्दी।

बाबा जी बरेती के पास चले गये और ये किनारे के पास पहुँच गये और दरिया में घुस गये। बाबा जी बाहर निकले, ये दरिया में घुस गये। उस समय लहर आई, 80 के 80 आदमी बह गये। महाराजा रणजीत सिंह कहने लगे, ''महाराज! आदमी बह गये।'' कहते हैं ''कोई नहीं, इतने आदमियों की बलि यह मांगता था। ये नास्तिक थे।'' सो ये सभी चीज़ें उसके हुक्म अधीन हैं। जो राजा बनाया परमेश्वर की बन्दगी करने वाला –

*राजा सगली स्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना।* *पृष्ठ - 707*

वह सारी सृष्टि का बादशाह है, नाम के साथ जिसका मन रमा हुआ है। उस राजा के पास सारे मंगते बनकर आते हैं। महाराज कहते हैं –

***चारि पदारथ जे को मागै। साध जना की सेवा लागै।*** ***पृष्ठ - 266***

भाई आदम जी, गुरू चौथे पातशाह जी के पास आया। 90 साल की उम्र है, पुत्र नहीं हुआ। सेवा की उसने, आग जलाकर संगतों की ठण्ड दूर की। महाराज कहते हैं ''अच्छा भाई आदम! तेरी किस्मत में तो नहीं लिखा, इसलिए हम ऐसा करते हैं अपना चौथा बेटा तेरे घर भेज देते हैं। उसका नाम भाई 'भगतू' रखना। जन्म से ही सिद्ध होगा।'' इसी प्रकार सन्त ईश़र सिंह जी राड़ा साहिब वालों से पहले बाबा अतर सिंह जी महाराज रेरू साहिब वाले हुए हैं। आप कलपानी नदी के किनारे बैठे हैं – फ्रन्टीयर में, जहाँ बाबा करम सिंह जी होती मरदान वाले हुए हैं। वहाँ आप दर्शन करने जाया करते थे। आज आप बैठे हुये हैं और अन्धेरी रात है। दूर से एक लालटैन का प्रकाश नज़र आया सेवादार को, गौर से देखता रहा क्योंकि कबायली इलाका था वहाँ आदमियों को उठाकर, Kidnap (अगुवा) करके उनके बदले में पैसे मांगा करते थे कि इतने पैसे दे जाओ, हम छोड़ देंगे। थोड़ी देर देखा। जब देखा कि बढ़ते ही आ रहे हैं, प्रार्थना की, ''महाराज! यह प्रकाश हमारी ओर बढ़ता ही आ रहा है।'' सन्त महाराज बोले, ''कोई नहीं सेवादार जी, यह मित्रता की खुशबू आ रही है, शत्रुता की दुर्गन्ध नहीं आ रही, आने दो।'' धीरे धीरे क्या देखते हैं कि एक 90 वर्ष का आदमी शरीर तन्दरूस्त है, बहुत सुन्दर शरीर है, लालटैन हाथ में है, अकेला ही चला आ रहा है। आकर नमस्कार की और कहता है, ''पीर जी! कृपा करो, मेरी मांग पूरी करो मैं भिखारी बन कर, आंचल फैलाकर तेरे द्वार पर आया हूँ, इसमें कुछ डाल दो।'' महाराज कहने लगे, ''क्या बात है?'' कहता है, ''मैं पाँच शादियाँ कर चुका हूँ। बहुत ज़मीन जायदाद है मेरे पास, पर मुझे पुत्र का मुँह देखना नसीब नहीं हुआ, सन्तान नहीं हुई कोई भी। दो पत्नियाँ मर चुकी हैं। 90 वर्ष की मेरी आयु है। तीसरी 70 साल की है। चौथी

60 वर्ष की है। पाँचवी 50 वर्ष की है।'' चुप हो गये। विचार कर कहने लगे ''खान साहिब! यदि गुरू नानक के घर से दिलवाना ही है तो बड़ी बेगम को ही दिलवाएगें 70 वर्ष वाली को। अब न तो मैडिकल सांईस इस बात को मानती है न ही दलील मानती है। कहते हैं, ''जाओ नानक के घर से तुझे पुत्र की दात प्राप्त होगी और उसका नाम अल्लाह दित्ता रखना - अल्लाह का दिया हुआ।'' सो कहने लगा, ''पीर जी! यदि मेरा आँचल भर गया तो मैं शरां-शरीअत को एक तरफ रखकर ढोल बजाता हुआ, नाचता हुआ भंगड़ा डालता हुआ तेरे दर पर आऊँगा।'' दूसरे वर्ष बच्चा बगल में उठाया हुआ है बेगमें भी साथ हैं, ढोल बाजे बज रहे हैं और आपकी दरगाह में पेश हो गया। बच्चा उठाकर आपके चरणों में रख दिया, ''लो पातशाह! यह दात है आप द्वारा बख्शी हुई।'' महापुरुषों ने उसके मस्तक पर हाथ रखा, आशीष दी। सो ये दाता होते हैं -

***जो किछु करै सोई प्रभ मानहि ओइ राम नाम रंगि राते।***

*पृष्ठ - 748*

बादशाह हुआ करते हैं सारी दुनियाँ के, सारा कुछ इनके हाथों में होता है।

सो इसी तरह जहांगीर खड़ा है। स्त्री सामने खड़ी है, कहती है, ''हुक्म नहीं है पातशाह का तुझे आगे जाने का।'' हैरान हो जाता है कि जिसका हुक्म सारे हिन्दुस्तान पर चलता है उसके लिये भी कोई है जो हुक्म देकर रोक दे कि आगे कदम नहीं उठाना। आँचल फैलाया हुआ है। हुक्म मान लिया। कहने लगी, ''क्या काम है? किस लिए आए हो? आँचल किस लिये फैलाया हुआ है?'' कहने लगा, ''एक पुत्र की दात चाहता हूँ।'' क्योंकि पुत्र की दात बहुत बड़े बड़े काम करवा देती है।

महाराजा भुपिन्द्र सिंह, महाराजा यादविन्द्र सिंह के पिता पटियाले वाले राजा, आपके काफी समय तक सन्तान न हुई। उस समय देखा, किसी ने बताया कि बधौछी वाले सन्त बीरम दास मस्तानी अवस्था में रहते हैं और उनके दर पर जाकर भीख मांगी जाये तो आँचल भर सकता है। साथ ही यह भी बता दिया कि वे लिहाज़ नहीं करते, डण्डा कमर पर पड़ता है जो निकट जाता है। यदि सह ले तो मिल जाती है यदि गुस्सा हो जाये तो फिर नहीं मिलती और महात्मा आज अर्न्तयामी जान गये कि एक बड़ा मंगता चला आ रहा है। आप एक हल जोते हुये खेत में - चनों का वडढ् (कटी हुई फसल की जगह) है, बड़े बड़े ढेले पड़े हैं, ज़मीन बहुत सख्त है, वहीं पर बैठे हैं धूप में और महाराजा ने दूर आकर कार रोक दी। अपने जूते उतार दिये, उन ढेलों में से ही चला जा रहा है। कभी ऐसी जगह में

नंगे पैर चला नहीं था बहुत कष्ट उठाता है जो कभी चला न हो उसके तो कदम पड़ते ही नहीं थे बहुत कठिन हो रहा है लेकिन स्वार्थ का, गर्ज़ का बन्धा हुआ चला जा रहा है। सन्त कहने लगे एक बड़ा मँगता चला आ रहा है। आज डण्डा (छोटी सी लकड़ी) मत लाओ, बांस लेकर आओ। दूर से ही ज़ोर से दे मारा, कहते हैं, ''दूर रहना हमसे, हमारे पास मत आना।'' इसने वहीं से ही सिर झुका दिया। उन्होंने बांस उठाकर ज़ोर से मारा कमर पर। एक चोट खा ली, दूसरी, तीसरी बार फिर चौथी बार, वह कहते हैं, ''ओए सन्तोष भी रख, बस भी कर। जाओ, भाग जा यहाँ से।'' कितने पुत्र हुए, दात दे दी साधु संगत जी।

इस प्रकार वह आँचल फैलाए खड़ा है। बीबी भोरे में जाकर कहने लगी, ''महाराज! शहनशाह-ए-हिन्द एक फरजन्द (पुत्र) के लिए अरज़दाश्त (प्रार्थना) आपके दरबार में कर रहा है।'' कहते हैं, ''जाओ कह दो, एक हो जायेगा।'' बीबी ने कहा, ''जाओ हो जायेगा।'' वापिस चला गया, खुशियाँ मनाईं जा रही हैं। शाहजहाँ का जन्म हो गया, बड़ी खुशी मनाई गई और अजीब भेंट तैयार की गई। उस समय बड़े बड़े दीपक बनवाए, सोने के चिराग बनवाए। छोटे, बड़े हर साईज़ के बनवाए। चार बहुत बड़े बड़े जिनमें एक एक मन तेल डाला जा सके। दोबारा धूम धाम के साथ बैण्ड बाजे बजवाता हुआ आ रहा है। महात्मा ने फिर पूछा, ''यह शोर किसका है?'' बीबी बानो कहने लगी, ''महाराज! शहनशाह-ए-हिन्द आपके दर पर आ रहा है। आपकी दुआ से, बख्शीश से एक पुत्र इसे प्राप्त हो गया है, लड़का हो गया है। वह आपके चरणों में भेंट चढ़ाने आ रहा है। कहते हैं, ''रुक जाए बाहर। हमारे पास आने की ज़रूरत नहीं, बच्चे को हमारे पास ले आओ।'' उस बीबी ने बाहर से बच्चे को गोदी में लिया और महापुरुषों के चरणों में लिटा दिया। उन्होंने लेख देखे, खुशी प्रकट की, बच्चा वापिस कर दिया। बीबी कहने लगी ''महाराज! महाराजा खुशियाँ मनाने के लिये आपकी आज्ञा माँग रहा है।''

''क्या करना चाहता है?''

''महाराज! सोने के दीपों से सारी रात इस स्थान पर प्रकाश करना चाहता है, रोशनी करना चाहता है।''

''इज़ाज़त है, कर सकता है।''

''रोशनी हुई और आज तक यह रीति चली आ रही है, जिसे 'जगराओं की रोशनी' का मेला कहते हैं।

*राजा सगली स्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना।* *पृष्ठ - 707*

वह राजा है, बादशाह है दुनियाँ का लेकिन संसार इस बात को समझता नहीं। महाराज कहते हैं वह धन कमा लो जिस धन की कभी कमी ही न आ सके -

*साथि न चालै बिनु भजन बिखिआ सगली छारु।*
*हरि हरि नामु कमावना नानक इहु धनु सारु॥* *पृष्ठ - 288*

लेकिन इस तरह तो मिलता नहीं। बहुत से प्रेमी कहते हैं, 'नाम दे दो।' भाई नाम के लिए तो दास बनना पड़ता है, मंगता बनना पड़ता है, बार बार प्रार्थना करनी पड़ती है फिर जाकर कहीं नाम की दात प्राप्त होती है। बाणी इस प्रकार हमें समझाती है -

*धारना - खड़ा मंगता दुआरे आ के तेरे,*
*गुरमत नाम दे दे मालका - 2, 2*
*खड़ा मंगता दुआरे आ के तेरे,..................................।*

हम तो ऐसे समझते हैं कि अभी जाओ, अभी नाम मिल जाये। गिनती मिनती तो नहीं बढ़ानी? नाम बहुत कीमती चीज़ है साध संगत जी -

*जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ। राम नामु संतन घरि पाइआ।*
*पृष्ठ - 283*

मूल्य क्या देगा? कहते हैं -

*तजि अभिमानु लेहु मन मोलि। राम नामु हिरदे महि तोलि।*
*लादि खेप संतह संगि चालु। अवर तिआगि बिखिआ जंजाल।*
*धंनि धंनि कहै सभु कोइ। मुख ऊजल हरि दरगह सोइ।*
*इहु वापारु विरला वापारै। नानक ता कै सद बलिहारै॥* *पृष्ठ 283*

मंगते बनकर जब हम मांगते हैं फिर नाम मिल जाता है -

*मंगत जन दीन खरे दरि ठाढे अति तरसन कउ दानु दीजै।*
*पृष्ठ - 1325*

हे महाराज! हम मंगते बनकर तेरे द्वार पर खड़े हैं। दया करो अति कृपा करो हम पर। थोड़ी सी दया से काम नहीं चलेगा, अति कृपा (तरस) करो और दान दे दो -

*त्राहि त्राहि सरनि प्रभ आए मोकउ गुरमति नामु द्रिड़ीजै।*
*पृष्ठ - 1325*

रक्षा करो महाराज! बचा लो हमें, आपकी शरण आये हैं ***'मो कउ गुरमति नामु द्रिड़ीजै।'*** मुझे दृढ़ करवा दो गुरमत नाम -

*कामु करोधु नगर महि सबला.................॥* *पृष्ठ - 1325*

कहते हैं यहाँ तो बहुत जबरदस्त लहरें हैं - काम की, क्रोध की, लोभ

की, मोह की, अहंकार की, ईर्ष्या निन्दा, चुगली की; बहुत सबल हैं, बहुत ताकतवर हैं -

*.......... नित उठि उठि जूझु करीजै॥* पृष्ठ - 1326

रोज़ सुबह उठते ही हम इनके साथ लड़ते हैं, महाराज!

*अंगीकारु करहु रखि लेवहु..................॥* पृष्ठ - 1326

मेरा अब कोई जोर नहीं चलता, आप मेरी रक्षा करो, मुझे अपनी शरण में रख लो -

*................गुर पूरा काढि कढीजै॥* पृष्ठ - 1326

गुरू पूरे के बिना ये दुष्ट मेरे अन्दर से नहीं जाएंगे -

*अंतरि अगनि सबल अति बिखिआ.............॥* पृष्ठ - 1326

कहता है poison (विष) भरा हुआ है अन्दर तृष्णा का और आग लगी हुई है। महाराज -

*.............हिव सीतलु सबदु गुर दीजै।* पृष्ठ - 1326

मुझे अति शीतल नाम दे दो, आग बुझ जाये -

*तनि मनि सांति होइ अधिकाई रोगु काटै सूखि सवीजै॥*

पृष्ठ - 1326

मेरा रोग - निन्दा, ईर्ष्या, चुगली, हउमै रोग मिट जाये और मेरा तन, मेरा मन शान्त हो जाये। जब हम इस प्रकार नाम की दात मांगेंगे फिर -

*बिनु सतिगुर नाउ न पाईऐ बुझहु करि वीचारु।* पृष्ठ - 649

बिना सतगुरू के नाम नहीं मिलता। कहते हैं विचार करके देख लो -

*नानक पूरै भागि सतिगुरु मिलै.................॥* पृष्ठ - 649

लेकिन पूरा सौभाग्यशाली हो तभी गुरू की शरण प्राप्त होती है समरथ गुरू की।

चार-पाँच प्रकार के गुरू हुआ करते हैं। पहला गुरू हुआ करता है कच्चा; ऐसे ही पीछे लगा लेते हैं। दूसरा गुरू होता है अन्धा, रास्ते का उसे स्वंय पता नहीं होता, दूसरों को बताता फिरता है। तीसरा गुरू हुआ करता है विद्वान, पढ़ा लिखा। जानता सब कुछ है लेकिन अधिकार नहीं होता उसके पास। नाटक तो करता है फिल्म वालों की तरह। फिल्मों में फांसी दे देते हैं, गोली मार देते हैं। अधिकार तो है नहीं; वह सारा एक नाटक 'ड्रामा' होता है। इस प्रकार जो विद्वान गुरू है उसके पास अधिकार नहीं होता जिज्ञासु को पार कराने का। जिज्ञासु को भव सागर से पार करवाने का यदि किसी को अधिकार है तो समरथ गुरू के पास ही हुआ करता है। समरथ गुरू कलयुग के अन्दर गुरू नानक पातशाह दस स्वरूपों में आये

और अब श्री गुरू ग्रन्थ साहिब के स्वरूप में बिराजमान हैं, साध संगत जी! घर क्यों छोड़ें अपना? बेगाने के घर चले जाओ, वहाँ तो मंगता बन जाता है। अपने माँ बाप के साथ हम खूब लाड प्यार की बातें कर सकते हैं क्योंकि हम इनके हैं, हमारे बाप भी इनके हैं, दादे भी इनके हैं; घर नहीं अपना छोड़ना चाहिए। मांगो इनसे। इतनी आसानी से नाम नहीं मिलता कि गये और नाम मिल गया। इसके लिये कुछ करना पड़ेगा।

गुरू दशमेश पिता, जो दात 'शबद गुरू' के पास है, ये पाँच प्यारों द्वारा दिलवाते हैं। अमृतपान करवाते हैं पाँच प्यारे इकट्ठे होकर नाम देते हैं, अकेला नहीं देता। फिर सन्तों की संगत करो। सन्त अपने आपको गुरू महाराज के अन्दर ही समाये रखते हैं। अपने आपको अलग नहीं रखते कि अपनी पूजा करवाओ, आप गुरू बन जायें। वे तो इसी में रहते हैं, इनके पीछे लगाते हैं। गुरू कहाँ चला गया? यदि गुरू चला जाये फिर प्रार्थनाएं क्यों करें, फिर तो प्रार्थना हमारी ऐसे ही बेकार हो गई, वह तो दूर चला गया। महाराज कहते हैं भ्रम में मत पड़ -

*गुरु मेरै संगि सदा है नाले। सिमरि सिमरि तिसु सदा सम्हाले॥*

*पृष्ठ - 394*

यदि तुझे नहीं दिखाई देता, न सही, कोई बात नहीं, तू विश्वास तो ला। तेरे साथ है, इस विश्वाम में रह। फिर बोलता है 'गुरू ग्रन्थ साहिब' के रूप में कभी पूछ लो। यदि कोई गुरू दूसरा है दस लाख उसका follower (अनुयायी) हो; एक बार तो समय मिल जायेगा, फिर तो सारी जिन्दगी समय नहीं मिलना दर्शन करने का, फिर वह कहते हैं हमारी पुस्तकें पढ़ो। क्यों घर छोड़ा जाये अपना। सो इस प्रकार नाम की दात गुरू के पास होती है -

*बिनु सतिगुर नाउ न पाईऐ बुझहु करि वीचारु।*
*नानक पूरै भागि सतिगुरु मिलै सुखु पाए जुग चारि॥ पृष्ठ - 649*

कहते हैं, हमें तो मिले हुए हैं। नहीं भाई, मिला हुआ भी, मिला हुआ नहीं है। हमारे अन्दर पर्दा पड़ा हुआ है। हम समझ नहीं रहे शबद गुरू को कि क्या है? गुरू के साथ हमारी सांझ नहीं पड़ रही, कभी प्यार नहीं आ रहा, कभी हृदय में आकर्षण पैदा नहीं हुआ क्योंकि अन्दर गुमरट्ठ जैसा हो गया है। अन्दर से तार तोड़ी हुई है। तार मिला दो, बात बन जायेगी। जिन्होंने देखा है बाणी करन्ट मारती है, करन्ट आती है सहन नहीं कर सकता अन्दर। जिन्होंने बाणी की करन्ट को सहन करके देखा है उनका इस तरह फ़रमान है -

*धारना - गुरां ने मेरे ओ बाण मारिआ - 2, 2*
*मेरे पै गिआ कलेजे छेक, मेरे पै गिआ कलेजे छेक - 2*
*गुरां ने मेरे ओ,....................।*

*कबीर सतिगुर सूरमे बाहिआ बानु जु एकु।*
*लागत ही भुइ गिरि परिआ परा करेजे छेकु।* *पृष्ठ - 1374*

एक ही बाण मारा पूरे गुरू ने, ''उठ राम के, कह राम'' बहुत ज्यादा बातें नहीं थी क्योंकि वह जिज्ञासु बनकर आया था। हम नहीं जिज्ञासु बनते। 1430 पृष्ठों में से बाण लगते हैं। हम झूठ का कवच पहन कर आते हैं एक भी नहीं लगने देते हम चाहते ही नहीं। सो यह अन्तर है हमारे अन्दर। गुरू तो पूरा है, भागने की ज़रूरत नहीं, जब दिल करता हो मिल लो। महाराज कहते हैं -

*घरि घरि होइ बहैंगे रामा। तिन ते सरै न कछूऐ कामा।*
*सौ साखी - लिखारी साहिब सिंह जी*

बेअन्त गुरू, बेअन्त चेले होंगे। सो हम विचार कर रहे थे पिछली बार कि गुरू दशमेश पिता महाराज जी के पास माता जीतो जी हमारी भलाई के लिये उपस्थित हुई और महाराज के सामने प्रार्थना की कि ''महाराज! गुरू नानक के घर 'नाम' प्रधान है और कृपा करके नाम के बारे में नाम की कोई युक्ति, किस प्रकार से नाम जपा जाये कृपा करके बताओ फरमाओ आप।'' महाराज कहने लगे, ''ठीक है आप तो जानते ही हो पर संसार का कल्याण हो जायेगा।'' गुरू महाराज ने तीन बातें बताई जो हमने पिछले प्रवचनों के दौरान विचार की थी।

***पहली*** यह कि वाहिगुरू के बारे में ज़रूर पहचान होनी चाहिए। यदि हमें परमेश्वर की पहचान ही नहीं कि वह कैसा है हमारे साथ क्या सम्बन्ध है और हमारी नज़रे कैसे देखती हैं और उसे मिलना क्यों ज़रूरी है तब तक सम्बन्ध स्थापित नहीं हुआ करता क्योंकि मनुष्य हितदार (स्वार्थी) है बन्धा हुआ है। परिवार में हित के साथ बन्धा हुआ घूमता फिरता है खूब कमाई करता है। हित हृदय में बहुत गहरा है कि जब मैं बूढ़ा हो जाऊँगा तो मेरे बच्चे मेरी रक्षा करें। कभी आज तक पूरा हुआ है यह काम? कोई ही खुश किस्मत वाला आदमी होगा भाग्यशाली पुरूष जिसके बच्चे उसकी सम्भाल कर सकें, अन्यथा कमरे के एक कोने में बिठा देते हैं कि यहीं बैठा रह। न दवाई न कोई बातचीत न पैसे टके को हाथ लगाना सभी कुछ लूट लेते हैं लेकिन हित (स्वार्थ) में फंसे हुए वे कितने काम करता है जवानी में। थोड़ा सा भी मधुर भाषा में बोल दे बच्चा सारी गलतियाँ उसी समय माफ कर देते हैं क्योंकि स्वार्थ है। परमेश्वर के साथ हमारा

हित नहीं बनता प्यार नहीं होता। सो पहले वाहिगुरू का प्यार हृदय में हो उसके बारे में समझो।

***दूसरी*** यह है कि गुरू पर 100 प्रतिशत विश्वास होना चाहिए कि यह तो स्वंय ही अकालपुरुष है -

*गुरू परमेसरु एको जाणु।* *पृष्ठ - 864*

*समुंदु विरोलि सरीरु हम देखिआ इक वसतु अनूप दिखाई।*
*गुर गोविंदु गुोविंदु गुरू है नानक भेदु न भाई॥* *पृष्ठ - 442*

***तीसरी*** हुआ करती है नाम की महिमा पर विश्वास। सो महिमा के बारे में प्रार्थना की थी कि गुरू नानक पातशाह ने सालस राय जौहरी से लाल (रतन) की परख करवाकर मरदाना को समझाया था कि मरदाना! देख, तूने लाल सब्जी बेचने वाले को दिखाया, उसने इसका दो मूलियां मूल्य बताया; हलवाई को दिखाया वह कहता है आधा सेर मिठाई ले जा; बजाज को दिखाया वह कहता है दो गज़ कपड़ा ले ले; जब अनजान जौहरी को दिखाया वह कहता है दस रूपये ले जा, जब दूसरे उससे अच्छे को दिखाया वह कहता है सौ रूपये ले जा, जब पूरा कदरदान मिल गया, वह कहता है भाई मरदाना! इसका तो मूल्य ही कोई नहीं है यह तो अमूल्य वस्तु है। समझा दिया कि इस तरह से संसार इज्ज़त नहीं करता नाम की, जानता नहीं है -

*साई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो।*
*जिना भाग मथाहि से नानक हरिरंगु माणदो॥* *पृष्ठ - 81*

कबीर साहिब नाराज़ हो गये माता लोई से इस बात पर कि तूने तीन बार 'राम' क्यों कहलवाया। रोग तो एक बार ही कहलवाने से दूर हो जाना था। कहते हैं विश्वास नहीं आया -

*कहतु कबीरु सुनहु रे लोई। अब तुमरी परतीति न होई॥*
*पृष्ठ - 484*

मेरे दिल में से तेरी कदर कीमत जाती रही; तुझे राम पर विश्वास नहीं। इतना सस्ता राम का मूल्य लगा दिया। प्रार्थना की ''पातशाह! पहली बार 'राम' तो मैंने उन पापों को नष्ट करने के लिये कहलवाया था जिसके फलस्वरूप इसे रोग लगा था, इसे बिमारी लगी थी -

*खसमु विसारि कीए रस भोग। तां तनि उठि खलोए रोगु॥*
*पृष्ठ - 1256*

दूसरी बार मैंने इसकी बिमारी को दूर करने के लिये 'राम' कहलवाया। तीसरी बार मैंने 'राम' इसे गुरू मन्त्र के रूप में दिया कि फिर दोबारा

कहीं इन बुराईयों में न फंस जाये।'' सो तीन बार भी राम कहलवाना उन्हें अच्छा न लगा। इतनी कीमती चीज़ है नाम। सो सारी इच्छाएं, वासनाएं पूरी करने में यदि कोई समरथ है तो वह केवल परमेश्वर का नाम है –

*धारना – सभे इच्छां होण तेरीआं पूरीआं,*
*सतिनाम जप के वाहिगुरू – 2, 2*
*मेरे पिआरे, सतिनाम जप के वाहिगुरू – 2, 2*
*सभे इच्छा होण तेरीआं पूरीआं.................।*

*प्रभ कै सिमरनि पूरन आसा।* *पृष्ठ – 263*

सभी इच्छाएं यदि कोई एक ही चीज़ पूरी कर सकती है तो वह परमेश्वर का नाम जाप करके ही हो सकती है। इसके मूल्य पर महिमा पर हमारा विश्वास नहीं बनता तो फिर बात आगे कैसे बढ़ेगी। नाम की महिमा पूछो सन्तों से –

*नाम की महिमा सन्त रिद वसै।* *पृष्ठ – 265*

संसार को इस बात का क्या पता।

सो गुरू दशमेश पिता कहने लगे माता जीतो जी को कि नाम पर विश्वास होना चाहिए और उसकी महिमा पर भी। दूसरा यह है मन्त्र। जो मन्त्र प्राप्त हो गया – संसार के अन्दर अनेक नाम हैं, एक नाम नहीं है। गुरू नानक पातशाह जब कांशी में गये तो वहाँ सवाल किया गया, विद्वान पुरुषों ने गुरू नानक से सवाल पूछा कि हे नानक! कृपा करके यह तो बताओ कि परमेश्वर का नाम 'ओउम' कहना या 'हरे राम' कहना या 'हरे कृष्ण' कहना या 'गोबिन्द' कहना या 'नारायण' कहना या 'सोहम' कहना – अनेक नाम हैं परमेश्वर के। सभ से श्रेष्ठ नाम कौन सा है जिसका जाप किया जाये। महाराज कहते हैं देखो प्यारे! जितने भी नाम हैं सभी परमेश्वर के नाम हैं। कोई भी नाम जपा जाये लेकिन ध्यान परमेश्वर में रहना चाहिए। सभी नाम परमेश्वर के हैं जितने भी नाम हैं –

*जेता कीता तेता नाउ॥ विणु नावै नाही को थाउ॥* *पृष्ठ – 4*

सारे ही उसके नाम हैं। जो मन्त्र समरथ गुरू से प्राप्त हो गया वही मन्त्र तुझे पार कर देगा। जिस भी नाव में जो बैठ गया – प्रश्न यह होता है कि उस नाव का जो मल्लाह है, एक तो उसके हाथ पूरी तरह सम्पूर्ण होने चाहिये; दूसरा यह कि उसके नेत्र दूर तक देखने वाले अर्थात दूरदर्शी होने चाहिए; तीसरा यह कि उसमें अनुभव होना चाहिये।

हाथ इसलिये पूरे होने चाहिए ताकि नाव का चप्पू चलाकर किनारे पर लगा दे। अनुभव इसलिये होना चाहिये कि भँवर आ रहा है, बहुत ऊँची

लहर आ रही है, यहाँ से मैं नाव को बचाकर कैसे ले जाऊँ; तरंगें उठ रही हैं, नाव को कौन सी दिशा में डाले ताकि उसमें पानी न भर सके उसकी दृष्टि ऐसी होनी चाहिए कि किनारा कितनी दूर हो जहाँ पत्थर आदि न हों, जहाँ मैं आराम से नाव को किनारे ठहरा सकूँ। कहते हैं, नावें तो सारी ही पार करा देती हैं। महाराज जी ने इस तरह फ़रमान किया है –

*धारना - बलिहारे जावां, जेते तेरे नाम ने - 2, 3*

बलिहार जाते हैं हे प्रभु! तेरे दो हज़ार नाम प्रतिदिन शेषनाग उच्चारण करता है लेकिन खत्म नहीं होने में आते। सो नाम तो बेअन्त हैं –

*अचुत पारब्रहम परमेसरु अंतरजामी। मधुसूदन दामोदर सुआमी।*
*रिखीकेस गोवरधनधारी मुरली मनोहर हरि रंगा।*
*मोहन माधव क्रिस्न मुरारे। जगदीसुर हरि जीउ असुर संघारे।*
*जगजीवन अबिनासी ठाकुर घट घट वासी है संगा।*
*धरणीधर ईस नरसिंह नाराइण। दाड़ा अग्रे प्रिथमि धराइण।*
*बावन रूपु कीआ तुधु करते सभही सेती है चंगा॥ पृष्ठ - 1082*

सो जितने भी नाम हैं, सभी नामों पर हम बलिहार जाते हैं। इसलिये जो भी नाम गुरू से प्राप्त हो गया उस पर विश्वास रखो भाई। मनुष्य ढूँढते फिरते हैं कि यदि वह नाम मुझे मिल जाये तो मैं तर जाऊँ। जो नाम गुरू ने तुझे दे दिया वह तुझे भव सागर पार कराने में समर्थ है। समरथ गुरू का दिया हुआ नाम है। यह बहुत confusion (उलझन) है आज। कहते हैं, यदि अमुक स्थान से नाम लें, तभी तर सकते हैं वह नाम ले ले। कोई कहता है 'सोहम' नाम ले लेते हैं......। ठीक है, सोहम नाम है –

*नानक सोहं हंसा जपु जापहु त्रिभवण तिसै समाहि॥ पृष्ठ -1093*

दशम द्वार का नाम है पर यह नाम जिसे प्राप्त है, ठहिरो उस स्थान पर। किसी को 'अल्लाह' मिला, किसी को 'खुदा' मिला, किसी को 'हरे राम' मिला; जो भी नाम मिला है वही नाम ठीक है। सारे ही नाम हैं। सो जो भी नाम प्राप्त हो गया उस पर भरोसा रखो।

ऐसी एक साखी आती है। एक महात्मा था। उनके पास एक प्रेमी आया। सीधा सादा आदमी था। साधारण वह होता है जिसके मन में कोई तर्क न हो, चंचलता न हो, कुतर्क न हो। ऐसा आदमी जल्दी पार हो जाता है, धन्ने जैसा। जो चालाक है उस व्यक्ति को बहुत देर लगती है क्योंकि उसका मन पहले मैदान नहीं बनता। छोटे छोटे गड्डो को खोदने में कितना समय लगेगा - गड्डों को भरने में। टीले समतल करने हैं, गड्डे भरने हैं। कितनी उसके अन्दर मनौतियाँ हैं कितनी पुस्तकें पढ़ी हैं जिसकी वज़ह से उसके अन्दर बड़े बड़े टीले अंकुरित हो गये हैं। क्या करेगा?

उसकी तो श्रद्धा ही नहीं बनती। सो वह प्रेमी बहुत सीधा सादा था। सन्तों के पास आ गया। आम स्वभाव है सन्तों के पास जाते ही कहते हैं, जी मुझे नाम दे दो।

प्राचीन समय में महात्मा दीक्षा इतनी जल्दी नहीं दिया करते थे; पहले ग्राहक को परखा करते थे कि इसके अन्दर वे qualities गुण भी है जिससे यह नाम को सम्भाल सके। जैसे शेरनी का दूध सोने के बर्तन में ही रह सकता है। इतना तेज़ होता है कि शेष बर्तनों में छिद्र कर देता है। सो यह नाम जिस हृदय में टिकाना है, महात्मा उसका निरीक्षण करते थे, उसे पक्का करते थे कि ऐसा न हो फिर यह डगमगाता रहे। हमारा ख्याल तो यह है कि अभी महात्मा के पास गये और जाते ही अभी नाम भी मिल जाये। इस प्रकार हमने कर भी लिया - अभी अमृतपान करने आते हैं, अमृतपान करा देते हैं। बिल्कुल नहीं साध संगत जी! मज़बूत बनो, संख्या मत बढ़ाओ। पहले परखो, बताओ दूसरे को। ककार बेचने हैं? हमने कोई profit (लाभ) कमाना है? मत किया करो ऐसी बातें। परखो उसे पहले कि अभी तू अमृतपान करने के लायक नहीं हुआ तेरी रूचि अभी शराब में से नहीं निकली तेरी अभी तक रुचि मांस खाने से नहीं हटी। निन्दा करने से नहीं हटी। पहले ऐसा कर 6 महीने अभ्यास कर फिर आ जाना। बाणी पढ़ा कर, जपुजी साहिब के पाठ किया कर - दस रोज़ को बता दो उसे। कर लेगा ठीक है ग्राहक बन गया, नाम दे दो, अन्यथा चुप रहो क्योंकि नाम इतना सस्ता नहीं होता, बहुत मंहगी वस्तु है नाम।

सो कदरदान न होने के कारण यहाँ से नाम ले लिया। दूसरी जगह जाकर और ले लिया फिर तीसरी जगह जाकर और ले लिया। पहले वाला छोड़ दिया फिर दोषी बन जाता है। गुरू धारण कर लिया, जाते ही शराब पी ली, छोड़ दी, दोषी बन गया क्योंकि ग्राहक नहीं था, कच्चा था। कच्चे को ही नाम जैसी दात उसके पल्ले में डाल दी। संख्या आदि बढ़ाने से तो कुछ भी नहीं बनता। थोड़े से ही अच्छे हैं जो पक्के होने चाहिये, दृढ़ निश्चय वाले हों। यदि बहुत अधिक जो रंग डालना है वह ठीक नहीं हुआ करता, न किसी में इतनी ताकत है कि सभी के पाप दूर कर दे। सो परखो पहले। गुरू महाराज भी परखा करते थे।

बहुत सारे महात्मा ऐसे थे जो बहुत देर बाद......। महाराज जी (राड़ा साहिब वालों) के पास आना। जी अमृतपान करना है, महाराज। महाराज कहते ऐसे कर पहले सवा लाख पाठ कर मूल मन्त्र का, फिर आना। यही थी उनकी रीत। सवा लाख पाठ कर लिया। महाराज! मैंने 33 मालाएं रोज़ की कर लीं, अब तो कृपा करो। फिर कह देना 6 महीने और कर। 6 महीने के लिये फिर लगा देना फिर साल भर के लिये कह देना फिर

कहीं जाकर अमृतपान करवाना। फिर जिसने अमृतपान कर लिया वह नहीं डगमगाता था। वह पहले ही नाम जपने लग जाया करता था। उसी समय अमृत बेला में उठकर चौकड़ी मार कर नाम जपने लग जाया करता था फिर नहीं कहा करता था कि मेरा मन डांवाडोल होता है, मेरा मन इधर-उधर भागता है। उस समय नाम की जो आन्तरिक अवस्थाएं हैं वे प्राप्त हो जाया करती थीं। अनहद शबद, प्रकाश आदि में वृत्ति (सुरत) चली जाया करती थी। ये रास्ते की चीज़ें हुआ करती हैं। नाम तो बहुत आगे आता है। सो इस प्रकार जिसके अन्दर विश्वास हो वह जल्दी पार हो सकता है।

सो प्रेमी आ गया, आकर शीश झुकाया। महात्मा कहने लगे -

''कैसे आया है, प्यारे?''

''महाराज! मुझ पर कृपा करो, मुझे नाम दे दो।''

''इतना सस्ता नाम? पहले सेवा कर।''

''बताओ, महाराज।''

महात्मा कहते हैं, ''पशुओं की सेवा कर, इनके खुरों को गोबर मत लगने देना, गोबर पर कोई पशु न बैठे। यह सेवा तू किया कर, घास आदि डालने वाले की सहायता किया कर। सो जब तू नाम के योग्य हो जायेगा, तुझे हम अपने आप ही बुला लेंगे।'' आठ वर्ष बीत गये, दिन रात सेवा करता है। महात्मा बहुत प्रसन्न हैं कि ऐसा प्रेमी आया है; कभी नहीं देखा कि पशुओं के खुरों में गोबर फंसा हुआ है। हर समय सावधान रहता है कि ये तो मेरे गुरू के पशु हैं हर समय हुक्म की पालना करता है। आठ साल बीतने के बाद एक दिन मन में विचार आया कि कहीं गुरू जी भूल न गये हों, मुझे अभी तक तो कुछ भी प्राप्त न हुआ। सेवा करते करते क्या होता है - मन निर्मल हो जाता है -

*मिलि संत सभा मनु मांजीऐ भाई हरि कै नामि निवासु। पृष्ठ-639*

सन्तों की सभा में आकर जब मन को मांजते हैं - सेवा के साथ, जैसे जैसे बर्तनों को चमकाते हैं, उतना ही मन चमकता है।

गुरू दशमेश पिता ने भाई मनी सिंह को हुक्म दिया, ''हे पुरुष! तू जाकर बर्तन साफ किया कर। जितने प्यार के साथ बर्तन चमकाया करेगा, उतनी ही तेरी बुद्धि निर्मल होती जाएगी।'' फिर कहाँ पहुँच गये आप? कितने बड़े विद्वान हुए हैं?

इसी प्रकार ''कर्म, उपासना, ज्ञान विज्ञान'' चार अवस्थायें रूहानी मार्ग की हुआ करती हैं। पहले कर्म होता है। यह सेवा करने से बाणी पढ़ने

से नेक कर्म करने से, बुराईयों पर काबू करके मन की मैल उतरती है फिर नाम की बारी आ जाती है – उपासना की, फिर उसके बाद ज्ञान की बारी आती है।

इस तरह करते करते उस प्रेमी को आठ साल बीत गये। बड़े प्यार के साथ सेवा करता है, कभी शिकायत नहीं करता। जो कुछ मिल जाता है वही खाकर शुक्रिया करता है। जहाँ सोने को बैठने को कहते हैं वहीं सोता, उठता है। आठ साल बीतने के बाद मन निर्मल हो गया। आज मन में विचार आया कि महापुरुषों से प्रार्थना करके उन्हें याद दिलाएं। जाकर प्रणाम किया कहते हैं ''बताओ कैसे आना हुआ?'' वह कहता है, ''महाराज! आप जी का फ़रमान था कि सेवा किया, कर फिर हम तुम्हें नाम देंगे।'' महात्मा बोले, ''ऐसे कर, नाम अमृत बेला में दिया जाता है। हम आठ बजे भजन बन्दगी से निवृत्त होंगे, तू उस समय आ जाना, प्यारे।'' अनेक महात्मा प्रातः काल ही नाम दिया करते हैं। सो उस समय जब आया तो रात को सन्देशा आ गया कि ''महात्मा जी के कल यहाँ के राजा ने दर्शन करने के लिए आना है, आप अनुमति दीजिये।'' महात्मा बोले, ''ठीक है आठ बजे आ जाएं, साढ़े आठ बजे आ जायें, 9 बजे आ जायें।'' सो आज्ञा मिल गई कि महाराज यदि आप आज्ञा दें और गुस्ताखी न समझें तो हम वहाँ पर गलीचे बिछा दें ताकि आराम से राजा भी बैठ सके, रानियाँ भी साथ होंगी, वह भी बैठ जायेंगी। आप जानते ही हो कि उनके कपड़े बहुमूल्य हुआ करते हैं और आप तो सफ पर ही बैठ जाते हो, हम भी ज़मीन पर बैठ जाते हैं पर उनकी आज्ञा ही ऐसी है कि हमें पालन करना ही पड़ता है। कहीं हम पर नाराज़ न हो जाएं। महात्मा बोले ''कोई बात नहीं।'' उन्होंने गलीचे बिछा दिये।

इधर यह प्रेमी जब आठ बजने लगे, अन्दाज़े से हिसाब लगाया – सूरज की ओर देखकर, कहने लगा कि महापुरुषों ने तो मुझे बुलाया था आठ बजे। वह उसी समय उठकर भागता हुआ उधर जाने लगा तथा दूसरी ओर राजा का आने का भी समय हो गया। महात्मा अपनी कुटिया के दरवाज़े में खड़े हैं। सामने उनके carpet (गलीचा) बिछा हुआ है, अन्दर भी गलीचा बिछा हुआ है और वह प्रेमी भागा हुआ आ रहा है। देखा महात्मा ने कि यह भागा हुआ आ रहा है, और ध्यान से देखा कि इसके तो पैर गोबर से सने हुए हैं। जिस समय उसने आते ही पैर गलीचे पर रखना चाहा, उस समय महात्मा के मुख से निकला, 'परे-परे-परे-परे-परे-परे।' वहीं पर ही शीश झुका दिया 'परे-परे-परे-परे-परे-परे।' जपना शुरू कर दिया। दिन रात एक कर दिया। पूरी श्रद्धा के साथ उसका ध्यान करता है –

*जिमी जमान के बिखै समसत एक जोत है।*
*न घाट है न बाढ है न बाढ घाट होत है।* *अकाल उस्तति*

हर समय ध्यान रखता। सत्संग किया करता था, पता था कि वाहिगुरू मेरे साथ है जिसका मैं नाम लेता हूँ।

समय बीतता गया। नाम में सिद्धी हुआ करती है, जिसका नाम लेते हैं, उसके अन्दर नामी बसता है। 'वाहिगुरू' मन्त्र है, इसी में ही वाहिगुरू का निवास है। यह उनको दिखाई देता है जो बन्दगी करके वाहिगुरू शब्द से दूर निकल जाते हैं पार कर जाते हैं -

*ए अखर खिरि जाहिगे....................॥* *पृष्ठ - 340*

यह तो खिर (लुप्त) जायेंगे अक्षर। जो न लुप्त होने वाला है वह इसके पीछे खड़ा है, वह शक्ति रूप है। निश्चय में बस जायेगा फिर परमेश्वर का ही बन जाता है। ऐसी ही अवस्था इस प्रेमी की हो गई। परमेश्वर में लीन रहना शुरू कर दिया। अभी ज्ञान की प्राप्ति नही हुई।

सो आज महात्मा ने बुलाया, कहने लगे, ''प्यारे! 40 मील की दूरी पर एक हमारा प्रेमी है तू वहाँ जा। वहाँ जाकर इस चिट्ठी का जवाब लेकर आ।'' जवाब लाने के लिये तैयार हो रहा है और मन में फुरना (विचार) आ गया कि कहीं ऐसा न हो, मेरी नाम में लगी हुई लिव टूट न जाये क्योंकि नाम की यदि लिव टूट जाये तो बिल्कुल ऐसी अवस्था होती है जैसा कि फ़रमान है -

*जिउ मछुली बिनु पाणीऐ किउ जीवणु पावै।*
*बूंद विहूणा चात्रिको किउकरि त्रिपतावै।*
*नाद कुंरकहि बेधिआ सनमुख उठि धावै।*
*भवरु लोभी कुसम बासु का मिलि आपु बंधावै।*
*तिउ संत जना हरि प्रीति है देखि दरसु अघावै॥* *पृष्ठ - 708*

*आखा जीवा विसरै मरि जाउ।* *पृष्ठ - 9*

ख्याल आ गया, कहीं लिव न टूट जाये। एकान्त पसन्द था हर समय प्रभु के नाम के साथ जुड़ा रहता था। सो अन्दर फुरना हुआ कि परमेश्वर हर समय इन्तज़ार करता है कि जो मेरे साथ अभेद अवस्था के महात्मा हर वक्त जुड़े रहते हैं, उनके काम करने का कहीं मौका मिले, सेवा करने का अवसर मिले -

*अपुने सेवक की आपे राखै आपे नामु जपावै।*
*जह जह काज किरति सेवक की तहा तहा उठि धावै॥*
*सेवक कउ निकटी होइ दिखावै।*
*जो जो कहै ठाकुर पहि सेवकु तहकाल होइ आवै॥* *पृष्ठ - 403*

'तत्काल' कहते हैं Immediately (उसी क्षण); उसी समय बात हो जाती है। सामने आ गये प्रभु। कहते हैं ''प्यारे! क्या बात है?'' वह बोला, ''पहचाना नहीं। यह चिट्ठी लेकर जाना है, मुझे डर लगता है कि कहीं मेरी नाम की लिव न टूट जाये।'' कहते हैं, ''ला मुझे दे, मैं अभी ला देता हूँ।'' जवाब लाकर दे दिया - पाँच मिनट में, और बोले, ''ले यह सन्त जी को दे आ।'' वहाँ से विदा होकर आ गया। अब महात्मा के पास दोबारा आया, कहते हैं -

''तू अभी तक गया नहीं।''

''महाराज! मैं जवाब ले आया हूँ।''

हैरान होते हैं कि यह आदमी कैसा है? कहने लगे ''वह तो 40 मील दूर है।''

''हाँ जी, वहीं से लेकर आया हूँ।''

''तू गया था?''

''नहीं।''

''कौन गया था?''

''परे-परे।''

हैरान हो गये, यह परे-परे क्या कहता है। फिर चिट्ठी ले ली, समझ गये कि कोई कौतुक हो रहा है। आप आराधना में लीन हो गये। प्रभु की आराधना की, लीन हो गये और प्रभु से प्रार्थना की -

''हे प्रभु! यह कैसा कौतुक है?''

''यह मैंने ही जवाब लाकर दिया है।''

''यह परे-परे कहता है।''

''बुलाकर पूछ ले।''

उस प्रेमी को बुला लिया और कहने लगे -

''यह परे-परे क्या है?''

''हे महापुरुष! जो आपने मुझे नाम दिया था।''

''परे-परे, हमने नाम दिया था?''

''हाँ जी।''

ख्याल आया कि हमने तो सहज स्वभाव 'परे-परे-परे-परे' कहा

था। उस समय आराधना की, ''हे प्रभु! यह कैसा नाम है तुम्हारा?'' कहते हैं ''असली नाम तो मेरा यही है क्योंकि मुझे 'अपरंपर' कहते हैं मैं परे से भी परे (अर्थात बहुत दूर) हूँ। त्रिगुणी माया, माया के सारे दृश्यों, तीनों शरीरों से, पाँच तत्वों से, पाँच प्राणों से, पाँच ज्ञानेन्द्रियों से, पाँच कर्मेन्द्रियों से, मन, बुद्धि, चित्त, अहमभाव जहाँ पर पहुँच कर सारी प्रकृति समाप्त हो जाती है, महात्मा जी! उससे भी परे (दूर) हूँ मैं, मेरे से परे कुछ नहीं। मैं ही मैं हूँ। सो इसने मेरा नाम अपरंपर जपा है -

*अपरंपर पारब्रहमु परमेसरु नानक गुर मिलिआ सोई जीउ॥*

*पृष्ठ - 599*

सो जो भी नाम प्राप्त हो गया - इसमें नामों की संख्या गिनती आदि नहीं किया करते, यह आदमी डांवाडोल हो जाया करता है। किसी ने कह दिया कि अमुक नाम ठीक है जी, किसी ने कह दिया यह नाम ठीक है, अमुक नाम जपने से भव सागर तर जायेगा। किसी से नहीं होना। यह कुल मिलाकर तुम्हारी श्रद्धा भावना है और तुम्हारी लगन है जिसने पार उतारना है। महात्मा ने नाम देना है, कृपा करनी है पर दूसरी तरफ भी कोई चीज़ होनी चाहिए सम्भालने के लिए। रहतों (नियमों) में भी पूरा होना चाहिये।

सो महाराज कहने लगे कि नाम पर, मन्त्र पर, जो गुरू से मिला है, उस पर विश्वास हो। दूसरा यह होता है कि गुरू के वचनों पर विश्वास होना चाहिए। जब तक गुरू के वचनों पर विश्वास नहीं है, तब तक दर्शन शास्त्र, पुस्तकें आदि पढ़-कर - पढ़ लो जितनी पढ़ सकते हो, अर्थ पढ़कर देखने हैं, पढ़ लो, जो कुछ करना है कर लो; जब तक गुरू के उपदेश का पालन नहीं किया जाता तब तक पार नहीं हो सकता। इस प्रकार फ़रमान करते हैं -

*धारणा -प्रीतम के देस कैसे, बातन से जाईए - 2, 4*

*पूछत पथिक, तहि मारगि न धारै पगि,*
*प्रीतम कै देस कैसे बातन से जाईऐ।*
*पूछत है बैद, खात औखधि न संजम सै,*
*कैसे मिटै रोग सुख सहजि समाईऐ।*
*पूछति सुहागनि है, करमि दुहागनि कै,*
*रिदै बिभचार, कत सिहजा बुलाईऐ।*
*गाइ सुनै आंखे मीचै पाईऐ न परम पदु,*
*गुरु उपदेश गरि जौ लौ न कमाईऐ॥*

*भाई गुरदास जी, कबित्त - 439*

सुनता चला जाता है यह गीत। गुरू उपदेश देते हैं कि निन्दा मत करना,

चुगली मत करना, ईर्ष्या मत करना, नाम नहीं तेरे द्वारा जपा जा सकेगा पर यह वचन पालन करता ही नहीं। सुनता ही सुनता चला जाता है। महाराज कहते हैं, ऐसे कुछ भी नहीं बनेगा, प्यारे! तुझे तो आज्ञा माननी ही पड़ेगी।

*सेवक सिख पूजण सभि आवहि सभि गावहि हरि हरि ऊतम बानी।*
*गाविआ सुणिआ तिन का हरि थाइ पावै*
*जिन सतिगुर की आगिआ सति सति करि मानी॥ पृष्ठ - 669*

गाते सुनते तो हम सभी ही हैं पर ***'गाविआ सुणिआ तिन का हरि थाइ पावै जिन सतिगुर की आगिआ सति सति करि मानी।'*** यदि आज्ञा ही नहीं माननी फिर तो बात आगे बनती ही नहीं, यहीं टूट जाती है। हम मन के सिख हैं, गुरू के सिख नहीं, मन के सिख होने के नाते 'मनमुख' कहलाते हैं। यदि गुरू के हो जायें तो गुरमुख कहलवायें फिर शराब क्यों पीयें यदि गुरू के सिख हो जायें। केश रख लेने से तो सिखी नहीं मिलती नाम 'सिंह' रखवा लेने से सिखी नहीं मिला करती। सिखी तो जब तक सिख कर्म नहीं करता तब तक सिख कोई कैसे बन गया। महाराज तो कहते हैं कि -

*धरै केस पाहुल बिना भेखी मूरख सिख।*
*मेरा दरशन नहीं तिस पापी तयागे भिख।*
*पृष्ठ - 283 (श्री गु. प्र. सू. ग्रंथ)*

वह तो भेखी है मूर्ख सिख है जो रीस (स्पर्धा) करता है सिखों की। सो इस प्रकार गुरू के उपदेशों का पालन करो। गुरू ऐसा कहते हैं -

*तजि अभिमानु लेहु मन मोलि। राम नामु हिरदे महि तोलि।*
*पृष्ठ - 283*

पहले अभिमान छोड़ दे। यदि तेरे अनदर अभिमान है, नाम तेरे हृदय में फलीभूत नहीं होगा। अभिमान किस चीज़ का होता है? 6 प्रकार के अभिमान हैं - बड़े बड़े और कोई भी इनसे बच नहीं सकता; इन्हें महाराज जी ने ठग कहा है ठग, और हमें Warning (चेतावनी) दी है -

*धारणा - फिरदे ठगवाड़े ओइ, वेखीं न ठगिआ जावीं - 2,2*
*वेखीं न ठगिआ जावीं, वेखीं न ठगिआ जावीं - 2*
*फिरदे ठगवाड़े ओइ,................।*

महाराज कहते हैं, पाँच ठग तेरे अन्दर घूमते फिरते है -

*राजु मालु रूपु जाति जोबनु पंजे ठग।*
*एनी ठगीं जगु ठगिआ किनै न रखी लज। पृष्ठ - 1288*

कहतें हैं कोई नहीं बच सका इनसे, सभी को ठग लिया इन्होनें। एक एक में बहुत बड़ी ताकत है।

बाबा फरीद जी चले जा रहे हैं चलते-चलते एक चीख सुनी आपने। आपका एक कदम भी आगे न बढ़ सका; बड़ी दर्दनाक चीख सुनाई दी। आप रूक गये, दरवाज़े के पास जाकर - दरवाज़ा अन्दर से बन्द है। दरवाज़ा खटखटाया, काफी देर बाद दरवाज़ा खुला। क्या देखते हैं कि एक स्त्री; नेत्र लाल हुये पड़े हैं, चेहरे का रंग बदला हुआ है और हाथ में हन्टर है। ''बेटी'! क्या बात है? यहाँ कौन है जिसने इतनी दर्द भरी चीख निकाली थी? हम से सहन नहीं हुई।'' कहने लगी, ''दरवेश सांई! ये गृहस्थियों के घर हैं। आपने क्या लेना? आप जाकर 'अल्लाह-अल्लाह' भजो, तसबी (माला) फेरो; इन बातों में पड़ने की जरूरत नहीं।''

कहते हैं, ''बेटा! कोई दुःख हो तो दूर किया जा सकता है, कोई विघ्न हो तो हटाया जा सकता है - बता तो सही।''

कहने लगी, ''बाबा! तू एक वैश्या के घर के आगे खड़ा है। यहाँ हुस्न का सौदा होता है और तू साधु सन्त हैं। तेरा यहाँ पर रूकना ही तुझे कलंकित कर देगा।'' बेटी, बता तो सही बात क्या है?''

कहती है, ''क्या बात होनी है? यह हम काज़ल डालती हैं ताकि सुन्दर लगें और ग्राहक का मन टिक जाये। इस मेरी दासी ने काज़ल रगड़ा है, सुरमा रगड़ा है; मोटा रह गया थोड़ा। जैसे ही मैंने यह नेत्रों में डाला और पतली धार बनाई थी - नेत्रों के अन्दर, वह पानी बह कर फीकी पड़ गई। इसलिये इसे मति देने के लिये मैं इसे हंटर से मार रही थी।''

फरीद जी कहने लगे, बेटी, यह शरीर तो सदा रहता नहीं, क्योंकि इसकी तीन अवस्थाएं हैं -

***बाल जुआनी अरु बिरध फुनि तीनि अवसथा जानि।*** ***पृष्ठ - 1428***

पहली अवस्था बचपन होती है। बचपन को जवानी खा जाती है, नामो निशां भी बचपन का नहीं रहता, जवानी को आकर बुढ़ापा खा जाता है। आदमी इच्छा करता है कि मैं पुनः जवान हो जाऊँ, कौन-कौन से विटामिन खाँऊ, कौन सा रंग बाज़ार से खरीदकर दाढ़ी को लगाँऊ, कौन सा रंग सिर को लगाँऊ सफेद दिखाई न दें। नहीं आती जवानी लौट कर। एक बार आती है, जवानी तथा माता पिता दोबारा नहीं मिला करते। जो बीत गई सो बीत गई। गुरू महाराज कहते हैं इस पर किस बात का अभिमान है। यह शरीर तो 'इतना कु लागै ठनका' इतना भी नही सहन कर सकता। अब इसमें क्या है? कौन से भ्रम में पड़ गई बीबी तू -

***बिसटा असत रकतु परेटे चाम। इसु ऊपरि ले राखिओ गुमान॥***
***पृष्ठ - 374***

देह अधिआस हो गया। यह तो एक पतले से प्लास्टिक की तह के नीचे

विष्ठा पड़ी है, मूत्र पड़ा है, मैल पड़ी है। साढ़े तीन करोड़ रोम हैं; जिनमें से हर समय मैल निकलती है। इसका सुहपन (सुन्दरता) कैसा? इसी ने ही ठग लिया तुझे ठग ने। यौवन वाले ठग ने ठग लिया तुझे। यह यौवन सदा नहीं कायम रहना यह बीत जाता है।

वैश्या कहने लगी, ''बाबा, तू अपने रास्ते चल। यह उपदेश किसी सत्संगी को सुनाना। यह मुझे अच्छा नहीं लगता क्योंकि जहाँ तू खड़ा है यह उपदेश लेने वाली जगह नहीं है, यह तो पैसे कमाने की जगह है पैसे लेने हैं मैंने। पैसे कमानें है, गुज़ारा मेरा तभी होगा। जाओ आप, अपना दर्वेशपना कहीं और जगह दिखाना।''

बाबा फरीद जी चल पड़े। समय बीतता गया। आज बहुत सारे मुरीदों (शिष्यों) के साथ चले आ रहे हैं। झाड़ झखांड़ है - कब्रिस्तान में, एक सघन झाड़ है थोड़ा ऊँचा है। क्या देखते हैं-उस पर एक खोपड़ी (कंकाल) पड़ी हुई है और आँखों में से छोटे छोटे बच्चे चोंचे निकाल कर देख रहे हैं, घौंसला बनाया हुआ है अन्दर। जैसा बया चिड़िया का आलना (घोंसला) होता है, वैसा ही घौंसला बना हुआ है। उस समय अन्तर्ध्यान हो गये, भूत काल देखा, कि कौन है? देखा, तो वही हंटर मारने वाली स्त्री सामने खड़ी है। हुस्न की तारीफ कर रही है, उसे कायम रखना चाहती है। बजद में आ गये। उस समय बजद में आकर आपके मुख से इस प्रकार फ़रमान हुआ -

***धारण - जिहड़ीआं कज्जल रेख न सी सहिंदीआं,***
***जिहड़ीआं कज्जल, जिहड़ीआं कज्जल रेख न सी सहिंदीआं***
***पंछीआं ने पा लए आलणे, पिआरिओ, पिआरिओ,***
***पंछीआं ने पा लए आलणे, जिहड़ीआं कज्जल - 2, 2***

***फरीदा जिन्ह लोइण जगु मोहिआ से लोइण मै डिठु।***
***कजल रेख न सहदिआ से पंखी सूइ बहिठु॥ पृष्ठ - 1378***

मुरीद कहने लगे,''मुरशद! यह सिजदा आपने किसलिये किया? '' कहने लगे, ''प्रेमियो! एक दिन हम जा रहे थे। यह स्त्री अपनी एक नौकरानी को इसलिये निर्दयता से मार रही थी कि उसकी काजल की रेखा खराब हो गई थी। पानी निकल आया उसकी आँखों से। सुरमें की धार खराब हो गई। हम अल्लाह ताला की बेअन्त कुदरत को देखकर सिजदा कर रहें हैं। हे अल्लाह ताला! वही खोपड़ी है और आज क्या हुआ कि इसके अन्दर पन्छियों ने घौंसले बनाये हुये हैं, छोटे छोटे बच्चे आँखों में से चोंच निकाल निकाल कर देख रहे हैं।''

यह यौवन का अन्त हुआ करता है। फरीद जी कहते हैं कि -

*जोबन जांदे ना डरां जे सह प्रीति न जाइ॥* *पृष्ठ - 1379*

मैं नहीं डरता, यदि मेरी प्यारे के साथ प्रीत न जाये, यौवन जाता है तो जाने दे -

*फरीदा कितीं जोबन प्रीति बिनु सुकि गए कुमलाइ॥* *पृष्ठ - 1379*

कितने ही यौवन सूख गये। प्रीत तो नहीं सूखा करती, प्रीत सदा रहती है। सो 'ठग' है यह भी -

*राजु मालु रूपु जाति जोबनु पंजे ठग।* *पृष्ठ - 1288*

जात भी ठग है। पैसा भी ठग है। आदमी को Pollute (मलीन) कर देते हैं। बहुत सारा पैसा बैंक में जमा है किसी से बात ही नहीं करता।

गुरू महाराज जी एक बहुत बड़े धनी के पास चले गये जिसने अपना उद्देश्य धन इकट्ठा करना ही रखा हुआ था। वहाँ जाकर उसके राज्य का हाल देखा और लोगों से पूछने लगे -

''यह किस का राज्य है?''

''काँरू का राज्य है- काँरू बादशाह का।''

''इतनी खस्ता (नाजुक) हालत क्यों?''

यह फारस की बात है ईरान की। कहतें हैं महाराज, ''कोई भी सिक्का Circulation (लेन-देन) में नहीं आ रहा और इतनी बुरी बात है कि बादशाह बहुत निर्दयी है, क्रूर है। एक बार इसके अमीर वज़ीरों ने यह बात कही कि हमने सारा सिक्का (पैसा) छीन लिया है जनता से, अब किसी के पास कुछ भी नहीं है।'' बादशाह कहने लगा, ''नहीं, है अभी भी।'' इन्होंने एक बहुत खूबसूरत वैश्या एक रूपये में बेचने का ढिंढोरा पिटवा दिया। एक नौजवान माँ के पास आया और कहने लगा -

''माता! मैंने एक औरत खरीदनी है।''

''बेटा! पैसा तो कोई है नहीं।''

''एक रूपया दे दे माँ, नहीं तो मर जाऊँगा।''

''बेटा! तू तो ऐसा काम करवाने चला है जो बिल्कुल भी नहीं करना चाहिये। तेरे पिता के मुँह में एक रूपया डालकर हमने दफनाया था। जाह वह निकाल ले कब्र में से।

कब्र खोद डाली रूपया निकाल लिया। बाज़ार में आ गया और प्यादे (सिपाही) को दे दिया जो आवाज़ें लगा रहे थे। बादशाह के सामने पेश किया गया - कांरु के सामने। बादशाह कहने लगा -

“कहाँ से लिया है रूपया?”

“पिता की कब्र में से निकाला है।”

बादशाह ने हुक्म दे दिया कि सारे कब्रस्तिानों को खोद डालो। सो कहते हैं, “महाराज! ऐसा है बादशाह।”

महाराज चले गये। वहाँ जाकर सन्देशा भेजा बादशाह के पास कि कोई दरवेश आए हैं और तुझे बुला रहे हैं। उसी समय जाकर बादशाह को खबर दी गई। कहने लगा दरवेश सांई को बैठाओ और मैं अभी आया। गुरू महाराज बैठे नहीं वहाँ बल्कि ठीकरियां (मटकों के टुकड़े छोटे-छोटे) इकट्ठे करने लग पड़े। मरदाना भी इकट्ठे किये जाता है। स्वंय महाराज भी किये जा रहे हैं। एक थैला सा है उसके अन्दर भरे जा रहे हैं। दूर से देखा, जब सामने आकर दर्शन किए, कहने लगा, ऐसा दरवेश आज तक नहीं देखा। इतना जलाल! यह तो निरा ही नूर है इसके चेहरे पर। प्रभावित हो गया। आवाज़ लगाई -

“ऐ दरवेश! दीदार बख्शो। यह क्या कर रहे हो?”

“बादशाह! अभी हमें फुर्सत नहीं है। थोड़ा ठहर, हम ठीकरियां इकट्ठी कर रहे हैं।”

“दरवेश साई! मैं करवा देता हूँ।”

“हम छाँट छाँट कर करते हैं।”

“क्या करनी हैं महाराज?”

“तुझे हमने अमानत देनी है अपनी।”

“किसके लिये?”

“हम जब इस संसार से जाएंगे दरगाह (बारेगाह खुदा) में, तेरे से यह अमानत ले लेंगे।”

थोड़ी देर सोचा, कहने लगा -

“दरवेश सांई, यह किस प्रकार साथ चली जायेंगी, जब शरीर ही साथ नहीं जाता?”

“कारू! जहाँ 40 गन्ज (बहुत अधिक लगभग आज के एक करोड़ रूपयों का ढेर एक गन्ज होता था) तेरे इकट्ठे किये हुए जायेंगे, वहाँ इन्हें भी रख लेना। यह नहीं जायेगी थोड़ी सी चीज़ है?”

आँखे खोल दी और महाराज कहते हैं -

*कीचै नेकनामी जो देवै खुदाइ। जो दीसै जिमीं पर सु होसी फनाइ।*
*दायम न दौलत कसे बेशुमार। न रहिंगे करोड़ी न रहिंगे हज़ार।*
*दमड़ा तिसी का जो खरचै अर खाइ। देवै दिलावै रजावै खुदाइ।*
*होता न राखै अकेला न खाइ। तहकीक दिल दानी वही भिसत जाइ॥*

*नसीहतनामा*

महाराज कहते हैं, ''गलत रास्ते पर चल पड़ा है और प्रजा की तू देख रेख नहीं करता। प्रजा तेरी को चोर, डाकू लूट रहे हैं, कपड़े उनके पास नहीं, कुछ भी नहीं है।''

सो धन जो है, साध संगत जी! इस तरह से सारी ज़िन्दगी आदमी क्या छोटा, क्या बड़ा, धन के लिये बर्बाद कर देते हैं।

*कबीर इहु तनु जाइगा सकहु त लेहु बहोरि।*
*नांगे पावहु ते गए जिन के लाख करोरि॥* *पृष्ठ - 1365*

लाख करोड़ कहते हैं 100 खरब रूपया। इतनी अपार धन राशि वाले भी जब संसार से जाते हैं, नंगें पैर तथा खाली हाथ जाते हैं फिर यह कितना बड़ा ठग है। सारी जिन्दगी परमेश्वर का नाम नहीं लेने देता।

सो इस प्रकार राजसी शक्ति कितनी बुरी है? एक बार आदमी के हाथ में आ जाए - लाख आदमी मारना पड़ जाये मामूली बात है, कुर्सी के लिये मार देते हैं। करोड़ मारना पड़ जाये कितना भी बड़े से बड़ा पाप करना पड़ जाये कर देता है। पिता को मार दिया औरंगजेब ने। कहाँ पड़ा है बाप? पड़ा है- औरंगजेब की कैद में। गर्मी का महीना है और जितने भी बड़े बड़े कार्य किये हैं जिसने प्रजा के अन्दर, बेअन्त परोपकार के कार्य करके प्यासों के लिए पानी के कुँए लगवाए और आज वे एक घूंट पानी के लिए तरस रहे हैं और कह रहे हैं, ''मुझे एक प्याला पानी का और दे दे।'' औरंगजेब ने जवाब दिया। ''ऐ बादशाह! तेरे लिए और पानी नहीं है। तू जिस स्याही के साथ चिट्ठी लिख रहा है, इसके सूफ को चूस ले ताकि तेरी प्यास बुझ जाये।'' कितना बड़ा जुल्म है - एक पानी का प्याला न दे सका। भाई को कत्ल कर दिया, दूसरे भाई के नेत्र निकलवा दिए, कितने पीर मरवा दिये, कितने साधुओं का खून करवा दिया। आखिर जब अन्त समय आया, डर रहा है। पन्धनामा (डायरी) लिख रहा हैं, पुत्रों को चिट्ठियाँ लिख रहा है कि ऐ बेटे! मैंने सारी ज़िन्दगी पाप ही पाप किये हैं और मैने इबादत (प्रार्थना) नहीं की। बहुत भ्रम में पड़ा रहा मैं, मैं छल कपट द्वारा दुनियाँ में नेक आदमी कहलाता रहा। अब मेरा क्या हाल होगा, जब दरगाह में जाऊंगा? मेरी ज़मीर मुझे लानत (धिक्कार) मार रही हैं। कितना बड़ा भ्रम पैदा कर दिया राजसी शक्ति ने - खाली हाथ चला गया।

सो इस प्रकार महाराज कहने लगे कि यह मान जो है यह सबसे बड़ी रूकावट है भजन बन्दगी की राह में। जिसके अन्दर भी मान (गर्व) है बन्दगी के रास्ते पर नहीं चल सकता, इस तरह पढ़ लो -

*धारणा - तेरा माण तेरा माण तेरा माण ओ,*
*गुरां नूं न भावे भाई तेरा माण ओ - 2, 3*

यदि परमात्मा को कोई चीज़ नहीं अच्छी लगती -

*हरि जीउ अहंकारु न भावई वेद कूकि सुणावहि।*

*पृष्ठ - 1089*

महाराज कहते हैं जितने धर्म ग्रन्थ हैं, जितने भी महापुरुष हैं, वे एक ही बात कहते हैं कि परमात्मा को यदि कोई चीज़ अच्छी नहीं लगती तो वह मान (बड़प्पन) हुआ करता है। बड़प्पन ही साधु संगत जी! परमेश्वर के मिलाप में रूकावट है। अभिमान छोड़कर ही नाम मिलता है -

*तजि अभिमानु लेहु मन मोलि। राम नामु हिरदे महि तोलि।*

*पृष्ठ - 283*

नाम नहीं मिलता, यदि अभिमानी है तो। अभिमान की दूसरी शक्ल हउमैं है, Ego होती है जिसे '**अहमभाव**' कहते हैं। यह 'मैं' और 'अभिमान' है -

*धन पिर का इक ही संगि वासा विचि हउमै भीति करारी।*
*गुरि पूरै हउमै भीति तोरी जन नानक मिले बनवारी॥*

*पृष्ठ - 1263*

*हउ हउ भीति भइओ है बीचो सुनत देसि निकटाइओ।*
*भांभीरी के पात पारदो बिनु पेखै दूराइओ॥* *पृष्ठ - 624*

यदि वाहिगुरू के साथ मिलाप में कोई रूकावट है तो वह हमारा अभिमान है। मोटा अभिमान भी होता है। पतले से पतला अभिमान भी होता है।

अब समय इज़ाज़त नहीं देता। सभी प्रेमी आनन्द साहिब, फिर गुरू सतोतर में बोलने का कष्ट करो -

- आनन्द साहिब -

- गुरू सतोतर -

- अरदास -

# १ओंकार सतिगुर प्रसादि

*शान.................................................................................................................... ।*

*सतिनामु श्री वाहिगुरू, धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज॥*

*डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।*
*डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ पृष्ठ - 256*

*फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।*
*नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ पृष्ठ - 289*

*धारना - प्रभ मोहि न विसारो जी, मैं जन तेरा, मैं जन तेरा - 2, 2*
*मैं जन तेरा, मैं जन तेरा - 2, 2*
*प्रभ मोहि न विसारो जी,............।*

*मेरी संगति पोच सोच दिनु राती।*
*मेरा करमु कुटिलता जनमु कुभांती॥*
*राम गुसईआ जीअ के जीवना।*
*मोहि न बिसारहु मै जनु तेरा॥*
*मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई।*
*चरण न छाडउ सरीर कल जाई।*
*कहु रविदास परउ तेरी साभा।*
*बेगि मिलहु जन करि न बिलांबा॥ पृष्ठ - 345*

*धारना - लुट लुट लओ नसीबां वाले बंदिओ,*
*लुट पै गई राम नाम दी - 2, 2*
*लुट राम नाम दी, लुट राम नाम दी - 2, 2*
*लुट लुट लओ नसीबां वाले बंदिओ,...............।*

*कबीर लूटना है त लूटि लै राम नाम है लूटि।*
*फिरि पाछै पछताहुगे प्रान जाहिंगे छूटि। पृष्ठ - 1366*

*कबीर मानस जनमु दुलंभु है होइ न बारैबार।*
*जिउ बन फल पाके भुइ गिरहि बहुरि न लागहि डार॥*
*पृष्ठ - 1366*

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलो सतिनाम श्री वाहिगुरू। कारोबार संकोचते हुए - गर्मी का महीना है; इसके अन्दर सहज तप करते हुए आप गुरू दरबार में बैठे हो क्योंकि एक तामसी तप होता है, वह निरर्थक तप हुआ करता है; धूनियां रमा लेनी, ऊपर से सूरज तप रहा है, हवा आग जैसी चल रही है, उससे भी बढ़कर धूनियां रमा लेना, सारे शरीर

का रक्त सुखा देना। इसका कोई अर्थ नहीं निकलता लेकिन जो सहज तप हम कर रहे हैं सत्संग के रूप में, इसका बहुत बड़ा फल होता है। सो फ़रमान यह है कि कलयुग में मनुष्य का शरीर धारण करके परमेश्वर का नाम लूटने का chance (अवसर) मिला है पर इसे कोई भाग्यशाली आदमी है, सौभाग्यशाली आदमी है जो लूट रहा है। पता नहीं चलता क्योंकि रूचियाँ दूसरी ओर लगी हैं हमारी; संसार अच्छा लगता है और जो असली चीज़ है उसकी तरफ हमारा ध्यान नहीं जाता। संसार छोड़कर चले जाना है, संसार की दौलत यहीं रह जायेगी और जो नाम का सच्चा धन है इसे इकट्ठा करने का हम ज़रा सा भी फ़िक नहीं करते। सो यह बहुत भारी समस्या है आस्तिक जगत के सामने। दो तीन चीज़े हैं यहाँ पर जिन पर मनुष्य को विश्वास नहीं हुआ करता। एक तो यह कि संसार चला जा रहा है हर आदमी जानता है कि फलाणा (अमुक) चला गया -

*फरीदा किथै तैडे मापिआ जिन्ही तूं जणिओहि।*
*तै पासहु ओइ लदि गए तूं अजे न पतीणोहि॥* *पृष्ठ - 1381*

है कोई माँ या बाप, बड़ी आयु वाले, छोटी आयु वाले, दादे दादियाँ पड़दादे, पड़दादियाँ। कहाँ चले गये? ***'तै पासहु ओइ लदि गए तूं अजै न पतीणोहि॥'*** तेरे पास से ही चले गये। तेरा अभी भी मन नहीं पसीजा (पिघला) कि संसार में रहना नहीं है, यहाँ से चले जाना है। रहना है नहीं पर सौ वर्षों की पिड़ (सासांरिक पदार्थो का संगठन जैसे अनाज आदि) बान्धने को तैयार हो जाता है -

*गहरी करि कै नीव खुदाई ऊपरि मंडप छाए।* *पृष्ठ - 692*

बहुत गहरी गहरी नींव डालता है कोठियां बनाता है, इन्हें और भी बढ़िया बनाता है - पापों की कमाई करके, धोखे के साथ पैसा कमा कमा कर। प्यारे! यहीं छोड़ जाना है सब कुछ। जिन बाल बच्चों के लिये तू कमाता है, ये तो बुढ़ापे में तुझे ऐसे ही जवाब दे देते हैं; गलत काम कर रहा है, उलटे काम कर रहा है। संसार से जाना है; वह धन इकट्ठा कर ले, जो तेरे साथ चला जाये -

*जह मात पिता सुत मीत न भाई। मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई।*
*पृष्ठ - 264*

वहाँ नाम ने सहायता करनी है और किसी चीज़ ने सहायता नहीं करनी। ऐसा फ़रमान है -

*धारना - उथे नाम ने सहाइता करनी,*
*औखी वेला, औखी वेला - 2, 3*

*जह मात पिता सुत मीत न भाई। मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई।*
*जह महा भइआन दूत जम दलै। तह केवल नामु संगि तेरै चलै।*
*पृष्ठ - 264*

जहाँ यमदूतों के दल के दल रह रहे हैं, जीव आत्मा को दुखी कर रहे हैं। कोई वस्तु संसार की - न कोठी, न पदवी, न पैसा कोई साथ नहीं जाता ***'तह केवल नामु संगि तेरै चलै।'*** वहाँ केवल नाम ने साथ जाना है -

*जह मुसकल होवै अति भारी। हरि को नामु खिन माहि उधारी।*
*पृष्ठ - 264*

पलक झपकने के समय के भी पन्द्रहवें हिस्से से भी कम समय के अन्दर उद्धार कर देता है ऐसा नाम है। पहली बात तो यह है कि संसार से जाना भूल गया है। पता नहीं चलता क्योंकि illusion (छल) में फंस गया, ignorance (अज्ञानता) में फंस गया अनजान बन गया पढ़ा लिखा होकर, बहुत पुस्तकें पढ़कर, डिग्रियाँ लेकर। महाराज कहते हैं फिर भी अनजान बना हुआ है -

*धारना - नहिओं मरन पछाणदा, झूठे लालच लग के बंदा - 2, 2*
*झूठे लालच लग के बंदा, झूठे लालच लग के बंदा - 2*
*नहीओं मरन पछाणदा,................।*

*चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी।*
*छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी॥*
*हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना।*
*झूठे लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना॥*
*अजहू कछु बिगरिओ नही जो प्रभ गुन गावै।*
*कहु नानक तिह भजन ते निरभै पदु पावै॥* *पृष्ठ - 726*

कारण! क्यों भूलता है आदमी? कहते हैं सच्चे लालच में नहीं आता, झूठे लालच में आ जाता है। सच्चा लालच वह है जो इस संसार से चले जाने के बाद वहाँ भी हमारे साथ जला जाये। वह लालच है नाम का, सेवा का, सिमरण का, सत्संग करने का, बाकी जितनी भी दुनियाँ की चीज़ें हैं वह सब झूठा लालच है। कहते हैं ***'झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना।'*** इसे मरने का नहीं पता हालांकि आयु बीतती जा रही है ***'चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी॥ छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी।'*** टूटे हुए मटके का जैसे पानी प्रत्येक क्षण एक एक बूंद रिसता रहता है। इसी प्रकार एक मिनट के अन्दर बैठे हुए आदमी के 12 श्वांस कम हो जाते हैं, चलते हुए आदमी के 18 श्वांस कम हो जाते हैं, सोते हुए के 24 श्वांस कम हो जाते हैं। निकलते चले जाते हैं। जो समय बीत गया फिर वापिस हाथ नहीं आता। इसी तरह क्षण क्षण बीतता जा

रहा है। बचपन को जवानी खा गई, जवानी को बुढ़ापा खा गया। बुढ़ापे का प्रत्येक कदम मौत की तरफ बढ़ता चला जा रहा है। सामने खड़ा है मौत का समय, मुँह फैलाए खड़ा है लेकिन महाराज कहते हैं यह समझता ही नहीं -

***कालु बिआलु जिउ परिओ डोलै मुखु पसारे मीत॥*** *पृष्ठ - 631*

मुँह खोले खड़ा है, ऐ मेरे friend (मित्र)! मुँह खोले खड़ा है काल -

***आजु कालि फुनि तोहि ग्रसिहै समझि राखउ चीति॥*** *पृष्ठ - 631*

वह तो मुँह खोले खड़ा है, तू समझने की कोशिश कर, बेसमझ हो गया है। ***'छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी। हरि गुन काहि न गावही'*** क्यों नहीं गाता तू, परमेश्वर का नाम क्यों नहीं लेता ***'मूरख अगिआना।'*** दो बातें कही हैं महाराज ने कि इतना fool (मूर्ख) है कि बात तुझे समझाते हैं तेरे साथ जाने वाली, बाकी बातें तो तू फटाफट समझ जाता है पर यह बात तेरी समझ में नहीं आती सारी ज़िन्दगी। साधु, महापुरुष, बाणी ढिंढोरा पीट पीट कर कहती है कि भजन करो, नाम जपो, नाम जपो, नाम जपने वाला सबसे बड़ा बन जाता है, बादशाह होता है -

***सचा अमरु सची पातिसाही सचे सेती राते।*** *पृष्ठ - 749*

उसका सच्चा हुक्म हो जाता है। सच्ची उसे पातशाही मिल जाती है जो सच्चे के साथ रम गया है। इसके बावजूद भी समझता नहीं है। कहते हैं मूर्ख है, मूर्ख नहीं समझा करता और तो सभी समझ जाया करते हैं। मूर्ख को यदि यह कहो कि धूप में क्यों बैठा है? कहता है मैं अपनी मर्ज़ी से बैठा हूँ तैने क्या लेना है? मैं अपनी मर्ज़ी से जहाँ चाहूँ बैठूँ - धूप में बैठूँ चाहे छांया में बैठूँ। इतनी सी बात का भी उसे ज्ञान नहीं होता। उलट बोलता है कि मेरा काम है तू कौन है सलाह देने वाला। तू मुझे कैसे कहता है नाम जप। मैं तो नहीं जपता। कहते हैं इस बात की वज़ह से तो है मूर्ख। अज्ञानी इसलिये है कि इसे पता नहीं कि संसार से जाने के बाद मेरे साथ कैसा व्यवहार होना है -

***कपड़ु रूपु सुहावणा छडि दुनीआ अंदरि जावणा।***<br>
***मंदा चंगा आपणा आपे ही कीता पावणा।***<br>
***हुकम कीए मनि भावदे राहि भीड़ै अगै जावणा।***<br>
***नंगा दोजकि चालिआ ता दिसै खरा डरावणा।***<br>
***करि अउगण पछोतावणा॥*** *पृष्ठ - 471*

इसलिये तुझे अज्ञानी कहते हैं। तूने मरना तो है नहीं, तेरा शरीर मरने के बाद तेरा जीवात्मा सूक्ष्म शरीर के आधार पर जीवित रहेगा। वह तो मरता ही नहीं जिसे जीव कहते हैं लेकिन उसके लिये भी कुछ कर ले; जब दरगाह

में जायेगा वहाँ लेखा-जोखा होगा। कुछ भी तेरे पास न हुआ तो क्या करेगा, फिर तो बहुत मुश्किल हो जायेगी। इस प्रकार फ़रमान करते हैं -

*धारना - हुण वते हरि नाम न बीजिआ,*
*अगे भुक्खा किआ खाएंगा - 2, 2*
*मेरे पिआरे, अगे भुक्खा किआ खाएंगा - 2, 2*
*हुण वते हरि नाम ना बीजिआ, ..............।*

***जिनी ऐसा हरि नामु न चेतिओ से काहे जगि आए राम राजे।***
***इहु माणस जनमु दुलंभु है नाम बिना बिरथा सभु जाए।***
***हुणि वतै हरिनामु न बीजिओ अगै भूखा किआ खाए।***
***मनमुखा नो फिरि जनमु है नानक हरि भाए॥*** *पृष्ठ - 450*

कहते हैं संसार में आने का क्या लाभ था उनका? कोई reason कारण तो बताओ किस लिए आये हैं? झूठ कमाने के लिये, झूठ इकट्ठा करने के लिए झूठ की जिन्दगी बिताने के लिए आये हैं? बने फिरते हैं अपने आप में कि "मैं अमुक हूँ, मैं फलाणा हूँ, मेरी इतनी जायदाद है, मेरा इतना बड़ा परिवार है।" महाराज कहते हैं कि सब बेकार है कुछ नहीं है, सब कुछ छोड़कर चले जाना है। कुछ भी नहीं रहा करता। न फिर दोबारा कोई सम्पर्क होता है न कोई वासता रहता है जिनके लिये तू पाप करता है उनके साथ कोई सम्बन्ध नहीं रहता। सो ऐसा हाल है। महाराज कहते हैं उनके आने का क्या लाभ? ***'इहु माणस जनमु दुलंभ है नाम बिना बिरथा सभु जाए। हुणि वतै हरिनामु न बीजिओ अगै भूखा किआ खाए। मनमुखा नो फिरि जनमु है नानक हरि भाए॥'*** सो इस प्रकार महाराज जी कहते हैं पता नहीं है इसे मन के पीछे चलने वाला जो पुरुष है -

***मन मुखि आवै मनमुखि जावै मनमुखि फिरि फिरि चोटा खावै।***
***जितने नरक से मनमुखि भोगै गुरमुखि लेपु न मासा हे॥***
*पृष्ठ - 1073*

***मनमुखु दुख का खेतु है दुखु बीजे दुखु खाइ।***
***दुख विच जंमै दुखि मरै हउमै करत विहाइ॥*** *पृष्ठ - 947*

Ego में अहंकार वश अपनी जिन्दगी व्यतीत कर देता है। इसलिये हम इसे अज्ञानी कहते हैं ***'हरि गुण काहि न गावही मूरख अगिआना।'*** इतना मूर्ख तथा अज्ञानी है; मूर्खों की बात समझने के लिये महापुरुष साखी बताया करते हैं।

कोई राजा था। उसकी जो रानी थी इसने बहुत बार यत्न किया कि इस राजा को अपने पति को मैं परमेश्वर की तरफ लगाऊँ क्योंकि स्वभाव अच्छा है, नेक है, प्रजा की भलाई के काम भी करता है पर नाम न

जपने के कारण ये कर्म Zero (शून्य) होते हैं? चाहे 50 ज़ीरो लगा दो; जब तक एक आगे नहीं लगता कोई संख्या नहीं बनती और दूसरी बात इन्हें यमदूत लूट लिया करते हैं –

*करम धरम पाखंड जो दीसहि तिन जमु जागाती लूटै।   पृष्ठ -747*

और मैं इसे परमेश्वर के नाम की ओर लगाऊँ। हर समय साखियाँ सुनाया करती। शास्त्रों के विचार सुनाया करती, सत्संग में जाकर अच्छे महापुरुषों के प्रवचन सुनाया करती। बोलना बहुत अच्छा आता था, मंतक (विधियाँ) बहुत थी; राजा convince हो जाता, मान जाता और कह दिया करता कि अच्छा तू मुझे सुबह उठाया कर। पहले मैं सुबह उठने की आदत डाल लूँ फिर मैं किसी महापुरुष के पास जाकर नाम ले लूंगा। नाम की दात प्राप्त करके फिर मैं मेहनत करूँगा। जब अमृत बेला होता, राजा लेट सोया करता था; गहरी नींद आ जाती। हूँ, हाँ करना और मुँह पर कपड़ा डालकर सो जाना। इस तरह एक, दो, चार साल नहीं, छह वर्ष बीत गये लगातार।

एक दिन रानी ने कहा, ''राजन! छह वर्ष बीत गये। मैं आपको सुबह जगाने से नहीं हटती, तुम मुझे कहने से नहीं हटते और सुबह तुम मुँह पर कपड़ा डाल कर सो जाते हो। यह तो मुर्खों वाली बात है। माफ करना मुझे, मेरे मुँह से यह बात निकल गई।'' राजा उठकर बैठ गया। कहता है, ''मैं मूर्ख हूँ।'' कहती है ''जो अपना भला बुरा न सोच सकता हो, उसे यह संसार इसी तरह ही कहता है कि वह मूर्ख होता है।'' दूसरा दिन हुआ Prime Minister (प्रधान मन्त्री) को बुला लिया और कहने लगा, ''मेरे राज्य में कितने मूर्ख होंगे?'' कहता है, ''महाराज! कोई हिसाब किताब नहीं, सारा संसार ही मूर्खों का है।''

पर महाराज तो कहते हैं, मूर्खों का नहीं, हलकाए हुओं का संसार है, पागलों का संसार है। मूर्ख तो अभी निम्न स्तर का दर्जा है, पागल का इससे भी ऊचा दर्जा है जिसे न तो अपना ही पता है और न ही किसी और का पता –

*बिनु नावै जगु कमला फिरै................॥   पृष्ठ - 643*

महाराज कहते हैं पागल हुआ फिरता है। कमला (पागल) हुआ फिरता है क्योंकि नाम इसके अन्दर परम शान्ति देने वाला जो है उसे छोड़कर –

*नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु। देही महि इसका बिस्राम।*
*सुंन समाधि अनहत तह नाद। कहनु न जाई अचरज बिसमाद।*
*पृष्ठ - 293*

कहते हैं इतना आनन्द है जिसे बताया ही नहीं जा सकता, मनुष्य के अन्दर यह रस परिपूर्ण है –

*घर ही महि अंम्रितु भरपूरु है मनमुखा सादु न पाइआ।*
*जिउ कसतूरी मिरगु न जाणे भ्रमदा भरमि भुलाइआ।*
*अंम्रितु तजि बिखु संग्रहै करतै आपि खुआइआ॥ पृष्ठ - 644*

जो बन्दगी नहीं करता, नाम नहीं जपता, He is a mad man पागल है वह। संसार ही पागलखाना है। कोई कोई बिरला है जिसे होश हवाश है बाकी तो सभी सोये पड़े हैं –

*तिही गुणी संसारु भ्रमि सुता सुतिआ रैणि विहाणी। पृष्ठ - 920*

सो वह कहने लगा –

''महाराज! यह तो संसार मूर्खों का ही है, आपका उद्देश्य?''

''नहीं, जिन्हें लोग कहते हैं।''

''महाराज, फिर list (सूची) बना लेते हैं।''

''हाँ, सूची पेश करो मेरे सामने – जल्दी से जल्दी।''

सूची बन गई बड़ी बड़ी और सारा इकट्ठ बुला लिया। उसके बाद राजा भी आ गया। कहता है भाई सियाने आदमी अपनी सभा सोसायटी बनाते हैं, किसी ने कोई नाम रखा हुआ है, किसी ने कोई। राजनीतिक आदमी अपनी सोसायटियां बनाते हैं तथा रजोगुणी आदमी, व्यापारी अपनी अलग अलग सभायें बनाते हैं और यह तो हम ही हैं जिन्हें लोग मूर्ख कहते हैं। हम अकेले अकेले रह कर मरते हैं, हमें भी अपनी कोई सोसायटी बनाकर अपने अधिकारों की रक्षा करने के लिए कोई प्रयास करना चाहिए ताकि हमारी आवाज़ जो है वह भी कहीं न कहीं बुलन्द हो। यह मेरे पास सोने के मुट्ठे वाली खुन्डी है। यह उसे दे दी जायेगी जो सब से ज्यादा मूर्ख होगा।

उस समय अपनी अपनी कहानियाँ लिखवानी शुरू कर दी – सभी ने कि मुझे ऐसा कहते हैं, मुझे ऐसे कहते हैं, बेअन्त मूर्ख हूँ मैं। वहाँ एक परिवार बैठा था। वह कहता है हम अकेले अकेले को ही नहीं, हमारे तो सारे परिवार को 'मूर्खों का परिवार' कहना शुरू कर दिया। राजा कहने लगा, ''क्या बात?'' कहता है ''महाराज! बात क्या होनी थी, एक रिश्तेदार था हमारा नज़दीकी, वह मर गया। मुझे काम था और मैंने अपने बड़े लड़के को भेज दिया कि परचाउनी कर आ। वह गया और वहाँ जाकर कोई बात न की, वापिस आ गया। मैंने कहा –

''बेटा कोई बातचीत भी की तूने?''

''नहीं, पिता जी।''

''पूछा भी नहीं तूने कि वह कैसे मरा था? फिर क्या किया?''

''मैं बैठ गया जाकर, वैसे ही उठकर आ गया।''

''किसी को फतह बुलाई, किसी को नमस्कार की?''

''मैंने तो किसी को भी कुछ न किया।''

''तू तो मूर्ख है।''

फिर छोटे लड़के को कहा, तू जा। वह कहने लगा -

''मैं क्या कहूँ?''

''यह किसी किताब में लिखा होता है कि क्या कहना है? लोगों के वचन सुन लिया करते हैं, वैसे ही बोल दिया करते हैं।''

वह चला गया। उनके दुश्मन थे वे इकट्ठे होकर बातें कर रहे थे कि बहुत अच्छा हुआ, मज़ा आ गया। अब चलेगा पता इन्हें, बहुत ही बढ़िया हो गया, मर गया। हमने तो खूब पेट भर कर रोटी खाई है; कोई कुछ कहता, कोई कुछ कहता, इसने सारे याद कर लिये और घर चला गया। वहाँ बहुत सारे लोग परचाने (शोक व्यक्त) के लिये आये हुये थे। सोचा, कहीं मुझे अक्षर भूल न जायें, पहले ही खड़ा हो जाऊँ। खड़ा होकर कहने लगा कि लो भई! मेरी भी सुन लो। यह तो बहुत अच्छा हुआ कि इसकी मुक्ति हो गई, मर गया। मैंने तो आज खूब पेट भरकर रोटी खाई है कि यह मरा, तो सारा गाँव सुखी हुआ। सारी बातें कह दीं। घर वालों ने पकड़ कर, जम कर पिटाई की और मार खाकर घर आ गया। पिता को कहने लगा -

''उन्होंने तो मुझे मारा।''

''तुझे मारा? क्यों?''

''जैसे आपने कहा था, मैंने वैसे ही किया, उन्होंने मुझे बहुत मारा।''

''क्या कहा था तूने?''

''मुझे आपने कहा था कि जैसे लोग कहते हों, वैसे ही तू कह देना। वहाँ पर खड़े आदमी ऐसे कह रहे थे, मैंने भी वही बात कह दी।''

सारी बात बता दी बाप को। कहता है तू तो बड़े से भी ज्यादा मूर्ख निकला। मुझे ही जाना पड़ा। पास का गाँव था। वहाँ चला गया। अभी (परचाने वाले) मुकाण देने वाले सभी बैठे थे। हाथ जोड़कर कहता है लो भई भाईयो! मैं तो आया हूँ, माफी माँगने। मेरा पहला लड़का आया, वह बोला ही नहीं, दूसरा आया आप सभी को पता है मार खा कर गया है। देखो, हमारे साथ नाराज़ मत होना कोई। पिछली बातों को भूल जाओ अब यदि कोई तुम्हारा मरेगा तो मैं ज़रूर आया करूँगा। कहता है तभी से महाराज! हमें मूर्ख कहने लग पड़े।

अब राजा की interview (इन्टरव्यू) लेने लग गये। कहते हैं ''महाराज! आप भी कुछ बताओ।'' राजा हो गया बीमार। हकीमों ने वैद्यों ने कह दिया कि यह तो किसी तरह भी बच नहीं सकता। इसकी जो समान प्राण की गाँठ थी, वह खुल गई, कुछ मिनटों का मेहमान है, बात कर लो।

कहने लगे, ''महाराज आपके विचार हमने नहीं सुने।'' राजा कहने लगा–

''मैं तो जा रहा हूँ।''

''कहाँ जा रहे हो?''

''यह तो मुझे पता नहीं।''

''फिर आपके साथ कोई फौज भी जा रही है?''

''नहीं।''

''रानियाँ?''

''नहीं।''

''यह जो सुन्दर-सुन्दर बर्तन हैं सोने चांदी के जो अम्बार लगाये हैं; इनमें से कोई चीज़ साथ जायेगी?''

''नहीं।''

''फिर कोई चीज़ तो तुम्हारे साथ जायेगी? कुछ न कुछ तो साथ लेकर जाओगे?''

''नहीं, मैंने तो शरीर भी साथ लेकर नहीं जाना।''

''महाराज! फिर आप ही पकड़ लो यह खुन्डी। आपने सारी जिन्दगी बिता दी है, कितनी लड़ाईयां, झगड़े दंगे फसाद कितना कलह क्लेश किया राज्य बढ़ाने के लिए। जब साथ ही कुछ नहीं जाना फिर यह सब किसके लिये करते थे।''

सो महाराज कहते हैं। यह मूर्ख होते हैं –

*मूरखा सिरि मूरखु है जि मंने नाही नाउ॥* *पृष्ठ - 1015*

जो नाम पर विश्वास नहीं लाता, इस संसार में वह मूर्खों का भी प्रधान हुआ करता है। सो इस तरह महाराज कहते हैं ***'हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना। झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना॥'*** संसार से तो जाना ही है लेकिन झूठे, लालचों के कारण 'मरना' ही भूल गया। अट्टल सत्य जो आदमी के सामने है उसे हर वक्त भूला रहता है। दूसरा इसे भूली रहती है 'नाम की महिमा' कि नाम क्या कर सकता है क्योंकि विश्वास ही नहीं आता, एक प्रतिशत भी नहीं आता। एक प्रतिशत के फिर यदि सौ भाग कर दिये जायें, इतना भी नहीं आता। .001 भी विश्वास नहीं आता। यदि कह दें कि .000001, इतना भी विश्वास किसी बिरले को ही आता है नाम का, हालांकि महाराज फ़रमान करते हैं कि –

*सांई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो।* *पृष्ठ - 81*

लेकिन समझता है संसार? गप्पें मारने में समय बिता देता है। चिन्ताओं में, कल्पना (भटकनों) में पता नहीं कि इसके दिमाग में क्या चक्कर चल रहा है। इसी में ही समय बिता देता है। सो इसका विश्वास ही नहीं है नाम पर, यदि विश्वास हो तो एक सैकिण्ड भी खराब न करे। तीसरा विश्वास होता है 'वाहिगुरू' पर कि वाहिगुरू जो है –

*सो अंतरि सो बाहरि अनंत। घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत।*
*धरनि माहि आकास पइआल।* *पृष्ठ - 293*

आकाश में, आसमान में, धरती में सभी जगह परमेश्वर है –

*पउण पाणी बैसंतर माहि। चारि कुंट दहदिसे समाहि।*
*तिस ते भिंन नही को ठाउ।* *पृष्ठ - 294*

कोई ऐसी जगह नहीं जहाँ वाहिगुरू न हो लेकिन इसे सारी जिन्दगी विश्वास नहीं आता। वाहिगुरू को ऐसे समझता है कि मेरी पहुँच से बाहर है, पता नहीं साँतवे दसवें या सौंवे आसमान में रहता है। यह भी नहीं मानता कि वह रहता भी है। कभी कभी याद आता है सत्संग में आकर अन्यथा आदमी को 'वाहिगुरू' हर समय भूला ही रहता है। महाराज कहते हैं वाहिगुरू तेरे साथ है –

*जिमी जमान के बिखै समसत एक जोत है।*
*न घाट है न बाढ़ है न घाट बाढ होत है॥* *अकाल उस्तति*

यह जितना भी दिखाई देता है – धरती, चन्दा, सूरज, तारे, वृक्ष, आदमी; ये सभी नाम के आधार पर ही हैं। यदि नाम न हो, वाहिगुरू न हो तो

आधार न होने के कारण इनका कोई अस्तित्व नहीं। उसी के आधार पर उसी में से उत्पन्न हुए हैं। उसी के अन्दर लीन हो जाना है लेकिन यही बात ही आदमी की समझ में नहीं आती। इस प्रकार आदमी भूला रहता है ***'हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना। झूठे लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना। अजहु कछु बिगरिउ नही जो प्रभ गुन गावै।'*** अभी भी तेरा कुछ नहीं बिगड़ा, प्रभु के गुण गा ले ***'कहु नानक तिह भजन ते निरभै पद पावै।'*** सो इसलिये फ़रमान करते हैं कि ***'कबीर लूटना है त लूटि लै राम नाम है लूटि। फिरि पाछै पछुताहुगे प्रान जाहिंगे छूटि॥'***

पर इसके अन्दर ऐसा महात्मा का अनुभव है कि यह स्वाद रहित भोजन के समान होती है पहले पहल क्योंकि मन के जो वेग हैं, ये बॄहमुख हो गये होते हैं, यह अर्न्तमुख नहीं होते, अपने घर में नहीं आता। जब तक यह अन्दर नहीं आता इसे रस नहीं आता। जब तक इसे सूझ बूझ (ज्ञान) नहीं होती नाम के साथ इसका connection (सम्बन्ध) नहीं जुड़ता तब तक यह भटकता फिरता है। सो बड़े बड़े यत्न नाम जपने वाले किया करते हैं लेकिन कोई बिरला ही होता है जो किनारे पर पहुँचता है। कारण यह है कि उसे पूरी विधि का पता नहीं होता। जो विधियाँ होती हैं उन्हें यह जानता नहीं। पिछली दो फिल्मों में इस सारे का वर्णन किया था कि माता जीतो जी एक दिन अमृत बेला में गुरू महाराज दसवें पातशाह जी के पास पहुँची और आपने अति विनम्रता सहित प्रार्थना की कि पातशाह! आप कृपा करके यह दृढ़ करवाओ कि नाम कैसे जपा जाता है। किस तरह से बड़ी बड़ी उच्च अवस्थायें प्राप्त होती हैं क्योंकि हम सत्संग में सुनते हैं कि जब मन की एकाग्रता हो जाती है उस समय आन्तरिक शक्तियाँ प्रकट हो जाया करती हैं –

***नवनिधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि जो हरि हिरदै सदा वसाइ।***
***पृष्ठ – 649***

इससे भी आगे अगम की बात का पता चल जाता है कपाट खुल जाते हैं भविष्य में होने वाली बातें, पीछे बीत चुकी बातें पिछला जन्म, आने वाला जन्म सब का ज्ञान हो जाता है। कृपा करके आप फ़रमान करो कि नाम किस प्रकार से जपा जाता है।

सो महाराज जी ने उस समय बताया कि नाम की कुछ रहतें (नियमावली) होती हैं। जब तक आदमी उन नियमों का पालन नहीं करता तब तक नाम फलीभूत नहीं हुआ करता। उच्च अवस्था प्राप्त नहीं होती, वहीं खड़ा रहता है। जैसे कोल्हू का बैल घूमता रहता है, ऐसे घूमता

रहता है; आंखों पर खोपे लगा दो, वहीं का वहीं रहता है। इसी तरह रहतों के बिना, सावधानियों का प्रयोग किये बिना नाम में जीव उन्नति नहीं कर सकता। सो उसके बारे में पहले विचार हुई थी कि पहले तो वाहिगुरू पर अटल विश्वास होना चाहिए दूसरी बात यह थी कि गुरू पर विश्वास होना चाहिए–

*जा कै मनि गुर की परतीति। तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति।*

*पृष्ठ - 283*

तीसरी बात यह थी कि 'नाम की महिमा' पर विश्वास होना चाहिए। चौथी विचार की थी कि यदि गुरू मन्त्र मिल गया, उस पर विश्वास होना चाहिये।

इसके बाद महाराज जी कहने लगे कि जो कुछ बाणी कहती है उस पर विश्वास होना चाहिए कि बाणी जो कुछ कह रही है वह प्रभु का फ़रमान है। इसमें अगर मगर करके अर्थ न निकाले, जो ठीक है उसे उसी तरह मान ले उसको, क्योंकि यह इलहाम (आकाश बाणी) है सारा; कोई कवि की कविता नहीं है। इलहाम है –

*जैसी मै आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी गिआनु वे लालो॥*

*पृष्ठ - 722*

*हउ आपहु बोलि न जाणदा मै कहिआ सभु हुकमाउ जीउ।*

*पृष्ठ - 763*

*धुर की बाणी आई।* *पृष्ठ - 628*

यह तो दरगाह से आकाश वाणी आ रही है। इनमें किसी प्रकार का किन्तु, कोई अगर मगर, ऐसी बातें है ही नहीं यह तो as it is (जैसी है, वैसी ही है) माननी पड़ती है। सो बाणी पर विश्वास न होने के कारण........फिर आगे चलकर ऐसा होता है कि बाणी सुन तो लेते हैं लेकिन उसके अनुसार अपना जीवन नहीं ढालते। सो ये नियम हैं। जब तक मनुष्य रहतों में परिपक्व नहीं होता तब तक नाम नहीं चल सकता। आपने फ़रमान किया कि मनुष्य के अन्दर कुछ negative forces (नाकारात्मक शक्तियां) रहती हैं, गिराने वाली ताकतें हैं इसके अन्दर, आसुरी शक्तियां हैं, वे अपना ज़ोर लगाती हैं, अपने बल द्वारा इसे नाम की ओर नहीं जाने देती। उनमें से बहुत सारी हैं, जैसे निन्दा है। निन्दा सहज स्वभाव ही आदमी करता है लेकिन इसके बहुत बुरे परिणाम निकलते हैं –

*निन्दा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करंनि।*
*मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि॥* *पृष्ठ - 755*

इतना बुरा परिणाम निकलता है कि नरकों में वास हो जाता है –

*धारना - निन्दा भली किसे की नाही, मनमुख लोकी करदे ने-2, 2*
*मनमुख लोकी करदे ने, मनमुख लोकी करदे ने - 2, 2*
*निन्दा भली किसे की नाही ......................।*

दूसरों के अवगुणों को चित्रित करना फिर उन्हें नशर करना फिर उसके अन्दर प्रसन्नता ढूँढना यह निन्दा हुआ करती है, ईर्ष्या में से जन्म लेती है। सो ईर्ष्या हो, निन्दा हो, दोनों ही बुरी बातें हैं -

*जिसु अंदरि ताति पराई होवै तिस दा कदे न होवी भला।*
*पृष्ठ - 308*

महाराज कहते हैं कि जिसके अन्दर ईर्ष्या हो उसका कभी भी भला नहीं हुआ करता। ईर्ष्या करने वाला बहुत नीच सीमा तक चला जाता है। दूसरे को मरवाने तक पहुँच जाता है, नुक्सान करने लग जाता है, बच्चों को हानि पहुँचाता है घर का नुक्सान करता है। ये जो जन्त्रों, मन्त्रों वाले हैं ये मन्त्र वगैरा करके तंग करते हैं, बहुत परेशानियाँ खड़ी कर देते हैं। ईर्ष्या पहले जन्म लेती है फिर निन्दा पैदा होती है। इस प्रकार बड़े भयानक परिणाम इसके निकलते हैं। परमेश्वर से अलग हो जाता है - आदमी।

भगत त्रिलोचन जी जिनका गुरू ग्रन्थ साहिब में शबद है -

*अंति कालि जो लछमी सिमरै ऐसी चिन्ता महि जे मरै।*
*सरप जोनि वलि वलि अउतरै॥* *पृष्ठ - 526*

आप जी भक्ति करते हैं। बहुत भक्ति की और कई बार महापुरुषों के पास जाकर वचन किया करते - नामदेव जी आदि के पास कि मुझे अभी तक परमेश्वर के दर्शन नहीं हुए या फिर मेरी भक्ति में कोई कमी है। आप दर्शन करते हो आप कभी न कभी मेरी सिफारिश कर दो। इस प्रकार करते करते काफी लम्बी आयु हो गई। साधु महात्मा आते हैं काफी उम्र होने के कारण अब सेवा भी नहीं हो पाती। घर वाली भी इनकी लायक बन गई। वह भी बन्दगी करती है सेवा करती है पर वह थोड़ा सा दोष लगाती रहती है और कई बार जब भगत जी घर आते हैं तो कहती है देखो, हम नाम जपते हैं; आप यह कहते हो कि नाम जपने वालों को सब कुछ मिल जाता है, अनहोनी होनी बन जाती है, मस्तक पर लिखे लेख मिट जाते हैं पर हमें तो परमेश्वर ने एक पुत्र की दात भी नहीं बख्शी। अब बूढ़े हो गये हैं कौन सम्भालेगा इस शरीर को और फिर साधु महात्मा आते हैं, यदि कोई पुत्र होता तो सम्भाल लिया करता। अब वस्त्र कौन धोए उनके, कौन उनके लिए चारपाईयां बिछाये, भोजन कौन बनाकर लाये और उन्हें खिलाए? भक्ति करते हैं, परमेश्वर सुनता ही नहीं, हमारी बारी में तो चुप करके बैठा है। बहुत उलाहनें मारती है। वह धैर्यवान थे, बहुत

कहते हैं तू उलहाने मत मार; यह तो ऐसा ही है अपने पिछले जन्मों का कोई लेख है। महाराज भी ऐसा फ़रमान करते हैं –

*धारना - पिआरे, दोश न किसे नूं देवीं, दोश तेरे करमां दा - 2, 2*
*पिआरे जी, दोश तेरे करमां दा,*
*पिआरिआ दोश तेरे करमां दा - 2*
*पिआरे दोश न किसे नूं देवीं, ................।*

***ददै दोस न देऊ किसै दोसु करंमा आपणिआ।***
***जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना॥ पृष्ठ -433***

यह समझाना कि सारा संसार जो है यह हुक्म के अधीन चल रहा है और परमेश्वर ने धुर दरगाह से हर एक के मस्तक पर लेख लिखे हुए हैं। मिलना, बिछुड़ना, हानि हो जाना, लाभ हो जाना, इज्ज़त होना, अपमान होना, सुखी होना, दुखी होना; यह सब भाग्य में लिखे लेखों के अनुसार हुआ करता है। ये धुर दरगाह के लेख होते हैं। जब लेख ही हैं तो हमारा यह मांगना ही बेकार है और दूसरी बात यह है कि कौन कहता है पुत्र सुख रूप होते हैं? वे दुःख रूप तो बहुत अधिक होते हैं, सुख रूप हो या न हो कोई पक्का नहीं है। पुत्र पैदा होता है माँ को कितना दुख देता है। पालती है, पोसती है; बीमार हो जाये तो माँ की जान निकलने वाली हो जाती है। प्रभु की भक्ति करती है उसके ध्यान में कितना समय waste बर्बाद करती है। उसके बाद बड़ा हो जाता है पढ़ाई लिखाई की चिन्ता सताती है। यदि कहीं बीमार हो जाये खाना पीना बन्द हो जाता है; यदि पढ़ाई न करे, नालायक बन जाये फिर रोते फिरते हैं। कोई गलत काम कर दे तो माँ बाप भी साथ ही पकड़े जाते हैं उन पर भी मार पड़ती है, केस बन जाते हैं। इस प्रकार गलत से गलत हो जाता है। विवाह कर दिया वे किनारा कर लेते हैं। माँ बाप इन्तज़ार करते ही रह जाते हैं। सुख कहाँ से प्राप्त हुआ? सुख तो प्राप्त ही नहीं होता। सुख देने वाला तो एक श्रवण कुमार ही आया था जिसका नाम आज भी लेते हैं। सुख नहीं देते, अपने स्वार्थ के लिए करते हैं सभी संसार में।

फिर यह जो तू चिन्ता करती है कि हमें बुढ़ापे में कौन सम्भालेगा यह तो वाहिगुरू सम्भालेगा। ऐसे मत कर, लेकिन उसके मन में से यह बात जाती नहीं थी। जब भी कहती यही बात कहती कि देखो, प्रभु की भक्ति करते हैं, सेवा करते हैं, सन्त महापुरुष आते हैं ऐसा भी नहीं करता कि एक पुत्र ही दे देता परमात्मा, फिर नौकर भी कोई नहीं ठहरता; जो भी आता है, थोड़ा समय ठहर कर चला जाता है; क्योंकि स्वभाव थोड़ा तीखा था। नौकर कोई नहीं रूकता था। कड़वा स्वभाव हो नौकर को दोष

देते हैं लेकिन नौकर का कोई दोष नहीं हुआ करता स्वभाव का दोष हुआ करता है; कोई प्रेमी पास नहीं रहा करता चले जाया करते हैं क्योंकि वह पराया समझते हैं और वह उन्हें पराया समझते हैं। सो इस प्रकार जब बार बार वह यही बात दोहरायी जाने लग गई तो प्रभु ने विचारा कि भगत का मन दुखी है। उस समय आप कहने लगे कि अच्छा! मैं पता करूँगा यदि कोई अच्छा मिल गया तो मैं जरूर लाऊँगा। उसके बाद थोड़ा सा दरवाज़े के बाहर गये तो उस समय परमेश्वर ने रूप धारण कर लिया; निर्गुण से सगुण हो गये। कपड़े मैले कुचैले पहने हुए हैं, पैरों में जूती भी नहीं है और आपने जाकर द्वार खटखटाया। कहने लगे, ''माता! मैंने नौकरी करनी है, कोई जगह है आपके पास?'' कहती है ''हाँ भाई! हम तो नौकर ढूँढते फिरते हैं और अभी गये हैं भगत जी पता करने बाहर। वह जा रहे हैं, थोड़ी ही दूर गये हैं। अच्छा बता क्या काम करेगा?'' कहते हैं, ''माता मैं सारे काम जानता हूँ, जितने भी दुनियाँ के काम हैं कोई काम ऐसा नहीं संसार में जिसे मैं न जानता हूँ।'' बात को समझ न सकी, रमज़ (गुप्त बात) न पकड़ सकी माता। कहने लगी, ''अच्छा तू रोटियाँ बना लेता हैं?'' कहते हैं ''हाँ रोटियाँ बना लेता हूँ। सन्तों की सेवा करने का मुझे बहुत शौक है और मैं देखता रहता हूँ कि मैं भी अपने प्यारों की सेवा करूं सन्तों की सेवा करूं। यहाँ मुझे पता चला है कि आपके पास साधु सन्त बहुत आते हैं और मुझे बहुत खुशी है।'' कहने लगी -

''अच्छा फिर यह बता तेरा नाम क्या है?''

''माता, नाम से क्या लेना तूने, जो मन करे नाम ले लो, सारे ही नाम मुझे पसन्द हैं।''

''फिर भी नाम तो बता अपना, हम तुझे किस नाम से बुलाया करें।''

''कुछ भी कह लो, मेरा ही नाम है सारा।''

''नाम भी तू बता न अपना, हमें कैसे पता चलेगा?''

''अच्छा, मुझे अन्तर्यामी कह दिया करो।''

''नाम तो तेरा बहुत अच्छा है - अन्तर्यामी; परमात्मा का नाम भी अन्तर्यामी है।''

''माता सारे ही नाम परमात्मा के हैं।''

''अच्छा बता, तन्खाह क्या लेगा?''

''तन्खाह तो मैंने आज तक कभी ली नहीं। सेवा करने का मुझे शौक है; रहता मैं वहाँ हूँ जहाँ साधु आते हैं और भजन बन्दगी करने वाले आते हों।''

‘‘कोई शर्त?’’

‘‘कोई शर्त नहीं। जो कपड़ा दे दिया करोगे वह पहन लिया करूँगा; जो कुछ खाने को दे दिया करोगे, खा लिया करूंगा। मैंने तो आज तक कभी शिकायत की ही नहीं।’’

‘‘कोई और शर्त?’’

‘‘एक शर्त है, जिस दिन मेरे साथ कोई प्यार नहीं करता, उसी दिन मैं छोड़कर चला जाता हूँ। यदि कोई चुगली करे, तर्क कर दे मुझ पर, फिर मैं नहीं रहा करता। मैं छोड़कर चला जाता हूँ।’’ कहती है ‘‘ले भाई! मैं तो तरसती रहती हूँ। भगत जी हर समय कहा करते हैं, निन्दा नहीं करनी चाहिए। मैंने तो पक्की गाँठ बान्ध ली कि निन्दा किसी की भी नहीं करनी। यह तो बहुत अच्छी बात बन गई।’’

आखिर सन्त जी आ गये। त्रिलोचन जी आ गये। देखा, दर्शन किए और थोड़ा सा आकर्षण हुआ। कहने लगे, ‘‘हैं नाम भी अर्न्तयामी है और देखकर आकर्षण होता है, बड़ा कोई भाग्यशाली बन्दगी वाला है। सेवा करनी शुरू कर दी। साधु महात्मा जहाँ जाते हैं, उसका यश गाते हैं कि देखो कैसे हमें गर्म पानी मिलता है कैसे चरण दबाते हैं किस तरह सेवा करते हैं, किस तरह वस्त्र आदि धो देते हैं मिनट भी नहीं लगाते। उन्हें क्या मुश्किल था; फुरना ही करना था सब कुछ हो जाता था। सो करते करते बहुत समय बीत गया और माता जी के मन में आया कि नौकर तो बहुत अच्छा है। जितना मैं रख देती हूँ, बचा कुचा उतना ही खा लेता है और धन्यवाद करता है। मैंने कभी यह नहीं देखा कि इसकी भूख कितनी है? मन में धारण कर लिया कि मैं इसे खूब पेट भरकर खिलाकर देखूं, कितना खा सकता है?’’ कहने लगी ‘‘अर्न्तयामी! तेरी भूख कितनी होगी?’’ कहता है ‘‘यह बात मत पूछ मुझे। मेरे पेट में तो सब कुछ पड़ जाये ये, खण्ड ब्रह्मण्ड जितने दिखाई देते हैं तब भी मेरी भूख नहीं मिटती।’’ कहती है ‘‘ऐसी बातें तू क्यों किया करता है? तू मुझे यह बता कितनी रोटियां खाया करता है?’’

इसे समझ न आये, वह रमज़ (गुप्त ज्ञान) मारे जायें। आखिर रोटियां पकाने लग गई। पहले आटा गूंधा सेर भर, फिर दो सेर गूंध लिया फिर पाँच सेर गूंध लिया; जैसे ही शुरू किया रोटियां बनाना, सुबह से दोपहर हो गई। वह बनाकर रखती जाती यह खाये जाते। मन में गिनती करने लग पड़ी कि यह तो 20 सेर आटा खा गया। धुआं हो गया अन्दर, आँखों

में से पानी बहने लगा, थक गई, बाहर आ गई। पड़ौसन कहने लगी ''बीबी जी! आज आप बाहर ही नहीं निकले। तुम्हारी आँखों से पानी बह रहा है आप आज कुछ परेशान लगते हो, वैसे तो तुम्हारा चेहरा हर समय खुश रहता है।'' कहती है ''नहीं कोई बात नहीं?'' कहती है ''है तो सही कोई न कोई बात। बिना किसी कारण के चेहरा नहीं बदला करता। कोई बात दिल में हो तो आदमी के चेहरे पर असर हो जाता है। बात बता क्या है?'' कहती है ''क्या बात बताऊँ, यह नौकर क्या आया। बचपन से ही माँ के दूध से वंचित हुआ लगता है, भूखा है। मैंने सुबह से कहा कि इसे खूब पेट भरकर खिलाऊँ, मैं क्या बताऊं, यह तो 20 सेर आटा खा गया अभी भी इसका पेट भरने में नहीं आ रहा। मैंने तो मुसीबत मोल ले ली। पता नहीं क्या भूत प्रेत है। मुझे तो पता ही नहीं चलता कि यह आदमी है या कुछ और है?''

इतनी बात कही, शर्त टूट गई। भगवान अर्न्तध्यान हो गये। वहीं उसी समय निर्गुण स्वरूप धारण कर लिया। उसके बाद भगत जी भी आ गये। देखते हैं कि कोई भोजन नहीं है, कोई दाल सब्जी नहीं, कुछ भी नहीं है। घर वाली आवाज़ें लगाती है, ''अर्न्तयामी अर्न्तयामी।'' कोई जवाब नहीं आता। माथा ठनका कि मैंने तो बहुत बुरी बात कर दी, यह तो वास्तव में ही अर्न्तयामी था। भगत जी कहने लगे -

''क्या हुआ?''

''वह नौकर भाग गया।''

''भागा नहीं है, तूने भगाया होगा।''

''आप तो मुझ में ही दोष निकालते हो; एक तो भगवान ने कोई पुत्र नहीं दिया; यह नौकर दिया था, वह भी भाग गया।''

कहते हैं ''बीबी! भगवान को क्यों दोष देती है, क्यों बुरा भला कहे जा रही है। न तू पहचान सकी, न मैं पहचान सका। वह कहता था कि मुझे तो कोई भर पेट खिला ही नहीं सकता। सारा ब्रह्मण्ड उसके पेट में पड़ जाये। प्रलय काल तक जितना दृष्टिमान है सारा उसमें समा जाता है। वह ठीक कहता था कि मुझे कोई भी भर पेट नहीं खिला सकता। फिर वह यह भी कहा करता था कि जहाँ साधु सन्त हों, वहाँ मेरा मन लगता है।''

***जह जह काज किरति सेवक की तहा तहा उठि धावै॥***
***सेवक कउ निकटी होइ दिखावै।***
***जो जो कहै ठाकुर पहि सेवकु ततकाल होइ आवै॥ पृष्ठ - 403***

वह तो अपने प्यारों का दास बनकर सेवा करता है। पहचान न सकी; न तो तू पहचान सकी, न मैं ही पहचान सका। तूने तो बहुत भारी गलती की, निन्दा नहीं करनी चाहिए थी -

*धारना - तू तां भुल्ल गई ऐं नार गवारे,*
*निंदिआ नराइण दी करी - 2, 2*
*वाह वाह वाह वाह, निंदिआ नराइण दी करी - 2, 2*
*तूं तां भुल्ल गई ऐं नार गवारे, ................।*

***नाराइण निंदसि काइ भूली गवारी। दुक्रितु सुक्रितु थारो करम री॥***
***पृष्ठ - 695***

कहने लगे तूने नारायण की निन्दा कर दी। उसने तो पहले ही कह दिया था कि जब मुझे कोई प्यार न करे, तर्क करे, निन्दा करे; उसी समय मैं चला जाऊँगा। पहचान न सके क्योंकि अपने कर्मों में ही नहीं था पर फिर भी देख कितनी देर........किसी को एक बार दर्शन दिये हैं, किसी को दो बार; हमारे तो कितने वर्ष सेवक बनकर, नौकर बनकर सेवा करते रहे प्रभु! यह कर्मों की खेल चल रही है। सो निन्दा परमेश्वर को भी नाराज़ कर देती है ***'निन्दा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करंनि। मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि॥'*** निन्दा करने वाला यदि यह कहे कि मेरे अन्दर नाम की धुन चल पड़ेगी, बिल्कुल गलत है। नाम तो जब तक हम पूरी तरह सफल नहीं होते, पूरे गुण हृदय में धारण नहीं करते तब तक नाम की धारा नहीं बहा करती, नाम टूट जाता है। नाम जपने वालों को पता है। यदि सेवा करके भी दिखावा कर दें, उसी समय लिव टूट जाती है। बर्तन साफ कर दो, चित्त में यह आ जाये कि मैंने इतना बड़ा होकर बर्तन साफ करने की सेवा की, उसी समय लिव अन्दर से टूट जायेगी। नाम नहीं चलता, नाम के लिये तो बहुत सावधानी प्रयोग करनी पड़ती है। उसके बारे में महाराज फ़रमान करते हैं कि स्तुति भी उतनी ही विघ्नकारी है, जितनी निन्दा। मनुष्य चाहता है मेरी कोई praise (प्रशंसा) करे, मुझे अच्छा कहे, मंच पर बोलने वाला मेरा यश गाये कि वह तो बहुत महान है क्योंकि routine (दिन चर्या) बन चुकी है, चाहे कुछ भी न जानता हो, कोई श्रद्धा न हो, कोई बात न आती हो; ऐसे ही कहे जाना कि यह तो महात्मा स्वंय परमेश्वर हैं, आप ब्रह्मज्ञानी हैं। यदि ब्रह्मज्ञानी हैं तो इनसे कोई लाभ उठा फिर यदि तू उन्हें परमात्मा का रूप समझता हैं। मंच पर खड़े होकर तो बोल दिया कि वह तो परमात्मा के समान हैं; फिर भाई तू इनसे कोई लाभ उठा ले, इन्हें प्यार कर। यह केवल मौखिक बातें हुआ करती हैं। ये अक्षर जो बोलते हैं इसे स्तुति कहते हैं। यह मनुष्य के अन्दर भूख है

praise (प्रशंसा) की। निन्दा से घबराता हैं, praise को अच्छा समझता है कि मेरी कोई प्रशंसा करे मुझे अच्छा कहें, मेरी स्तुति हो जाये। निन्दा वाली बात यह बार बार नहीं पूछता, प्रशंसा वाली बात बार बार पूछता रहता है कि फिर क्या कहा उसने। वे फिर कहेंगे कि वह कहता था, फलाणा (अमुक) कीर्तन बहुत अच्छा करता है। यह praise (बड़प्पन) हुआ करता है। महाराज कहते हैं, दोनों छोड़ दे –

*धारना – उसतत निन्दा दोऊ तिआगै, खोजै पद निरबाना जी- 2, 2*
*खोजै पद निरबाना जी, खोजै पद निरबाना जी – 2, 2*
*उसतत निन्दा दोऊ तिआगै, ....................।*

स्तुति सुननी और खुश होना, निन्दा सुनना और दुखी होना; यह सम वृत्ति नहीं कहलाया करती। ये वृत्ति को हिला देने वाली चीज़ें हैं और महात्मा तो परवाह ही नहीं किया करते – न निंदा की न स्तुति की –

*उसतति निंदा दोऊ तिआगै खोजै पद निरबाना। पृष्ठ – 219*

महाराज कहते हैं यह कोई साधारण आदमी नहीं कर सकता –

*जन नानक इहु खेलु कठनु है किनहूं गुरमुखि जाना॥ पृष्ठ – 219*

यह तो हद से भी ज्यादा मुश्किल खेल है। जिसे पूर्णज्ञान हो गया, वाहिगुरू के अलावा जो कुछ और नहीं देखता वह तो इससे पार हो जाता है पर संसार की ताकत नहीं कि स्तुति तथा निन्दा के चक्कर में से पार हो सके। स्तुति सब को अच्छी लगती है, मीठी लगती है लेकिन धोखा कर रहा है स्तुति करने वाला। दिल से नहीं बोलता, ऊपर ऊपर से कहता है ऐसे ही बोलता है पर दूसरा उसे सच समझता है। कहते हैं दोनों ही धोखे में हैं। वह उसे धोखा दे रहा है, वह धोखा खा रहा है। निन्दा जो है वह अन्दर की मैल हुआ करती है। दूसरे को देखकर खीझता है। सन्त तो खीझते ही नहीं, वे तो कहते हैं कि जो निन्दा करता है वह मेरा मित्र है क्योंकि मुझे पार उतार रहा है, आप ले रहा है उन पापों को। इतना बड़ा कौन है, पाप किये हुए हों और वह पैसे के बिना, बिना किसी बात के बिना एहसान किये ही पाप ले ले। सन्त तो खुश होते हैं –

*निंदा करै सु हमरा मीतु। पृष्ठ – 339*

कहते हैं, मित्र तो हमारा असली वही है जो निन्दा करे।

भगत नामदेव जी अपनी मौज में बैठे हैं। आपने ऐसा किया क्योंकि महापुरुष तो ऐसे होते हैं कि साथ ही साथ संसार का जितना भला हो सके, करना चाहिए। अपने निज आनन्द में महापुरुष बैठा करते हैं। इन्हें 'निवृत्ति पक्ष' वाले महापुरुष कहते हैं। वे बात नहीं किसी से किया करते,

अपने रस में लीन रहते हैं, एकान्त स्थानों पर रहते हैं; जहाँ कोई आए न, वहाँ रहते हैं। अपनी महिमा नहीं होने देते, पता नहीं लगने देते। कई ऐसे महात्माओं की साखियां इतिहास में आती हैं कि वेश्याओं के घरों में जाकर रहना शुरू कर दिया कि वहाँ हमें कोई न जान सके –

*बुलिआ, ओथे वसीए, जिथे सारे ही अन्ने।*
*न कोई सानूं जाणे, न कोई मंने।*

क्योंकि मानना भी एक मुसीबत गले में डालना होता है। संसार में नाम वाला तो कोई बिरला ही आता है और ही समय बर्बाद करने वाले सन्तों के चौगिर्दे इकट्ठे हो जाते हैं। कोई कहता है मुझे यह दुःख है जी, कोई कहता है मुझे डर लगता है, कोई कहता है मेरे घर प्रेत आते हैं जी। भाई! तुम नाम तो जपते नहीं, बन्दगी करते नहीं; कर्म बहुत बुरे किये हुए हैं, उनका फल भोगो। सन्तों का समय waste (नष्ट) क्यों करते हो। न तो सन्तों को कोई गर्ज़ होती है पर उनके अन्दर कुदरत ने ऐसा रखा है कि –

*ब्रह्मगिआनी परउपकार उमाहा।* *पृषठ - 273*

परोपकार का झरना बहता है। कोई आ जाये, कहते हैं, कोई बात नहीं, यह दुखी है बेचारा। बात कर लेने दे।

नामदेव जी का 'प्रवृत्ति पक्ष' था – उन्होंने ऐसा किया कि बच्चों को पढ़ा दिया करें – शुद्ध विद्या। ब्रह्म विद्या पढ़ा दी जाए क्योंकि सबसे उत्तम जो विद्या है वह ब्रह्म विद्या हुआ करती है बाकी विद्याएं जो हैं वे धोखा देने वाली हैं, ब्रह्म विद्या पार करवा देने वाली है। सो आपके पास बच्चे छोटी उम्र से पढ़ने के लिये भेज देते थे। एक सेठ ने यह बात विचार कर कि बच्चा छोटी उम्र में यदि सन्तों के पास रह जाए तो विषय विकारों से बच जाया करता है। बहुत सियाने जो माँ बाप हैं वे बच्चों को महात्मा के पीछे लगा दिया करते हैं। महापुरुषों के पास रहते हैं और महापुरुषों का जो जीवन होता है उसका स्वाभाविक ही उन पर प्रभाव पड़ना शुरू हो जाया करता है। संसार से फिर भी अच्छे रहते हैं, शराबी कबाबी नहीं बनते; कुछ अन्दर ज्ञान होता है, सेवा भाव होता है, माँ बाप की इज़्ज़त होती है, संसार में कैसे व्यवहार करना है यह वे जानते हैं।

उसने सोचा कि बच्चे ने तो बड़े होकर bussiness man (व्यापारी) बन जाना है मेरी तरह, इसलिये इसे कुछ रूहानी ज्ञान हो जाये सन्तों के पास जाकर। सो उसने बच्चे को साथ लिया लेकिन अपना जो सेठपन था, बड़प्पन था, वह दिखाने के लिये माता ने गले में सोने की जंज़ीर भी

पहना दी, हाथों में कड़े भी पहना दिये, और भी गहने पहना दिये और नामदेव जी के पास छोड़ आए। सेठ जी ने कहा, भगत जी इस बच्चे को भी सम्भालो और अपना सेवक बना लो, कुछ ज्ञान दो इसे भी। नामदेव जी कहते हैं, कोई बात नहीं सेठ जी, छोड़ जाओ; जहाँ और बच्चे हैं, उन्हें देखकर इसके जीवन पर भी प्रभाव पड़ेगा।

जब शाम को नामदेव जी ने कहा, अच्छा भाई जाओ। उन्होंने देखा, सोचा कि बच्चा छोटा है, इतने सारे गहने पहने हुए हैं, कोई चोर-चकार यदि उठाकर ले गया तो गला घोट देगा। सेठ को तो पता नहीं इस बात का; अब हमारे पास कोई प्रबन्ध नहीं है कि हम कोई आदमी साथ भेज दें। सो उन्होंने यही उचित समझा कि गहने उतार कर रख लें। गहने उतरवा लिए, पोटली में बान्ध कर रख दिये और बच्चा चला गया। जब घर पहुँचा, माँ ने देखा कि न तो हाथों में कंगन है न पैरों के गहने हैं, न गले का हार है। उस समय उसने पूछा, तेरे गहने कहाँ गये? कहता है वह तो सन्तों ने उतार लिए, भगत जी ने उतार लिये। कहती है ''इतना बुरा भगत। अब तो क्या वापिस करेगा?'' बहुत तेज़ स्वभाव था। यदि तो विचारशील होती तो कहती, कोई न कोई बात होगी, सन्त तो कभी ऐसा नहीं करते। एकदम बोली, ''सन्तों ने उतार लिया, अब कहाँ देंगे?'' अपनी वृत्ति के साथ साधु भी मिला लिये क्योंकि अपना ही चश्मा होता है; अपनी ऐनक से दूसरों को हम देखने का यत्न करते हैं। बुरा आदमी जो है, जो ठग है, वह कहता है कि सारे संसार में ठग ही हैं; चोर जो हैं वह कहता है कि सारा संसार ही चोरों का है; Criminal (अपराधी) आदमी कहता है कि सारे संसार में ही Crime (अपराध) करने वाले हैं; जो भला पुरुष है वह कहता है यहाँ बुरा ही कोई नहीं है -

***मन मेरे जिनि अपुना भरमु गवाता।***
***तिस कै भाणै कोइ न भूला जिनि सगलो ब्रहमु पछाता॥***

*पृष्ठ - 610*

वे कहते हैं कि यहाँ बुरा ही कोई नहीं अच्छे ही अच्छे हैं सब; इससे कोई गलती हो गई होगी, कोई बुरा नहीं क्योंकि वृत्ति हुआ करती है अपनी अपनी। सो वृत्ति ऐसी थी, एकदम घबरा गई, घबरा कर घर नहीं टिकी, पड़ोसन के पास चली गई। कहती है -

''अरी बहना! नामदेव नामदेव करते हैं, भगत भगत कहते हैं; यह सब ठगी है, कुछ नहीं है।''

''तुझे क्या हो गया?''

''मुझे क्या हुआ। मैंने तो प्रत्यक्ष देख लिया है। मैंने बच्चा भेजा था सारे गहने पहना कर। यह देख! कुछ भी नहीं छोड़ा इसके पास। छोटी उंगली (तर्जनी) की अंगूठी तक भी नहीं छोड़ी।''

''कोई बात नहीं, सवेरे पूछ लेना।''

''अब कौन से दे देने हैं, जिसने उतार ही लिए उसने क्या लौटाने हैं? उसने कहना है रास्ते में उतार लिए होंगे किसी ने।''

वह भी स्वभाव की तेज़ थी, उसने दूसरी पड़ोसन को बता दी। जैसे ही बात बढ़ने लगी शाम तक सारे शहर में फैल गई। इतने में सेठ भी आ गया। सेठ को कहा -

''यह अच्छा तूने पढ़ने के लिये भेजा नामदेव के पास, गहने उतार लिये सारे।''

''यह हो नहीं सकता। नामदेव जी भगत हैं।''

''तू रख भगत अपने पास। मैं तो आपको आखों देखी बात कहती हूँ।''

''फिर जल्दी किस बात की है। सुबह बात करके देख लेंगे।''

''न, उसने कहाँ देने हैं। तू तो ऐसे ही पगला है।''

सेठ दूसरे दिन चला गया। जाकर नामदेव जी को नमस्कार करके बैठ गया। बच्चा साथ है। नामदेव जी कहने लगे, ''सेठ जी, गहने पहना कर बच्चों को मत भेजा करो। आपको पता है कि गहना जो है पैसा टका है, यह बच्चे की जान का दुश्मन हुआ करता है। उठाकर ले जायेगा कोई या कोई बच्चे का गला घोट देगा। यह लो अपने गहने।'' सेठ बहुत खुश हुआ और साथ ही खेद भी हुआ कि मेरी घर वाली ने तो सारे नगर में ढिंढोरा पिटवा दिया। जब इनके पास बात पहुँचेगी तो बहुत बुरा मनाएंगे। जल्दी जल्दी घर लौट आया, आकर कहने लगा कि तूने बहुत बुरा काम कर दिया। उन्होंने तो बच्चे की जान बचाई है। उस समय सोचने लगी कि कहीं पड़ोसन ने बात आगे न बता दी हो। वह वहाँ चली गई और कहने लगी, बहना! वे तो बहुत अच्छे हैं, उन्होंने तो मेरे लाडले की जान बचाई है, मुझे तो ऐसे ही गुस्सा आ गया, मैं जल्दी कर गई। वह दौड़कर तीसरी के पास चली गई। सारे शहर में ढिंढोरा पिट गया कि नामदेव तो बहुत अच्छे हैं; उन्होंने तो सेठ के बेटे को बचाने के लिये गहने उतारे थे।

अगला दिन आया तो नामदेव जी का कोई सेवक जाकर कहने लगा-

''भगत जी! हैरान हूँ कि यह जग दो मुहाँ है।''

''क्या बात?''

''परसों तो आपकी बड़ी निन्दा हुई; कोई आदमी नहीं है जिसने आपकी निन्दा न की हो। हमें बहुत दुख हुआ। आज तुम्हारी स्तुति ही स्तुति हो रही है।''

''क्या बात?''

''आपने कहीं गहने वगैरा उतार लिये होंगे किसी बच्चे के ताकि कहीं चोर न उतार कर ले जायें। सारे शहर में बात फैल गई कि भगत जी ने सेठ के लड़के के सारे गहने उतार लिये।''

सन्तों के खिलाफ तो बात एक सैकंड में फैल जाती है; पता नहीं लोग मौका ही देखते रहते हैं। थोड़ी सी बात हो जाये फिर इश्तिहारों की ज़रूरत नहीं। दूर दराज़ तक बात पहुँच जाती है। बिना देखे बिना पैरों के बात चलती है। अभी अच्छी बात इतनी जल्दी नहीं फैलती, अच्छी बात रूक जाती है। सो वह कहने लगा कि अब स्तुति हो रही है। जिन्होंने निन्दा की थी, आज वे भी अपने मुँह से कह रहे हैं कि नामदेव जी तो बहुत अच्छे हैं, उन्होंने तो सेठ के बच्चे को बचाने के लिए गहने उतारे थे।

नामदेव जी मौज में बैठे थे। सामने राख पड़ी हुई थी, दोनों मुट्ठियों में भर ली। एक इस तरफ फैंक कर मारी और कहते हैं, यह निन्दकों के सिर में, एक दूसरी तरफ फैंक कर मारी और कहते हैं यह स्तुति करने वालों के सिर में। उनका सेवक कहने लगा कि वह तो स्तुति करते थे। भगत जी कहते हैं, ''कोई नहीं स्तुति करता। यदि स्तुति करनी थी तो निन्दा क्यों करते? यह तो सारा संसार दो मुखी है।''

सो महाराज कहते हैं छोड़ दो यह बात। न praise (प्रशंसा) से खुश हो, न निन्दा से नाराज़। बल्कि निन्दा से खुश होना चाहिए praise (प्रशंसा) से नहीं क्योंकि 'निंदा करै सु हमरा मीतु॥' वह हमारा भला चाहता है, स्तुति करने वाला नहीं चाहता। स्तुति करने वाला बिगाड़ देता है आदमी को; ऐसे ही हउमै आ जाती है। फिर यदि कोई न करे पूरी तरह सम्मान तो नाराज़ हो जाते हैं। सो इस प्रकार महाराज कहते हैं –

***उसतति निंदा दोऊ तिआगै खोजै पदु निरबाना।***
***जन नानक इहु खेलु कठनु है किनहूं गुरमुखि जाना॥ पृष्ठ - 219***

***उसतति निंदिआ नाहि जिहि कंचन लोह समानि॥ पृष्ठ - 1426***

*हरख सोग ते रहै अतीता जोगी ताहि बखानो॥* *पृष्ठ - 685*

कहते हैं वे योगी हुआ करते हैं, परमात्मा के साथ जुड़े हुए। जो इन बातों में फंसा है उसका नाम नहीं चलता। इस प्रकार निन्दा तथा स्तुति दो बन्धन हैं बन्दगी करने वालों के लिये। सो वह जब तक सावधान नहीं होता बात नहीं बनेगी। इसी तरह ईर्ष्या है। ईर्ष्या जब तक मन में है- करो ईर्ष्या - नाम जप कर देख लो, कभी जप हो जाये। वही सामने आ जायेगा जिसके साथ ईर्ष्या करते हो। ध्यान गुरू नानक साहिब का करोगे आ जायेगा वह सामने क्योंकि उसे तुम बुला रहे हो अपने अन्दर। जब बुरे आदमी को हम अपने अन्दर बुलायेंगे तभी ईर्ष्या होगी, तभी निन्दा होगी। पहले उसका वजूद हमारे अन्दर आएगा और फिर उसकी बातें शुरू हो जायेंगी। सो इसे तो दूर से ही सिर झुका दो और साथ कह दो चरण स्पर्श करके और अर्न्तध्यान होकर ***'नानक नाम चढ़दी कला तेरे भाणे सरबत का भला।'*** पातशाह! भला ही कर और जो बुरा करते हैं, उनका भी भला कर। इसी में अपनी भलाई हुआ करती है। सो इस प्रकार दोष हैं थोड़े थोड़े। फिर पाँच चोर हैं - काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ये भी अन्दर खौरु (लूट खसौट) डालते हैं। भागे फिरते हैं, जैसे भैंसे लड़ते हैं इसी तरह लड़ते हैं। मन को बीमार करते हैं, शरीर को भी बीमार करते हैं -

*धारना - काइआं नूं गालदे, काम ते क्रोध दोवें - 2, 2*
*काम ते क्रोध दोवें, काम ते क्रोध दोवें - 2, 2*
*काइआं नूं गालदे, ......................।*

*काम क्रोधु काइआ कउ गालै। जिउ कंचन सोहागा ढालै॥*

*पृष्ठ - 932*

शरीर को यदि गलाना हो, दोनों चीज़ें बहुत हैं। जितना मर्जी खाये जाओ, जितने मर्ज़ी विटामिट खा लो, जो करना है कर लो, ये दोनों चीज़ें जब तक दनदनाती हैं शरीर गलता ही जायेगा 'जिउ कंचन सोहागा ढालै।' क्रोध करने वाला आदमी परमेश्वर से बहुत दूर चला जाता है -

*ओना पासि दुआसि न भिटीऐ, जिन अंतरि क्रोध चंडाल॥*

*पृष्ठ - 40*

दो प्रकार के क्रोध हुआ करते हैं - गुरमुखों का गुस्सा पानी पर रेखा खींचने के समान हुआ करता है और मनमुख का जो होता है वह पत्थर पर खिंची रेखा के समान होता है। वह नहीं दूर होता वह तो अन्दर चला जाता है हड्डियों में घुस जाता है, वह शरीर को गलाना शुरू कर देता है।

यहाँ एक बीबी (स्त्री) आई। कहने लगी, ''मेरे केश झड़ गये।'' मैंने

कहा, ''क्या बात?'' कहती है ''मुझे गुस्सा बहुत आता है।'' मैंने देखा, बातें सुनीं, बहुत गुस्सा था। मैंने कहा, ''बेटा ऐसे तो तेरा शरीर ही गल जायेगा, बिमारियां लग जायेंगी; बहुत मुश्किल हो जायेगी क्योंकि क्रोधी स्वभाव वाला जलता ही रहता है; खून जला लेता है अपना अन्दर का सारा। वह बीमार हो जाने पर ठीक नहीं होता फिर लोगों में फीका पड़ जाता है क्योंकि बात तो उसने कह देनी गुस्से में आकर। वह तो भूल जायेगा पर दूसरे लोगों को तो याद रहती है। सो इस तरह से जो क्रोध होता है यह नुक्सान करता है। शबद बताया और मैंने कहा तू पाठ किया कर जपुजी साहिब के, बाणी प्यार से पढ़ा कर। आखिर उसका क्रोध कम हो गया फिर केश भी दोबारा आने लग पड़े। आँखों से देखी है मैंने यह बात। बाकी यदि कोई कहे कि क्रोधी आदमी, ''मेरी सुरत चढ़ती है,'' नहीं, साधु संगत जी! मूर्ख होता है वह आदमी -

***कबहू जीअड़ा ऊभि चड़तु है कबहू जाइ पइआले।      पृष्ठ - 876***

अवस्था प्राप्त नहीं हुआ करती। सम वृत्ति नहीं आती, स्थिर बुद्धि प्राप्त नहीं होती जब तक हिडोंले पर चढ़ा हुआ है। कभी क्रोधी बन गया कभी शान्त हो गया, कभी क्रोधी बन गया फिर कभी शान्ति में आ गया। यह totally (पूरी तरह से) छोड़ना पड़ता है।

एक बार गुरू छठे पातशाह के समय एक ब्राह्मण था। कथा किया करता था और गुस्से हो गया। बुलाने पर भी न आता। एक वहाँ प्रेमी बैठा करता था कहने लगा कि मैं लेकर आता हूँ। कहने लगे तू कैसे लेकर आयेगा? राजा की बात है - किसी राजा के दरबार की। सारे वज़ीर भी जा आये और भी मैंने बड़ों बड़ों को भेजा पर वह नहीं आता। वह कहने लगा, ''महाराज! मैं चण्डाल हूँ और जो क्रोध है वह मेरा बड़ा भाई है। यदि न आया, मैं कन्धे से पकड़ कर ले आऊँगा क्योंकि मेरा भाई है उसके अन्दर। वहाँ चला गया, कहने लगा वहाँ जाकर -

''पण्डित जी! महाराज बुला रहे है।''

''कई आये बुलाने वाले, तू कौन है?''

''मैं चण्डाल हूँ।''

''तू क्यों मेरे द्वार पर आया हैं?''

''तेरे अन्दर मेरा भाई घुसा हुआ है, उसे लेने आया हूँ।''

''तेरा भाई! यहाँ कहाँ है?''

''कहाँ होना था, तेरे अन्दर है।''

क्रोध जो होता है यह चण्डाल हुआ करता है। कहने लगा, ''सीधे-सीधे, (चुप-चाप) चल पड़, नहीं तो मैं तुझे बाजू से पकड़ कर ले जाऊँगा।''

महाराज कहते हैं ***'ओना पासि दुआसि न भिटीऐ जिन अंतरि क्रोध चंडाल॥'*** उसकी अस्पर्शयता लग जाती है। उसकी blood vibration (रक्त संचार की तरंगे) हमारे अन्दर enter (प्रवेश) कर जायेंगी, पास मत जाओ, हाथ भी मत लगाओ उसे क्योंकि वह उस समय अछूत हुआ होता है।

उसके हृदय में नाम कैसे चल सकता है? यदि क्रोधी आदमी कहे कि मेरा तो नाम चल रहा है; बिल्कुल गलत है। शान्त वृत्ति वाले का नाम चलता है। जिसकी वृत्ति कभी up (ऊपर) हो गई कभी down (नीचे) हो गई उसका नाम नहीं चलता। वह स्थिर बुद्धि नहीं हुआ करता। इस प्रकार इन सभी को समता में लाना पड़ता है और बाकी यदि हम समझें तो यह है कि गुरू ग्रन्थ साहिब जी की जो बाणी है इसके अन्दर जो शिक्षा है, इसे ऐसे ही मत पढ़ा करो कि मैंने इतने पृष्ठ पढ़ लिये, इतने पढ़ लिये। मैं तो रोज़ 30 पृष्ठों का नितनेम करता हूँ। होगा प्यारे! पढ़ लेता होगा। ताकतवर आदमी है, तेरा नियम है पर उसकी अपेक्षा दो ही पढ़ ले; विचार करके पढ़ लें। बाणी पर विचार करना पड़ता है। यह बहुत गहरी है, गम्भीर है। पहले विचार करो फिर मानो। यदि मानते नहीं, पढ़ने को तो महाराज जी ने प्रवान नहीं किया -

***पाठु पड़िओ अरु बेदु बिचारिओ निवलि भुअंगम साधे।***<br>
***पंच जना सिउ संगु न छुटकिओ अधिक अहंबुधि बाधे।***<br>
***पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई मै कीए करम अनेका।***<br>
***हारि परिओ सुआमी कै दुआरै दीजै बुधि बिबेका॥*** *पृष्ठ - 641*

जो विचारशील बुद्धि है जब तक यह प्राप्त नहीं होती तब तक बात नहीं बना करती; केवल वाद-विवाद ही रह जाता है।

भाई गुरदास जी लिखते हैं ''चीनी चीनी कहने से मुँह मीठा हो जायेगा?'' यदि कोई सर्दी के महीने में करता रहे, ''आग आग, आग आग; उसकी ठण्ड ऊतर जायेगी?'' यदि बीमार आदमी ''वैद्य-वैद्य, वैद्य-वैद्य कहता है वह ठीक हो जायेगा?'' यदि कोई गरीब आदमी कहता रहे, ''पैसा-पैसा, पैसा-पैसा'' कहते हैं वह अमीर बन जायेगा? इसी तरह से यदि कोई चन्दन-चन्दन, चन्दन-चन्दन कहता जाये, सुगन्धि तो नहीं आती कपड़ों तथा शरीर में से। चांद, चांद कहने से प्रकाश नहीं हो जाता। इसी तरह

से ज्ञान की बातें करे। सो ज्ञान की पुस्तकें पढ़ने से इनसे वह अवस्था प्राप्त नहीं हुआ करती जब तक उसका पालन नहीं करता। उसके बारे में ऐसा फ़रमान है -

*धारना - मंन पिआरिआ, सिखिआ पूरिआं गुरां दी - 2, 2*
*पूरिआं गुरां दी, सिखिआ पूरिआं गुरां दी- 2, 2*
*मंन पिआरिआ,..........................।*

जो गुरू ग्रन्थ साहिब जी शिक्षा देते हैं जब तक हम उसे नहीं मानते और मौखिक रूप में 'राम-राम' करते रहते हैं, महाराज कहते हैं ऐसे बात नहीं बनेगी प्यारे! तू गुरू की शिक्षा मान ले फिर चल सकेगा रास्ते पर। ये कुछ रहतें (नियम) होते हैं। यह मशीन बोलती है, लाउडस्पीकर बोलता है कितनी तारें लगी होती हैं, जब तक सारी तारें सैट नहीं होतीं आवाज़ कैसे आएगी? टैलिविज़न है जब तक सभी तारें proper order (निश्चित क्रम) में नहीं होगीं, तब तक न colour (रंग) ठीक आता है न ही फोटो ठीक आती है। रेखायें सी पड़ती जायेंगी क्योंकि तारों में कोई defect (कमी) होता है। इसी तरह से जब तक हम आन्तरिक रहतें पूरी नहीं करते, बाहरी तथा अन्दरूनी रहतों को पूरी तरह नहीं मानते तब तक आदमी नाम में उन्नति नहीं कर सकता। यही कारण है कि नाम तो जपते हैं फिर नीचे ही रह जाते हैं, जपते हैं फिर नीचे रह जाते हैं। महाराज कहते हैं -

*हरि हरि करहि नित कपटु कमावहि हिरदा सुधु न होई।*
*अनदिनु करम करहि बहुतेरे सुपनै सुखु न होई॥ पृष्ठ - 732*

'हरि हरि' तो करता है पर कपट है इसके हृदय में। सो यह सारी शिक्षा जो गुरू महाराज ने दी है - गुरू ग्रन्थ साहिब के अन्दर, नोट करने की कोशिश करो कि महाराज कहते क्या हैं? जब गुरू धारण कर लिया, इस रास्ते पर चल पड़े फिर हमें पूरी सावधानी के साथ आगे बढ़ना चाहिए और महाराज कहते हैं -

*मिथिआ नाही रसना परस। पृष्ठ - 274*

न हंसी में, न मज़ाक में, न किसी को गलत बात करने में; रसना के साथ स्पर्श भी नहीं करनी चाहिए झूठी बात। जब स्पर्श करेगी, अन्दर से तो पता होता है कि मैं झूठ बोल रहा हूँ। जब आन्तरिक हृदय को पता चल गया, नाम की तार उसी समय टूट जायेगी; करके देख लो, नाम चलता है कि नहीं। इमानदारी के साथ बताना। एक बार झूठ बोल दो, कभी नहीं चलेगा क्योंकि सच जो है वह वाहिगुरू है; झूठ जो है, यह अनहोनी चीज़ है। अनहुई चीज़ को यदि अन्दर घुसाया तो सच जो है वह अलोप हो जायेगा -

*मन महि प्रीति निरंजन दरस।* *पृष्ठ - 274*

फिर मन में प्रीत होनी चाहिए वाहिगुरू के दर्शनों की। किसे प्रीत है? कौन है जो प्यार में रहता है? कोई बिरला पुरुष है; कोई बिरला, सारे नहीं हैं -

*तू चउ सजण मैडिआ डेई सिसु उतारि।*
*नैण महिंजे तरसदे कदि पसी दीदारु॥* *पृष्ठ - 1094*

कोई नहीं कहता कि मेरा तू शीष ले ले, वाहिगुरू प्यारे के मुझे एक बार दर्शन करवा दे। तीव्रता नहीं है अन्दर, बुझा हुआ दीपक है। जैसे गीली जली हुई लकड़ी का बुझा हुआ धुँआ होता है उस पर पानी डाल दो, ऐसे धुआँ सा निकलता रहता है; ऐसा ही हाल है हमारा। प्रीत नहीं है अन्दर, प्रीत और चीज़ होती है -

*पर त्रिअ रूपु न पेखै नेत्र।* *पृष्ठ - 274*

पराये रूप देखने -

*साध की टहल संत संगि हेत।* *पृष्ठ - 274*

दो बातें हैं - साध संगत की टहल और बन्दगी करने वालों से प्यार। ये दोनों चीज़ें नहीं हैं हमारे पास; न तो हमारी गिनती सेवा में है न ही हमारे हृदय में प्यार आता है। बन्दगी करने वालों को देखकर प्यार विरले विरले को ही आता है बाकी तो तर्क करते हैं। यदि प्यार नहीं आता तो तर्क भी मत करो। तर्क करने से छह कला वैराग की नष्ट हो जाया करती हैं -

*करन न सुनै काहू की निंदा।* *पृष्ठ - 274*

किसी की निन्दा कानों से सुन भी मत। करनी तो एक तरफ रही और attitude of mind (मन का रुझान) क्या होना चाहिये? कहते हैं कि समझ ले सच्चे दिल से, ऊपर ऊपर से मत कह by words (शब्दों से) मौखिक मत कह कि -

*हउ अपराधी गुनहगार हउ बेमुख मंदा।*
*भाई गुरदास जी, वार 36/21*

सच्चे दिल से गुरू के पास आकर कह -

*हम नही चंगे बुरा नही कोइ।* *पृष्ठ - 728*

फिर क्या होगा? कबीर साहिब कहते हैं होना क्या है? हमारे बराबर आकर खड़ा हो जायेगा; हम भी यहीं खड़े हैं। हमारे बराबर में यदि खड़ा होना है, साधू-सन्तों के साथ तो यह attitude of mind (मानसिक दृष्टिकोण) कर ले -

*कबीर सभ ते हम बुरे हम तजि भलो सभु कोइ।*
*जिनि ऐसा करि बूझिआ मीतु हमारा सोइ॥* *पृष्ठ - 1364*

जो कहता है जी मैं तो यह हूँ, मेरी तो ये है, मेरा फलाणा (अमुक) है जी, मैं बहुत अच्छा हूँ जी; अपनी प्रशंसा अपने मुख से किये जाता है। कहते नहीं फिर तेरा हमारा साथ नहीं है। तू सच्चे दिल से समझ 'हम नही चंगे बुरा नही कोई।' ऐसे कह -

*सभ ते जानै आपस कउ मंदा।* *पृष्ठ - 274*

मान लेगा आदमी अपने आपको बुरा? बिल्कुल मानने को तैयार नहीं। तभी तो हमारी तार नहीं जुड़ती क्योंकि ये बातें हम जीवन में अपनाते नहीं हैं। जब तक जीवन में अपनाते नहीं हैं तब तक कोई बात नहीं बन सकती। ऐसा फ़रमान है-

*खांड खांड कहै जिहबा न स्वाद मीठो आवै,*
*अगनि अगनि कहै सीत न बिनास है।*
*बैद बैद कहै रोग न मिटत न काहूं को,*
*द्रब द्रब कहै कोऊ द्रबहि न बिलास है।*
*चंदन चंदन कहै प्रगटै न सुभास बासु,*
*चंद चंद कहै उजिआरो न प्रगास है।*
*तैसे गिआन गोसटि करत न रहत पावै,*
*करनी प्रधान भान उदति अकास है॥* *(कबित्त, भाई गुरदास जी)*

ज्ञान की बातें करते रहना, ज्ञान गोष्ठी करना; इससे तो उच्च अवस्था प्राप्त नहीं होती। यह प्राप्त तब होती है जिस समय करनी में भी वही आ जाये रहत में आ जायेगी -

*अवर उपदेसै आपि न करै। आवत जावत जनमै मरै।* *पृष्ठ - 269*

दूसरों को उपदेश देता है ज्ञान गोष्ठी करता है, स्वंय पालन नहीं करता -

*औरन कह उपदेसत है पसु तोहि प्रबोध न लागो॥*
*(शबद हज़ारे, पातशाही 10)*

महाराज कहते हैं औरों को तो उपदेश दिये जाता है तुझे मामूली सा भी ज्ञान नहीं हुआ। सो इस प्रकार जब तक गुरू की बताई हुई रहतों पर नहीं चलते तब तक बात नहीं बनती -

*करन न सुनै काहू की निंदा। सभ ते जानै आपस कउ मंदा।*
*गुरप्रसादि बिखिआ परहरै। मन की बासना मन ते टरै।* *पृष्ठ -274*

जो माया का illusion (भ्रम) पड़ा हुआ है, यह गुरू की कृपा से हट सकता है, जो मन के अन्दर बेअन्त वासनाएं हैं उन्हें जब तक नहीं छोड़ता तब तक परमेश्वर का भजन करेगा कि वासनाओं का भजन करेगा? वासना का भजन होता है, परमात्मा का जब तक हृदय में प्यार नहीं आता, दृढ़ता नहीं आती, तब तक कोई बात नहीं बना करती। सो वासना कहाँ तक

आदमी के साथ जाती है -

एक बार श्री राम चन्द्र जी महाराज रूहानी दरबार लगाये बैठे हैं। वशिष्ट जी आदि सभी बड़े बड़े महापुरुष भी बैठे हैं। विचार हो रही है आत्मिक। अचानक आपने हथेली पर हथेली देकर ताली बजाई और ज़ोर से हँस पड़े। सभी हैरान हो गये इतनी ज़ोर से हँसे। उस समय वशिष्ट जी ने पूछा -

''हे राम जी! कृपया यह तो बतायें कि आपके हंसने का क्या कारण है?''

''वशिष्ट जी! आप तो जानते ही हैं, त्रिकाल दर्शी हो?''

''नहीं महाराज आप प्रकट करके बताओ।''

''हम इस कीड़े को देखकर हंसे थे।''

''कीड़े की पिछली दो टांगे टूटी हुई हैं। महाराज इसमें हंसने की कौन सी बात है? यह ऊपर चढ़ता है फिर गिर जाता है; ऊपर चढ़ता है फिर गिर जाता है। इस पर तो सतपुरुष नहीं हंसा करते। अनजान आदमी तो ज़रूर हंसेंगे देखकर कि इससे चढ़ा ही नहीं जाता। इसके अन्दर का भेद बताओ।

''वशिष्ट जी! यह जो कीड़ा है यह वाहिगुरू की कुदरत इतनी बेअन्त है जिसका कुछ भी पता नहीं कि कब सृष्टि शुरू हुई है कुछ पता नहीं। यह भी कोई पता नहीं कि सृष्टि ने कब तक रहना है, अन्दाजा लगाता रहता है संसार। यह तो वाहिगुरू स्वंय ही जानता है जिसने प्रसार किया है।''

***तिसु भावै ता करे बिसथारु। तिसु भावै ता एकंकारु। पृष्ठ -294***

वह किसी समय की सीमा में बद्ध नहीं। गिना है समय विशेषकशास्त्र ने। महाराज ने भी फ़रमान किया है -

***काल पाइ ब्रहमा बपु धरा। काल पाइ सिवजू अवतरा॥***
***कबिओ वाच बेनती चौपई पातसाही 10***

काल के साथ ही ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई है। काल के साथ ही शिवजी, काल के साथी ही विषणु जी -

***सकल काल का कीआ तमासा॥***
***कबिओ वाच बेनती चौपई पातसाही 10***

सारा काल का ही खेल हो रहा है, Time (समय) की बात चल रही है। उन्होंने time limit cycle (काल चक्र) बनाये हुये हैं कि 4 अरब 32 करोड़ साल बीत जाते हैं उस समय ब्रह्मा का एक दिन हो जाता है।

जब रात हो जाती है उस समय सारा कुछ जो हमें दिखाई देता है सब खत्म हो जाता है उस समय कुछ भी नहीं रहता। 4 अरब 32 करोड़ साल तक ऐसे ही रहता है और फिर 365 दिन का उसका एक वर्ष होता है। उसकी 100 वर्ष की उम्र है, इस तरह 36,500 बार उसकी जिन्दगी के अन्दर यह संसार बनता है, इतनी ही बार यह जाता है और नया ब्रह्मा आ जाता है -

*कोटि ब्रहमे जगु साजण लाए॥* *पृष्ठ - 1156*

महाराज कहते हैं करोड़ों ब्रह्मा आ चुके हैं, एक दो चार नहीं हैं। बहुत बड़ी संख्या बताई है। इस तरह फ़रमान है -

***ऐक शिव भए, एक गए, एक फेर भए,***
***राम चंन्द्र कृष्णा के अवतार भी अनेक है।***
***ब्रहमा अरु बिशन केते, बेद और पुरान केते,***
***सिंम्रिति समूहन कै हुइ हुइ बितए हैं।***
***मोनदी मदार केते, असुनी कुमार केते,***
***अंसा अवतार केते, काल बस भए हैं।***
***पीर और पिकाबर केते, गने न परत एते,***
***भूमही ते हुइकै, फेर भूम ही मिलए हैं।*** *अकाल उस्तति*

इतनी इतनी लम्बी आयु वाले शिवजी की आयु इसी काल चक्र के अनुसार 16 करोड़ खरब वर्ष की है। 16 लाख खरब वर्ष की, वर्षों के अनुसार ब्रह्मा की आयु है। सो कहने लगे, "हम वाहिगुरू जी की अनन्तता पर बलिहार जाते हैं कि यह जो कीड़ा है, आज से पहले 14 बार इन्द्र देवता बनकर तख्त पर बैठ चुका है - स्वर्ग लोक का राजा बनकर, पर भोगों की लालसा इसके अन्दर इतनी गहरी प्रवेश कर चुकी है, इसे पता है कि मैं चौरासी के भोग भोग रहा हूँ और जल्दी जल्दी चौरासी का चक्कर खत्म करके मनुष्य बनूं। उसके बाद मैं फिर वही कर्म करूं और स्वर्ग लोक का राजा बनूं। इस मूढ़ को यह नहीं पता कि कितनी बार मैं पहले गिर चुका हूँ और अब परमपद की प्राप्ति करूं जहाँ से फिर न आना पड़े; अपने स्वरूप का ज्ञान करूं, अपने निज स्वरूप में समा जाऊँ।"

सो इस प्रकार वासना जो है, यह नहीं दूर होती साध संगत जी! वासना ही है जो मन को टिकने नहीं देती। नवाब दौलत खान ने जब नमाज़ पढ़ी तो पूछा गुरू नानक पाताशाह को कि तुमने हमारे साथ नमाज़ नहीं पढ़ी - पढ़ने के लिए आये थे। महाराज कहते हैं हमने तो पढ़ ली, तुमने नहीं पढ़ी। काज़ी कहने लगे, नवाब साहिब जी "देखो! नानक जी क्या कह रहा है?" नवाब फिर कहने लगा "नानक जी! मैंने नमाज़ पढ़ी

है।'' महाराज कहते हैं ''तू तो जब आधा कलमा 'इलइल्ला' पढ़ा गया और 'ला इल्ला' भी नहीं कहने दिया तू तो इससे पहले ही निकल कर काबुल कन्धार घोड़े खरीदने लग पड़ा। तेरा शरीर तो उठता बैठता रहा लेकिन तू तो यहाँ नहीं था। तू तो नमाज़ी न बना। तेरे शरीर ने एक ड्रामा (नाटक) सा किया है।'' काज़ी कहने लगा फिर मेरे साथ पढ़ लेते! महाराज कहते हैं ''तेरे घर में घोड़ी ने बच्ची (बछेरी) को जन्म दिया हुआ था, बछेरी छोटी थी और घर में कुएं पर मेंढ़ नहीं है, उस पर चारपाई डालना भूल गया और तू तो वहाँ पर खड़ा बछेरी को सम्भाल रहा था। मन नहीं टिकता। उस समय इसने सवाल किया कि हे नानक! आप कृपा करके यह बताओ कि मन कैसे टिके? भजन करते हैं, तसबी फेरते हैं, नमाज़ पढ़ते हैं; जब कुरान शरीफ पढ़ते हैं, मन ऐसे चलता है जैसे सैर सपाटे करता हो। यह तो टिकता ही नहीं। कृपा करके इसकी कोई युक्ति बताओ।

गुरू नानक कहने लगे मन जो है यह वासनाओं का बन्धा हुआ भागा फिरता है जब तक वासनाओं पर नियन्त्रण नहीं करते, मन पर control (काबू) नहीं होता; काम सारा ही यह मन का है -

*ममा मन सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ।*
*मन ही मन सिउ कहै कबीरा मन सा मिलिआ न कोइ॥*

*पृष्ठ - 342*

यदि मन ने ही साथ न दिया फिर भजन किस का कर पायेंगे? एक mechanical process (यान्त्रिक प्रक्रिया) हो जायेगा जब तक मन साथ नहीं देता -

*जाप के कीए ते जो पै पायत अजाप देव;*
*पूदना सदीव तुही तुही उचरत हैं।* *अकाल उस्तति, कबित्त - 84*

कहते हैं ये जानवर सदा ''तूं ही, तूं ही, तूं ही, तूं ही'' कहे जाते हैं, ऐसे जैसे तू कहे जा। क्या फर्क पड़ता है ऐसे करने से - वे भी जानवर जी रहे हैं तू भी जी रहा है। तेरा यह मन साथ दे फिर बात बनती है। सो महाराज कहने लगे, ''नवाब साहिब! मन जो है यह वासना का बन्धा हुआ है - पुत्र वासना, लोक वासना, धन वासना, पद की वासना, स्तुति वासना, शास्त्र वासना, अनुष्ठान वासना। वासना तो जब से बच्चा पैदा होता है, बच्चे को वासना दूध की है, तब से ही वासना लग जाती है -

*लिव छुड़की लगी त्रिसना माइआ अमरु वरताइआ।* *पृष्ठ - 921*

यह मरते दम तक नहीं हटती। वासना जब तक आदमी का जनाज़ा नहीं

निकलती तब तक नहीं जाती, फिर जब मर जाता है उस समय वासना की गठड़ी साथ जाती है; फिर क्या होता है? महाराज कहते हैं –

*जुगि जुगि मेरु सरीर का बासना बधा आवै जावै।*
*भाई गुरदास जी, वार 1/15*
*जैसी मनसा तैसी दसा॥* *पृष्ठ – 1342*

कहते हैं इसका बन्धा हुआ फिर पैदा हो जायेगा –

*अंति कालि जो मंदर सिमरै ऐसी चिन्ता महि जे मरै।*
*प्रेत जोनि वलि वलि अउतरै॥* *पृष्ठ – 526*

प्रेत बन जायेगा क्योंकि वासना मन्दिरों की आ गई, मकानों की, जायदाद की आ गई। सो वासनाओं से बन्धता चला जाता है। महारज कहते हैं –

*मन की बासना मन ते टरै॥*
*इंद्री जित पंच दोख ते रहत।*
*नानक कोटि मधे को ऐसा अपरस॥* *पृष्ठ – 274*

इन्द्रियाँ ''शब्द, स्पर्श, रूप, रस गन्ध'' पाँच इन्द्रियों के पाँच ही विषय हैं। इन पर नियन्त्रण करे और पाँच जो दोष हैं – काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार इनसे रहित हो, फिर महाराज कहते हैं सारे आदमी थोड़े ही हैं प्यारे! ***'नानक कोटि मधे को ऐसा अपरस॥'*** करोड़ों में से एक है जिसका नाम चलता है बाकी ठीक है अपनी मेहनत करते हैं जन्म बीत जाता है। कभी मन लग गया, कभी न लगा। दूसरा यह है कि हृदय में कपट हो ऊपर ऊपर से दिखावा मात्र कीर्तन करता है, रोने भी लग जाता है। कोई मुश्किल नहीं है। भावुक बात छेड़ दो, आदमी रोने लग जाता है। ऐसा करने से यह तो नहीं माना जा सकता कि इसकी सारी ज़िन्दगी ऐसी हो गई। वह तो भावुक है emotion (वलवला) तरंग है; emotion (भावुकता) में आ जाता है। चिट्ठी पढ़ते ही आदमी रोने लग जाता है। महाराज कहते हैं यदि हृदय से कपट नहीं जाता, हृदय अन्दर से कोमल नहीं होता, हृदय अन्दर से नहीं पसीजता, वह कठोर रहता है फिर तो परमात्मा नहीं मिलता। इस प्रकार फ़रमान करते हैं –

*धारना – हिरदे होवे कपट विकार, नहीओं रब्ब मिलदा – 2, 2*
*नहीओं राम मिलदा, नहीओं राम मिलदा – 2, 2*
*हिरदे होवे कपट विकार,................।*

*कोई गावै रागी नादी बेदी बहु भाति करि*
*नही हरि हरि भीजै राम राजे।*
*जिना अंतरि कपटु विकारु है तिना रोइ किआ कीजै।* *पृष्ठ – 450*

गुरू दसवें पातशाह महाराज का दरबार लगा हुआ है। बहुत ही मीठी

सुर में गाया जा रहा है, कीर्तन हो रहा है। ऐसा प्रसंग चलाया हुआ है रागी सिखों का कि संगत के नेत्रों में से जल बह रहा है। कीर्तन की समाप्ति हुई और सभी ने बहुत प्रशंसा की कि सच्चे पातशाह! यह तो आपने बड़ी कृपा की हुई है इन रागियों पर। देखो, कितने प्यार के साथ इन्होंने वैराग का चित्र प्रस्तुत करके रख दिया और एक बार तो ऐसा लगता था कि यह माया कुछ भी नहीं है, इसकी ओर से पूरी तरह से मुँह मोड़कर आपके चरणों में ही रहना शुरू कर दें। फिर देखो, रागी कितने अच्छे हैं हमारे नेत्रों से भी आँसू बह रहे हैं इनके नेत्रों में से भी। महाराज मुस्करा पड़े, कोई बात न कही। इतने में एक सिख खड़ा हो गया, कहता है, ''सच्चे पातशाह! मैं आपके दर्शन करने आया था और मेरे किसी प्रेमी ने गहने चुरा लिये। घर वाली भी मेरे साथ थी, हमने बान्ध कर रखे हुये थे और हमारी गहनों की पोटली उठा ली किसी ने। आप त्रिकालदर्शी हो, कृपा करो। कोई बाहर भी नहीं गया, यहीं पर ही है जिसने उठाये हैं। हम तो तभी से ढूँढ रहे हैं।'' महाराज मुस्कराये, कहते हैं ''प्यारिओ! ढूँढो अब।'' किसी ने न बताया। आपके मुख से सहज स्वभाव निकल गया, ''कस्सी (फावड़ा) यहीं ही है।'' सारे कहने लगे महाराज! यह रमज़ (गुप्त बात) हमारी समझ में नहीं आयी। महाराज कहते हैं, ''एक गाँव का सरदार था। उसकी कसी (फावड़ा) गुम हो गई और वहाँ जो ढिंढोरची था ढोल वाला, उसे बुलाकर कहा कि तू कह कि जिसके घर भी फावड़ा मिल गया उसे इतने हन्टर मारे जायेंगे, इतना जुर्माना होगा और थोड़ी देर का समय दिया जाता है। इतनी देर में अमुक स्थान पर फावड़ा रख दो फिर कोई किसी को सजा नहीं मिलेगी।'' उसने ज़ोर ज़ोर से गला फाड़ फाड़ कर कहा, ''देखो, सुनो, तुम ध्यान से सुनो कि फावड़ा गुम हो गया है - गाँव के मुखिया का। अमुक स्थान पर रख दो नहीं तो यह सजा होगी इतने कोड़े पड़ेंगे फिर मत कहना, बताया नहीं है।'' सारे गाँव में मुनादी फेर आया। कहते हैं ''मुनादी फेर आया?'' कहता है, ''हाँ जी।'' फिर देखो तो जाकर उस स्थान पर रख आया कोई?'' कहते हैं ''न महाराज, वहाँ तो किसी ने नहीं रखी।'' कहने लगे फिर घर की तालाशी लो सब की।'' तालाशी ली तो जो ढोल बजा रहा था उसी के घर फावड़ा पड़ा था।

सो महाराज कहते हैं ''फावड़ा यहीं है।'' कहते हैं ''महाराज हमारे तो कुछ भी पल्ले नहीं पड़ा। आप कृपा करके बताओ तो सही कि क्या बात हुई?''

महाराज कहते हैं ''बात कैसी प्यारिओ! ये जो रो रोकर कीर्तन कर रहे थे, इनके घर पोटली पड़ी है। जाओ, जाकर ले आओ, एक आदमी भी साथ ले जाओ।''

साथ ले गये। कहते हैं ''बता कहाँ है?'' निकाल कर दे दी। आकर चरणों में गिर पड़े। महाराज कहते हैं ''ऐसे काम करते हो। एक तरफ तो रो रोकर कीर्तन करते हो, संगतों को भी रूला दिया। तुम आसा जी की वार नहीं पढ़ते?''

***जिना अंतरि कपटु विकारु है तिना रोइ किआ कीजै॥*** *पृष्ठ-450*

क्या बनेगा रोने से, अन्दर तो कपट विकार भरा पड़ा है -

***हरि करता सभु किछु जाणदा सिरि रोग हथु दीजै।***
***जिना नानक गुरमुखि हिरदा सुधु है हरि भगति हरि लीजै॥***
*पृष्ठ - 450*

यहाँ तो हृदय की शुद्धि की ज़रूरत है। पहले इन चीज़ों से सभी से बचो यदि पार उतरना है तो। अन्यथा पार नहीं हो सकता -

***हरि हरि करहि नित कपटु कमावहि हिरदा सुधु न होई।***
*पृष्ठ - 732*

कड़वा बोलता है फीका बोलता है; एक दोष तो नहीं, बेअन्त दोष हैं -

***अनदिनु करम करहि बहुतेरे सुपनै सुखु न होई॥***
***गिआनी गुर बिनु भगति न होई।***
***कोरै रंगु कदे न चड़ै जे लोचै सभु कोई।***
***जपु तपु संजम वरत करे पूजा मनमुख रोगु न जोई।*** *पृष्ठ - 732*

मन के कहने पर चलता है -

***अंतरि रोगु महा अभिमाना दूजै भाइ खुआई॥*** *पृष्ठ - 732*

अन्दर अभिमान का रोग लगा हुआ है और द्वैत भाव में रहता है -

***बाहरि भेख बहुतु चतुराई मनूआ दहदिसि धावै।*** *पृष्ठ - 732*

बाहर से तो बहुत सुन्दर भेष धारण कर लिया, बढ़िया से बढ़िया भेष बना लिया। देखने वाला एक बार तो भेष के भ्रम में ही भूल जाये, बड़ी चतुराई है, बातचीत करने में बहुत चपलता है ***'मनूआ दहदिसि धावै॥'*** मन भागा फिरता है -

***हउमै बिआपिआ सबदु न चीन्है फिरि फिरि जूनी आवै॥***
*पृष्ठ - 732*

और शबद को खोजता नहीं है। नाम के साथ सुरत नहीं लगती। महाराज कहते हैं फिर बार बार आता है; पैदा होता है मर जाता है फिर पैदा

होता है मर जाता है। सो महाराज समझाते हैं माता जी को कि नाम के अन्दर जब तक पूरी तरह नहीं घुल मिल जाता तब तक यदि नाम की बात करें तो किसी के पल्ले ही नहीं पड़ती क्योंकि संसार ने अभी समझा नहीं कि नाम –

*सांई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो।* *पृष्ठ – 81*

यदि इतनी सी बात ही हृदय में बैठ जाये फिर कौन है ऐसा जो इतनी अमूल्य चीज़ को भूल जायेगा। सो उसके लिये तो गुण होने चाहिए –

*धारना – जिथे मिले न सुदागर पूरा,*
*गठड़ी न खोलीं नाम दी – 2, 2*
*मेरे पिआरे, गठड़ी न खोलीं नाम दी,*
*मेरे पिआरे, गठड़ी न खोलीं नाम दी – 2*
*जिथे मिले न सुदागर पूरा, ........................।*

*राम पदारथु पाइकै कबीरा गांठि न खोल्ह।*
*नही पटणु नही पारखू नही गाहकु नही मोलु।* *पृष्ठ – 1365*

*कबीर राम रतनु मुखु कोथरी पारख आगै खोलि।*
*कोइ आइ मिलैगो गाहकी लेगो महगे मोलि।* *पृष्ठ – 1376*

कोई आ जायेगा, कभी आ जायेगा। उसने फिर शीश देकर ले लेना है। ग्राहक ही नहीं है कोई नाम का, उठाये फिरो नास्तिकों के पास।

एक पण्डित जी बहुत विद्वान थे। कथा किया करते थे। महाभारत की कथा सुनानी, पर लालच था मन के अन्दर। कोई अमीर आदमी देखना फिर कहना कि इसे कथा सुनायें यह दक्षिणा अच्छी देगा। स्वाभाविक होता है लालच। सो उन्होंने एक शहर में एक अच्छा सेठ जो सभी से बड़ा था उसे कहा कि ''सेठ जी यदि कहो तो कथा सुनायें – महाभारत की कथा?'' कहने लगे, वाह पण्डित जी वाह! हम तो प्रतीक्षा करते रहते थे कि कोई विद्वान आये, हमारा भी टाईम बीत जाया करे और कथा भी सुनें। पण्डित जी ने कथा शुरू कर दी और साथ ही कहने लगे कि देखो, ध्यान से सुनना और जो वचन आयेंगे इन्हें मानने का यत्न भी करना।

कहते हैं, चिन्ता मत करो पण्डित जी, हम पूरी तरह से मानेंगे। उस समय जब कथा का मध्य भाग का भोग पड़ा, पण्डित जी देखते हैं कि इन्होंने तो एक कौडी भी भेंट नहीं चढ़ाई किसी ने, ये कैसे लोग हैं; और स्थानों पर जब मैं भोग डालता हूँ, वस्त्र चढ़ाते हैं, राशन आदि भेंट करते हैं; घर रख आता हूँ फिर मैं; पैसे देते हैं, गहने देते हैं और बहुत कुछ देते हैं; इन्होंने तो कुछ भी नहीं किया। कहता है चलो सेठ लायक

है एक ही बार में दे देगा सब कुछ। फिर कथा करते रहे अन्त भोग डाल दिया। उन्होंने भोग पर भी कुछ भी भेंट न चढ़ाई। पण्डित जी बहुत निराश हुए, साथ ही वचन भी बड़े प्यार से किये थे और उन्होंने कहा कि यदि मैं अब कहता हूँ तो सारी संगत बैठी है इनके मन में बात आ जायेगी कि पण्डित लालची है इसलिये मैं फिर आ जाऊँगा शायद यह गुप्त दान करना चाहते हों। वे थोड़े दिनों के बाद आ गया। आकर कहने लगा –

''सेठ जी, कथा कैसी लगी?''

''पण्डित जी कथा! बस क्या पूछते हो, बहुत ही बढ़िया लगी।''

''मानी भी है कुछ?''

''हाँ, हाँ, 100 प्रतिशत मानी है।''

''यदि तुम्हें बढ़िया लगी तो आपने कुछ भेंट तो चढ़ाई नहीं।''

''देखो पण्डित जी, मैं तुम्हें बताता हूँ सच्ची-सच्ची बात। यह देख ले कृष्ण महाराज आए और पाण्डवों ने भी मांगा और जितने भी बड़े बड़े महान व्यक्ति थे सभी ने समझौता करवाने की कोशिश की कि पाँच गाँव ही दे दो; यदि ज़यादा नहीं भी देना तो पाँच गाँव ही दे दो। दुर्योधन ने कहा कि जितनी सुई की नोक के बराबर जगह होती है, मैंने तो इतनी भी नहीं देनी। कहता है मैंने तो यह बात पक्की गाँठ बान्ध ली कि चाहे कोई कुछ कथा किये जाये, चाहे कोई भी मांगे जाए, हमने तो एक धेला भी नहीं देना किसी को।'' कहता है ''कितनी बड़ी बात है, मैंने तो कथा मान ली।''

पण्डित जी ने कहा कि यह तो मेरी ही गलती है, मैंने पहले तो सौदागर देखा ही नहीं। कहता है ''चलो, घरवाली अच्छी होगी उससे पूछते हैं।'' बीबी जी के पास चला गया। कहता है –

''बीबी जी कथा कैसी लगी?''

''मुझे तो बहुत बढ़िया लगी। कुछ न पूछो पण्डित जी मेरे तो बहुत सारे संशय दूर हो गये।''

''फिर आपने कुछ भेंट तो दी नहीं।''

''भेंट तो मैं जी भरकर करूंगी।''

''कब? देखो, तुम्हें सबसे अच्छा प्रसंग कौन सा लगा? यह बताओ।''

''द्रौपदी का लगा। मैंने भी फैसला कर लिया कि चार पति तो मेरे पहले ही हैं, जिस दिन पाँचवा बन गया, पण्डित जी उस दिन दूँगी, भेंट।''

पण्डित जी कहने लगे यह भी मूर्ख ही है। ये किस तरफ सोचने लग पड़े। वह पतिव्रता स्त्री थी। उसने वचन माना और यह पाँच पति करना चाहती है। कहता है चलो, बेटा लायक है उसके पास चलते हैं। लड़के के पास चला गया। जाकर कहता है -

''छोटे सेठ जी, कथा कैसी रही?''

''पण्डित जी, मुझे तो ज्ञान हो गया, पूरा ज्ञान। जो कृष्ण महाराज ने वचन किये हैं, मुझ पर 100 प्रतिशत असर हो गया, आत्मा को मैं समझ गया।''

''फिर आपने भेंट तो कुछ चढ़ाई नहीं।''

''भेंट तो मैं जरूर दूँगा।''

''फिर तूने समझा क्या है?''

''मैंने यह समझा है कि आत्मा नहीं मरती, शरीर मरता है और मेरा 100 प्रतिशत निश्चय हो गया। यह जो हमारा बूढ़ा है न यह मुझे एक धेला भी नहीं देता। अब मैंने इसे मार देना है आत्मा तो मरती नहीं मुझे पाप नहीं लगेगा फिर दूँगा तुझे।''

सो महाराज कहते हैं ***'राम पदारथु पाइ कै कबीरा गांठि न खोल। नही पटणु नही पारखू नही गाहकु नही मोल॥'*** न बाज़ार है, न पारखू है, न दुकान है, न कोई मूल्य देने वाला है। मूल्य क्या है उसका? मूल्य महाराज कहते हैं -

*धारना - मरना कबूल लै, जीवन दी छड्ड दे आसा -2, 2*
*जीवन दी छड्ड दे आसा, जीवन दी छड्ड दे आसा - 2*
*मरना कबूल लै, .....................।*

*पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस।*
*होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि॥ पृष्ठ - 1102*

*जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ। सिरु धरि तली गली मेरी आउ।*
*इतु मारगि पैरु धरीजै। सिरु दीजै काणि न कीजै॥ पृष्ठ - 1412*

जो मूल्य है ग्राहक के पास, वह है अपने आपको, हउमै को खत्म करना। यदि 'मैं' रहे और साथ 'नाम' रहे; दोनों नहीं रहते एक स्थान पर -

*हउमै नावै नालि विरोधु है दुइ न वसहि इक ठाइ। पृष्ठ - 560*

दोनों इकट्ठे नहीं रहते; या तो हउमै रहेगी 'मैं' रहेगी या 'नाम' रहेगा।

सो इस प्रकार ***'कबीर राम रतनु मुखु कोथरी पारख आगै खोलि। कोई आइ मिलैगो गाहकी लेगो महगे मोलि॥'*** पारखू को यह बात बता दे कि यहाँ वृति टिकाने पर ऐसा होता है, इस स्थान पर वृत्ति टिकाने से ऐसा होता है; त्रिकुटी ऐसे टूटा करती है, दशम द्वार में वृत्ति ऐसे पहुँचती है। जब ग्राहक ही नहीं है उसे पता ही नहीं है कि दशम द्वार किसे कहते हैं। हाँ, हाँ, हाँ, हाँ, किये जाता है। वह न इधर होगा न उधर, केवल थकावट ही तेरे पल्ले पड़ती है; इन्तजाम कर ***'कोई आइ मिलैगो गाहकी लेगो महगे मोलि॥'*** एक ही बहुत है, उसने सिर देकर ले लेना है। तेरा बन जाना है सब कुछ अर्पण कर देना है उसने।

सो इस प्रकार ग्राहक न होने के कारण नाम नहीं चल रहा। अब पाँच प्यारे अमृतपान करवा कर आते हैं; बेअन्त प्रेमियों को अमृतपान करवाया है। कितने होंगे जो नाम जपते हैं - विरले विरले ही हैं। सन्त तो यह कहा करते हैं कि तू बीमार है, अमृतपान कर ले; गुरू तेरा राखा हो जायेगा। चल तेरा इतना ही सही। वहाँ देते हैं नाम। अमृतपान क्या होता है? गुरू धारण करवाते हैं; गुरू धारण करवा कर पाँच प्यारे नाम देते हैं, वह नाम वाली बात तो आई गई हो गई, न कोई जपता है; विरले विरले पुरुष हैं कोई क्योंकि लगन नहीं है। हम तो ऐसा करते हैं - फलाणे सिंह, तू अमृतपान नहीं करता, क्या बात है?

यहाँ एक प्रेमी मेरे पास आया कहता है, ''जी मुझे अमृतपान करने को कहते हैं।'' मैंने कहा ''फिर तेरा मन क्या कहता है।'' कहता है ''मैं आपसे पूछने आया हूँ।'' मैंने कहा ''मैं तो कुछ नहीं कहता।'' यदि मैंने कह दिया कि मज़बूत होकर अमृतपान करना तो मेरे साथ वे नाराज़ हो जायेंगे जो करवा रहे हैं। यदि मैंने कह दिया ''अमृतपान कर ले, तो मेरी भी वही बात हो जायेगी। तेरे अन्दर रूचि है नाम जपने की? गुरू धारण करने को तेरा मन मान गया? यदि तो मन मान गया है फिर तो कीमत दे दे; यदि तेरा मन ही नहीं माना और कृपाण घर जाकर उतार देनी है; कहाँ गया पाठ, कहाँ गया जपुजी साहिब? शराब की बोतल को देखकर भागकर फिर वहीं ठेके पर चले जाना है फिर मत करना अमृतपान और थोड़ा मज़बूत बना ले अपने आपको। यदि यह जन्म बीत भी गया फिर बारी आ जायेगी। 50-60 करोड़ साल बाद फिर अृमतपान कर लेना, अभी कुत्ता बिल्ला बनकर देख ले क्योंकि -

***गुरमंत्र हीणस्य जो प्राणी ध्रिगंत जनम भ्रसटणह।***
***कूकरह सूकरह गरधभह काकह सरपनह तुलि खलह॥ पृष्ठ -1356***

महाराज जी कहते हैं कि ऐसी निखिद्ध यौनियों में पड़ता है जो निगुरा पुरुष हुआ करता है। फिर तो कीमत देनी चाहिए इसकी। प्राचीन समय में अमृतपान तब करवाया करते थे कई कई वर्षों तक तपस्या तितिक्षा करवाते थे। महाराज जी भी ऐसा ही बताया करते थे कि 6 महीने मूल मन्त्र के पाठ; माला भी 30 बताते थे, रोज़ की 30 मालाएं मूल मन्त्र की फेर कर आ जाना; फिर तुझे अमृतपान करवा कर नाम देंगे। परिणाम क्या होता है? जब नाम महापुरुषों ने देना पाँच प्यारों के बीच में, वह अन्दर ही चला जाता नाम; फिर चौकड़ी मारकर नाम जपना शुरू कर देना। अब तो बात ही कुछ और हो गई है।

सो पाँचवा हुआ करता है कि नास्तिक के पास नाम की महिमा न करे कभी भी क्योंकि उसने तर्क कर देना है और तर्क दिल में से निकलती नहीं। जो आदमी ऐसे ही खहबढी (झगड़ा करना) जाते हैं, नाम की बात को लेकर कभी भी जो अनाधिकारी हैं, महात्मा की स्तुति न करें उनके पास जाकर क्योंकि वह निन्दा करेगा। निन्दा करेगा तो फिर दुख होगा। निन्दा का कारण वही आदमी है जो अनाधिकारी के पास किसी महापुरुष की बात करे, गुरू की बात करे। ये बहस करने की बातें नहीं हुआ करती कि बेकार में दाँत पीसते रहना यह तो ह्रदय की सूझ बूझ (ज्ञान) हुआ करती है। सो इस प्रकार कुसंगत का प्रभाव पड़ जाता है फिर नाम नहीं जपा जाता। फिर होता है कि यदि नाम की बात करनी है तो पहले दृढ़ता होनी चाहिए जैसी ध्रुव में थी। ध्रुव को बहुत उपदेश नहीं दिया था, उसे चोट लगी थी, उसकी insult (बेइज्जती) हुई थी। एक तो राज्य छीन लिया था, उसका अधिकार था, दूसरा उसको थप्पड़ मारे थे सौतेली माँ ने। उसने माँ को आकर पूछा -

***किसु उदम ते राजु मिले सत्रू ते सभि होवनि मीता?***

***भाई गुरदास जी, वार 10/1***

माँ कहती है -

***परमेसरु आराधीऐ जिदू होईऐ पतित पुनीता॥***

***भाई गुरदास जी, वार 10/1***

इतनी सी ही माँ ने बात समझाई थी कि बेटा! यह नाम जपने पर होता है। राजा के घर तो जन्म हो गया अपना; मैं भी राजा की बेटी हूँ, राजा के साथ विवाहित हूँ पर मैं तप से हीन हूँ तू भी तप से हीन है भजन नहीं किया। इसलिये हमें यह सजा मिली है। पाँच साल का बच्चा क्या होता है? ये पाँच पाँच साल के बच्चे बैठे हैं, कितनी दृढ़ता है इनमें। ऐसी दृढ़ता थी कि -

*बाहरि चलिआ करणि तपु मन बैरागी होइ अतीता।*
*नारद मुनि उपदेसिआ नाउ निधानु अमिओ रसु पीता।*
*पिछहुं राजे सदिआ अबिचलु राजु करहु नित नीता।*
*हारि चले गुरमुखि जग जीता॥ भाई गुरदास जी, वार 10/1*

सो बाहर चला गया –

*नारद मुनि उपदेसिआ नाम निधान अमिओ रसु पीता॥*
*भाई गुरदास जी, वार10/1*

पाँच साल का बच्चा – नारद मुनि उपदेश दे रहे हैं। फिर जब तक परमेश्वर न मिला घर नहीं वापिस आया क्योंकि दृढ़ता थी उसके मन के अन्दर। जब तक इतनी दृढ़ता न हो हमारे अन्दर, नाम कैसे चल सकता है। हमने तो एक फालतू सी चीज़ रखी हुई है यह नाम। अन्दर दृढ़ता नहीं है, अन्दर कुछ और कहता है – नाम जपां, मेरा यह काम बन जाये, वह काम हो जाये। हम तो काम सिद्ध करने के लिये जपते हैं। महाराज कहते हैं उस नाम को मत खर्च करो इन बेकार चीज़ों पर। यह बहुत कीमती चीज़ है। इन पर इसका प्रयोग मत करो फिर इस नाम का दिखावा मत करो। जितने बन्दगी करने वाले पुरुष हैं बहुत गहरी तथा उच्च अवस्थाओं में पहुँच गये, वे दिखावे से बनावटीपन से दूर हो जाते हैं। उनके बारे में महाराज जी ने ऐसा फ़रमान किया है –

*धारना – होनि नज़ीक खुदाइ दे, भेत न किसे देण-2, 2*
*भेत न किसे देण, भेत न किसे देण – 2, 2*
*होण नज़ीक खुदाइ दे, .............।*

परमात्मा के पास रहते हैं किसी को पता नहीं चलने देते, वह अपनी बात ही नहीं करते –

*सबर अंदरि साबरी तनु एवै जालेन्हि।*
*होनि नजीकि खुदाइ दै भेतु न किसै देनि॥ पृष्ठ – 1384*

एक बार दो राजा जिन्होंने राज पाट, पदमनी रानियाँ त्याग दीं, अनेक सुख राज के त्याग कर ऐसी जिन्दगी अपना ली कि धरती पर ही सोते थे, हाथों पर रखकर भोजन खाते थे, जंगलों में रहते थे; कोई वासना नहीं, करपाती वृत्ति है; मिल गया तो खा लिया अन्यथा भूखे ही रहते थे। ये दोनों भजन करते करते......दुनियाँ में जो स्वार्थी होते हैं वे एकदम ताड़ जाते हैं कि अमुक स्थान पर बहुत भजन करते हैं। अमुक महात्मा का वचन सत्य होता है........। न कुछ लेते हैं न कुछ देते हैं, न कोई कुर्बानी करते हैं। उसी तरफ चल पड़ते हैं कि कोई वचन कर देंगे। मज़ाक बना लेते हैं इस चीज़ का और इन महात्माओं की जब प्रशंसा होने लगी बेअन्त

लोग आने लग गये। पहले तो वे दुनियाँ के साथ बातचीत करते रहे फिर उन्होंने आपस में सलाह की कि देखो घर बार छोड़ा, पदमनी रानियाँ छोड़ीं फिर महलों के सुख छोड़े, सुन्दर सेजें त्याग दीं, खाना पीना छोड़ा और यह कैसी जिन्दगी अपना ली है, मक्खियाँ तो फिर हमारे पीछे लगी हैं पीछा नहीं छोड़ती। कहते हैं फिर? कहते हैं हम ऐसा करते हैं यहाँ से कहीं आगे चलते हैं। ये दोनों महात्मा कितने सैकड़ों मील दूर चले गये। आगे एक बुढ़िया मिल गई उन्हें। श्रद्धालु थी सेवा के लिए पूछा और साथ ही उसने प्रार्थना की कि महाराज! मुझे कोई सेवा बख्शो। बार बार कहती है। वे बोले "माई यदि तू सेवा कर सकती है, प्रसन्नता लेनी है हमारी तो हमने भजन करना है; कोई जगह है तेरे पास?"

"मेरी तो बहुत बड़ी कोठी है पता ही नहीं चलता इतनी छोटी छोटी कोठड़ियां हैं इस कोठी में।"

"बस पता न चले किसी को।"

"है ऐसी जगह।"

"फिर बताना मत किसी को।"

"जब तक बतायेगी नहीं, हम यहीं भजन करेंगे।"

जिस तरह माई भिराई के पास गुरू अंगद साहिब आ गये थे, गुप्त रखा था उन्होनें बताया ही नहीं था। सभी आ गये बाबा बूडा जी भी पूछ-पूछ कर थक गये। पूरी तरह गुप्त हो गये थे, गुरू अंगद साहिब। बड़ी मुश्किल से बाबा बूडा जी ने वह दीवार तोड़ी दीवार चिनवा कर अन्दर बैठ गये थे।

सो इस तरह से वे भी बैठ गये। इस प्रकार बैठे बैठे काफी समय बीत गया। एक दिन माई पड़ोसन को बात कर बैठी कि ऐसे महात्मा आये हुये हैं, ये पहले राजा थे।

"नाम क्या है उनका?"

"मुझे पता चला है कि एक का नाम गोपी चन्द बताते हैं, एक का नाम है........भरथरी।"

"सुना है ये तो राजा थे।"

"हाँ, वही हैं।"

यह बात एक मिनट के अन्दर फैल गई सारे शहर में; राजा तक यह बात पहुँच गई। राजा ने कहा कि वे तो बहुत प्रसिद्ध जोगी हैं। ये दोनों राजा, मेरे राज्य में आ गये। मैं तो इनके दर्शन जरूर करूंगा। वज़ीर को बुलाया। वज़ीर कहता है, मैं भी चलूं। वज़ीर ने अपने से छोटे को, छोटे ने उससे छोटे अधिकारी को - कहते चले गये। ज्यों इकट्ठे होने लगे; बैन्ड बाजा तैयार कर लिया, जलूस निकाला। कितना बड़ा इकट्ठ हो गया, रानियाँ तथा और बहुत सारे। एक तरफ बैण्ड बाजा बजता जा रहा है; उन्होंने सुना और माई से पूछा -

''माई, इधर की तरफ आ रहे हैं सीधे?''

''हाँ जी! तुम्हारे नाम की महिमा फैल गई, राजा आ रहा है इस देश का और बड़ी श्रद्धा है उसके अन्दर।''

''माई! तुझे कहा था बताना मत।''

''मैंने तो बताया नहीं, ऐसे ही सहज स्वभाव मेरे मुँह से निकल गया इस पड़ोसन को - इसने बताया है।''

''तूने बताया तभी तो इसने आगे बताया। बहुत बुरी बात की। हम तो मक्खियों से भागे थे। ये तो दंदईये आ रहे हैं बड़े बड़े।''

तभी तो कहा है -

*कबीर साधू कउ मिलने जाईऐ साथि न लीजै कोइ।*
*पाछै पाउ न दीजीऐ आगै होइ सु होइ॥* *पृष्ठ - 1370*

सन्तों को यदि मिलने जाना है यदि कोई लाभ प्राप्त करना है; अकेला जाकर मिल क्योंकि जैसे आदमी होंगे वैसी ही बात करेंगे।

एक बार मैं महाराज जी (सन्त महाराज राड़ा साहिब वाले) को मिलने गया। मेरा चाचा साथ था। मैं दूर से आया था। मुझे कहने लगा, ''मुझे महाराज जी अच्छी तरह जानते हैं।'' मैंने कहा ''अच्छा!'' कहता है, ''मेरे साथ ही बातें करते रहते हैं।'' मेरे मन में आया कि इसने कोई वचन नहीं करने देना, अपनी ही बातें करेगा यह। महाराज जी को जब पता चला तो उन्होंने हमें अन्दर ही बुला लिया। अन्दर चले गये वह ज्यों बातें करने लगा, हम महाराज जी आसा जी की वार लगाते हैं, हम अमुक गाँव गये हमने अमुक स्थान पर कीर्तन किया।'' महाराज जी हाँ, हाँ, हाँ, हाँ करते गये; अच्छा भाई, बहुत बढ़िया। महाराज हम पैसे नहीं लेते, हम पाठ भी करते हैं, हमारे रागी ऐसे हैं, हमारा जत्थेदार ऐसा है, हमारे ज्ञानी

जी ऐसे हैं.........।'' महाराज जी ने मेरी ओर देखा, कहते हैं, ''अब तो काफी समय हो गया।'' मैंने कहा, ''महाराज वचन तो कोई किया नहीं।'' कहते हैं, ''चला ही नहीं कोई वचन, चलाया ही नहीं; ढोल पर डगा लगा देते (ज़बरदस्ती छेड़ देते), अच्छा था, कोई वचन हो जाते।'' कहते हैं ''बस ऐसा ही करता रहा।'' सो फिर मुझे याद आया कि यदि साधु को मिलने जाना हो, अकेला ही जाना चाहिये। जब साथ लेकर जाओ, प्रत्येक की वृत्ति अपनी अपनी अलग होती है; न वचन हो, न कोई बात पल्ले पड़े।

सो इस तरह वह कहने लगे कि यह क्या जलूस निकाल रखा है। राजा ने आना था, अकेला आ जाता वह तो सारे शहर को साथ लेकर आ रहा है। कहते हैं गोपी चन्द अब कोई बचने का तरीका सोचो। जो राज पाट छोड़ कर आये हैं यह तो फिर वही काम हो गया। इससे अच्छा तो यही है कि हम तख्त फिर सम्भाल लें जाकर - योजना बना ली। जब राजा पास गया बाकी सब को पीछे खड़ा कर दिया और हीरों का थाल भर लिया। मिठाईयों के टोकरे उठा लिये और जब पास आ गया कि राजा सुन लेगा अब हमारी बात, गोपी चन्द कहने लगा -

''गुरू जी, आज मैं जाऊँ भिक्षा लेने।''

''बिल्कुल नहीं जाना तूने, मैं जाऊँगा।''

वह कहता है मैं जाऊँगा, दूसरा कहता मैं जाऊँगा। एक कहता -

''तू क्यों जायेगा? मैं जाऊँगा।''

''तुम कल गये थे, लड्डू खाकर आये थे। कुछ नहीं लाये मेरे लिये। तुम्हारी दाढ़ी पर लगा हुआ था। मैंने वहाँ से अनुमान लगाया कि लड्डू खाये थे इसने आज।''

''तू भी तो परसों गया था। खीर खाकर आया था। तेरी भी दाढ़ी को लगी हुई थी, तूने मुझे खीर नहीं दी।''

वह कहता मैं आज जाऊँगा, वह कहता मैं जाऊँगा। दोनों गुत्थम गुत्था हो गये। राजा कहता है ये कैसे साध है ये तो खीर और लड्डुओं पर ही झगड़ रहे हैं। वहीं से ही लौट गया। धन्यवाद किया, कहते हैं बहुत भारी डूमणे मखिआल (मक्खी के छत्ते की तरह) आए थे। बड़ी मुश्किल से पीछा छुड़वाया है। सो ***'होनि नजीकि खुदाइ दै भेतु न किसै देनि॥'***

बन्दगी करने वाला जब अपना प्रकटावा करेगा, उसी समय लुटेरे आकर लूटना शुरू कर देंगे उसे। बिना मतलब के आते हैं; नाम का ग्राहक

कोई नहीं आता। दुनियाँ आती है; दुनियाँ की 'वाह वाह' रोटी देती है, कुछ भी नहीं देती। सो ये नाम के अन्दर बन्धन हुआ करते हैं। इस तरह की बहुत सारी रहतें हैं साध संगत जी!

मैंने इसलिये ऐसा विषय लिया है कि सभी को शिकायत होती है "जी नाम नहीं जपा जाता, नाम नहीं जपा जाता।" ये तीन टेप हो गई हैं; विचार कर लो, सोच लो इसके अनुसार चलते जाना। बाकी जो वचन महाराज जी करवायेंगे उन्हें भी ध्यान से श्रवण कर लेना फिर नाम चल पड़ेगा क्योंकि हम deserve (हक) करने लग जायेंगे। जब अधिकारी बनेंगे उस समय हमारी मांग परमेश्वर ने पूरी कर देनी है। जब बर्तन शुद्ध हो गया, उस समय वस्तु आ जायेगी। बर्तन हम शुद्ध नहीं करते, वस्तु डलवाते हैं।

एक जाट था। वह एक महात्मा को रोज़ कह दिया करता "महाराज! मुझे नाम दो, मुझे नाम दो।" वह कहते "प्यारे! नाम किसका दें, पहले तू नहाने की आदत बना, कुरली कर, दातुन कर, थोड़ा बोलने की आदत बना, झूठ मत बोला कर, निन्दा मत किया कर, चुगलियाँ मत किया कर; ये तो तेरे बस में हैं, इनसे तो तुझे कहीं परमात्मा ने आकर नहीं हटाना।" यदि कोई कहे जी नाम जपने से हट जायेंगी, बिल्कुल नहीं; पहले हटाओ; नाम तो तभी चलेगा। इसे पहले धोओ तो सही, दूर तो करो दोष। बहुत समझाया पर न समझा। आखिर महात्मा ने कहा कि यह मेरा पीछा नहीं छोड़ता। इसे कोई युक्ति द्वारा समझायें। सो युक्ति द्वारा समझाने के लिये महापुरुष एक दिन उसके द्वार पर चले गये। जाकर 'सत करतार' की आवाज़ दी और उसने भी देख लिया कि सन्त आ गये; आज तो नाम लेकर ही छोड़ेंगे। देखा चिप्पी लिये खड़े हैं, आटा मांगते हैं। इसने अंजलि भर ली मुट्ठी भरने की बजाये; ला कर कहता है "लाओ सन्त जी, चिप्पी आगे करो।" सन्तों ने चिप्पी में लीद डाल ली। कहते हैं, "ला भगता, इसके अन्दर ही डाल दे।" कहता है, "बाबा, इसके अन्दर तो लीद पड़ी है।" कहते हैं "तूने क्या लेना लीद से, इसके अन्दर ही डाल दे।" कहता है, "आटा खराब हो जायेगा।" दस बार सन्तों ने कहा कि तुझे क्या इससे हम आप जानें, तू डाल दे इसके अन्दर। कहता है इससे तो अच्छा है कि मैं आटा न ही डालूँ आटा ही खराब करना है। वापिस ले गया। कहता है "सन्त जी यदि आपने लीद को नहीं निकालना, तो लाओ मुझे दो, मैं चिप्पी धो दूँ।" सन्त कहते हैं "प्यारिआ! कितने का होगा आटा? धेले का या पाई का होगा (उन दिनों सस्ता ही हुआ करता था), कहते हैं

यह तू एक पैसे को खराब करने से बचाने के लिये पचास बार सोचता है और जो परमेश्वर का नाम ***'सांई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो॥'*** वह अमूल्य नाम - उसके अन्दर तू क्रोध भी साथ लिये फिरता है, काम भी साथ लिये फिरता है, निन्दा, चुगली, ईर्ष्या, कपट साथ लिये फिरता है, इसी में ही आशा अन्देशा सभी कुछ लिये फिरता है। इसमें नाम डालना चाहता है। पहले बर्तन धो ***'भांडा धोइ बैसि धूपु देवहु तउ दूधै कउ जावहु॥'***

पहले बर्तन तो धो ले फिर जाकर दूध लाना, यदि दूध बर्तन बिना धोए डाल लिया यह फट जायेगा।

सो जब तक रहतों (नियमों) का हम पालन नहीं करते तब तक नाम नहीं चला करता। वहीं रह जाता है। सभी ने नाम लिया है, जितने अमृतपान करते हैं सभी ने नाम लिया है। जो कहते हैं कि अमुक गुरू धारण कर लिया, फलाणा गुरू धारण कर लिया उन्होंने भी नाम लिया है। कितने होंगे जो वहाँ तक पहुँच गये क्योंकि वह बात नहीं है, रहते (नियम) नहीं हैं। सो अब समय इजाज़त नहीं देता। इसके बाद फिर महाराज जी ने चाहा तो अगली विचार करेंगे। अब सारे प्रेमी आनन्द साहिब में बोलो।

- आनन्द साहिब -

- गुरू सतोतर -

- अरदास -

☸☸☸☸☸

# १ओंकार सतिगुर प्रसादि

*शान.............................................................................................................।*

*सतिनामु श्री वाहिगुरू, धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज।*

*डंडोउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।*
*डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ।* पृष्ठ - 256

*फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।*
*नानक की प्रभु बेनती अपनी भगती लाइ॥* पृष्ठ - 289

*धारना - सगल भवन के नाइका, मैंनूं इक छिन दरस दिखा जा- 2*
*इक छिन दरस दिखा जा, मैंनूं इक छिन दरस दिखा जा - 2, 2*
*सगल भवन के नाइका,.........................।*

*कूपु भरिओ जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ।*
*ऐसे मेरा मनु बिखिआ बिमोहिआ कछु आरापारु न सूझ।*
*सगल भवन के नाइका इकु छिनु दरसु दिखाइ जी।*
*मलिन भई मति माधवा तेरी गति लखी न जाइ।*
*करहु क्रिपा भ्रमु चूकई मै सुमति देहु समझाइ।*
*जोगीसर पावहि नही तुअ गुण कथनु अपार।*
*प्रेम भगति कै कारणै कहु रविदास चमार॥* पृष्ठ - 346

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलो जी 'सतिनाम श्री वाहिगुरू।' कारोबार संकोचते हुए आप गुरू दरबार में पहुँचे हो। कलयुग का समय हो और आदमी का मन ज्ञान रूपी, श्रद्धा रूपी नेत्र न होने के कारण अन्धा हुआ हो, बौरा हो, हलकाया हुआ आदमी हो क्योंकि कलयुग में महाराज का फ़रमान है -

*बिनु सबदै सभु जगु बउराना बिरथा जनमु गवाइआ॥* पृष्ठ - 644

जिसे अन्दर के शब्द का ज्ञान नहीं हुआ, महाराज कहते हैं वह हलकाये (पागल कुत्ते) की तरह फिरते हैं। संसार में वे निन्दा के चुगलियों के, ईर्ष्या के तथा फीके वचनों के डंक मारते हैं। शारीरिक तौर पर दूसरे का नुकसान करते हैं, मन से दूसरे का बुरा चितवते हैं। जैसे हलकाया हुआ कुत्ता काटता है ऐसे ही संसार को काटते फिरते हैं वे।

ऐसे समय में यदि सत्संग प्राप्त हो जाये तो वाहिगुरू जी की बड़ी कृपा है जिसे हम समझ नहीं सकते। फिर गर्मी का महीना है, एक तरफ साधु धूनियाँ तपा रहे हैं, ऊपर से धूप पड़ रही है, चार धूनियाँ अपने चारों ओर लगा रखी हैं पर कितना फल है उसका? कहते हैं क्रोध बढ़

जाता है उसमें लेकिन इस सत्संग का कितना फर्क है उसकी अपेक्षा? कोशिश की गई है कि धूप न लगे, गर्म हवा भी असर न करे; पंखे भी लगे हुए हैं, हाथों वाले पंखे भी चला रहे हो, किसी को प्यास लगी हो तो जल पी सकता है। इतना आरामदायक तप होते हुए इसका फल कितना है, महाराज कहते हैं –

*कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम।* *पृष्ठ - 546*

एक, दो, चार, दस यज्ञों का फल नहीं है बल्कि कई करोड़ों यज्ञों का फल है। सो वे भाग्यशाली पुरुष हैं जो सत्संग में आ जाते हैं और यहाँ पहुँच कर अपने जीवन का लाभ प्राप्त करने का यत्न करते हैं।

काफी समय से पिछली लगभग तीन फिल्में इसी एक ही विचार पर चल रही हैं कि माता जीतो जी गुरू दशमेश पिता जी के सामने हाथ जोड़ें बैठी है। आपने पूछा कि आप कैसे आये हो आज? क्या मनोरथ है आपका? माता जी कहने लगी ''पातशाह! आप सब को उपदेश देते हो कि जो वाहिगुरू अन्दर बसता है –

*पेखत सुनत सदा है संगे मै मूरख जानिआ दूरी रे॥* *पृष्ठ - 612*

मेरे साथ रहता है, अन्दर रहता है, उसे देखा जा सकता है; वह कौन सा तरीका है जिससे उस वाहिगुरू के दर्शन इस शरीर में से हो जायें? इस बात को सब नहीं समझ सकते क्योंकि ज़रूरत ही महसूस नहीं हुई उन्हें, बुद्धि अभी तक वहाँ नहीं पहुँची, अभी भोगी हैं वे लोग। तीन प्रकार के लोग संसार में हुआ करते हैं, एक **पामर** हुआ करते हैं, एक **भोगी** और एक **जिज्ञासु** हुआ करते हैं और इनके ऊपर एक मुक्त आत्मा हुआ करती हैं। जो पामर होते हैं उनकी खाने-पीने के साथ पशुओं वाली वृत्ति हुआ करती है जैसे Eat drink and be merry for we shall have to die यानि खाओ पीयो, मौज करो क्योंकि दोबारा इस संसार में नहीं आना। उनकी सोच यहीं पर ही समाप्त हो जाती है, उन्हें पामर कहते हैं ये विषय विकारी हुआ करते हैं; शराबों कबाबों, मांस मछली का प्रयोग, चुगली, निन्दा झगड़े आदि जितना कलह क्लेश कलयुग में हो रहा है यह तमाम इन पामर लोगों के सिर माथे पर है। उन्होंने पहले भी पाप किये हुए हैं अब आगे और बढ़ा लिये पर वे पुरुष भाग्यशाली हैं जो सत्संग में आकर इस बात का ज्ञान प्राप्त करने की कोशिश करते हैं कि यदि एक बार भी 'वाहिगुरू' 'नारायण' या 'अल्लाह' कह दिया जाये और ध्यान सचमुच उसी तरफ चला जाये तो सारे ही पाप धुल जाते हैं। यह बहुत भारी concession (रियायत) है, कलयुग के अन्दर।

सो माता जी, गुरू महाराज जी के पास प्रार्थना करती हैं कि पातशाह! जो जिज्ञासु लोग हैं, वे आपके पास आते हैं और जो भोगी लोग हैं वे चाहे गुरू के पास जाएं चाहे सन्तों के पास जाएं उन्होंने तो भोग को ही मांगना है। किसी ने कहना मेरा बच्चा ठीक हो जाए, किसी ने कहना मेरी सन्तान नहीं है पुत्र हो जाये, किसी ने कहना मेरी मुकदमे में जीत नहीं हो रही, कोई कहता है मेरी सेहत खराब है। वे भोगों में मस्त होने के कारण पहले पामरों से तो अच्छे हैं क्योंकि शायद लगन लग जाये मन में भरोसा आ जाए कि गुरू की बाणी में इतनी शक्ति है; शुभ अवसर है कि वे परमेश्वर के द्वार की ओर चल सकते हैं। ये पामरों से अच्छे हैं पर बहुत अच्छे नहीं।

तीसरे हुआ करते हैं जिज्ञासु जिनके मनों में लगन पैदा होती है कि संसार में तो मैं आ गया। यहाँ आने का मेरा क्या मनोरथ है? क्या यही है कि खा-पीकर यहाँ से चला जाऊँ, जैसे मेरे लाखों बुजुर्ग चले गये हैं, जिनका कोई नामों-निशां बाकी नहीं है? क्या यही मेरा काम है या इससे भी बढ़कर और भी कोई काम है मेरा?

वैज्ञानिक कहते हैं कि मैं ऐसी चीज़ें खोज कर निकाल दूँ जैसे बिजली, रेल, टैलिफोन, टैलिविजन आदि ताकि संसार का भला हो जाये। संसार का भला भी होगा, बुरा भी होगा। जिसने जहाज़ बनाया है, चलाना सिखाया है, उसे यह नहीं पता था कि लोग इस पर सफर किया करेंगे पर साथ ही साथ इसमें बम्ब रखकर निर्दोष लोगों के घरों पर भी फैंका करेंगे; उतना ही दुख बढ़ गया। साईंस जहाँ सुख देती है, वहीं पर साथ ही दुख भी पैदा करती है। सो यह मनोरथ नहीं। मनोरथ यह है कि जनता कैसे सुखी हो सकती है, इस सृष्टि पर सुख कैसे आ सकता है? परमेश्वर के नाम के बिना सुख का और कोई साधन है नहीं। सभी विद्वानों ने सियाने लोगों ने बड़े बड़े साधन अपना कर देख लिए, माया इकट्ठी करके देख ली पर इनमें सुख न मिला। सन्तान वाला बनकर देख लिया, ज़रा सी सेहत खराब हो गई, सन्तान द्वारा भी सुख न मिला। सेहत की तरफ ध्यान चला गया, सेहत मन्द हो गया पर पैसा कम है वह भी सुख प्राप्त नहीं कर सकता। सुख इन चीज़ों में है ही नहीं। जिस चीज़ में सुख है ही नहीं उनमें सुख ढूँढता है -

*ऐसा जगु देखिआ जूआरी। सभि सुख मागै नाम बिसारी॥*

*पृष्ठ - 222*

सो वे जिज्ञासु पुरुष हुआ करते हैं जिनके मन में लगन पैदा होती

है कि मेरा संसार में आने का क्या मनोरथ है। वह पूछता फिरता है। महापुरुषों के पास जाता है, बन्दगी करने वालों की संगत में जाकर पूछता है कि मुझे कृपा करके यह तो बताओ कि मेरा संसार में आने का परम मनोरथ क्या है? महापुरुष अति संक्षेप में इस प्रकार बता देते हैं -

*धारना - एहो तेरी वारी ऐ, गोबिंद मिलणे की - 2, 2*
*गोबिंद मिलणे की, इहो तेरी वारी ऐ - 2, 2*
*इहो तेरी वारी ऐ,....................।*

*भई परापति मानुख देहुरीआ।*
*गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।* पृष्ठ - 12

तुझे मनुष्य का शरीर मिल गया -

*फिरत फिरत बहुते जुगु हारिओ मानस देह लही।* पृष्ठ - 631

ध्यान से सुन इस बात क,ो तू ऐसे मत समझ कि तेरा जीवन अभी शुरू हुआ है; इससे पहले भी तू था -

*कई जनम भए कीट पतंगा। कई जनम गज मीन कुरंगा।*
*कई जनम पंखी सरप होइओ। कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ॥*
पृष्ठ - 176

*केते रुख बिरख हम चीने केते पसू उपाए।*
*केते नाग कुली महि आए केते पंख उडाए॥* पृष्ठ - 156

ये जितनी निखिद्ध यौनियां देखता है जिन्हें काट काट कर खाता है इनमें से निकल कर तू आया है। बड़ी मुश्किल से तुझे मनुष्य देही प्राप्त हुई है।

यदि वैज्ञानिक ढंग से विचार करके देखें, हैरानी होती है, हे वाहिगुरू! तेरा अहसान कभी न भूलूं, तूने मुझे जग दिखा दिया। इन्सान के शरीर में 15 लाख कीटाणु होते हैं, उनमें से एक की बारी आती है। वह भी सारी जिन्दगी में दो चार पुत्र होते हैं। कितने खुंज (अवसर खो देना) जाते हैं, बारी नहीं आया करती। बड़ी मुश्किल से यह बारी प्राप्त हुई है पर मिली है वाहिगुरू को मिलने के लिये -

*अवरि काज तेरै कितै न काम।*
*मिलु साध संगति भजु केवल नाम॥* पृष्ठ - 12

बाकी जिन कामों में तू फंसा हुआ है, गलतियाँ करता है ये तेरे किसी काम भी नहीं आयेंगे। तू सन्तों की संगत में जा ***'मिलु साधसंगति.............'*** वहाँ जाकर क्या करना है महाराज? महाराज कहते हैं ***'भजु केवलु नाम...........'*** वहाँ जाकर इधर उधर की बातों में मत लग जाना। बहुत सारे ऐसे प्रेमी सन्तों के पास जाकर अपना समय व्यर्थ गवाँते हैं और उनका

भी – ऐसी बातें करके। वैसे कहते हैं जी हम तो सन्तों के पास जाते हैं। वचन तो प्यारे! तू सन्तों के पालन नहीं करता, न ही मानता है क्योंकि आदमी अपनी अक्ल को बहुत समझता है और अपनी बात मनवाना चाहता है, गुरू की बात नहीं माननी चाहता। सन्तों की बात सुनना नहीं चाहता पर किया क्या जाये? महाराज कहते हैं कि उनके भाग्य बुरे हैं क्योंकि मनुष्य का जन्म तो प्राप्त हो गया लेकिन दुर्भाग्य होने के कारण, बुरे कर्म होने के कारण उन्होंने बाजी हार दी, जीती हुई बाजी हार गये। किनारे तो लग गये 83, 99, 999 यौनियां तो पार कर गये, 84 लाखवीं यौनि आ गई। यहाँ आकर मस्ती चढ़ गई और मस्ती में बाजी हार गये क्योंकि यहाँ आकर इसे बहुत अभिमान हो गया कि मैं बहुत पढ़ा लिखा हूँ, मेरा घर बहुत अच्छा है, मेरी कोठी अच्छी है, मेरी ज़मीन अच्छी है, मुझे लोग आकर 'सत श्री अकाल' बुलाते हैं, आदि आदि इन व्यर्थ की बातों में पड़ गया।

महापुरुषों को थोड़ा सा तरस आ जाता हैं और कहते हैं कि इन्हें क्या कहा जाये? कितने उपदेश इन्हें देते हैं पर यह समझते क्यों नहीं? आखिर अन्तर्ध्यान होकर देखते हैं, ओ हो! इनका तो अभी तक कर्म ही नहीं बना। मनुष्य तो बन गया पर अभी कर्म नहीं बना कि इस संसार से तर जाये। मन्द भाग्य होने के कारण कान बन्द कर लिये, सुनते ही नहीं हैं। ये बाहरी कान तो सुनते हैं क्योंकि लाऊडस्पीकर लगे हुए हैं तथा ज़ोर ज़ोर से बोलते हैं लेकिन आन्तरिक कान जिन्हें दिव्य कर्ण कहते हैं, वे नहीं सुनते वे बन्द पड़े हैं। उन पर पर्दा पड़ा हुआ है। वह पर्दा अभी Brain (दिमाग) तक अगली बात जाने नहीं देता और भाग्य भी मन्द है –

*धारना – माड़िआं भागां वाले, दितीआं बांगां तों न जागदे – 2, 2*
*बांगा तों न जागण, दितीआं बांगा तों न जागदे – 2, 2*
*माड़िआं भागां वाले....................।*

*फरीदा कूकेदिआ चागेदिआ मती देदिआ नित।*
*जो सैतानि वंञाइआ से कित फेरहि चित॥ पृष्ठ – 1378*

चारों वेद, छहों शास्त्र, 27 स्मृतिया, उपनिषद, बाईबल, कुरान शरीफ, आदि गुरू ग्रन्थ साहिब, अनेक महात्मा ज़ोर ज़ोर से आवाज़ें लगा लगाकर कहते हैं –

*सिम्रिति बेद पुराण पुकारनि पोथीआ।*
*नाम बिना सभि कूड़ु गाली होछीआ। पृष्ठ – 761*

बताते हैं कि प्यारे! तू नाम जपने के लिये संसार में आया हैं, इसके अतिरिक्त

बाकी सभी बातें बेकार हैं पर महाराज कहते हैं कि किया क्या जाये क्योंकि ***'जो शैतानि वंञाइआ से कित फेरिह चित।'*** वह चित्त नहीं फेरता क्योंकि इसके अन्दर बुराईयाँ आकर बैठ गईं, वे इसे बदलने नहीं देती। यह आदमी सुन तो लेता है पर उस पर अमल नहीं करता वहीं पर ही बैठा है। जब तक चलता नहीं बात नहीं बनती।

महाराज कहते हैं ***'मिलु साधसंगति भजु केवल नाम।'*** कि सन्तों की संगत में आकर परमेश्वर का नाम जप, इससे ही संसार सागर से तर सकता है क्योंकि यह बहुत विषम भवजल है –

*पावक सागर अथाह लहरि महि तारहु तारनहारे॥ पृष्ठ - 613*

अग्नि का सागर है जहाँ हमारा वासता पड़ना है आगे शरीर छोड़ने के बाद, अथाह लहरें हैं जिनका कोई थहु (सीमा) नहीं। हे वाहिगुरू! तू ही पार लगाये तो हम तर सकते हैं अन्यथा नहीं लेकिन यह आदमी सब कुछ पढ़ लिखकर लायक होकर भी कभी नहीं सोचता कि मैंने संसार से जाना है एक दिन।

दो बातें आम मनुष्य नहीं सोचा करता। एक तो यह मानने को तैयार नहीं होता कि वाहिगुरू सभी जगह है – परिपूर्ण। निगुर्ण ब्रह्म हमारे अन्दर भी है और बाहर भी है –

*सो अंतरि सो बाहरि अनंत। घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत।*
*धरनि माहि आकास पइआल। सरब लोक पूरन प्रतिपाल।*
*बनि तिनि परबति है पारब्रहमु। जैसी आगिआ तैसा करमु।*
*पउण पाणी बैसंतर माहि। चारि कुंट दहदिसे समाहि।*
*तिस ते भिंन नही को ठाउ। गुर प्रसादि नानक सुखु पाउ॥*
*पृष्ठ - 293*

'यह सभी वाहिगुरू परमेश्वर है' यह बात कभी मानने के लिये तैयार होता ही नहीं चाहे जितना मर्जी ज़ोर लगा लो, जितना मन करता है कहे जाओ। गुरू ग्रन्थ साहिब जी के आगे सिर भी झुकायेगा लेकिन बात नहीं मानेगा। याद ही नहीं रखता – पल भर सुन लिया फिर भूल गया।

दूसरी बात है मौत। मैंने संसार में नहीं रहना। यहाँ रहने के लिये नहीं आए। थोड़ी देर के लिये कर्म करने के लिये आये हैं यानि नाम का धन कमाने के लिये – हीरे जैसा धन जो बहुत ही कीमती है पर हम तो कौड़ियां भी नहीं (विहाझ) खरीद कर ले जाते। कौडियों का भी कुछ न कुछ मूल्य होता है पर हम तो पाप खरीद कर, पत्थर लेकर जाते हैं। पत्थरों वाला कभी भी पानी में तैर नहीं सकता। उसे तो डूबना ही पड़ता

है। ऐसा महाराज फ़रमान करते हैं पढ़ो प्यार से -

*धारना - तेरा जनम अमोलक हीरा, कौडीआं दे भाअ जांवदा -2, 2*
*मेरे पिआरे कौडीआं दे भाअ जांवदा - 2, 2*
*तेरा जनम अमोलक हीरा................।*

*रैणि गवाई सोइ कै दिवसु गवाइआ खाइ।*
*हीरे जैसा जनमु है कउडी बदले जाइ। पृष्ठ - 156*

*रे मूड़े लाहे कउ तूं ढीला ढीला तोटे कउ बेगि धाइआ।*
*ससत वखरु तूं घिंनहि नाही पापी बाधा रेनाइआ॥ पृष्ठ - 402*

कितना मूर्ख है यह मनुष्य, पर अपने आप को बहुत समझदार कहलवाता है कि पैसा मैं बहुत कमा लेता हूँ। छोटा सा भी जाकर कोई सौदा कर लूँ उसी में बचत हो जाती है। कारखाना लगाया हुआ है, उसमें काफी बचत हो जाती है, farming (खेती बाड़ी) करता हूँ, व्यापार करते हैं।

महाराज कहते हैं कि यह तो व्यर्थ की बातों में पड़ा हुआ है प्यारे! लाभ तो परमेश्वर के नाम का हुआ करता है पर इसके अन्दर तो तू ढीला ढीला चलता है। जिन कामों के बदले में यमदूतों ने तुझे जन्जीरों से बान्धना है उनके लिये तू नरदां फैंके जा रहा है, भागा फिरता है पर नाम जपते समय कहता है कि मेरी नींद नहीं खुलती, मेरी वृत्ति नहीं टिकती। वृत्ति टिके भी कैसे, पापों में तो तेरी बुद्धि गुलतान (मस्त) हो चुकी है। इस माया ने तेरी बुद्धि भ्रष्ट कर दी। जो बड़े बड़े महापुरुष हुए हैं वे डरते थे माया से, पास नहीं फटकने देते थे।

भगत रविदास जी बैठे जूते गाँठ रहे हैं। कोई प्रेमी आया और कहता है, भगत जी! मेरे पास पैसा तो कोई है नहीं पर मेरा जूता टूटा हुआ है। भगत जी कहते हैं ला प्यारे! हम पैसा मांगते ही नहीं। वह मांगा नहीं करते थे। जो कोई दे जाता चुप करके रख लेते थे। इस प्रेमी ने देखा कि बहुत सन्तोष है इसमें। कहता है यह अपना रम्भा तो दिखाओ, आर भी पकड़ाओ। भगत जी ने दोनों पकड़ा दिये। उसने जेब में से एक पत्थर सा निकाला, रम्भी के साथ रगड़ा उसका रंग उसी समय पीला हो गया, उसने दोनों चीज़ें वापिस भगत जी को पकड़ा दी। भगत जी जब चमड़ा काटने लगे रम्भी का मुँह टेढ़ा हो गया। कहते हैं यह क्या किया है तूने? वह प्रेमी कहता है, भगत जी! तुम्हें अब जूते गाँठने की ज़रूरत नहीं है। इस पत्थर का नाम पारस है। मैंने इसे रम्भी के साथ Touch (स्पर्श) किया, स्पर्श करते ही सोना बन गई। बस अब ऐसे ही कर लिया करो; लोहा ले लिया इसके साथ स्पर्श कर दिया और बाज़ार में किसी जौहरी से बात

कर लो, वहाँ दे दिया करो। आपका भेद भी छिपा रहेगा और गुज़ारा भी बहुत अच्छा चलेगा। संगतें आया करेंगी, सेवा किया करना।

भगत जी कहते हैं, न भाई हमें इसकी ज़रूरत नहीं; यह तो डायन है, यह तो नागिन है। सारा संसार तो क्या देवी देवता भी इसने मोह लिये हैं। यदि कोई बचा है इससे, तो परमेश्वर का प्यारा ही बचा है जिसका वाहिगुरू के साथ सच्चा प्यार है, बाकी को तो यह खा जाती है। अनेक रूप हैं इसके, एक रूप नहीं है। कहीं पुत्र, पुत्रियों के रूप में है, कहीं जायदाद के रूप में है, कहीं दोस्तों मित्रों के रूप में है, कहीं परिवार के रूप में है, कहीं ज़मीन के रूप में है, ट्रक, कारों आदि कहीं यह चेतन माया स्त्री पुरुष के रूप में है, कहीं रिद्धियों-सिद्धियों के रूप में है। यह तो उलझा देती है, परमेश्वर तक जाने नहीं देती।

ऐसे व्यक्ति विरले होते हैं जिन्हें याद रहता है परमेश्वर, बाकी को तो थोड़ी सी माया मिली, बस भूल जाते हैं परमात्मा को। भूलकर मनुष्य विकारों में पड़ गया। महाराज कहते हैं कि तेरे विकारों को तो परमात्मा देखता है। जो काम तू कर रहा है, लोगों से तो छिपा लेगा पर परमात्मा के द्वार पर जब जायेगा उस समय तेरे कर्मों की फिल्म चलेगी जैसे वीडियो फिल्म चल रही है। यह फिल्म चाहे सौ साल बाद चला लो ऐसी ही संगत बैठी दिखाई देगी। एक फोटो ग्राफर इसकी फोटो गुप्त रहकर हर समय खींचता रहता है उसका नाम 'चित्र गुप्त' है। नाम उसका चित्र है और रहता गुप्त है गुप्त रहकर खींचता है -

*देइ किवाड़ अनिक पड़दे महि पर दारा संगि फाकै।*
*चित्र गुपतु जब लेखा मागहि तब कउणु पड़दा तेरा ढाकै॥*

*पृष्ठ - 616*

कहते हैं कि उलटे कर्म करता है - दरवाज़े बन्द करके; फिर वहाँ दरगाह में जाकर क्या करेगा? वहाँ जब तेरा लेखा मांगा जायेगा, वहाँ पर्दा तेरे साथ नहीं होगा -

*नंगा दोजकि चालिआ ता दिसै खरा डरावणा।* *पृष्ठ - 471*

तेरी body (शरीर) पर ठप्पे लगे होंगे पापों के। वे तुझे ही नहीं दिखाई देंगे बल्कि जिसने भी तेरी तरफ नज़र डाल ली, कहेंगे यह बड़ा पापी आ गया, क्या करता रहा यह संसार में जाकर?

*कपड़ु रूपु सुहावणा छडि दुनीआ अंदरि जावणा।*
*मंदा चंगा आपणा आपे ही कीता पावणा।*
*हुकम कीए मनि भावदे राहि भीड़ै अगै जावणा।*
*नंगा दोजकि चालिआ ता दिसै खरा डरावणा।*
*करि अउगण पछोतावणा।* *पृष्ठ - 470-71*

*बुरे काम कउ ऊठि खलोइआ। नाम की बेला पै पै सोइआ।*

*पृष्ठ - 738*

नाम जपने की बारी आती है तो कहता है आज मेरे सिर में दर्द है, उठा नहीं जाता पर पाप जब करना हो फिर तो उठकर दौड़ पड़ता है। यदि घर वाले कहें कि तू थका हुआ है तो कहता है, न, न, मैं नहीं थका हुआ, मैं तो ठीक ठाक हूँ। उस समय इसका मन शेर की तरह हो जाता है -

*चंगिआई आलकु करे बुरिआई होइ सेरु।*
*नानक अजु कलि आवसी गाफल फाही पेरु॥* *पृष्ठ - 518*

फिर तो तेरे गले में फन्दा पड़ने वाला ही है। याद रख फिर तेरा कुछ नहीं बनेगा फिर तो रोना ही तेरे पल्ले रह जायेगा। सो इसलिये जितना जल्दी हम समझ लें और दृढ़ कर लें, रास्ते का हमें ज्ञान हो जाए उतना ही अच्छा है, नहीं तो 'आज कल, आज कल' करते करते समय बीत जायेगा।

यह मैं जो वचन कर रहा हूँ जिज्ञासु के मन में तो बैठ जाते हैं पर पामर तथा विषयी लोगों के मन में नहीं बैठते क्योंकि विषयी को तो भोगों की ज़रूरत है परमात्मा की नहीं और जो पामर हैं, वे महामूर्ख हैं, उसके मन में तो कोई बात बैठती ही नहीं, अपना रास्ता नहीं छोड़ना, न गुरू को मानता है, न किसी पीर पैगम्बर को, न किसी ऋषि मुनि को, न गुरू ग्रन्थ साहिब को। महाराज कहते हैं; उसे मनुष्य मत कहो वह तो मनुष्य से भी नीचा है -

*धारना - भूत लोक उह, जिहड़े नाम नहीओं जपदे -2,2*
*नाम नहीओं जपदे, जिहड़े नाम नहीओं जपदे - 2, 2*
*भूत लोक उह, जिहड़े.......................।*

*कबीर जा घर साध न सेवीअहि हरि की सेवा नाहि।*
*ते घर मरहट सारखे भूत बसहि तिन माहि॥* *पृष्ठ - 1374*

महाराज कहते हैं सिर नवाता है हमें प्यारे! सुन ले ध्यान पूर्वक ***'कबीर जा घर साथ न सेवीअहि'*** जिस घर में परमेश्वर का नाम नहीं जपा जाता ***'ते घर मरहट सारखे भूत बसहि तिन माहि।'*** वे घर श्मशान है - कोठियाँ नहीं हुआ करती, नगर नहीं हुआ करते -

*जिथै नामु न जपीऐ मेरे गोइदा सेई नगर उजाड़ी जीउ॥*

*पृष्ठ - 105*

वह तो उजाड़ है और भूतों का वास होता है वहाँ।

उसी तरह आदमी-आदमी में भी फर्क होता है। एक होते हैं पामर

वे तो समझाने पर भी नहीं समझते चाहे कुछ भी कर लो –

*जैसे पस तैसे ओइ नरा॥* *पृष्ठ - 1163*

कोई अन्तर नहीं है पशुओं में और उनमें। वे तो कर्मों के लेखे देने लेने आया करते हैं और उसके बाद चौरासी के लम्बे चक्कर में फिर पड़ जाते हैं। एक विषयी होते हैं वे भोगी होते हैं। भोगों में, वासना में रूचि होती है उनकी। उनकी आशा होती है कि शायद उनके अन्दर कभी न कभी महापुरुषों का कोई वचन अटक जाये और वे आगे ठीक रास्ते पर चल पड़ें। तीसरे हुआ करते हैं जिज्ञासु। जिज्ञासुओं के मन में हर समय आशा रहती है कि कोई ऐसा तरीका है जिससे हम इस भव सागर से पार हो जायें। चौथी हुआ करती है मुक्त आत्मा। उन्हें परमेश्वर संसार के अन्दर स्वंय भेजता है। किस लिये भेजता है कि तुमने बन्दगी भी करके दिखानी है, सभी को रास्ता भी दिखाना है और जाकर दूसरों को भी नाम जपवाना है –

*जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की*
*जो आपि जपै अवरह नामु जपावै॥* *पृष्ठ - 306*

वे तो संसार का उद्धार करने के लिये आया करते हैं। भूली हुई रूहों को, भटकती हुई रूहों को; पहले तो उन्होंने उनको इकट्ठा करना, चुनना, कहाँ कहाँ हैं; उसका काम होता है वाहिगुरू के हाथ में remote control के साथ वहाँ वहाँ ले जाता है, उन्हें। वे नहीं कहा करते कि हमने अमुक स्थान पर प्रोग्राम करना है। कोई कार्य क्रम नहीं बनाते कि संसार का हमने उद्धार करना है यह करेंगे वह करेंगे। वह तो कहा करते हैं कि वाहिगुरू ने जहाँ लेकर जाना है, वहीं जायेंगे।

गुरू नानक पातशाह से पूछता है, मरदाना ''पातशाह! मैं कई महीनों से देखता आ रहा हूँ कि जब सूरज निकलता है, आप नाक की सीध में चलना शुरू कर देते हो, चले ही जा रहे हो, कितने महीने हो गये चलते चलते और अब आप कहाँ जा रहे हो?'' महाराज कहते हैं, ''मरदाना! देख रंग करतार के; जहाँ वह ले जाना चाहते हैं, वहीं हम चले जायेंगे।'' ''पातशाह! वहाँ कौन है?'' ''मरदाना! तू नहीं जानता वहाँ झण्डा बाढ़ी है, वहाँ शुद्रसैन है, इन्द्रसैन है। वे रुके हुए हैं – पिछले जन्मों से। त्रेता में भी आए थे, द्वापर में भी आए थे और अब कलयुग में आए हैं। अब पार करने का समय है वहाँ जाना है, हमें उनको ढूँढना है।''

सो आप सुमेरु पर्वत पर चढ़े जा रहे हैं, बर्फीले पहाड़ों पर पहुँच गये। गोरख नाथ ने दूर से ही देखा और अनुमान लगाया कि गुरू नानक आ रहा

है। कुछ मन में खुशी भी हुई सन्तों के दर्शन की, कुछ जिज्ञासा भी उत्पन्न हुई, साथ ही कुछ लालच भी हुआ कि यदि गुरू नानक हमारा मत मान ले तो कलयुग में यह सिद्धान्त (मत) खूब फैल जायेगा क्योंकि इनके अन्दर बहुत भारी ताकत है। दिव्य दृष्टि से जान गये थे इस बात को।

जब गुरू नानक पातशाह उनके पास पहुँचे तो कहते हैं, ''हे नानक! देखो, हम जोगियों का न कोई घर है न दर है; हम इस बन्धन में पड़ते ही नहीं। जो गृहस्थी होकर, वैरागी होकर फिर बन्धनों में पड़ जाते हैं - इसके लड़के का विवाह है, उसकी लड़की का विवाह; उसे घर छोड़ने की क्या ज़रूरत थी फिर मोह माया में पड़ जाते हैं। एक को अपना समझते हैं एक को बेगाना, उसे ज़रूरत क्या थी त्याग करने की। उसने छोटा सा परिवार छोड़ दिया और बड़ा सारा परिवार बना लिया। इसमें सुख प्राप्त नहीं हुआ करता। माँ बाप आराम से रहते हैं। भजन बन्दगी करते हैं पर एक लड़का ऐसा काम कर देता है कि माँ बाप द्वारा की गई सारी रूहानी कमाई एक सैकिण्ड में मिट्टी में मिला कर रख देता है, फिर सुख हुआ कि दुख?''

महाराज कहते हैं ''नहीं गृहस्थ धर्म सबसे बड़ा धर्म है पर तभी होता है यदि गृहस्थ धर्म के नियम हों, यदि नियम न हों तो इससे बुरा भी कोई नहीं। नियमों की बात है -

*कबीर जउ ग्रिहु करहि त धरमु करु नाही त करु बैरागु।*
*बैरागी बंधनु करै ताको बडो अभागु॥* *पृष्ठ - 1377*

गोरख नाथ जी कहने लगे ''हे नानक! हम इन झगड़ों में नहीं पड़ते, जायदादें नहीं बनाते डेरे नहीं बनाते; स्वतन्त्र विचरण करते हैं। हमारे जो घर हैं ये जंगल ही हैं; हमारी जो खुराक है, कन्दमूल हम खा लेते हैं। हम बाथरूम नहीं बनाते; तीर्थों का स्नान करते हैं, उनका फल हमें मिलता है और जब पुण्य बढ़ जायें तो फल, सुख हुआ करता है। इस प्रकार महाराज जी को बताते हैं -

*धारना - रहिके जंगलां च कंदमूल खा के, तीरथां ते सुख पाईदा 2*
*मेरे पिआरे तीरथां ते सुख पाईदा - 2, 2*
*रहि के जंगलां च..................।*

हे नानक! यह जो तू संसार को उपदेश देता फिरता है कि घर छोड़ने की आवश्यकता नहीं, इससे कैसे तू संसार को पार करवा देगा? देख! हम न तो दुकानों पर जाते हैं, न ही घरों में जाते हैं, जंगलों में रहते हैं -

*हाटी बाटी रहहि निराले रूखि बिरखि उदिआने।*
*कंद मूलु अहारो खाईऐ अउधू बोलै गिआने।* *पृष्ठ - 938*

हम कन्द मूल खा लेते हैं; न किसी की तू तू, न मैं मैं फिर -

*तीरथि नाईऐ सुखु फलु पाईऐ मैलु न लागै काई।*　　　*पृष्ठ - 939*

देख! हमें किसी प्रकार की मैल नहीं चढ़ती। किसी की मैल नहीं लगती कि लड़का बीमार है, घाटा हो गया, यह हो गया, वे हो गया, मस्त रहते हैं। हमारे मन पर मैल ही नहीं चढ़ती कोई -

*गोरखपूतु लोहारीपा बोलै जोग जुगति बिधि साई॥*　　　*पृष्ठ - 939*

यह विधि है योग की; आराम से रहते हैं और तू भी यह अपना ले।''

गुरू नानक साहिब कहते हैं ''यह तो गलत बात है कि मैल नहीं लगती। मैल तो मनुष्य के अन्दर चढ़ी हुई है भरा पड़ा है मैल के साथ क्योंकि-

*अखर पड़ि पड़ि भुलीऐ भेखी बहुतु अभिमानु।*　　　*पृष्ठ - 61*

आप तो जोगी बन गये। मन में बहुत अभिमान आ गया कि दुनियाँ से हम बहुत अच्छे हैं, ये तो बाकी चौरासी वाले घूमते फिरते हैं पर -

*तीरथ नाता किआ करे मन महि मैलु गुमानु।*　　　*पृष्ठ - 61*

अन्दर तो गुमान की मैल भरी पड़ी है। इस बाहरी शरीर पर मैल हो या न हो, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता क्योंकि -

*मनि मैले सभु किछु मैला तनि धोतै मनु हछा न होइ॥*　*पृष्ठ -558*

जब तक मन के अन्दर मैल है तब तक तन की सफाई का कोई लाभ नहीं -

*तीरथि नाईऐ सुखु फलु पाईऐ मैलु न लागै काई।*　　　*पृष्ठ - 939*

क्या इससे दरगाह में स्थान मिल जायेगा कि हम चलते ही रहते हैं कहीं भी एक रात नहीं टिकते -

*ऊहा कामि न आवै इह बिधि ओहु लोगन ही पतीआवै॥*

*पृष्ठ - 216*

दरगाह में ये चीज़ें नहीं पहुँचती। वहाँ पहुँचने वाली कोई और चीज़ है, वह है नाम परमेश्वर का। नाम के अलावा वहाँ कोई चीज़ नहीं पहुँचती।''

उस समय चरपट नाथ कहने लगा, ''हे नानक! ठीक है, तेरे वचन सत्य हैं पर एक बात हमें भी समझा दे। वह यह कि भवजल तो बड़ी बड़ी उछालें मार रहा है, तू इस संसार को कैसे पार लगा देगा?'' इस प्रकार प्रार्थना करते हैं -

*धारना - भवजल किवें तरीए जी, देहु इह विचार सच्चा - 2, 2*
*देहु इह विचार सच्चा, देहु इह विचार सच्चा - 2*
*भवजल किवें तरीए जी,..................।*

"हे नानक, तेरी बात हम मानते हैं तू यह कहता है कि आदमी गृहस्थ में रहकर, बाल बच्चों में रहकर सारे कारोबार करता हुआ आदमी संसार से तर सकता है –

*नानक सतिगुरि भेटीऐ पूरी होवै जुगति।*
*हसंदिआ खेलंदिआ पैनंदिआ खावंदिआ विचे होवै मुकति॥*
*पृष्ठ – 522*

यह कैसे हो सकता है जब कि एक तरफ तो बच्चे कुरलाते हों फिर मकान का किराया देने के लिये पैसे न हों, कोई बीमारी लगी हुई है, कहीं केस बन गया है, कहीं झगड़े फसाद गले में पड़ गये हैं; इनमें से कैसे निकल जायेगा आदमी? यह तो तूने अनहोनी बात कह दी। इसमें से पार ही तभी होता है जब सारे झंझटों को छोड़कर आदमी एक तरफ हो जाये। यह हमारी समझ में नहीं आता कि –

*दुनिया सागरु दुतरु कहीऐ किउकरि पाईऐ पारो।*
*चरपटु बोलै अउधू नानक देहु सचा बीचारो॥* *पृष्ठ – 938*

हम किन्तु नहीं करते मुँह नहीं फेरते पर हमें convince (यकीन) दिला दे इस बात पर, समझा दे हमें।"

गुरू नानक कहने लगे "देखो, बात इतनी सी है कि गुरू पूरा होना चाहिये। पहले तो निगुरा आदमी पार ही नहीं हो सकता, जो मन चाहे कर लो। जितनी जल्दी अपनी गलती मान लेगा, उतना ही अच्छा है पर निगुरे आदमी का तो नाम लेना ही बुरा है –

*...................निगुरे का है नाउ बुरा।* *पृष्ठ – 435*

उसने तो डूबना ही डूबना है। वह आप तो डूबेगा ही, साथ में संसार को भी डुबोयेगा। वह नहीं तर सकता।" सिद्ध कहते हैं "यह यदि 'राम राम' कहता है तो?" महाराज कहते हैं –

*राम राम सभु को कहै कहिऐ रामु न होइ।*
*गुर परसादी रामु मनि वसै ता फलु पावै कोइ॥* *पृष्ठ – 491*

जब तक अन्दर का रास्ता नहीं जानता जो किसी किताब में नहीं लिखा हुआ, कहीं उसका नक्शा नहीं बनाया हुआ और न ही आदमी को अन्दर कोई बता सकता है, वह तो अपने अनुभव के साथ ही स्वंय पता चलता है, गुरू मार्ग दर्शन करता है रास्ता बताता है। जब उसे रास्ते का ही नहीं पता तो वह पार कैसे हो जायेगा।

इसलिये इसके लिये पूरे सतगुरू की ज़रूरत है। जब पूरा सतगुरू मिल गया फिर वह शबद देते हैं, शबद की कमाई करवा देते हैं। जैसे

जैसे शबद की कमाई करता जायेगा संसार के दुखों से मुक्त होता चला जायेगा। वह परवाह नहीं करता दुख सुख की। कहता है कि हुक्म में हो रहा है सब कुछ –

*हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ।* *पृष्ठ - 1*

वह रज़ा समझ कर उसके अन्दर ही अपना काम करता है सारा लेकिन परेशान नहीं होता।

यह इस प्रकार है कि आदमी के अन्दर एक चीज़ है जिसे 'सुरत' कहते हैं, attention कहते हैं, 'ध्यान' कहते हैं। उस पर पहरा देना होता है। यदि यहाँ सत्संग में बातें किये जायें, सुरत इधर उधर घूमती हो; क्या मज़ाल कि एक भी बात उसके पल्ले पड़ जाये। अगर तो साथ साथ ही विचार करते रहें, फिर बात अन्दर प्रवेश कर जाती है, हृदय में बस जाती है। यदि विचार न करे, सभी बातें भूल जाती हैं एक भी याद नहीं रहती, पर्दा ही पड़ जाता है, दरवाज़ा ही बन्द हो जाता है। न तो याद यहाँ रहता है न ही घर जाकर कि क्या कहा था सत्संग में? सो यह सुरत होती है - attention, तवज्जो, ध्यान। वह सुरत मनुष्य के अन्दर काम करती है।

जैसे यदि कोई कार चलाता है तो उसकी सुरत road (सड़क) को read (पढ़) कर रही होती है, सड़क को पढ़ती है कि यह गाड़ी जो दूसरी ओर से आ रही है, वह इतनी तेज़ी से आ रही है। उसने इतनी देर में यहाँ पहुँच जाना है। वह साईकल वाला सड़क पार कर रहा है और अब किसी पशु ने मुँह इधर की ओर कर लिया। इनसे कैसे बच कर पार निकलना है। इस प्रकार जिसकी सुरत काम नहीं करती वह ज़ोर से टक्कर मारता है दूसरे में – अपनी गाड़ी के साथ। ड्राईवर नशे कर लेते हैं जिस से सुरत आधी रह जाती है जिसकी वज़ह से accident (दुर्घटना) कर देते हैं और फिर सन्तों के पास आ जाते हैं। वह कह देते हैं कि इसका इलाज तो तेरे पास ही है भाई, मेरे पास नहीं है। मेरा यदि वचन मान ले तो कभी भी दुर्घटना नहीं होगी।

विदेशों में दुर्घटनाएं बहुत कम होती हैं। अमेरिका में दस हज़ार गाड़ियों के पीछे कोई एक दुर्घटना होती है पर हमारे देश में एक हज़ार गाड़ियों के पीछे 86 दुर्घटनाएं होती हैं जिसका अर्थ यह हुआ कि दस हज़ार में से 860 दुर्घटना हुई। ये सभी करते हैं बे-सुरत होकर, यानि सुरत टिकाने नहीं रहती। जैसे कोई बात कर रहा हो और दूसरा आदमी ध्यान से न सुन रहा हो; उसे पूछो कि तुझे क्या पता चला मैंने क्या कहा? वह यही कहेगा कि मेरा ध्यान दूसरी ओर था।

इस प्रकार गुरू नानक साहिब कहते हैं कि हम उस ध्यान को बान्धते हैं, उसे हम शबद के साथ मिलाते हैं। वह शबद आता है अकाल पुरुष के दर से और जब ध्यान शबद के साथ लग जायेगा तो शबद फिर ऊपर को खींचना शुरू कर देता है सुरत को। इसके साथ हमने संसार का उद्धार करना है -

*धारना - नानक नाम वखाणे ओ, सुरत शबद भवसागर तरीए-2, 2*
*सुरत शबद भवसागर तरीए, सुरत शबद भवसागर तरीए-2*
*नानक नाम वखाणे ओ,....................।*

*जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नैसाणे॥ पृष्ठ - 938*

कमल के फूल का उदाहरण देकर महाराज समझाते हैं। कमल का फूल छोटे छोटे तलाबों में, तलईयों में होता है। यदि बर्षा हो जाने पर पानी बढ़ जाये तो वह उतना ही ऊँचा हो जाता है। यह कभी भी पानी में डूबा नहीं करता, चाहे गज़ गज़ पानी क्यों न चढ़ जाये। उसमें यह गुण है कि उसकी उतनी ही बड़ी डण्डी साथ के साथ निकल आती है। ऐसे ही संसार में रहना है कमल के फूल की तरह ऊँचे उठकर। दूसरा उदाहरण देते हैं जलमुर्गी का। इसके पंख नहीं गीले हुआ करते पानी में।

इसी प्रकार जो गृहस्थी उत्तरदायित्व सम्भालता हुआ शबद के साथ जुड़ गया, उसका मन गीला नहीं होता माया में और दुख आने पर डूबता नहीं है। मन स्थिर हो जाता है दुख और सुख को वाहिगुरू जी की रज़ा समझ कर हर्ष शोक में drown (डूबता) नहीं होता। सो इस प्रकार से-

*सुरति सबदि भवसागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे। पृष्ठ - 938*

और जो तुम एकान्त कहते हो, हम शबद को ही एकान्त मानते हैं -

*रे मन ऐसो करि सनिआसा।*
*बन से सदन सभै करि समझहु मन ही माहि उदासा॥*
*शबद हज़ारे पातशाही 10*

जैसे जंगलों में रहते हो ऐसे ही घर में समझो। कर्तव्य करो पर detatched (निर्लेप) रहो, किसी वस्तु के साथ पकड़ नहीं होने देनी, वाहिगुरू की ओर पूरी वृत्ति लगानी है पूरा ध्यान लगाना है। संसार की डयूटी (कार्य) प्रालब्ध ने स्वंय ही करवा लेनी है। घर बार नहीं छोड़ना -

*रहहि इकांति एको मनि वसिआ आसा माहि निरासो।*
*अगमु अगोचरु देखि दिखाए नानकु ता का दासो॥ पृष्ठ - 938*

आशा नहीं करनी क्योंकि आशा में दुख होता है। जो कुछ हो गया ठीक है। सो सन्त जनो! सारी बात मन के साथ सम्बन्ध रखती है और जब तक मन नहीं आदमी का साथ देता तब तक कुछ नहीं बनता चाहे घर

छोड़ दो, जंगलों में रहो, कन्दमूल खा लो, चाहे तीर्थों पर चले जाओ और जिसे तुम 'हाटी बाटी' कहते हो, इसमें हम नहीं आते। 'हाटी बाटी' में तो नींद नहीं आती। दुख आते हैं, तकलीफें आती हैं पर दुख आदमी का इलाज हुआ करते हैं। जब भी मनुष्य सुखी होता है, उसी समय उन सुखों में लीन हो जाता है।

एक बार गुरू दसवें पातशाह से पूछा, सिखों ने ''पातशाह! यदि आप किसी सिख पर प्रसन्न हो जाओ तो उसे क्या दिया करते हो?'' महाराज कहते हैं ''हम उसका कारोबार बढ़ा देते हैं, विघ्नों का नाश कर देते हैं, उसके मस्तक पर लिखे हुये मन्द लेख मिटा देते हैं क्योंकि जब वह चरणों में शीश झुकाता है - श्रद्धा विश्वास के साथ, उस समय मन्द लेख मिट जाते हैं, अच्छे लेख अंकुरित हो जाते हैं। जब अच्छे लेख अंकुरित हो गये फिर घर में सुख होगा, बच्चे आज्ञाकारी होंगे घर में सुख शान्ति होगी, क्लेश नाम की चीज़ घर में से निकल जाएगी, सभी एक रास्ते पर चलने लग जायेंगे। कोई खींचतान नहीं रहेगी क्योंकि सतगुरू के चरणों में नमस्कार करके मन्द लेख खतम कर दिये। फिर जहाँ unity (सम्मति) होगी वहाँ रिज़क (रोज़ी रोटी) आ जायेगा और जब रिज़क आ गया उसका काम बढ़ जायेगा, विघ्नों का नाश हो जायेगा -

*प्रभ सिमरत कछु बिघनु न लागै।* *पृष्ठ - 262*

कहने लगे, ''पातशाह! बहुत से लोग ऐसे होते हैं कि जब उनके पास कुछ नहीं होता तब मिन्नतें करते फिरते हैं साधुओं सन्तों की, जी रोटी ही मिल जाये खाने को और अधिक कुछ नहीं चाहिए, गुज़ारा नहीं चलता, नौकरी नहीं मिलती। महापुरुष परमात्मा की रज़ा में कह देते हैं, कोई नहीं, मिल जायेगी पर परमात्मा को मत भूलना, मस्त मत हो जाना। नौकरी मिल जाती है, पैसा जेब में आना शुरू हो जाता है; पैसे में स्वाभाविक ही ताकत है, यह आदमी को भुला देता है, ठीक रास्ते पर नहीं चलने देता। इसे pollution (प्रदूषण) कहते हैं, मद्य है, नशा है -

*राज मालु रूपु जाति जोबनु पंजे ठग।*
*एनी ठगीं जगु ठगिआ किनै न रखी लज॥* *पृष्ठ - 1288*

चाहे राजसी शक्ति आ जाये चाहे पैसे की चाहे भाईचारे की ताकत आ जाये; इससे आदमी ठगा जाता है फिर इसका विश्वास कम हो जाता है न सन्तों पर रहता है न बाणी पर रहता है, न गुरू पर रहता है। फिर सन्तों को पता चल जाता है कि अब इसे मस्ती चढ़ गई माया की। पहले की तरह नहीं आता, पैसे में मस्त हो गया है। जब पैसा आदमी के पास

आता है फिर इसका चित्त बुराईयों की ओर भागता है। यदि परमेश्वर की ओर रहे तो मन अच्छाईयों की ओर जायेगा। बाणी जो है, वह गुरू है। यह तो पूरी नेकी है। यहाँ बुरा कर्म तो है ही नहीं और दूसरा यदि पैसे में लीन हो गया तो भूल जायेगा परमेश्वर को और माया उसे ग्रस लेगी। फिर पापों में प्रवृत होकर गलत बातें करेगा और साथ ही कहते हैं कि वाहिगुरू कौन सा देख रहा है? निश्चय उठ जाता है बाणी से, भूल जाता है सारी बाणी, मिटा देता है हृदय से सारे शबद।

महाराज दसवें पातशाह कहते हैं कि यदि हमारी कृपा हो जाये फिर तो हम उसे हथकड़ी लगाकर लाते हैं। सिख पूछते हैं ''महाराज! एक सिख के लिये पाँच सात सिखों को भेजते हो, हथकड़ी लगाकर लाने के लिये?'' महाराज कहते हैं ''नहीं, सिखों को नहीं भेजते बल्कि एक गुप्त हथकड़ी भेजते हैं।'' हैरान हो गये और कहते हैं, ''महाराज वह कौन सी हथकड़ी है?'' कहते हैं फिर हम उसके लिये दु:ख भेजते हैं, उसकी खुशियों में विघ्न डालते हैं, चोट मारते हैं फिर वह चौंक उठता है और चौंक कर गुरू याद आ जाये अपना, फिर तो हम खींच लेते हैं अपनी ओर, पर फिर भी जेकर गाफिल हो जाये फिर उसे नरक में फैंक देते हैं। सो हम जन्जीर भेजते हैं दुखों की, इस तरह पढ़ लो –

*धारना – तेरे दुखां दी बणेगी दारू, सुख तेरे रोग होणगे – 2, 2*
*मेरे पिआरे, सुख तेरे रोग होणगे – 2, 2*
*तेरे दुखां दी बणेगी दारू,.................।*

*दुखु दारू सुखु रोगु भइआ जा सुखु तामि न होई।*
*तूं करता करणा मै नाही जा हउ करी न होई।* पृष्ठ – 469

इस प्रकार प्यारे! यदि तो हमारी कृपा दृष्टि हो जाये उस पर तब दुख की जन्ज़ीर भेजते हैं। जब दुख आते हैं तो चौंक कर कहता है कि मेरे से यह गलती हो गई तभी मुझे घाटा हुआ है; बेअन्त चीज़ें होती हैं। यदि हमने रखना हो तो दु:ख भेजते हैं। यदि हमने न रखना हो तो फिर हम लुढ़कने देते हैं और लुढ़कता लुढ़कता नरकों में जाकर रोता है विषय विकारों में पड़ जाता है –

*ओथै हथु न अपड़ै कूक न सुणीऐ पुकार।*
*ओथै सतिगुर बेली होवै कढि लए अंती वार॥* पृष्ठ – 1281

विषय विकारों में पड़ जाता है आदमी जब पैसा बहुत हो जाता है। कहते हैं फिर गर्म गर्म थम्म तेरे गले के साथ लगाये जायेंगे। उस समय रोयेगा फिर उस समय किसी ने भी तेरी पुकार नहीं सुननी, पर यदि गुरू वाला होगा तो निकाल लेंगे।''

सो इस प्रकार गुरू नानक पातशाह कहते हैं –

*हाटी बाटी नीद न आवै पर घरि चित न डुोलाई।*
*बिनु नावै मनु टेक न टिकई नानक भूख न जाई।* पृष्ठ - 939

भूल नहीं होती, आदमी को याद रहता है परमात्मा। बाल बच्चे अपने होते हैं, दूसरे घरों में मन नहीं डोलता रहता। नाम के बिना एक तो मन की भूख नहीं जाती, दूसरा यह मन टिकता नहीं। चाहे खूब नहा लो तीर्थों पर चाहे कन्दमूल खा लो। सो इस प्रकार –

*सुरति सबदि भवसागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे॥* पृष्ठ - 938

यह सुरत का काम है सारा। सुरत को शबद के साथ मिला दो।

इस प्रकार गुरू नानक पातशाह संसार का उद्धार करते करते आज आप संगलादीप (लंका) पहुँच गये। वहाँ शिवनाभ राजा ने बहुत ही टैस्ट लिये गुरू नानक के, फिर जब उसे गुरू नानक देव पर पूरा विश्वास हो गया कि यह तो स्वंय गुरू नानक जी आ गये जो हमें भाई मनसुख जी बता कर गये थे। यह कोई कृत्रिमता नहीं है यह तो आप ही आ गये, बाग हरा हो गया है।

पहले राजा ने छोटी आयु की लड़कियाँ भेजीं पर महाराज ने उन्हें पुत्रियाँ कह कर सभी की काम वासना तृप्त कर दी – एक ही नज़र में। उन्होंने आकर कहा, राजन! वह तो स्वंय ही गुरू नानक आये हुए हैं। जा, जाकर चरण पकड़ ले। वहाँ किसी का बल नहीं चलता, हमारा बल नहीं चलता।

सो राजा आकर गुरू नानक पातशाह के चरणों में गिर पड़ा और अपनी धर्मशाला में ले आता है। एक दिन स्वंय गुरू नानक पातशाह के चरणों में परिवार सहित तथा अन्य संगतों के साथ बैठे हैं और कहने लगे ‘‘पातशाह! कृपा करके हमें यह तो बताओ कि इस संसार से कैसे पार हो सकते हैं; ऐसे प्रार्थना की –

***धारना - दसीं साहिबा, किवें रोकां मन आपणा - 2, 2***
***रोकां मन आपणा, किवें रोकां मन आपणा - 2, 2***
***दसीं साहिबा,........................।***

पातशाह! अकेला मैं ही नहीं, जितना संसार है – बन्दगी करने वाला, परमात्मा के रास्ते पर चलने वाला – चाहे नमाज पढ़ते हो, चाहे गायत्री, चाहे जपुजी साहिब का पाठ करते हैं, मन तो ठहरता नहीं, टिकता नहीं, छलांगे मारता फिरता है।

गुरू नानक साहिब वेई नदी में डुबकी मारने के बाद फिर जब निरंकार के देश से वापिस आकर संसार का उद्धार करने के लिये श्मशान भूमि में बैठकर एक नारा लगाते हैं –

*ना हम हिंदू न मुसलमान। अलह राम के पिंडु परान॥*

*पृष्ठ – 1136*

यह कुछ हिन्दुओं ने भी सुना पर चुप कर गये क्योंकि मुसलमानों का राज्य था। मुसलमानों ने भी सुना, उनके अन्दर तक्बर (अभिमान) था – राजसी ताकत का गुमान था; कहने लगे, हैं! इस्लाम की तौहीन कर रहा है नानक? court (कचहरी) में ला कर पेश कर दिया।

गुरू नानक ने समझाया कि हम यह नहीं कहते कि मुसलमान है नहीं पर सच्चा मुसलमान वह है जो मोम दिल हो –

***मुसलमाणु मोम दिलि होवै। अंतर की मलु दिल ते धोवै।***

*पृष्ठ – 1084*

अन्दर की मैल जो लगी हुई है वह धो डालनी चाहिए। हिन्दू को भी हम कहते हैं कि अपने धर्म में पूरा रह। हम ऐसा कहते हैं कि यह नाम के लिये नहीं है – कोई हिन्दू बन गया, कोई मुसलमान बन गया पर अपने कर्म धर्म में पूरा नहीं रहा कोई भी। बात समझ में आ गई उनके। कहने लगे नानक! हमें ऐसा लगा आपकी बताचीत से कि तुम दोनों को ही एक नज़र से देखते हो। तुम्हारे मन के अन्दर मामूली सा भी द्वैत इस्लाम वालों के प्रति नहीं है और चलो आज नमाज़ पढ़नी है। हमारे साथ नमाज़ पढ़ लो। महाराज कहते हैं हम तो हर वक्त नमाज़ पढ़ते हैं। चलो यदि तुम्हारा मन राज़ी हो जाये, हम वहाँ भी चल पड़ते हैं। सत्पुरुषों को कोई फर्क नहीं पड़ता वह तो कोई न कोई शिक्षा देने के लिये जाया करते हैं।

नमाज़ के समय जब लाईन में खड़े हो गये तो गुरू नानक आधा कलमा बोलने के बाद चुप करके बैठ गये। नमाज़ पढ़ी गई। उसके बाद काज़ी ने नवाब को कहा, देखो! नानक जी नमाज़ पढ़ने आए लेकिन इसने पढ़ी नहीं। नवाब ने कहा, नानक जी! आप नमाज़ पढ़ने आए थे, नमाज़ नहीं पढ़ी? महाराज कहते हैं कि आपने नहीं पढ़ी, हमने तो पढ़ ली। वह बड़ी हैरानी में कहते हैं हम तो नमाज़ पढ़ते रहे हैं।

महाराज कहते हैं इसमें हैरान होने वाली कोई बात नहीं है जब आधा कलमा पढ़ा तो तुम दोनों हाज़िर थे – ''इल इल ला'' कहने तक, पर ''ला इल इल ला'' कहने से पहले दोनों चले गये थे। तू तो चला गया कन्धार घोड़े खरीदने के लिये, अब आया है वापिस। सुनते ही नवाब ने

मुँह में उगलीं डाल ली, ''तौबा, तौबा सुभान अल्लाह।'' हैं! नानक तो हमारे दिल की बातें भी जानता है? बता दिया गुरू नानक ने कुवैत के घोड़े इतने हैं, सफेद घोड़े इतने हैं; सो तू तो घोड़े खरीदता फिर रहा था। कहते हैं, ''हे नानक! तुझे सब कुछ दिखाई दे गया।'' काज़ी कहता है 'मैं'..........? महाराज कहते हैं ''तू तो बछेरी को घेरता फिर रहा था। घोड़ी ने बछेरी को जन्म दिया था, घर में एक कुंई थी, तू तो मेंड़ पर खड़ा था। नमाज़ कब पढ़ी है तुमने।''

उस समय गुरू नानक साहिब जी को पूछा कि हमारी नमाज़ कज़ा (विघन पड़ जाना) हो जाती है, लेखे में नहीं आती। महाराज कहते हैं बात सुनो। नमाज़, पाठ, गायत्री आदि कुछ भी कह लो ये लेखे में तब लगती हैं, यदि मन हजूरी में रहो। यदि मन हजूरी में नहीं, छलांगे लगाता फिरता हो, उसे तुम कैसे नमाज़ कह सकते हो? यह तो बे-अदबी है बल्कि। नमाज़ अदा करते समय पहले तो तुम महा शक्ति का अनुभव अन्दर लाओ कि वह घट-घट में बसती है -

***पेखत सुनत सदा है संगे मै मूरख जानिआ दूरी रे॥*** *पृष्ठ - 612*

***सो अंतरि सो बाहरि अनंत। घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत॥***
*पृष्ठ - 293*

पहले तो यह समझो कि मेरे अन्दर भी वही है और बाहर भी वही है-

***अंतरि बसे बाहरि भी ओही।*** *पृष्ठ - 294*

मेरी एक एक बात को जानता है, देखता भी है, सुनता भी है -

***जह जह पेखउ तह हजूर दूर कतहु न जाई॥*** *पृष्ठ - 682*

जब तुम्हारे अन्दर यह विश्वास हो गया, क्या फिर तुम उस महाशक्ति का निरादर करोगे? मामूली सी बात है कि कोई अफसर बैठा हो, वह कोई भाषण देना चाहता हो और वहाँ पर कोई उछलता कूदता रहे तो क्या उसका निरादर नहीं होगा? कोई महापुरुष बैठा हो प्रवचन हो रहे हों और वहाँ कोई छलांग लगाकर इधर हो रहा हो, कोई उधर कूद रहा हो तो यह उसकी बे-अदबी हुआ करती है क्योंकि उसकी हजूरी का सम्मान नहीं किया गया।

हज़रत मोहम्मद साहिब के जो दूधिया (सगे) भाई थे, वे जब बन्दगी करते थे तो कांपा करते थे। एक बार मुरीदों ने पूछा कि हज़रत साहिब! यह बात हमारी समझ में नहीं आई कि आप जब बन्दगी करते हो, मरकबे में जाते हो। आपका शरीर क्यों कांपता है? कहने लगे प्यारे! उस समय मैं खुदा की हजूरी में होता हूँ लेकिन मुझे डर रहता है कि

मेरा मन कहीं बे-अदबी न कर बैठे। वहाँ बैठा बैठा कहीं संसार की बातें न सोचने लग जाये, किसी का बुरा न सोचने लग जाये, किसी स्त्री की तरफ ध्यान न चला जाये। ऐसे ही किसी स्त्री का गैर-मनुष्य की ओर ध्यान न चला जाये, किसी को मारने की योजना मैं न सोच बैठूं। फिर अल्लाह ताला की दरगाह में बैठकर यदि मैंने ऐसा किया उसे तो पता है सारी बातों का। इसलिये मैं डरता और कांपता रहता हूँ क्योंकि हजूरी में बैठा होता हूँ।

सो महाराज कहते हैं हजूरी का नाम जपना चाहिये। नमाज़ पढ़ते हुये उस महाशक्ति को, उस नूर को जिसने सारे संसार की रचना की है अपने अन्दर बाहर चौगिर्दे अनुभव करो -

*जिमी जमान के बिखै समसत एक जोत है॥*
*न घाट है न बाढ है न घाट बाढ होत है॥* *अकाल उस्तति*

वह तो चौगिर्दे अन्दर बाहर सभी जगह ही है। कोई जगह ऐसी नहीं जहाँ वह नहीं है। ऐसा अनुभव करके जब हम पाठ करेंगे, वह हमारा हजूरी का पाठ होगा।

दुनियां का भी यदि कोई काम करना है - बच्चे आते हैं हमारे पास, आकर बताते हैं कि हमें याद नहीं होता। उन्हें बताते हैं कि इसमें कई बातें होती हैं। एक तो तुम ब्रह्मचर्य पालन नहीं करते। दूसरा तुम पूरी तरह ध्यान नहीं देते पढ़ाई में। किताब तब उठाओ हाथ में, जब ध्यान पूरा हो। यदि ध्यान पूरा नहीं है तो रख दो किताब को, कोई ज़रूरत नहीं, लाभ नहीं हुआ करता उस पढ़ाई का। उबासियाँ लेते हों रख दो किताब क्योंकि अन्दर नहीं जाना एक भी अक्षर। ध्यान दो, attention दो; तरीका बता देते हैं उन्हें। याद का तरीका है कि brain (दिमाग) को कैसे शुरू करते हैं, किस प्रकार पढ़ाई अन्दर बिठाई जाती है, युक्ति बता दी जाती है फिर कहते हैं जी, अब याद होने लग गया। पहले क्यों नहीं होता था क्योंकि मन का पता नहीं चला था।

इसी तरह से कोई सांसारिक कार्य है, एक स्त्री सुई में धागा डालती है। यदि उस समय उसके मन में कोई फुरना हो कभी भी धागा नहीं डलेगा सूई में। गोली चलाता है सिपाही, टारगैट सामने है, गुलजरी में उसने निशाना साधना है। उसने सांस रोक लिया पूरा ध्यान वहीं पर केन्द्रित कर लिया। अब या तो उसके सामने नुकता है या सामने गुलजरी है दोनों को एक ही लाईन में करके ध्यान एक हो गया फिर घोड़ा दबा दिया तो गोली सीधी ही गुलजरी में जाकर लगती है। उस समय वह कोई फुरना

करके देख ले कभी भी गोली निशाने पर नहीं लगेगी। outer target (गुलजरी के बाहर) लगेगी गोली।

सो महाराज कहते हैं कोई भी काम है संसार का यदि मन साथ नहीं देता तो वह कभी भी पूरा नहीं हो सकता। दफतर में बैठा, फाईल पढ़ रहा है, पढ़ता है पर याद नहीं रहता क्योंकि मन भागा फिरता है। महाराज कहते हैं सारा ही काम मन का है। जब तक मन साथ नहीं देता, बात नहीं बनती -

*धारना - ममा मन सिउ काज है मन साधे सिध होए - 2, 2*
*मन साधे सिध होए, मन साधे सिध होए - 2, 2*
*ममा मन सिउ काज है,................।*

*ममा मन सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ।*
*मन ही मन सिउ कहै कबीरा मन सा मिलिआ न कोइ॥*

*पृष्ठ - 342*

यदि यह मन मित्र बन जाये फिर तो यह परमात्मा से मिला देता है। यदि वैरी बन जाए तो खाक में मिला देता है। सो भाई! समझौता मन से करना पड़ता है। जब तक मन नहीं मानता बात नहीं बनेगी और जब मन मान गया फिर उच्च से उच्च अवस्था प्राप्त हो जाती है -

*धारना - पावहि मोख दुआर, जे मन मंन जाए, जे मन मंन जाए- 2*

यदि मन मान जाये गुरू के वचनों के साथ -

*मंनै पावहि मोखु दुआरु। मंनै परवारै साधारु॥*
*मंनै तरै तारे गुरु सिख। मंनै नानक भवहि न भिख॥*
*ऐसा नामु निरंजनु होइ। जे को मंनि जाणै मनि कोइ॥ पृष्ठ - 3*

कहते हैं -

*संत संगि अंतरि प्रभु डीठा। नामु प्रभू का लागा मीठा।*
*सगल समिग्री एकसु घट माहि। अनिक रंग नाना द्रिसटाहि।*
*नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु। देही महि इस का बिस्रामु।*
*सुंन समाधि अनहत तह नाद। कहनु न जाई अचरज बिसमाद।*

*पृष्ठ - 293*

सन्तों ने अन्दर परमात्मा दिखा दिया। यदि फिर मन मान जाए गुरू के वचनों को कि मेरे अन्दर परमेश्वर रहता है पर देखा नहीं। चलो, देखना तो और बात है पहले तो मानना है पर यह नहीं मानता भूला ही रहता है, हर समय। यदि मानता हो, कभी नहीं गलती करता। गलती करता ही तभी है जब भूल जाता है पाठ को। सो पहले मन के साथ काम है, इसे मनाना पड़ता है।

यह मन मानता क्यों नहीं है? महाराज कहते हैं, दूसरी शक्ति यहाँ परमेश्वर की माया है वह बहुत प्रबल है। पाँच कलेश हर समय आदमी के अन्दर रहते हैं चाहे जैसा भी आदमी हो। जिसे ज्ञान नहीं है, उसका मन तो पाँच कलेशों के अन्दर रिड़कता जा रहा है। ध्यान से सुनो पाँच कलेश कौन से हैं। सियाने लोगों ने बहुत कुछ research खोज की है psychologically (मनोवैज्ञानिक आधार पर)

पहला कलेश **'अविद्या'** (ingnorance) का है। अविद्या यह हुआ करती है कि जो असली चीज़ है, वह तो दिखाई देती नहीं, नकली चीज़ देखे जाते हैं हम। नकली तो कोई भी नहीं देखना चाहता। हर आदमी असली चीज़ देखने की कोशिश करता है; कोई देखता है नकली?

मान लो अन्धेरा हो गया है और आंगन में या बरामदे में रस्सी गिर जाये किसी से। रस्सी का स्वभाव है सीधी नहीं गिरती कभी भी टेढ़े मेढ़े बल खाये हुए होते हैं। रस्सी पड़ी है जब एकदम अन्धेरे में से बाहर निकलो, थोड़ी सी ही नज़र आती है अन्धेरा होने के कारण हम एक दम चौंक पड़ते हैं, आवाज़ भी नहीं निकलती, दौड़कर अन्दर आ जाते हैं। यदि साथ का पूछे क्या है? तो कहेगा धीरे धीरे बोल, साँप पड़ा है दरवाज़े के सामने। वह कहता है मैं टार्च लाता हूँ। कहता है रहने दो, अपने आप चला जायेगा। कहीं अन्दर न घुस आये - डरते हैं। वह कहता है, साँप कौन सा एक जगह रहता है, ये तो चलते फिरते रहते हैं। सुबह हो गई। एक कहता है सांप चला गया होगा, देख तो दरवाज़ा खोलकर, कहीं वहीं पर ही न पड़ा हो। दूसरा देखकर कहता है आ जाओ, आ जाओ, बहुत बड़ा भ्रम पड़ा हमें। यह तो रस्सी पड़ी थी, इसी ने ही डराये रखा सारी रात। सो इस प्रकार नकली चीज़ देख ली -

*माधवे किआ कहीऐ भ्रमु ऐसा। जैसा मानीऐ होइ न तैसा॥*

*पृष्ठ - 657*

हम असली चीज़ नहीं देखते। है तो यहाँ केवल वाहिगुरू। पर हम देखते हैं अपने-बेगाने, दोस्त-मित्र, दुश्मन; यह पाकिस्तानी है, यह हिन्दुस्तानी है, फलाणा है क्योंकि अज्ञान द्वारा मोहित है परमेश्वर नहीं देखते। महाराज कहते हैं यहाँ तो है ही परमेश्वर -

*ऐ नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी*
*हरि बिनु अवरु न देखहु कोई।*
*हरि बिनु अवरु न देखहु कोई नदरी हरि निहालिआ।*
*एहु विसु संसारु तुम देखदे एहु हरि का रूपु है*
*हरि रूपु नदरी आइआ॥* *पृष्ठ - 922*

कहते हैं, बड़ी हैरानी की बात है, पहले इसको संसार देखते थे।

राजा जनक को अष्टावक्र मुनि ने जब ज्ञान दे दिया तो उसके मुख से जब वचन निकले तो राजा कहता है, हैरानी की बात है, संसार कहाँ चला गया? मुझे ऐसा लगता है कि संसार तीनों कालों में हुआ ही नहीं। खरगोश के सीगों वाली बात हो गई। न खरगोश के सींग हों, ऐसे ही भ्रमित होकर कहे जाता है - खरगोश के सींग हैं।

एक न होने वाली वस्तु को होने वाली मान लेता है। यह अनहुई जब मन में बस जाये तो हुई वस्तु जो 'वाहिगुरू' है उसे भुला देती है। सुबह के समय सिप्पी चमक रही है, चाँद की चाँदनी में। आदमी देखता है, मन में लालच आ जाता है कि यह तो चांदी पड़ी है। दिन निकल आता है देखता है कि वह तो सिप्पी चमक मार रही थी, भ्रम हो गया चाँदी का। इस प्रकार बहुत भारी भ्रम पड़ा हुआ है आदमी को कि यह संसार है, पर है वह परमेश्वर। ज्ञान ध्यान कुछ भी किये जाओ, आदमी नहीं बदलता क्योंकि अविद्या जिसे माया कहते हैं इतनी बड़ी शक्ति है जिसका काम ही यही है कि परमेश्वर को भुलाकर रखना, नाम को भुला देना -

*धारना - बिसरिओ गोबिंद नाम मन मोह लिआ माइआ मोहणी ने 2*
*मोह लिआ माइआ मोहणी ने,*
*मोह लिआ माइआ मोहणी ने -2, 2*
*बिसरिओ गोबिंद नाम,......................।*

***मनु माइआ मै फधि रहिओ बिसरिओ गोबिंद नाम।***
***कहु नानक बिनु हरि भजन जीवन कउने काम॥*** *पृष्ठ - 1427*

महाराज बताते हैं कि माया परमेश्वर ने तुझे गुज़ारा करने के लिये दी थी औरत ईमान के लिए दी थी। भूलने के लिये तो नहीं दी थी कि दाता को भी भूल जाना। दी हुई चीज़ के साथ प्यार गाँठ लिया।

*दाति पिआरी विसरिआ दातारा।* *पृष्ठ - 676*

***'मन माइआ मै फधि रहिओ बिसरिओ गोबिंदु नामु। कहु नानक बिनु हरि भजन जीवन कउने काम।'*** तेरे जीने का क्या लाभ? यह तो उलट बात हो गई कि तुझे माया मिल गई और परमात्मा को भूल गया।

सो गुरू नानक साहिब कहते हैं ''राजा शिवनाभ! ऐसे बात समझने की ज़रूरत है। पहले जब तू base (आधार) अच्छी तरह समझ लेगा फिर मन की बात तेरे साथ की जायेगी मन कैसे देखना है। पहले, मूल बातें समझ। जब तक पूरी तरह बात समझ में न आये, बात नहीं बना करती?''

जहाज़ बहुत बड़ा होता है, पूरा शहर एक जहाज में समा जाता है पर वह तभी चलता है समुद्र में, यदि उसमें कोई छिद्र न हो। यदि एक भी छिद्र हो तो उसमें से पानी अन्दर आना शुरू हो जायेगा और डुबो देगा जहाज को। पहले छिद्र बन्द करो, अलग कर दो सभी जितनी भी कमज़ोरियां हैं। इस प्रकार मन के साथ पहला वासता पड़ता है हमारा। उसकी वज़ह से हमें पहले अविद्या का दोष लगता है और वाहिगुरू की जगह अच्छा बुरा, यह दुनियाँ जो दिखाई देती है, इसे अविद्या कहते हैं।

दूसरा कलेश होता है '**अस्मिता**'। अस्मिता यह हुआ करती है कि परमात्मा के साथ प्यार न करना और जो चीज़ें आती रहती हैं, उन्हें स्थायी समझना। अपनी कोठी को समझना कि यह कहीं नहीं जाती; ज़मीन को कहना कहीं नहीं जाती, कारोबार को, बेटी, बेटियों को, रिश्तेदारों को, अपने शरीर को समझना कि यह तो कहीं नहीं जाता। हंगता धारण किये रहना 'मैं' हूँ 'मेरा' है; यह 'मैं' और 'मेरा' चित्त में रहना अस्मिता का क्लेश कहलाता है। सभी के अन्दर होता है यह।

गुरू नानक पातशाह जब झन्डे बाढी के पास गये। उस समय इन्द्र सैन उसका संगी साथी था, दोनों इकट्ठे भजन किया करते थे। जब भोजन लेकर गये महाराज के पास तो पहला सवाल उन्होंने यह किया ''पातशाह! बहुत समय हो गया, हमने बहुत साधन करके देख लिए, बड़ी बड़ी यौगिक क्रियाएं भी की हैं पर हमें ज्ञान साक्षात्कार नहीं होता, अन्दर से प्रत्यक्ष नहीं होता, अनुभव नहीं होता, जो बातें पुस्तकों में लिखी हुई सुनते हैं, कृपा करके बताओ।'' महाराज कहने लगे -

''दक्षिणा दो पहले हमें।''

''महाराज! आप ही फरमाओ। जितनी माया कहो, हम दक्षिणा देने को तैयार हैं।''

''माया वगैरा नहीं चाहिए हमें।''

''और जो वस्तु कहो, वस्त्रादि पेश कर दें।''

''न भाई! जो असली चीज़ है तुम्हारे पास, तुम्हारे से कभी अलग नहीं होती वह हमें दो।''

सुनकर हैरान हो जाते हैं कि ऐसी कौन सी चीज़ है हमारे पास जो कभी अलग नहीं होती।

थोड़ा थोड़ा ज्ञान हुआ कि यह शरीर है पर यह भी आगे चलकर साथ नहीं देता, अलग हो जाता है। आखिर हृदय के अन्दर खोजना शुरू कर दिया। भजन बन्दगी किया करते थे। सो कहते हैं 'शरीर' भी मैं नहीं

हूँ। इसके पाँच तत्वों में से भी नहीं हूँ पाँच कर्मेन्द्रियों में से पाँच ज्ञान्द्रियों में से पाँच प्राणों में से भी मैं नहीं हूँ फिर मन, बुद्धि, चित्त, इनमें से तो मैं कोई भी नहीं हूँ। ''महाराज! आप ही बताओ ये चीज़े जो हमारे साथ रहती ही नहीं, छोड़ कर चले जाते हैं। मन भी एक जैसा नहीं रहता, बुद्धि तथा चित्त भी एक जैसा नहीं रहता। पातशाह! कृपा करके हमें समझाओ कि हमारे पास कौन सी चीज़ है जो मरने के बाद भी हमारे साथ जाती है।''

महाराज कहते हैं, ''भाई! वह 'हंगता' और 'ममता' है। एक 'मैं' नहीं मरती और एक 'मेरी' नहीं मरती। ये मनुष्य के साथ रहती है। 'मेरी' वासना बनाती है और 'मैं' जन्म मरण में लाकर खड़ा कर देती है कि 'मैं' जीव हूँ। यह जीवपना तो दे दो हमें फिर बाकी क्या बचा?'' कहते हैं ''बाकी आत्मा रह गई।'' इतनी ही बात कही उसी समय दोनों की समाधि लग गई। एक पहर बैठे रहे, सुरत चढ़ गई, आत्मा साक्षात हो गई। सो इस प्रकार 'हंगता' और 'ममता' दोनों चीजें क्लेश हैं। इस क्लेश को अस्मिता कहते हैं।

तीसरा क्लेश हुआ करता है '**अभिनिवेश**'। गुरू ग्रन्थ साहिब हमें उपदेश देते हैं कि ऐसे काम कर, वैसे मत कर, उलटे काम मत कर। महाराज कहते हैं कि यह बात मान ले वाहिगुरू सभी जगह परिपूर्ण है, यह जग वाहिगुरू का रूप है। इस पर श्रद्धा न लाना, गुरू ग्रन्थ साहिब जी की बात को सत्य न मानना और अपनी अकल को ही सत्य माने जाना; यह तीसरा क्लेश है जो आदमी के मन में से निकलता नहीं कभी भी। न करने लायक कामों में तो मन लगाना, हठ करना, ऐसे वचन कहना या ऐसी सोच रखना जो गुरू ग्रन्थ साहिब के उलट है। इसे मनमति कहते हैं। फिर मौत से डरना कि मैं मर जाऊँगा। महाराज कहते हैं –

***मरणहारु इहु जीअरा नाही॥*** ***पृष्ठ - 188***

तू तो मरता ही नहीं कभी। ऐसे शरीर तुझे करोड़ों बार मिले हैं, करोड़ों बार मिलेंगे जब तक तेरे अन्दर से हंगता और ममता नहीं निकलती क्योंकि यही हंगता और ममता ही है जो इसे बार बार जन्म मरण के चक्कर लगवाती है –

***धारना - जंमदा ते मरदा है, हउमै दा बंनिआ होइआ - 2, 2***
***हउमै दा बंनिआ होइआ, हउमै दा बंनिआ होइआ - 2***
***जंमदा ते मरदा है....................।***

***हउमै एहा जाति है हउमै करम कमाहि।***
***हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाहि।*** ***पृष्ठ - 466***

कहते हैं, यह जो चीज़ है जब तक आदमी के मन से नहीं निकलती,

जन्म मरण समाप्त नहीं होता। इसलिए हंगता और ममता को दान कर दे तू - गुरू को। तन, मन, धनः गुरू को हमारे तन की आवश्यकता नहीं, मन की ज़रूरत नहीं, धन की ज़रूरत नहीं, वह तो कहते हैं कि हंगता और ममता दे दे - 'मैं' और 'मेरी'। इससे क्या हो जाता है? इसके अन्दर रहने से कोई अपना और कोई बेगाना दिखाई देने लग जाता है, द्वैत आ जाती है। ये राग तथा द्वैष के क्लेश हैं।

सो राजन! ये पाँच कलेश आदमी के मन को हर समय रिड़कते रहते हैं जैसे मधानी चलती हो। आदमी का मन कैसे शान्त हो जाये? यहीं पर ही खत्म नहीं होता; पर्तें की पर्तें अन्दर जम जाती हैं। एक दो, चार, पर्तें नहीं, इतनी पर्तें लग जाती हैं कि अन्दर रहने वाला निरंकार अदृश्य रहता है -

***धन पिर का इक ही संगि वासा विचि हउमै भीति करारी।***

*पृष्ठ - 1263*

करारी दीवारें बना देती हैं ये परमात्मा तथा हमारे बीच। वह दीवार जो है पापों की मैल की है -

***जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी काला होआ सिआहु॥***

*पृष्ठ - 651*

उस मैल से यह मन काला कलूटा हो गया है यानि इतना काला हो गया कि काला रंग भी उसके सामने फीका पड़ जाता है। सभी का, मेरा भी तथा औरों का भी। मन उसका काला नहीं है जिसके अन्दर परमेश्वर की ज्योति साक्षात्कार हो गई।

साध संगत जी! ये केवल बातें ही नहीं हैं अन्दर ज्योति का प्रकाश होता है। जिसके अन्दर हो गया, महाराज ने इनकी निशानियाँ लिखीं हैं-

***नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु। देही महि इस का बिस्रामु।***
***सुंन समाधि अनहत तह नाद। कहनु न जाई अचरज बिसमाद॥***

*पृष्ठ - 293*

वहाँ फुरना (विचार) ही कोई नहीं है और वाहिगुरू की दरगाह के नाद अपने आप ही बजने लग जाते है स्वंयमेव ही, फिर समझ ले कि मैं पहुँच गया सुन्न मण्डल में। वहाँ ऐसा विस्माद है कि वर्णन नहीं किया जा सकता -

***तितु घट अंतरि चानणा करि भगति मिलीजै।*** *पृष्ठ - 954*

***नामु जपत कोटि सूर उजारा बिनसै भरमु अंधेरा॥*** *पृष्ठ - 700*

महाराज कहते हैं कि करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाश हो जाता है। वह प्रकाश तो है ही हमारे अन्दर पर इस मैल ने उसे ढक लिया है। ***'जनम***

*जनम की इसु मन कउ मल लागी'* राग की, द्वैष की, अविद्या की, अस्मिता की, अभिनिवेश की मैल लगी हुई है। अर्न्तात्मा में लगती ही चली जाती है 'काला होआ सिआहु।' और कोल्हू का चिथड़ा हुआ कपड़ा बन गया–

*खंनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु॥ पृष्ठ - 651*

कहते हैं, महाराज! कोई तरीका भी है? हाँ, है, तरीका यह है कि हंगता और ममता गुरू के चरणों में रख दे। इसे कहते हैं 'ज़िन्दा मरना'; जब अपना कुछ न रहा, सब कुछ गुरू का हो गया फिर मनमति छोड़ दो गुरू मति धारण कर लो, समझो हम जीवित ही मर गये क्योंकि 'मैं' तथा 'मेरी' गुरू के चरणों में रख दी। प्रार्थना कर दो कि महाराज! यह फालतू सी चीज़ 'मैं' तथा 'मेरी' को आप सम्भालो। मैंने तो समझा था कि यह बहुत अच्छी चीज़ है। जब ऐसा हो गया फिर गुरू की कृपा हो जाती है फिर -

*गुरपरसादी जीवतु मरै उलटी होवै मति बदलाहु॥ पृष्ठ - 651*

जीवित मर कर फिर गुरू के घर में जीता है फिर पहली मति नहीं रहती उलटी होकर गुरू मति बन जाती है -

*कहि कबीर बुधि हरि लई मेरी बुधि बदली सिधि पाई॥*

*पृष्ठ - 339*

बुद्धि बदल गई और सिद्धि प्राप्त हो गई, सच्ची बुद्धि मिल गई, उनमनी में मन चला गया -

*नानक मैलु न लगई ना फिरि जोनी पाहु॥ पृष्ठ - 651*

फिर मन को मैल लगनी ही नहीं क्योंकि वह मैल प्रूफ है। 'मैं' और 'मेरी' में ही मैल है।

इस प्रकार महाराज जी ने जब बताया कि यह तरीका है, हैरान होकर राजा कहने लगा, ''सच्चे पातशाह! बात बहुत लम्बी चौड़ी है, मुझे तो समझ में नहीं आई बिल्कुल भी। मुझे आप बच्चे की तरह धीरे धीरे सिखाओ एक एक डण्डे पर। आपने सिरे की बात तो कह दी पर सीढ़ी बहुत फिसलनदार है। इसके ऊपर चढ़ूँ कैसे मुझे कोई तरीका बताओ -

*धारना - दस्सीं साहिबा, किवें रोकां मन आपणा - 2, 2*
*रोकां मन आपणा, किवें रोकां मन आपणा - 2, 2*
*दस्सीं साहिबा किवें....................।*

पातशाह! बहुत कठिन मार्ग है, सुनकर तो मन नहीं मानता -

*माई मनु मेरो बसि नाहि।*
*निसबासुर बिखिअन कउ धावत किहि बिधि रोकउ ताहि॥*

*पृष्ठ - 632*

बता कैसे रोकें? मन विषयों की ओर भागता है, देखने लायक चीज़ों की ओर भागता है –

*बेद पुरान सिम्रिति के मति सुनि निमक न हीए बसावै।*

*पृष्ठ - 633*

पलक झपकने में लगे समय के बराबर भी हृदय में नहीं बसाता। जो सुरत की बात हो वह ही रहती है, दूसरी बात तो अन्दर जाने ही नहीं देता –

*परधन परदारा सिउ रचिओ बिरथा जनमु सिरावै॥*
*मदि माइआ कै भइओ बावरो....................।* *पृष्ठ - 633*

माया के नशे में पागल हो गया, बौरा हो गया। कहते हैं –

*.............सूझत नह कछु गिआना।* *पृष्ठ - 633*

जितना मर्जी कहे जाओ, समझ में नहीं आती। और बातें सभी समझ जाता है; पैसे की बात कर लो, एक मिनट में समझ जायेगा; वैर विरोध की कर लो, सैकिन्डों में समझ जायेगा। जब असली बात करो उस समय नहीं समझता। कहते हैं –

*घट ही भीतरि बसत निरंजनु ताको मरमु न जाना॥* *पृष्ठ - 633*

जो वाहिगुरू अन्दर रहता है उसकी कोई खबर नहीं है इसे। सारी सृष्टि का मालिक इस छोटे से शरीर में रहता है थोड़ी सी जगह में एक हाथ जितनी जगह में रहता है। उसका भेद इस मनुष्य को नहीं मिलता–

*जब ही सरनि साध की आइओ दुरमति सगल बिनासी।*

*पृष्ठ - 633*

महाराज कहते हैं, तरीका यही है कि जब भी साधु की शरण में आ जायेगा, पूरे गुरू की शरण में आ जायेगा उस समय तेरे हृदय में जो 'मैं' है उसका विनाश हो जायेगा?

*तब नानक चेतिओ चिंतामनि काटी जन की फासी॥* *पृष्ठ - 633*

फिर यमों की फांसी कट गई। कहने लगा, ''महाराज! मुझे आप ऐसे समझ लो कि मैं एक अनजान बच्चा हूँ, मुझे जैसे बच्चों को अ आ........पढ़ाते हैं, ऐसे पढ़ा दो पातशाह।'' महाराज कहते हैं ''कोई बात नहीं हमारा काम यही है कि संसार में 'नाम' की आवाज़ लगानी और संसार को सुखी करना। देख राजन! दो रास्ते हैं जहाँ की तू बात करता हैं, दो रास्ते जाते हैं फिर इन दोनों रास्तों के.......पहले रास्ते के 30-32 डण्डे हैं, सीढ़ी के 32 डण्डे हैं। ये यदि तू ध्यान से सुनकर चित्त में बसा ले और एक एक डण्डे पर पैर रखता हुआ चढ़ता जाये तो तू पहुँच जायेगा। जो दूसरा रास्ता

है उसके 20 डण्डे हैं वह आसान हैं। पहला थोड़ा सा मुश्किल है पर इसमें प्रैक्टिकल होता चला जाता है, दूसरे में प्रैक्टिकल कम आते हैं। पहले में मन भागता है।''

दोनों रास्ते गुरबाणी में महाराज ने बहुत विस्तार पूर्वक बताए हुए हैं। पढ़ते हैं, सुनते हैं, अखंड पाठ करवाते हैं; कभी सोचा है, रास्ता कौन सा है जो जाता है?'' secret path (गुप्त मार्ग) विस्तार से बताया है किस प्रकार वाहिगुरू के देश जाना है, आत्म मार्ग, आत्मा को जाने वाला रास्ता, वहाँ से आत्मा से परमात्मा को जाने वाला यह रास्ता सारा गुरू ग्रन्थ साहिब में है। इसलिये समरथ गुरू है - गुरू ग्रन्थ साहिब; कोई भ्रम नहीं पड़ता इसमें। सो महाराज कहते हैं समझने का यत्न कर। दोनों रास्ते हैं -

***मन कौ रोकन निरमल करनो॥ पृष्ठ - 107 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)***

इसे रोक कर निर्मल किया जाता है, दौड़ते हुए, भागते हुए को निर्मल नहीं कर सकता -

***यही उपाइ कलेसन हरनो॥ पृष्ठ - 107 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)***

जो पाँच क्लेश बताए हैं, उनके ये उपाय हैं; यदि ये उपाय कर लो तो ये क्लेश दूर हो जाते हैं। इन्हें समझने का यत्न करो। प्रार्थना की, ''पातशाह! मुझे दोनों रास्ते बता दो, मैं दोनों रास्ते जानना चाहता हूँ।''

***तांकी जानहु हैं बिध दोऊ। बेद संत पुन भाखत जोऊ॥***
***पृष्ठ - 107 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)***

''जो सन्त कहते हैं, धर्म ग्रन्थ कहते हैं, मुझे दोनों रास्ते बता दो।''

***जो होवै तुझ पास सुखारो। सो करियो नीके निरधारो॥***
***पृष्ठ - 107 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)***

जो आसान रास्ता दिखाई देता है वह अपना ले, महाराज कहते हैं ''तुझे हम दोनों रास्ते बता देते हैं। जो पहला रास्ता है, उसे कष्ट योग कहते हैं। यह थोड़ी सी मेहनत करने से प्राप्त होता है, परिश्रम करना पड़ता है, मन को रोकना पड़ता है, उसे तो कहते हैं कष्ट योग। दूसरे को कहते हैं 'भक्ति योग'। अब तू दोनों रास्ते सुन ले, जो तूने अपनाना हो, अपना ले -

***कशट जोग इक भगति जोग सुनि।***
***इन दोनों ते ह्वै निरमल तन॥ पृष्ठ - 107 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)***

इन दोनों से ही मन निर्मल हो जाता है, दोनों रास्ते परमेश्वर से मिला देते हैं। पहले हम तुझे थोड़ा सा परिश्रम वाला रास्ता बताते हैं तू ध्यान से सुन। कहते हैं, उसका नाम है 'कष्ट योग'।

***प्रथम कशट जो जोग बखाना। अशट अंग तांके सुनि काना।***
***पृष्ठ - 107 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)***

और दूसरा इसके आठ अंग होते हैं। आठ अंगों को ध्यान से सुन। वे रहतें (नियम) होते हैं। जब तक रहतें नहीं अपनायेगा तब तक पहले डण्डे से दूसरे डण्डे पर पैर नहीं रखा जा सकेगा। रहत पूरी रखनी पड़ती है हर डण्डे पर पैर रखने तक, नहीं तो फड़फड़ा कर नीचे गिर जायेगा। ध्यान से सुन, रहतें अपनानी पड़ेगी जो हम वचन करते हैं। सो कहने लगे कि आठ अंग हैं इसके और आठों अंगों के अन्दर बहुत सारी हिदायतें हैं।

पहली को '**यम**' कहते हैं दूसरे को '**नेम**' कहते हैं तीसरे को '**आसन**' कहते हैं, चौथे को '**प्राणायाम**' कहते हैं, पांचवे को '**प्रतिहार**', छठे को '**धारना**' साँतवें को '**ध्यान**' और आँठवे को समाधि माना गया है। इन आठों के साथ तू परमेश्वर तक पहुँच जायेगा –

*अमृत जानों नाम समाध। पाइ परमपद इनको साध।*

*पृष्ठ - 107 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)*

जो इन्हें साध लेगा, वाहिगुरू उसके अन्दर प्रकट हो जायेगा। बड़े सुन्दर महाराज ने वचन बताए हैं, सारे लिखे हुये हैं। कथा भी होती है इनकी ग्रन्थों में, लिखे पड़े हैं सारे। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब में वैसे के वैसे जैसे महाराज जी ने उसे उपदेश दिया था बिल्कुल उसी तरह लिखे पड़े हैं कोई मनोकल्पित बातें नहीं हैं। सो यह जिसे शौक है, जानना चाहता है, चढ़ना चाहता है वे इसे साध लो। जो पहला बताया है 'यम' यह दस प्रकार का हुआ करता है।

राजा कहने लगा, ''महाराज! कृपा करके बताओ दस किस्मों के बारे में।'' महाराज कहते हैं, ''नोट कर लो, हृदय में लिख लो, कापी पर लिखा हुआ भूल जाता है आदमी, हृदय में लिख ले '**........हिरदे ही लिख लेहु।**' कलम और दवात क्या मंगवानी है, हृदय में ही लिख ले, फिर नहीं सारी जिन्दगी भूलेगा। सो पहला जो है, उसका नाम है 'अहिंसा'। अहिंसा होती है किसी को दुखी न करना –

*एक अहिंसा जानीएं मन बच काइआं तीन॥*

*पृष्ठ - 107 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)*

कहते हैं तीन प्रकार की होती है अहिंसा। एक शारीरिक, एक मानसिक और एक वचनों की होती है।

मन की हिंसा हुआ करती है दूसरे का बुरा चितवना, बुरा ही सोचना, इसका बुरा हो जाये, उसका बुरा हो जाये, मज़ा आ जाये यदि उसका लड़का किसी केस में फंस जाये, खुश होते हैं। वे रोते हैं, इसके घर पकवान बनते हैं क्योंकि बुरा चितवता था। महाराज कहते हैं ''बुरा चितवना

जो है, यह मन की हिंसा है।'' हुक्म आता है गुरू ग्रन्थ साहिब में -

*पर का बुरा न राखहु चीत। तुम कउ दुख नही भाई मीत॥*

*पृष्ठ - 386*

यदि दुखों से बचना है दूसरे का बुरा मत सोच, मत देख ***'बुरा बिगाना चितवीऐ अपना ही हो जाइ।'*** पता नहीं वाहिगुरू का, किसी का बुरा सोचते सोचते अपना ही बुरा हो जाया करता है। मत चितव, दिल से कह ***'नानक नाम चड़दी कला, तेरे भाणे सरबत का भला।'*** दूसरे का बुरा बिल्कुल भी मत सोच।

दूसरी होती है 'जुबान से हिंसा' वह होती है कड़वा बोलना, फीका बोलना, उलहाने देना, तानें मारना। परिणाम कितना बुरा निकलता है, लड़ाई-झगड़ा-फसाद-दंगे। यह महाभारत देखते हैं न लोग, मामूली सी बात थी। यह बहुत बड़ी बात नहीं थी, यह हिंसा थी, जुबान की। पांडवों ने महल बनवाया था। वह इतना शानदार बनवाया कि पता नहीं लगता था कि पानी है या सूखा है फिर आगे चलकर यह पता नहीं चलता था कि दरवाज़ा है या दीवार है। दुर्योधन को बुलवाया। दुर्योधन जब पहुँचता है तो भ्रमित हो गया कि यह है तो पानी, पर फर्श सूखा है। उसने जब पैर रखा तो वहाँ पानी था। वह धड़ाम से उसमें गिर गया। द्रौपदी बैठी हुई देख रही थी, हंस पड़ी ताली बजाकर। उससे जब आगे बढ़ा तो दरवाज़े के स्थान पर दीवार से जाकर टक्कर लगी क्योंकि वह खुला हुआ दिखाई देता था, दरवाज़ा लगता था। उस समय उसने फीका बोला, कहती है ''अन्धे का बेटा अन्धा ही रहा।'' इसका पिता अन्धा था। यही बात चुभ गई उसे। वहीं पर ही प्रण कर लिया कि इस स्त्री को वस्त्र उतरवा कर...........। अपनी बेइज्जती समझी। प्रण कर लिया; इतना बुरा कर्म! अन्त जुआ खेला, जूए में वे हार गये -

*अंदरि सभा दुसासणै मथेवालि द्रोपती आँदी।*
*दूता नो फुरमाइआ नंगी करहु पंचाली बाँदी।*
*पंजे पांडो वेखदे अउघटि रुधी नारि जिना दी॥*

*भाई गुरदास जी, वार 10/8*

जब बस न चला -

*अखी मीट धिआनु धरि हाहा क्रिसन करै बिललाँदी।*
*कपड़ कोटु उसारिओनु थके दूत न पारि वसाँदी।*

*भाई गुरदास जी, वार 10/8*

परमेश्वर की शरण ले ली, कपड़ों के ढेर लग गये, नग्न न कर सके -

*हथ मरोड़नि सिरु धुणनि पछोतानि करनि जाहि जाँदी।*

*घरि आई ठाकुर मिले पैज रही बोले शरमाँदी।*
*नाथ अनाथाँ बाणि धुराँदी॥* *भाई गुरदास जी, वार 10/8*

यह जो है -

***फीका बोल दुखावै हीया।*** *पृष्ठ - 107 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)*

किसी का हृदय दुखा देना फीके वचन बोलकर -

***हिंसा बचनन की कहिलीया।*** *पृष्ठ - 107 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)*

उन्हें वचनों की हिंसा कहते हैं - गलत बात बोलना।

एक ज्योतिषि था। एक राजा को सपना आया। उसने सारा सपना बता दिया और कहने लगा ''अपना हिसाब किताब लगाओ कि इस सपने का क्या अर्थ है?'' उस समय वह ज्योतिषि अनजान था उसे पता तो चल गया लेकिन बात कहने का ढंग न आया। कहने लगा बादशाह सलामत! इस सपने का मतलब यह है कि तेरा बेटा भी तेरे सामने मरेगा, तेरी घर वाली भी, तेरा दूसरा पुत्र भी, सारा परिवार तेरे सामने मर जायेगा। राजा को गुस्सा आ गया कि इसे बोलने की भी तमीज़ नहीं है। कैद कर लिया। उस समय वज़ीर को पूछा ''वज़ीर साहिब! मुझे ऐसा सपना आया है। मुझे कृपा करके यह बात बताओ कि इसका क्या अर्थ हो सकता है?'' कहता है, धन्य हो हजूर, धन्य हो। वाहिगुरू ने आपको इतनी लम्बी आयु प्रदान की है, पुत्रों से, पत्नी से, पौत्रियों से, बहुत ही लम्बी आयु आपको प्रदान की है। प्रसन्न हो गया राजा। केवल बोलने का फर्क था।

सो महाराज कहते हैं बोलने का ध्यान रखो प्यारे -

***धारना - फिक्का बोल न ज़बान विचों बोलीए,***
***तन मन फिक्का हो जऊगा - 2, 2***

***नानक फिकै बोलिऐ तनु मनु फिका होइ।***
***फिको फिका सदीऐ फिके फिकी सोइ।***
***फिका दरगह सटीऐ मुहि थुका फिके पाइ।***
***फिका मूरखु आखीऐ पाणा लहै सजाइ॥*** *पृष्ठ - 473*

महाराज कहते हैं ''राजन! पहली हिंसा तो तब होती है जब दूसरों का बुरा सोचे (चितवै)। जो आदमी दूसरे का बुरा चितवता है, वह तीर्थ कर आये, दान करता रहे, सुबह उठकर नहाता रहे.....क्योंकि उसने पहला डण्डा ही नहीं सम्भाला, नाम कहाँ से चलेगा। बुरा करने वाले का बिल्कुल नाम नहीं चलता। जो बन्दगी करते हैं, पता है उन्हें। यदि मामूली सी भी बुराई किसी के अर्न्तात्मा में आ जाये, माफी मांगते हैं चरणों पर गिर कर कि मुझ से गलती हो गई मुझे माफ कर दो क्योंकि वह पार नहीं हो सकता,

वहीं पर ही टिक जायेगा, पहरेदार भी इतने कठोर हैं। हिंसा वाला पार नहीं हो सकता। दूसरा होता है, फीका बोलना। उसके दुष्परिणाम निकलते हैं, फीका बोलने के।

कोई आदमी नेत्रों से हीन हो जाये, उसे कह दो, ''हट परे अन्धे।'' चाहे वह अन्धा ही है पर गुस्सा बहुत आयेगा उसे। यदि उसे कह दो सूरमा सिंह जी, सूरदास जी, आप ज़रा सा इधर हट जाओ। वह खुश हो जायेगा क्योंकि बोलने में ही अन्तर है। लंगड़े को ऐसे कह दो, 'ओ लंगड़े..........।' यदि उसे सुचाला कह दो, सुचाला सिंह जी! ज़रा सा इधर भी दर्शन दे दो। नाम तो जानता नहीं, उसी समय आ जायेगा यदि कहे ओ लंगड़े...........। यह बोली में ही अन्तर है। सो महाराज कहते हैं बोली को शोध कर बोलो। रूहानी आदमी फीका नहीं बोला करता, वह हर कड़वी से कड़वी बात को भी मीठी बनाकर बोलता है, कैपसूल में रखकर - कड़वी भी यदि कहता है।

तीसरा होता है किसी के जीवन का अन्त कर देना। जितनी सृष्टि है यह सारी वाहिगुरू की साजी हुई है, इस पर हमारा अधिकार नहीं है। हमारा अधिकार बस इतना सा है कि पशुओं को चारा खिलाओ और उनसे काम ले लो। उन्हें मारना पीटना नहीं जैसे बैलों को भूखे रख कर परेशान करो, पानी मत पिलाओ भैंस को मारते चले जाओ, मूड़ी (पिछली टांगो को बान्ध कर) देकर दूध दोह लो। यदि तू आज ऐसी बातें करता है, कल किसी ने तेरे से भी लेखा मांगना है.......शक्ति बैठी है -

***कबीर जोरी कीए जुलमु है कहता नाउ हलालु॥*** *पृष्ठ - 1374*

काट काट कर खाता है। परमेश्वर की सृष्टि है। इस पर हमारा right (अधिकार) नहीं है कोई भी हक नहीं है। अधिकारी केवल वहाँ है जहाँ किसी वस्तु से हमें खतरा पैदा हो जाये - मनुष्य चोले को, वहाँ use (प्रयोग) करो उससे बचाने के लिए क्योंकि वह भी aggressive (विद्रोही) है। इस प्रकार इतनी हिंसा जायज़ है, बाकी नहीं है कि अपने स्वादों के लिए जिसका मन करे, काट कर खा ले। प्राचीन समय में मनुष्य को काट कर खा लिया करते थे। मनुष्य खूब उछला, बहुत रोया कि यह क्या बात है। किसी के काबू में आ गया काट कर खा जाते। फिर धीरे धीरे थोड़े थोड़े आदमी इकट्ठे होने लग पड़े। कहने लगे मारो तो मत, इसे गुलाम बना लो। पकड़ कर ले जाते, 20-20 हज़ार लड़कियाँ टके - टके के भाव बिकती रही हैं। यह कल की बात है, बहुत प्राचीन नहीं है, सिर्फ 250 साल पहले की है। 1763 ई. की बात है, कोई 20 हज़ार

स्त्रियाँ गुज़रात से बान्ध कर ले गये और उनका मूल्य गज़नी में एक टका रखा गया, टका उस समय का सिक्का था। यह हिंसा हुआ करती है - शरीर का धर्म तोड़ना, धर्म मलीन कर देना, शरीर का नाश कर देना और जानवरों को खा जाना। महाराज कहते हैं, पता है क्या होता है फिर? -

*कबीर खूबु खाना खीचरी जा महि अंम्रित लोनु।*
*हेरा रोटी कारने गला कटावै कउनु॥* *पृष्ठ - 1374*

हेरा कहते हैं, जानवरों को मार कर खाना। ये जो विवाह होते हैं; यदि यहाँ यह बात न हो, पता नहीं कितने जानवर मर जाने थे। अड़ जाना था गाँव वालों ने कि हमने मांसाहारी भोजन करना है, लड़की वाला कहता है मैं तो खाता नहीं, कहते हैं खा या मत खा, हमने तो खाना है; क्योंकि गुरू की बाणी को नहीं मानते, गुरू की बाणी यह कहती है कि यदि तू जानवर मार कर खायेगा फिर तू बच जायेगा? तुझे भी गला कटवाना पड़ेगा और लेखा देना पड़ेगा। तू final authority (अन्तिम अधिकारी) नहीं है। यदि कहे मैं मुक्ति करता हूँ, मुक्ति तो तेरी स्वंय की ही नहीं हुई, क्यों पापों की गठड़ियाँ बान्धता हैं? सो इस प्रकार यह तीसरी हिंसा हुआ करती है -

*तीजी हिंसा जीवन केरी। तिआगै इन को ह्वै बिन देरी॥*
*पृष्ठ - 108 (श्री गु, पु. प्र. ग्रंथ)*

जितना जल्दी छोड़ सकते हो, महाराज कहते हैं, छोड़ दो। देख! पहली बात समझ ले, इसे **'हिंसा'** कहते हैं।

दूसरा यम होता है **'सत्य'** - सत्य का जीवन व्यतीत करना और सच्चा आदमी जो है -

*सो डरै जि पाप कमावदा धरमी विगसेतु॥* *पृष्ठ - 84*

सच्चे आदमी को कोई डर नहीं है। जो सच के अन्दर रहता है उसे ज़रूरत ही नहीं है, सच वाहिगुरू है। महाराज कहते हैं कि जो सच्चे के साथ रहता है, उसका जीवन भी सच्चा है one-faced (अन्दर बाहर एक जैसा) है।

पर आज कल क्या है - एक चेहरा तो वह होता है जो यहाँ सत्संग में दर्शन देता है, एक चेहरा वह है जो दोस्तों मित्रों में गप-शप हांकता है और एक चेहरा वह है जो बाल बच्चों में जाकर बहुत भयानक बन जाता है। महाराज कहते हैं कि ऐसे मत कर। सत्य को हृदय में धारण करके एक समान जीवन व्यतीत कर। जैसा अन्दर से है, वैसा ही बाहर से होना चाहिये। बगुले वाली वृत्ति मत बना। बाज को दुनियाँ में कोई बुरा नहीं कहता, सिर झुकाते हैं क्योंकि सब को पता है कि जब इसे

भूख लगी हो तो जानवरों को मार देता है, वैसे कुछ नहीं कहता। बगुले का सभी को पता है कि आंखे बन्द करके खड़ा रहता है - एक पैर के बल पर, जब मछली पास आ जाती है, एक दम चौंच मारता है और मछली पकड़ लेता है। इसलिये बुरा कहते हैं बगुले को। सो महाराज कहते हैं तू ऐसे मत कर, सत्य का जीवन अपना ले, एक faith (विश्वास) में रह - प्रभु के प्यार में -

*.दुतीये सच्च उचर निरभै है। कबहू कूर नहिं कहि बिध कै है॥*

*पृष्ठ - 108 ( श्री गु, पु. प्र. ग्रंथ)*

किसी प्रकार भी झूठ मत बोल भाई, झूठ से डर क्योंकि जहाँ झूठ है, वहाँ पाप ने अपने आप ही आ जाना है।

देख राजन! तीसरी चीज़ है 'चोरी'। चोरी दो प्रकार की होती है- एक हाथ पैरों द्वारा चोरी होती है, एक मन की होती है -

***तीजै चोरी भांतन दोई। इक तन की इक मन की होई॥***

*पृष्ठ - 108 ( श्री गु, पु. प्र. ग्रंथ)*

एक तन की चोरी है और एक मन की चोरी है। मन की चोरी वह है जब कोई काम छिपकर करना हो, जैसे मिलावट करते हैं आदमी कि कोई देख न ले, पानी मिलाते हैं दूध में, भोजन में मिलावट करते हैं, दवाईयों में मिलावट करते हैं तथा अन्य कई प्रकार की मिलावटें करते हैं। प्राईवेट कोठियां ली हुई हैं, वहाँ किसी को नहीं जाने देते। वहीं से ही शीशियां बन बन कर आ जाती हैं।

यह चाय पीते हैं बहुत से आदमी. पर पता है क्या धोखा हो रहा है हमारे साथ? एक तो फिरोजपुर है कारखाना, एक अमृतसर में और एक भठिन्डा में है। वहाँ कुतरा करते हैं fodder (पशुओं का चारा) का जो पशु खाते हैं। बहुत बरीक कुतरा (बहुत बरीक पीस लेना) करते हैं फिर उस पर chemicals (रसायन) का रंग देते हैं, साथ ही नशा मिला देते हैं। वह फिर ट्रक भर भर कर भेजे जाते हैं। दिल्ली को 600 रूपये किवन्टल। फिर दिल्ली से चण्डीगढ़ 800 रूपये किवन्टल भेजते हैं। यहाँ 7-8 ऐजंसियां हैं फिर डिब्बे भर भर कर बढ़िया बढ़िया यह अमुक चाय है, यह ऐसी है, वह ऐसी है, वे फिर इस प्रकार बेची जाती है, साथ यह भी कहते हैं जी बहुत बढ़िया चाय है। दूसरा जो होटलों में चाय बनती है वह फैंकते नहीं हैं, कनस्तरों में भर कर रख दी जाती है। पुनः फिर वहीं ले जाते हैं तथा रसायनों के साथ रंग देते हैं उसके अन्दर तम्बाकू भी मिला देते हैं और कीकर का रस तथा अन्य वृक्षों की छाल भी मिला देते हैं। बहुत expert (विशेषज्ञ) हैं इस चीज़ के। वे सामने तो यह काम नहीं करते, फिर आकर

किसी गुरूद्वारे में या किसी धर्म स्थान में माया दान करते हैं।

महाराज कहते हैं कि ये चोर हैं, चोरी का दान फल नहीं दिया करता। साध संगत जी! यह तो एक-एक, दो-दो रूपये में ही बरकत है, हज़ारों में कोई लाभ नहीं। चोरी के पैसे यदि ला कर दे दो, दोनों मारे जाते हैं -

***वढीअहि हथ दलाल के मुसफी एह करेइ।***
***नानक अगै सो मिलै जि खटे घाले देइ॥*** *पृष्ठ - 472*

जो लेता है ऐसा दान, वह भी मारा जाता है और जो देता है उसने तो मरना है ही। सो चोरी हुआ करता है तीसरा यम -

***पर की वसत छपावन करनी। इहु चोरी है तन की बरनी॥***
*पृष्ठ - 108 (श्री गु, पु. प्र. ग्रंथ)*

दूसरे की वस्तु को छिपा लेना; भोजन करते समय छिपा लेना कोई बर्तन, गिलास, कटोरी आदि। यह तन की चोरी है। दूसरा किसी मित्र के घर में जाते समय घड़ी इत्यादि उठा लेना। घर वाले हैरान हो जाते हैं किसी को कह भी नहीं सकते बेचारे, पर कई मुँह फट होते हैं, कह भी देते हैं, ''तेरे सिवाय तो कोई और आया ही नहीं। मित्रों वाला प्यार कहाँ गया तेरा? तूने ही उठाई है मेरी घड़ी।'' पर कई नेक आदमी चुप कर जाते हैं कि मैं इसे कैसे कहूँ फिर -

***करहि पाप पुन रखहि दुराइ। इह मन की चोरी कहिलाइ॥***
*पृष्ठ - 108 (श्री गु, पु. प्र. ग्रंथ)*

कहते हैं कि छिपा कर रखता है - पाप करके भी।

ये तीन डण्डे बता दिए हैं पहला अहिंसा, दूसरा सत्य, तीसरा चोरी और चौथा होता है '**ब्रह्मचर्य**'। इसकी तो बहुत अधिक आवश्यकता है रूहानी मार्ग में। जब तक हम इसे नहीं समझते तब तक हमारा शरीर कार्य नहीं कर सकता। यह fuel (ईंधन) होता है शरीर का। जिसने परमात्मा की राह पर चलना है, उसे '**ब्रह्मचर्य**' व्रत रखना ही पड़ता है - हिसाब के साथ -

***चौथे ब्रह्मचरज सुख सारू। जीतन काम अशट परकारू॥***
*पृष्ठ - 108 (श्री गु, पु. प्र. ग्रंथ)*

यह सुख देता है और आठ प्रकार से जीता जा सकता है। यह ध्यान से सुन -

***प्रिथमै तीय की बातैं करनी। दूजै सुन मन महिं धरनी॥***
*पृष्ठ - 108 (श्री गु, पु. प्र. ग्रंथ)*

किसी स्त्री की बातें किये जाना आपस में, यह पाप हुआ करता है। फिर उसके बारे में बातें मन में धारण कर लेनी –

*तीजै तीय इकांत मिल बैसन। चौथे होवहि अंग सपरशन॥*

*पृष्ठ - 108 (श्री गु, पु. प्र. ग्रंथ)*

फिर यत्न करना कि अकेले कहाँ मिलें। फिर बहाने वगैरा के साथ स्पर्श करना –

*पांचम हित करि देखै तीय सों। छठम अलंगन करै हीअ सों॥*

*पृष्ठ - 108 (श्री गु, पु. प्र. ग्रंथ)*

फिर और तरह से प्यार के साथ देखना शुरू कर देना फिर हृदय में ध्यान धर कर देखना –

*सपत चितवनो मन महिं नारी।*
*अशटम मैथन है बिध सारी॥ पृष्ठ - 108 (श्री गु, पु. प्र. ग्रंथ)*

चितवना करते रहना आदि आदि। ये आठ प्रकार के ब्रह्मचर्य हैं –

*ब्रह्म चरज है इनकै तिआगे॥ पृष्ठ - 108 (श्री गु, पु. प्र. ग्रंथ)*

कहते हैं कोई बात छिपी नहीं रहती। ऐसा महाराज का फ़रमान है –

*धारना - कोई पाप छुपिआ न रहिणा, जा के विच दरगाह दे-2, 2*
*मेरे पिआरे, जा के विच दरगाह दे - 2, 2*
*कोई पाप छुपिआ न रहिणा ................।*

*लै फाहे राती तुरहि प्रभु जाणै प्राणी।*
*तकहि नारि पराईआ लुकि अंदरि ठाणी।*
*संन्ही देन्हि विखंम थाइ मिठा मदु माणी।*
*करमी आपो आपणी आपे पछुताणी।*
*अजराईल फरेसता तिल पीड़े घाणी॥ पृष्ठ - 315*

सारे पाप दरगाह में सामने आ जायेंगे। सो गलत बातें मत कर क्योंकि –

*बिसारि हरि जीउ बिखै भोगहि तपत थंम गलि लाइ॥ पृष्ठ-1001*

ये बातें ऐसे तो नहीं महाराज कहते कि जब गर्म गर्म थम्बों के साथ लगाया जायेगा फिर रोयेगी जिन्दगी, तेरी सहायता किसी ने नहीं करनी –

*रे नर काइ परग्रिहि जाइ। पृष्ठ - 1001*

क्यों बेगाने घरों में जाता है विषय द्वारा अन्धा किया हुआ –

*एका नारी जती होइ पर नारी धी भैण वखाणै॥*

*भाई गुरदास जी, वार 6/8*

जो एक नारी वाला है वह जती है और शेष को माँ बहन बेटियों के समान समझे –

*देखि पराईआँ चंगीआँ मावाँ भैणाँ धीआँ जाणै॥*

*भाई गुरदास जी, वार 29/11*

*पर नारी की सेज, भूलि सुपने हू ना जैयहु॥* *पातशाही 10*

*पर त्रिअ रूपु न पेखै नेत्र।* *पृष्ठ - 274*

महाराज कितने वचन करते हैं। महाराज कहते हैं ''राजन! चौथा जो यम है, यह ब्रह्मचर्य है। इसका पालन करना बन्दगी करने वाले के लिये निहायत ज़रूरी है।

पाँचवा '**धीरज**' है। जब तक आदमी धैर्यवान न हो, बन्दगी सफल नहीं हुआ करती -

*पंचम यम धीरज अनरागै॥* *पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)*

धैर्य यह हुआ करता है कि कोई अच्छी बुरी बात हो गई तो एकदम नहीं भड़क उठना; धैर्य में बहुत बड़ी शक्ति है। महाराज कहते हैं जो साधु होते हैं उनमें अति का धैर्य होता है।

एक महात्मा थे। वह भोजन लेने के लिये किसी शादी वाले के घर चले गये। वहाँ सभी अपने अपने रंगों में मस्त थे, सन्तों को कोई पूछता नहीं। इतने में एक आदमी आया, कहता है तू यहाँ खड़ा क्या कर रहा है? सन्त कहते हैं भाई! भोजन मिल जाये। वह कहता है तूने काम क्या किया यहाँ आकर? बर्तन साफ किए हैं? वह मारा धक्का सन्त जी को। सन्त वीतराग पुरुष थे ब्रह्मज्ञान अवस्था के। कहते हैं अच्छा भाई, तेरा भला हो प्यारे! बुरा नहीं कहा। यदि एक भी वचन कर देते सब कुछ ही समाप्त कर देते।

आश्रम में आ गये। परमेश्वर के द्वार पर सन्तों का दुख पहुँच गया। सात दिन बीत गये भोजन न मिला। उस समय परमेश्वर ने दूत भेज दिये, हाथों में मशालें पकड़ी हुई हैं। दूत सन्त जी के पास आकर कहने लगे सन्त जी! बताओ कौन सा आदमी है जिसने आपको धक्के मारे हैं? सन्त पूछने लगे, ये मशालें क्यों उठाई हुई हैं? वे कहते हैं, हमने सारा गाँव जला देना है। जहाँ एक पापी रहता हो वहाँ सजा सभी को मिलनी चाहिए। सुनकर सन्त बोले मुझे भी दो एक मशाल। देव दूतों ने एक मशाल सन्त जी के हाथों में पकड़ा दी और सन्त उन दूतों की तरफ चल पड़े जलाने। दूत कहते हैं यह क्या करने लगे हैं आप? सन्त कहते हैं, इसमें लोगों का क्या कसूर है, मेरी ही प्रालब्ध मन्द हो गई जो सात दिन तक भोजन नहीं आया। यह सारा भगवान का कार्य है जो राज़क बना हुआ है, जिसका नाम विशम्भर है -

*काहे रे मन चितवहि उदमु जा आहरि हरि जीउ परिआ।*
*सैल पथरि महि जंत उपाए ता का रिजकु आगै करि धरिआ॥*

*पृष्ठ - 495*

यह उनके मनों को प्रेरित कर देता! अब जलाने के लिये भेजे हैं दूत। गाँव ने क्या कसूर किया? कितना धीरज है, साध संगत जी।

गुरू अमरदास जी महाराज - आप जी को जब गुरू गद्दी मिली तो आपको गोइंदवाल भेज दिया - खडूर साहिब से। महाराज गुरू अंगद साहिब ने पहले ही। इसका कुछ विशेष कारण था। वह यह था कि पहले एक बार हुक्म अनुसार (गुरू) अमरदास जी महाराज, खडूर साहिब से गोइंदवाल साहिब की ओर आ रहे थे तो रास्ते में एक हड्डी पड़ी थी। अचानक महाराज जी का चरण उस हड्डी से स्पर्श कर गया। उस समय अभी गुरू पद नहीं मिला था। साथ आने वाली सारी सिख संगत देखकर हैरान हो गई कि उस हड्डी में से धुआं निकलना शुरू हो गया, उसके बाद एक मनुष्य जैसी आकृति हड्डी में से निकल आई और नमस्कार करके चली गई।

दूसरे दिन जब वे सभी सिख इकट्ठे होकर गुरू अंगद साहिब जी के पास गये और प्रार्थना की कि पातशाह! कल तो एक बहुत भारी आश्चर्य जनक कौतुक देखा। कहते हैं क्या? महाराज! कल बाबा अमरदास जी चले जा रहे थे। एक हड्डी के साथ सहज स्वभाव उनका चरण स्पर्श कर गया तो उसमें से धुआं सा बनकर एक आदमी निकल आया। गुरू महाराज अन्तर्ध्यान होकर कहने लगे ''बाबा अमरदास! यह आदमी महापापी, हत्यारा था, नरक में भोग रहा था दुख और पता नहीं कितने हज़ार साल और दुख भोगने थे कुम्भी नरक में - अपने पापों का फल। पर तेरे चरणों में इतनी पवित्रता आ गई कि तूने उसे नरकों में से निकाल लिया है और अब गोइन्दवाल जाते हुए बेअन्त मरे हुये जीव हुक्म के अन्दर तेरे चरणों के साथ लगेंगे और वे सभी जीवित होकर चलते चले जायेंगे। तू अथाह शक्तियों का मालिक है। तुझ पर गुरू नानक की अपार कृपा हो गई और अब तू मत आना यहाँ। हम स्वंय दर्शन करने आया करेंगे।

सो बाबा अमरदास जी उस खिड़की में बैठ जाते थे जो खडूर साहिब की ओर खुलती थी और सारा दिन दूर दूर तक देखते रहते कि महाराज अब आने वाले हैं, अब आयेंगे। व्याकुल हो जाते, वैराग में हर समय रहते। सो आज्ञा मानी आपने। जब आपको गुरू गद्दी की प्राप्ति हुई तो महिमा बहुत दूर दराज़ तक फैल गई। इतनी फैल गई कि लंगर ज़रूरत से अधिक हो जाता तो वापिस भेज दिया करते थे या पास बहते हुये दरिया ब्यास में बहा दिया करते थे और कड़ाहे उलटे करके रख दिया

करते थे। बेअन्त संगत आया करती थी। किसी ने कभी भी नहीं कहा कि महाराज! कल क्या बनायेंगे? सुबह फिर लंगर शुरू हो जाता था। इस प्रकार बेअन्त धन आया करता था, बेअन्त संगतें आया करती थीं।

इधर गुरू अंगद साहिब जी के पुत्र दातू ने सोचा कि मैं गुरू का बेटा हूँ और यह अमरदास तो हमारा दास था 12 वर्ष तक पानी भरता रहा है हमारा; इसे गुरू गद्दी? मुझे मानेंगे कि लोग इसे मानेंगे? क्योंकि जब शरीर में महात्मा होते हैं, उस समय संगत महात्मा की औलाद को उनके रिश्तेदारों को अच्छा समझती रहती है, चाहे उन्हें कुछ भी न आता हो। स्वाभाविक ही अच्छा समझते हैं कि इनके वंश के हैं। इसलिये आदर करते हैं, तिरस्कार नहीं करते। इसलिये पुत्रों का तो बहुत अधिक सम्मान था, दातू जी का, दासू जी का तो अत्याधिक सम्मान करते थे। इसलिये उसने सोचा कि संगत कैसे चली जायेगी मुझे छोड़कर? यह नहीं मालूम था कि गुरू नानक की गद्दी तो धुर दरगाह की है, ये किसी पुत्र आदि की निजी सम्पत्ति नहीं है। सो कोई न आया शीश झुकाने, न कोई भेंट आदि आती। लंगर भी बनाता, भोजन करने के लिये आदमी भी भेजता कि भोजन कर जाओ पर कोई भी भोजन खाने के लिये न आता कि यह तो गुरू की बराबरी कर रहा है।

संगत और सिख सभी श्रद्धा और प्रेम से बन्धे होते हैं। पाॢटयां नहीं होती वोट लेने वालों की तरह। वोट लेने वाले तो गाँठ लेते हैं दूसरों को पर रूहानी आदमी कभी भी गाँठा नहीं जा सकता क्योंकि उसका निश्चय होता है महात्मा पर, नहीं जाता महात्मा के पास से। उस समय उसके साथ वालों ने कहा कि इसे निकाल दो जहाँ से, रहने ही मत दो गोइन्दवाल। वहाँ बनाने के लिये भेजा था, बनाया तो तुम्हारे पिता ने है, उसका क्या अधिकार है वहाँ बैठने का?

उधर दीवान लगा हुआ है गुरू महाराज का, बेअन्त संगत आई हुई है। उस समय उसने वहाँ जाकर कोई बात नहीं की। गुरू महाराज जी ने देखा कि गुरू पुत्र आ रहा है, हाथ जोड़ दिये दोनों - आदर के साथ। वृद्ध शरीर हैं 90 वर्ष के करीब करीब आयु है; आप जी गुरू पुत्र के सम्मान में खड़े होने की तैयारी कर रहे हैं लेकिन वह इतना क्रोध वश था, आते ही गुरू महाराज जी की वक्खी में इतनी ज़ोर से लात मारी कि महाराज को तख्त से उतार कर फैंक दिया। उस समय यदि आप एक वचन भी कर देते तो सभी कुछ बर्बाद कर देते। यह साध संगत जी, मान है। परमेश्वर के साथ यदि किसी चीज़ की विरोधता है, वह मान है जो परमेश्वर को नहीं भाता -

*धारना - तेरा माण, तेरा माण, तेरा माण ओ,*
*गुरां नूं ना भावे भाई, तेरा माण ओ - 2, 3*

*हरि जीउ अहंकारु न भावई वेद कूकि सुणावहि।    पृष्ठ - 1089*

*दुरमति हरणाखसु दुराचारी। प्रभु नाराइणु गरब प्रहारी।*
*प्रहलादु उधारे किरपा धारी॥    पृष्ठ - 224*

परमेश्वर को अहंकार नहीं रुचता और दूसरी तरफ महात्मा जो हैं उनका जिगर बहुत बड़ा होता है। फ़रमान किया है -

*फरीदा साहिब दी करि चाकरी दिल दी लाहि भरांदि।*
*दरवेसां नो लोड़ीऐ रुखां दी जीरांदि॥    पृष्ठ - 1381*

*धारना - रुक्खां वरगा जेरा, पिआरे, लोड़ीदैं दरवेसां नूं - 2, 2*
*लोड़ीदैं दरवेसां नूं, लोड़ीदैं दरवेसां नूं - 2, 2*
*रुक्खां वरगा जेरा,..................।*

टहनियाँ काट लो, ईंट पत्थर मार लो पर वृक्षों ने छाया देनी ही देनी है, फल देना ही है, ईंट पत्थर खाकर भी। महाराज कहते हैं ऐसा होता है महात्मा का जिगर (दिल)।

उस समय गुरू अमरदास जी महाराज एकदम सम्भले और दोनों हाथ जोड़कर कहने लगे, ''बहुत बड़ी अवज्ञा हुई है हम से, मुझे तो आपके आने से पहले खड़ा होना चाहिए था। आपने बहुत अच्छा किया, मुझे सुमति दे दी।'' फिर कहते हैं ''बहुत बुरा हुआ -

*यां ते अधिक सरीर कठोरा। तुमरो चरन म्रिदल नहिं थोरा॥*
*पृष्ठ - 1462 (श्री, गु. प्र. सू. ग्रंथ)*

मेरा तन बूढ़ा हो जाने के कारण कठोर हो गया, आपके चरण महापुरुषो! गुरू साहिबजादो! बहुत नर्म हैं, नाज़ुक हैं -

*हुयो होइगो कशट महाना। छिमहु भयो अपराध अजाना।*

सो मुझे माफ कर दो; ज़रूर आपके शरीर को मेरे द्वारा आघात पहुँचा होगा।'' कितना बड़ा दिल है साध संगत जी, इसे धीरज कहते हैं। दसवें पातशाह फरमाते हैं -

*धंनि जीओ तिह को जग मैं; मुख ते हरि चित मैं जुधु बिचारै।*
*देह अनित न नित्त रहै जसु नाव चड़ै भव सागर तारै।*
*धीरज-धाम बनाइ इहै तन; बुद्धि सु दीपक जिउं उजीआरै।*
*गिआनहि की बढ़नी मनहू हाथ लै कातरता कुतवार बुहारै॥*
*सवैया - 2492 (कृष्ण अवतार)*

महाराज कहते हैं कि इस तन को धीरज का धाम बना लो –

***आपस कउ जो जाणै नीचा। सोऊ गनीऐ सभ ते ऊचा।***

*पृष्ठ – 266*

महाराज जी ऐसे कहते हैं ''बहुत बड़ी भूल हो गई हसमे?'' दातू जी कहते हैं ''तुझे किसने कहा गद्दी पर बैठने के लिये? खबरदार यदि फिर गद्दी पर बैठा। जिधर को मुँह किया हुआ है भाग जा उधर।'' महाराज कहते हैं ''कोई बात नहीं, आप बैठो और सेवा बताओ।'' साथियों को कहता है दातू ''उठाओ सामान सारी सामग्री। सभी सिख देखते हैं, समरथ पुरुष बैठे हैं। एक वचन करते ही सब कुछ खत्म कर देते पर कुछ भी न बोले। वह सामान लेकर चला गया। सिख कहते हैं ''महाराज! आपको चोट लगी होगी।'' महाराज कहते हैं ''न भाई! वह तो गुरू महाराज के पुत्र का चरण मेरे साथ अपने आप ही स्पर्श हो गया था। मेरे धन्य भाग्य हैं कि उनका चरण मेरे शरीर से स्पर्श हो गया।'' इसे धीरज कहते हैं। साध संगत जी! यह धीरज सन्तों में हो, किसी जिज्ञासु में हो, अति ज़रूरी है।

गुरू महाराज गुरू नानक साहिब ने कहा, राजन! यह पाँचवा यम ज़रूरी है नाम जपने वालों के लिए। इस प्रकार आगे छठे के बारे में बताते हैं।

अब क्योंकि समय इजाज़त नहीं देता, अगली विचार ध्यान में रखना। जिन्हें शौक है नाम जपने का, नोट कर लो, टेप ले जाओ; बार बार ऐसे वचन नहीं मिलते। अब सभी जो अभी तक नहीं बोले वे भी गुरू सतोतर में बोलने का कष्ट करो।

– आनन्द साहिब –

– गुर सतोतर –

– अरदास –

☸☸☸☸☸

# १ओंकार सतिगुर परसादि

*शान.......................................................................................।*

*सतिनामु श्री वाहिगुरू, धन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज।*

*डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।*
*डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ पृष्ठ - 256*

*फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।*
*नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ पृष्ठ - 289*

*धारना - संग तुमारे वासा जी, तुम चंदन हम इरंड बापुरे - 2, 2*
*तुम चंदन हम इरंड बापुरे, तुम चंदन हम इरंड बापुरे - 2*
*संग तुमारे वासा जी,.........................।*

*तुम चंदन हम इरंड बापुरे संगि तुमारे बासा।*
*नीच रूख ते ऊच भए है गंध सुगंध निवासा॥*
*माधउ सतसंगति सरनि तुम्हारी। हम अउगन तुम्ह उपकारी॥ १ रहाउ॥*
*तुम मखतूल सुपेद सपीअल हम बपुरे जस कीरा।*
*सतिसंगति मिलि रहीऐ माधउ जैसे मधुप मखीरा॥*
*जाती ओछा पाती ओछा ओछा जनम हमारा।*
*राजा राम की सेव न कीन्ही कहि रविदास चमारा॥ पृष्ठ - 486*

*धारना - कलू आइओ रे, इक नाम बीज लओ - 2, 2*
*इक नाम बीज लउ, इक नाम बीज लउ - 2, 2*
*कलू आइओ रे,.....................।*

*अब कलू आइओ रे। इकु नामु बोवहु बोवहु।*
*अन रूति नाही नाही। मतु भरमि भूलहु भूलहु॥ पृष्ठ - 1185*

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलना जी 'सतिनाम श्री वाहिगुरू!' गुरू महाराज जी आधुनिक समय का ज़िक्र करते हुये फ़रमान करते हैं कि प्यारे! अब कलयुग आ गया है; अब कोई चीज़ पैदा नहीं होगी क्योंकि बेमौसम बीजा हुआ बीज फल नहीं दिया करता। अब नाम के बीजने का समय आ गया। यह बीज बो लो, और किसी चीज़ का मौसम नहीं है। देखना कहीं भ्रम में पड़कर भूल मत जाना। बड़े स्पष्ट शब्दों में यह महाराज ने जीव को समझाने का यत्न किया है कि समय बदल गया है, मनुष्य के विचार बदल गये हैं फिर उसके साथ भवजल तरने का तरीका भी बदल गया और अब जो 'नाम' का बीज बो लेगा उसका तो पार उतारा हो जायेगा और जो नाम से खुंझ (वंचित रह) गया उसे भटकना पड़ेगा क्योंकि और किसी चीज़ को फल नहीं लगेगा। सो इस प्रकार पिछले कुछ समय

से काफी विचार हो चुकी है कि 'नाम' फलीभूत क्यों नहीं होता; सभी राम राम, वाहिगुरू वाहिगुरू, अल्लाह अल्लाह भी करते हैं।

चार प्रकार के आदमी संसार में होते हैं। पहली प्रकार के आदमी वे हैं जिन्हें न तो परमेश्वर के साथ मिलने का कोई शौक होता है, न कुछ ज्ञान ही होता है। पापों में प्रवृत्त रहते हैं, शराब, मांस आदि का प्रयोग, निन्दा, चुगली, ईर्ष्या, नफरत, झगड़े फसाद; बात यह है कि उनके मनों के शान्त वातावरण को चिन्ता घेर कर रखती है, ईर्ष्या घेर कर रखती है, काम, क्रोध, वहाँ खौरू (हल्ला गुल्ला) डालते हैं और न ही सत्संग को पसन्द करते हैं न ही उनके भाग्यों में परमेश्वर ने सत्संग का लेख ही लिखा होता है। यहाँ सत्संग में कोई टिकट नहीं लगता और न ही किसी को रोका जाता है पर वही पहुँचते हैं जिसके लेख धुर दरगाह से लिखे होते हैं। फ़रमान है -

*बिनु भागा सतसंगु न लभै बिनु संगति मैलु भरीजै जीउ॥*

*पृष्ठ - 95*

वह तपते जलते संसार से मन के पीछे लगकर आदमी चले जाते हैं और यहाँ का जो सारा जीवन है, दुखों में बिता देते हैं। बेचैनी से भरा हुआ, तृष्णा से जला हुआ और क्रोध से जला हुआ जीवन बिताकर संसार से रोते हुये चले जाते हैं। इतना अज्ञान है उनके मनों के अन्दर कि संसार की प्राप्तियों को - अच्छे घर बना लेना, अच्छे business (कारोबार) चला लेना, पैसे बैकों में जमा कर देने और ऐशो इशरत की जिन्दगी बिताकर संसार से चले जाना यह उनके सारे जीवन के उत्तम हिस्से का समय लगता है लेकिन महाराज कहते हैं, कितना गाफल (लापरवाह) है यह जीव कि जब सब कुछ छोड़कर चले जाना है - यहीं पर ही, फिर बार बार उसी तरफ ध्यान रखता है।

इससे अच्छा कोई रास्ता है? कोई ऐसी चीज़ है संसार में जो हमारे साथ जायेगी? महाराज कहते हैं, हाँ, नाम है। नाम तेरे साथ जायेगा। जहाँ कोई भी हाथ नहीं पहुँच सकता, जहाँ कोई भी सहायता नहीं कर सकता, वहाँ पर तो जो सत्संगत की हुई है और जो नाम जपा हुआ है, उसी नाम ने सहायता करनी है और कोई भी वस्तु साथ नहीं जाती -

*धारना - तेरी नाम ने सहाइता करनी,*
*औखी वेला, औखी वेला - 4*

*जह मात पिता सुत मीत न भाई।*

*मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई।* *पृष्ठ - 264*

संसार का सहारा माता होती है, पिता होता है, पुत्र होते हैं, भाई होते हैं, महाराज कहते हैं ये यहाँ पर तो सहाई हैं - वे भी तभी यदि तेरे पास धन है अन्यथा नहीं। सभी साथ छोड़कर भाग जाया करते हैं। जहाँ ये सहायता नहीं कर सकते वहाँ नाम सहायता करता है -

*जह मात पिता सुत मीत न भाई। मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई।*
*जह महा भइआन दूत जम दलै। तह केवल नामु संगि तेरै चलै॥*
*जह मुसकल होवै अति भारी। हरि को नामु खिन माहि उधारी॥*
*पृष्ठ - 264*

जहाँ अति अधिक कठिनाई आ जाये जिसका कोई भी इलाज न हो तब ***'हरि को नामु खिन माहि उधारी।'*** कितनी बड़ी बात है, महाराज कहते हैं कि एक पलक झपकने के समय के अन्दर ही वह परमेश्वर का 'नाम' कठिनाई को दूर कर देता है फिर क्या कारण है संसार 'नाम' की तरफ क्यों नहीं जाता? ऐसे नाम का क्यों नहीं लाभ उठाता? क्यों नहीं उसे प्राप्त करता? कई कह देते हैं, जी पता नहीं चलता कुछ भी। हम कहते तो हैं **'वाहिगुरू-वाहिगुरू'** पर रूचि से नहीं कहते। बाहर बाहर मौखिक रूप से ही हमारा काम है, अन्दर हृदय में से नहीं बोलते। सारा काम बाहर बाहर ही है, लगन के साथ नहीं है। शत प्रतिशत लगन होनी चाहिए फिर काम बनता है पर जैसे दुनियाँ की चीज़ों के प्रति लगन है, तुलना करके देख लो कि एक तरफ 'नाम' है एक तरफ सांसारिक वस्तुएं। एक प्रेमी कहता है जी मेरे पुत्र नहीं हुआ, पुत्र की दात मिलनी चाहिए। सन्त कहते हैं क्या करना है पुत्र? तू नाम जपा कर। यह वचन उसे ऐसा लगेगा जैसे पत्थर मारा गया हो। सन्त तो सच बोलते हैं कि तेरी पुत्र ने सहायता नहीं करनी। यह तो सारे -

*मात पिता बनिता सुत बंधप इसट मीत अरु भाई।* *पृष्ठ - 700*

सारे -

*पूरब जनम के मिले संजोगी अंतहि को न सहाई॥* *पृष्ठ - 700*

अन्त में तो तेरे साथ इनमें से किसी ने भी नहीं जाना। क्यों ऐसे परेशान होता है। अन्त में तो तेरा निर्वाह जो है नाम के साथ ही होना है -

*जिह मारग के गने जाहि न कोसा।*
*हरि का नामु ऊहा संगि तोसा॥* *पृष्ठ - 264*

सो उस नाम को आदमी क्यों नहीं समझता। बार बार साधु, महापुरुष अनेक ढंगों से समझाने का यत्न करते हैं।

सियाने मनुष्य बताते हैं कि यहाँ जो आदमी है उनकी चार डिविज़न हैं अर्थात चार प्रकार के आदमी हैं। एक तो पामर लोग हैं जो विषय विकारों में पड़कर अपनी जिन्दगी बर्बाद करके चले जाते हैं।

दूसरे वे हैं जो दुनियाँ के भोगों में रूचि रखते हैं कि मेरे पास मकान भी हो, कार भी हो, पुत्र भी हों फिर वे सारे अच्छी अच्छी नौकरियों पर हों, कपड़े वस्त्रादि सभी कुछ हों; वे भोगी होते हैं –

***भोगि भोगि भूमि, अंति भूमि मै मिलत हैं।*** ***अकाल उस्तति***

वे यहीं पैदा हुए और यहीं पर ही खा पीकर मर जाएंगे।

तीसरे वे हैं जो सत्संग में आकर, चित्त को एकाग्र करके हरि यश श्रवण करके, बुद्धि से विचार करके और हृदय में धारण करके निर्णय करते हैं और फैसला करते हैं कोई न कोई कि यह जो बात हो रही है यह मेरे हित की है 100 प्रतिशत। छोड़ दूँ मैं बाकी सारे काम और एक परमेश्वर के साथ लगन लगाकर दिन रात उसे मना लूँ। जब वाहिगुरू मान गया, उसे नाम प्राप्त हो गया, समझो सब कुछ ही प्राप्त हो गया क्योंकि –

***नवनिधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि***
***जो हरि हिरदै सदा वसाइ।*** ***पृष्ठ - 649***

जिसके हृदय में नाम बस गया, सारी दुनियाँ की दौलत, सारी शक्तियाँ उसके पीछे चल पड़ती हैं और उसके सारे ही काम –

***अचिंत कंम करहि प्रभ तिन के जिन हरि का नामु पिआरा।***
***पृष्ठ - 638***

वाहिगुरू स्वंय काम करने के लिए आ जाता है कोई ज़रूरत ही नहीं रहती। जब कोई फुरना हो तभी परमेश्वर कोई न कोई रूप धारण करके आ जाता है, किसी को प्रेरित कर देता है –

***अपुने सेवक की आपे राखै आपे नामु जपावै।***
***जह जह काज किरति सेवक की तहा तहा उठि धावै॥***
***सेवक कउ निकटी होइ दिखावै।***
***जो जो कहै ठाकुर पहि सेवकु ततकाल होइ आवै॥*** ***पृष्ठ - 403***

immediately (तुरन्त) बिना देरी किये। सांसारिक आदमी तो इतनी जल्दी आ ही नहीं सकता। उनके mood (मिज़ाज़) बदलते हैं, पता नहीं चलता– कभी मित्रों में गिनती, कभी दूर वालों के साथ। हित हो तो निकटता रखता है। वोटों का समय नज़दीक आ जाये तो सभी निकटता के चक्कर में आ जायेंगे; वोटों का समय खत्म हुआ फिर पाँच साल तक कोई पूछता ही नहीं। मनुष्य का स्वभाव ही ऐसा बना हुआ है लेकिन 'वाहिगुरू' तो

ऐसा नहीं है, जब उसकी तरफ हो जाओ फिर साथ ही रहता है -

*सखी वसि आइआ फिरि छोडि न जाई इह रीति भली भगवंतै॥*

*पृष्ठ - 249*

सो उसके साथ जो मित्रता बनाने का इरादा बनाता है और दिन रात एक करके लगन के साथ लग जाता है उसे **जिज्ञासु** कहते हैं। वह अधिकारी होता है सत्संग का, यही अधिकारी होता है नाम का।

पहली दो categories (श्रेणियों) जो हैं इनमें लगभग 75 प्रतिशत आदमी तो पामर हैं, शेष 25 प्रतिशत रह गये। इनमें से लगभग 23 प्रतिशत भोगी हैं भोगों की तरफ इनकी रुचि रहती है। 98 प्रतिशत हो गये। शेष दो जो रह गये, इस श्रेणी में से पौने दो आदमी जो हैं वे जिज्ञासु हैं और दस बीस हज़ार या लाख में से बल्कि महाराज तो कहते हैं करोड़ों में से कोई एक आदमी है मुक्त आत्मा जिसे '**मुक्त पुरुष**' कहते हैं। उस मुक्त पुरुष का काम होता है स्वंय नाम जपना और संसार को नाम का ज्ञान देना आवाज़ें लगा लगा कर, वह करोड़ों मनुष्यों का उद्धार कर देता है।

इस प्रकार मनुष्यों का विभाजन होने के कारण 75 प्रतिशत मनुष्य तो सोये हुये आदमी हैं, इन्हें तो कोई होश-हवास नहीं, न ही ये बात सुनने को तैयार हैं, न ही मानने को तैयार हैं। ये तो जैसे संसार में आते हैं वैसे ही चले जाते हैं क्योंकि मन के गुलाम होते हैं, मन की वासनाओं के गुलाम होते हैं और गुलामी का जीवन बिता कर संसार से चले जाते हैं -

*मन मुखु दुख का खेतु है दुखु बीजे दुखु खाइ।*
*दुख विचि जंमै दुखि मरै हउमै करत विहाइ॥* *पृष्ठ - 947*

सो जो दूसरे हैं भोगी। उनका chance (अवसर) होता है वे बार बार चक्कर काटते हैं सन्तान के लिये। कृपा हो गई, सन्तान की प्राप्ति हो गई; हो सकता है उनके मन में लगन लग जाये कि जिस वाहिगुरू ने मेरी बात सुनी है मैं उसके साथ प्यार करूँ पर chance (अवसर) बहुत कम हैं। भोगों में प्रवृत्त हो जाता है पर जिज्ञासु के मन में लगन लग जाती है। वह रास्ता पूछता फिरता है अकेले अकेले को पूछता है कि मुझे कोई रास्ता तो बता दो जिससे मुझे कुछ प्राप्ति हो जाये। इस प्रकार महाराज फ़रमान करते हैं -

*धारना - मैनूं दसिओ सुहागण सहीओ,*
*किवें तुसी राविआ राम पिआरा - 2, 2*
*राविआ राम पिआरा किवें तुसीं,*
*राविआ राम पिआरा किवें तुसीं- 2*
*मैनूं दसिओ..................................।*

सुहागिनों को जिन्होंने परमेश्वर को पा लिया है उनके चरणों में गिर गिर कर प्रार्थना करता है कि मुझे भी रास्ता बता दो तुम्हें किस प्रकार प्राप्त हो गया? कहाँ रहता है? कौन से गुणों से उसकी प्राप्ति होती है?

उस जिज्ञासु की प्रार्थना सुनकर महापुरुष अपने मुखारविन्द से शुभ शिक्षा देनी शुरू कर देते हैं कि यह सच्चे रास्ते का पंधाऊ (यात्री) आ गया ग्राहक आ गया क्योंकि ग्राहक बिना बात करनी व्यर्थ है -

*राम पदारथु पाइ कै कबीरा गांठि न खोल्ह।*
*नही पटणु नही पारखू नही गाहकु नही मोलु॥ पृष्ठ - 1365*

जब ग्राहक ही नहीं है, उसके साथ बात ही क्या की जाये? जब जिज्ञासु पुरुष आता है, वह परमार्थ के रास्ते पर चलने का प्रश्न करता है।

सो गुरू दशमेश पिता जी के चरणों में अमृत बेला में उठकर माता जीतो जी ने आकर प्रार्थना की ''पातशाह! जैसे आप गुरसिखों को सभी कुछ बताते हो उसी प्रकार कृपा करके मुझे भी रास्ता बताओ।'' तो उस समय महाराज जी ने कुछ वचन किये - वही वचन जो गुरू नानक पातशाह ने संगलादीप के राजा शिवनाभ के साथ किये थे। उसने भी पूछा था कि पातशाह! कृपा करके मार्ग बताओ कि किस तरह से हम उस उच्च पदवी तक पहुँच सकते हैं। सो उस समय महाराज जी ने दो रास्ते बताये थे कि एक से तो थोड़ा सा कष्ट उठाने पर प्राप्त होता है परमेश्वर और दूसरे रास्ते पर आसानी से मिल जाता है पर हम दोनों ही रास्ते बता देते हैं; दोनों द्वारा ही परमेश्वर तक पहुँच जाते हैं। उसके बारे में काफी विचार हो चुकी है।

यह इस तरह है कि जीवन में कुछ बातें हैं जिन्हें गुण कहते हैं। महाराज कहते हैं कि जब तक गुण नहीं अपने अन्दर पैदा करता, भक्ति नहीं हुआ करती -

*विणु गुण कीते भगति न होइ॥ पृष्ठ - 4*

कारण यही है कि हम इस बात को ignore (आँखों से ओझल) कर देते हैं अपने जीवन में अपनाते नहीं। नाम जपते हैं, अमृत बेला में जागते हैं पर अन्दर से ईर्ष्या ही नहीं जाती, प्यार नहीं उपजता। नये आदमी को देखकर मान में आ जाता है। परिणाम क्या होता है?

*जिसु अंदरि ताति पराई होवै तिस दा कदे न होवी भला॥*
*पृष्ठ - 308*

ऊपर वाले डण्डे से नीचे खिसक आया नीचे गिर गया क्योंकि सावधानी से कार्य नहीं किया। जब हम सावधानी नहीं प्रयोग करेंगे फिर दुर्घटना होती है। इसलिए कुछ रहतें हैं आन्तरिक, उनके बारे में विचार की गई थी।

**पहली रहत** होती है कि मन में हिंसा पैदा न हो, किसी का बुरा चितवने वाला कोई भी इरादा मन में पैदा न हो, 'बुरा' चित्त में धारण ही न करे -

***पर का बुरा न राखहु चीत। तुम कउ दुखु नही भाई मीत॥***

*पृष्ठ - 386*

कितनी बड़ी रहत बता दी महाराज ने कि दुख से छुटकारा ही हो जायेगा यदि दूसरे का बुरा मन में नहीं सोचेगा। दिल से कहा कर ***'नानक नामु चढ़दी कला, तेरे भाणे सरबत का भला।'*** कहता है, जी जो हमें तंग करते हैं उनका भी? महाराज कहते हैं, हाँ। उनका भी भला मांगना चाहिए। यदि उनका दिल से भला मांगेगा, तुझे तंग करने से हट जाएंगे। उन्हें सुबुद्धि प्राप्त हो जायेगी, वे दुर्मति वश हुये ऐसी बातें करते हैं।

एक बार बाबा फरीद जी अपने बहुत सारे मुरीदों के साथ जा रहे हैं। (12 फरीद हुए हैं, गुरू नानक साहिब के समय बारहवां फरीद था।) वे चलते चलते एक ऐसी जगह पहुँच गये जहाँ के लोग नास्तिक थे। नास्तिक वे होते हैं जो दिखाई देती हुई वस्तु को कहें है ही नहीं। जैसे सूरज के बारे में कोई आदमी हठ किये जाये कि सूरज है ही नहीं। उसका तो कोई इलाज नहीं है और महापुरुष उनके बारे में कुछ कहा नहीं करते क्योंकि -

***जो प्रभ कीए भगति ते बाहज तिन ते सदा डराने रहीऐ॥***

*पृष्ठ - 332*

कहते हैं कि उनसे तो डर कर रहो क्योंकि उन्हें परमेश्वर ने भक्ति से वंचित कर दिया है।

उन लोगों ने कोई आदर मान न किया बाबा फरीद जी का बल्कि आकर बहुत बुरे बुरे अपशब्द कहने लगे अनेक प्रकार की गन्दी गन्दी बातें बोलनी शुरू कर दीं। इतना ही नहीं, धक्के मारने शुरू कर दिये - बाबा जी को। मुरीद कहने लगे, ''महाराज! ये क्या कर रहे हैं आपके साथ।'' वह कहते हैं, ''आप चुप रहो, कुछ नहीं कहना।'' उसके बाद उन्होंने मुक्के मारने शुरू कर दिये और बाबा जी उनके चरणों पर हाथ लगाये जायें? ''प्यारे! कोई कसूर तो नहीं है हमारा? आप ऐसे ही किये जा रहे हो?'' वह चले गये तो बाबा फरीद जी रोने लग पड़े, नेत्रों में अश्रु बह चले, हाथ जोड़े हुए हैं, दुआ कर रहे हैं। मुरीद कहने लगे मुरशद को कि जब वे तुम्हें गालियाँ देते थे और धक्के मारते थे उस समय हमने कहा था महाराज!

हमें आज्ञा दो, हम भी हाथा पाई कर लें उनके साथ पर आपने मना कर दिया और अब तुम क्यों रोते हो? तब तो हंसते थे मुक्के खाकर भी हंस रहे थे और अब रो रहे हो जब वे चले गये। कहते हैं, ''प्रेमीओं! मैं ऐसे नहीं रोता, मैं तो करतार के पास प्रार्थना करता हूँ कि हे प्रभु! तूने ये आदमी कितने भ्रमित कर दिये अपने नाम से, कितने दूर कर दिये हैं, तू इन पर कृपा कर इन्हें सुबुद्धि दे, इनके अन्दर प्रकाश कर और अज्ञान का अन्धेरा दूर कर दे।'' थोड़ी देर के बाद वे सभी इकट्ठे होकर फिर आते हैं और उनके मुखिया ने बाबा फरीद जी के चरण पकड़ लिए और कहा, ''बाबा! तू कितना प्यारा है। हमने तुझे इतना कुछ कहा पर तूने हमें कुछ भी नहीं कहा। आज हमें जिन्दगी में पहली बार पश्चाताप हुआ है, पहले कभी पश्चाताप नहीं किया। पश्चाताप भी इतना अधिक है कि आज हमने तेरे चरण पकड़ लिये। तू अब कृपा कर और जो कुछ तेरे पास है वह हमें भी दे जिसके सहारे तू इतना शीतल है तेरे पास अति शीतल वस्तु है। हमने तो जब से तुझे धक्के मारे हैं, तभी जले ही जले जा रहे हैं तू कृपा कर।''

सो महाराज कहते हैं, प्रेमियो! ऐसे कहा करो दिल से ***'नानक नामु चढ़दी कला। तेरे भाणे सरबत दा भला।'*** मन से भी किसी का बुरा न चितवो, तन से भी किसी का बुरा मत करो, न शरीर से, न मुँह से फीके कड़वे वचन बोलकर किसी का दिल दुखाओ, सदा मीठा बोलो। इसे अहिंसा कहते हैं। जब तक यह पहला डण्डा धारण नहीं करते जीवन में, हम आगे कैसे चल सकेंगे? पैर तो रखा ही नहीं है, शिखर वाले डण्डे को पकड़ने के लिये उछलते हैं पर वह हाथ नहीं आ रहा पर यदि सीढ़ी पर चढ़ेंगे तभी वह हाथ में आ सकेगा। महाराज जी कहने लगे, ''राजा शिवनाभ! जीवन को सच्चाई में ढालने के लिए जैसे मकान बनाते हैं, उसे नींव से शुरू करते हैं फिर नाम जो अन्दर है सभी में, वह प्रकट हो जाया करता है अन्यथा नहीं होता और मन में नाम बस जाया करता है फिर उसका आनन्द आया करता है वह नाम है जो सहायता करता है जिसके बारे में बार बार गुरबाणी में ज़िक्र आता है।

सो दूसरा हुआ करता है **'सत्य'**। सत्य को समझने का यत्न ही नहीं करते। **'सत्य'** क्या होता है बड़े बड़े नहीं समझते जो नाम जपते हैं, सेवा करते हैं, आश्रमों में रहते हैं, उन्हें पता ही नहीं 'सत्य' क्या होता है। न पता होने के कारण ही, इतना समय इधर लगाने के बावजूद भी आगे को कदम नहीं बढ़ पाता। नीचे क्यों रह जाते हैं खाली क्यों हो जाते हैं? क्योंकि 'सत्य' का जीवन नहीं है; झूठ का जीवन दिखावे का जीवन जीये

जा रहे हैं। यदि सत्य का जीवन हो तो आन्तरिक हृदय में गुण पैदा हो जाते हैं - नाम जपने वाले के।

एक राजा था जिसका नाम था **'चित्रकेतु'**। आप सत्य का जीवन व्यतीत करते थे। कोई उसके पास मुल्म्मा (चमकाना सवारना) नहीं था। जो वचन कह दिया करते थे, उसका पूरी तरह पालन किया करते थे। उन्होंने यह वचन कर दिया प्रतिज्ञा कर ली कि कोई आदमी हमारे पास आए उसे भूखा नहीं जाने देना और तीन दिन से अधिक का भूखा हो, उसकी माँग ज़रूर पूरी करनी, चाहे प्राण भी क्यों न देने पड़ें? जब यह बात सभी जगह फैल गई तो उसका यश बढ़ गया। जब 'सत्य' का यश बढ़ता है साध संगत जी! तो स्वर्ग लोक और इन्द्र लोक जैसे देवताओं के तख्त भी डगमगाने लग जाते हैं क्योंकि कोई सती (सत्य को धारण करने वाला) आ गया संसार में। जती और सती बहुत मान्यता रखते हैं संसार में।

सो राजा चित्र केतू की प्रतिज्ञा से इन्द्र का तख्त डगमगा गया उसने कहा सत्य की परीक्षा लो और उसे गिरा दो अपनी प्रतिज्ञा से, सत्य से क्योंकि उसका तप तेज मेरे से सहन नहीं हो रहा। आसमानों में उसका तेज़ इतना अधिक बढ़ गया है कि सहन नहीं होता। उस समय अग्नि देवता को परीक्षा लेने के लिए भेजा गया कि उनके धर्म को भस्म कर दे, गिरा दे जैसे भी भस्म किया जा सके। अग्नि देवता आकर इसके द्वार के पास बाहर की तरफ बैठ गया। राजा का प्रण था कि मैंने खिलाना है। तीन दिन बीत गये पर वह (अग्नि देवता) कहते हैं जब तक मेरी मांग पूरी नहीं करता मैंने कुछ नहीं खाना पीना। राजा की एक रानी थी और दो पुत्र थे। तीनों को बुलाकर राजा कहता है, देखो! अपनी प्रतिज्ञा है कि किसी को भूखा नहीं जाने देना और तीन दिन से अधिक जो भूखा रहा उसकी मांग भी ज़रूर पूरी करनी है चाहे प्राण भी क्यों न देने पड़ें? कहने लगे धर्म बहुत बड़ी चीज़ होती है प्राण नहीं। यदि धर्म बच जाये तो प्राणों की कोई ज़रूरत नहीं हुआ करती प्राण देने पर भी यदि धर्म बच जाये तो बड़ी बात है, यदि धर्म हार कर प्राण बचते हैं तो प्राणों का कोई मूल्य नहीं फिर तो नरकों में जाना पड़ता है क्योंकि धर्म से विमुख हो गया। तुम अपने धर्म की पालना करो, हम तुम्हारे अनुसारी हैं।

राजा ने बुलाकर कहा, ''ब्राह्मण देवता! क्या शर्त है तेरी जिसके पूरी करने के बाद तू भोजन खायेगा?'' वह कहने लगा ''शर्त मेरी यह है कि

यह राज-पाट, खज़ाना सब कुछ मेरे हवाले कर दो और जो वस्त्र तुमने पहने हुए हैं, ये भी उतार कर केवल कुर्त्ता, पाजामा, साड़ी यही पहने हुये तुम अपने राज्य से बाहर चले जाओ और फिर यहाँ पुनः कदम मत रखना, वापिस नहीं आना राज्य में।'' सो उस समय उसने अपना धर्म समझकर राजा हरिश्चन्द्र की तरह अपना राज्य अर्पण कर दिया, उसके बाद राज्य छोड़कर बाहर चले गये। खाने-पीने के लिये उनके पास कुछ नहीं है, जेब में कोई पैसा धेला नहीं। उस समय बाहर निकल गये राज्य से। जाकर मज़दूरी करने लग गया। एक बन्दरगाह थी गोदी (जहाजी माल घाट) था। वहाँ पर सामान लादने का काम शुरू कर दिया इसने। इसकी जो रानी थी, दो बच्चे थे, वे भी वहीं रहते थे और जो बड़ा सौदागर था, उसने जब रानी को देखा तो मन में लालच आ गया और राजा ने किसी काम के लिये बाहर भेज दिया; पीछे से रानी को जहाज में बिठाकर चलता बना। गरीब था, बेगानों के राज्य में गया हुआ था, कुछ नहीं कर सकता था। इसके बाद ये तीन आदमी रह गये रानी अलग हो गई लेकिन राजा ने धर्म न छोड़ा, न यह कहा कि मेरा ऐसा हाल हो गया क्योंकि मैंने सत्य का पालन किया।

इसके बाद आगे चलकर फिर और परीक्षा हुई। चले जा रहे हैं तीनों और आगे नदी में बाढ़ आई हुई है। एक लड़के को नदी के पार छोड़ आया और वापिस आते आते नदी में पानी बहुत बढ़ गया कि पानी ने उछाल मारी, राजा भी पानी में बह गया। रात हो गई थी। एक लड़का नदी के इस पार खड़ा है, दूसरा उस पार खड़ा है। ये किसी न किसी तरह वहाँ से चले गये, दोनों बच्चे छोटे थे। काफी देर के बाद किसी न किसी तरह से राजा बहुत दूर जाकर किनारे पर जा लगा और सोचा कि मेरे बच्चे तो बह गये होंगे नदी में, पता नहीं क्या हाल हुआ होगा और मैं तो अब अकेला ही रह गया। घूमता फिरता वह एक टापू में चला गया। वहाँ का राजा मर चुका था और वहाँ के वज़ीरों ने फैसला किया कि जो कोई सबसे पहले सामने आयेगा, उसे ही राज गद्दी पर बैठा देंगे? सो वहाँ यह राजा आ गया सामने और जय जयकार होने लगी, इसे राज गद्दी पर बैठा दिया। फिर यह रानी को भी भूल गया, बच्चों को भी भूल गया। कोई पता नहीं चलता कि कहाँ का सौदागर था और किधर चला गया?

समय के चक्कर के साथ ये दोनों बच्चे नौकरी करते करते वहीं इकट्ठे

हो गये, जहाँ गोदी (पत्तन) था, जहाज ठहरा करते थे और एक दिन वही जहाज जिसमें सौदागर रानी को लेकर गया था, उसी स्थान पर आकर ठहरा और जो रानी थी, उसे सौदागर ने शर्त हराने के लिए बहुत लालच दिये - हीरे, लाल, गहने, जवाहरात आदि। वह हमेशा उदास रहती और सौदागर को कहती थी कि मैंने अपना धर्म नहीं छोड़ना चाहे तू मुझे समुद्र में फैंक दे, टुकड़े टुकड़े कर दे, मैंने धर्म नहीं छोड़ना। मैं पतिव्रता स्त्री हूँ, मेरा धर्म मत छुड़ाओ; हमने अपना धर्म पालन करना है।

जब जहाज वहाँ पत्तन पर आकर रुका तो राजा ने पहरा देने के लिये दो आदमी मांगे और राजा के कर्मचारियों ने वही दो लड़के पहरा देने पर लगा दिये। रात गहरी होती चली गई। उस समय छोटे लड़के को नींद आने लगी। इधर रानी हर समय क्योंकि चिन्ता में रहती थी, इसे भी नींद नहीं आती और इसके केबिन (कमरे) के बाहर ही पहरा लगा हुआ है। छोटा लड़का कहने लगा ''अरे भाई! रात बहुत बड़ी हो गई है, नींद आ रही है, कोई आपबीती सुनाओ ताकि मुझे भी कोई शिक्षा मिल जाये।'' दूसरा कहने लगा कि मैं अपनी आपबीती सुनाता हूँ कि मैं राजा 'चित्र केतू' का लड़का हूँ और मेरे पिता ने धर्म पालन करने के लिए, सत्य का पालन करने के लिये, अपना राज-पाट एक ब्राह्मण को दे दिया क्योंकि उसने प्रतिज्ञा की हुई थी कि यदि कोई आदमी तीन दिन तक भोजन नहीं करेगा तो मैं अपने प्राणों की आहुति देकर भी उसे भोजन खिलाऊँगा। फिर हम गरीब बन गये और मेहनत मज़दूरी करते रहे। जो मेरी माता थी, उसे उठा कर ले गया एक सौदागर और उसका अभी तक पता भी नहीं चला कहाँ है, कहाँ होगी? और पिता जो मेरे थे वह नदी में बह गये।

यह सुनकर छोटे लड़के ने कहा कि तू तो मेरा भाई हैं; मैं भी उसी राजा का लड़का हूँ अमुक नदी पर हमारा बिछुड़ना हुआ था। दोनों भाई मिल गये बहुत खुशी हुई और अन्दर रानी ने भी सुन लिया कि ये तो मेरे ही पुत्र हैं जो बाहर खड़े बातें कर रहे हैं। उस समय उसने शोर मचा दिया ''चोर चोर, मेरे गहनों का डिब्बा चोरी कर लिया.........।'' ये दोनों लड़के गिरफ्तार हो गये। रानी कहने लगी कि मैंने तो राजा के सामने ब्यान देना है, छोटे अफसरों के सामने कोई ब्यान नहीं देना। सो राजा की कचहरी में दूसरे दिन पेश कर दिये तो कहने लगी कि मेरे ब्यान ये हैं कि पहले इन दोनों लड़कों की दास्तान सुनी जाये, फिर मैं बताऊँगी। उनकी

कहानी को जब सुना तो राजा ने भी देख लिया कि ये तो मेरे ही पुत्र हैं। सारे एक ही जगह इकट्ठे हो गये। सौदागर को सज़ा मिली। उसी समय वहाँ अग्नि देवता प्रकट हो गये और कहने लगा, ''राजन! तेरे सत्य की मैंने परीक्षा ली थी और तू पास हो गया है। अब तू वह राज्य भी सम्भाल और यह राज्य भी तेरा है।'' ऐसे पुरुष 'सत्य प्रतिज्ञी' कहलाते हैं। सत्य की प्रतिज्ञा किया करते थे। बहुत कठिन है साध संगत जी! सत्य की प्रतिज्ञा करना।

यह दूसरा डण्डा है। जब तक हम सत्य प्रतिज्ञी नहीं होते, बात नहीं बनती। हम तो मामूली मामूली बातों पर झूठ बोलते हैं। झूठ बोलने वाला आदमी किसी तरह से परमेश्वर के भजन में नहीं लग सकता क्योंकि उसे तो हर हालत में सत्य प्रतिज्ञी होना ही पड़ेगा। सत्य का जीवन अपनाना पड़ेगा। महाराज ने ऐसा फ़रमान किया है -

***सचु ता परु जाणीऐ जा रिदै सचा होइ।***
***कूड़ की मलु उतरै तनु करे हछा धोइ॥*** *पृष्ठ - 468*

जब तक हृदय में सच्चाई नहीं आती, सत्य का जीवन नहीं अपनाता कैसे पार हो सकता है, पार नहीं हो सकता। बहुत उदाहरण है इन बातों के।

एक बार की बात है कि ऐसे वचन चल रहे थे - कृष्ण महाराज जी के अर्जुन के साथ। कृष्ण महाराज कहने लगे, ''अर्जुन! बन्दगी करने वालों को '**सत्य प्रतिज्ञी**' होना चाहिए।'' वह कहने लगा ''महाराज! मैंने भी कई बार सत्य प्रतिज्ञा का इरादा किया है पर मुझे यह बताओ कि हम तुम्हारे पास रहते हैं, तुम हमारे पास रहते हो और सोलह कला सम्पूर्ण अवतार हैं आप, फिर हम दुख क्यों उठाते हैं?'' वह कहने लगे, ''दुख के कुछ कारण हुआ करते हैं। 'नाम' की प्राप्ति न हो तो संसार दुखी होता है।'' ऐसा महाराज का फ़रमान है -

***धारना - नाम बिनां दुख पावे, पिआरे, नाम बिना दुख पावै -2, 4***

***हरि के नाम बिना दुखु पावै।***
***भगति बिना सहसा नह चूकै गुर इहु भेदु बतावै॥*** *पृष्ठ - 830*

गुरू महाराज कहते हैं कि यह भेद की बात बताते हैं कि नाम के बिना सुख की प्राप्ति नहीं होती -

***सुन्दर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे।***
***ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे।***
***मन इछे सुख माणदा किछु नाहि विसूरे।***
***सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे।***

*बिनु हरिनाम न सांति होइ कितु बिधि मनु धीरे॥ पृष्ठ - 707*

परमेश्वर के नाम के बिना शान्ति नहीं आया करती। नाम प्राप्त होता है गुणों के कारण। सो कृष्ण महाराज कहने लगे -

''अर्जुन! तुम सत्य वादी नहीं, इसलिये तुम्हें दुख प्राप्त होते हैं।''

''अच्छा महाराज! मैं आपकी शरण में हूँ। मैं आज से प्रण करता हूँ कि मैं आज से सत्यवादी रहूँगा।''

''क्या करेगा?''

''महाराज! मैं प्रण करता हूँ कि जितनी देर आपके साथ रहूँगा, पहले आपको खिलाकर फिर मैं भोजन किया करूंगा।''

''यह प्रण तेरे से पूरा नहीं हो सकेगा; यदि मैं व्रत रख लूँ?''

''जी, मैं भी रख लूँगा।''

''अच्छा! अब पाँच व्रत लगातार आ रहे हैं।''

उस युग में व्रत आदि हुआ करते थे, आज के युग में medically (डाक्टरी तौर पर) तो होते हैं लेकिन ये कोई फल देने में समर्थ नहीं होते -

***तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु।***
***नानक निहफल जात तिहि जिउ कुंचर इसनानु॥*** *पृष्ठ - 1428*

क्योंकि गुमान (अभिमान) कलयुग में बहुत बड़ी ताकत है, यह किसी का पीछा नहीं छोड़ती, ये फल नहीं लगने दिया करती।

कहने लगा, ''महाराज! यदि आप व्रत रखोगे तो मैं भी व्रत रखूँगा।'' कहते हैं, ''अच्छा! कल से ही व्रत है हमारा।'' व्रत रखा पर पहला दिन ही मुश्किल हो गया कि कुछ नहीं खाने को मिला। लगातार पाँच दिन का व्रत है। दूसरा दिन हुआ, सोचने लगा कि यदि भगवान कहीं इधर उधर जायें तो मुँह में कुछ डाल लूँगा। कुछ यत्न भी किया, पर वह अवसर ही न दें इसे। अन्त कहने लगे, ''अर्जुन! चलो बाहर चलें मैदान में।'' और आप जल लेकर चले गये। यह अकेला रह गया। वहीं पर मक्की का खेत था और वह मक्की की छलियाँ तोड़कर खाने लगा कच्चे ही। इतने में ही प्रकट हो गये भगवान कृष्ण और कहने लगे -

''तू सत्यवादी है, पहले ही खाने लग पड़ा?''

''मुझे याद नहीं रहा, भूख ही इतनी लगी हुई थी।''

''फिर सत्यवादी तो न हुआ।''

''अब की बार माफ कर दो, आगे से सत्यवादी रहूँगा।''

''अच्छा, तेरी मर्जी।''

जाते-जाते कहने लगे ''अर्जुन! यह हमारे पास वैजयन्ती माला है। हमने शौचादि के लिये जाना है तुझे यह सौंपते हैं, तू इसका पूरा पूरा ध्यान रखना। प्राण चले जायें पर यह न गुम होने पाये।'' कहता है, ''ठीक है महाराज! मैं वचन देता हूँ कि प्राणों की बलि देकर भी इसकी रक्षा करूँगा।'' भगवान काफी देर तक आये ही नहीं तो यह सोचता है कि मैं स्नान कर लूँ पहले पहले, फिर इनका स्नान करवाना है। वह माला रखकर स्नान करने लग गया और धनुष बाण भी रख दिया। अचानक वहाँ शेर आ गया। अब यह पानी के अन्दर है, डरता है कि कोई चीज़ भी ईंट पत्थर आदि कुछ भी इसके पास नहीं है, अकेली माला ही इसके पास पड़ी थी। वही उसने फैंक कर मारी जो उसके मुँह पर जा लगी और वह उसी तरह ही मुँह में लेकर चला गया और जब धनुष बाण लेकर उसे मारने चला तो वह शेर मिला ही न।

इतने में भगवान आ गये ''कहते हैं, हमारी माला कहाँ है?'' चुप, शर्म के मारे सिर झुकाये बैठा है, कहते हैं, ''तू सत्य प्रतिज्ञी है?'' तूने कहा था कि प्राण चले जायें, मैं माला की रक्षा करूँगा। पर प्राण तो तेरे कायम हैं, माला है नहीं हमारी।'' कहता है ''महाराज! कोई ऐसा भी होता है जो प्राणों की बलि देकर भी रक्षा करता है?'' कहते हैं ''हाँ, चल तुझे दिखाएं।'' एक जगह पर चले गये जाकर कहने लगे, ''प्यारे! हमने भोजन करना है, दो आदमी हैं।'' उसकी दो स्त्रियाँ थी। उसने भोजन तैयार करवाया। भगवान कहने लगे -

''हमारे साथ आकर भोजन कर।''

''महाराज! आप कर लीजिए पहले।''

''हम नहीं खायेंगे, जब तक तू नहीं आयेगा।''

''अच्छा महाराज! मैं ऊपर जाकर आता हूँ, चौबारे में।''

ऊपर गया, वहाँ जाकर खीरा चाट कर मर गया, वापिस नहीं आया। कृष्ण

महाराज ने स्त्रियों को कहा कि वह तो वापिस नहीं आया। कहने लगी कि ''महाराज! देखकर आती हूँ। ऊपर गईं तो देखा कि वह तो मरा पड़ा है। कहने लगीं -

''जी, वह तो प्राण छोड़ गये।''

''उसने प्राण क्यों त्याग दिये?''

''महाराज! आप समरथ पुरुष हैं, इससे आप ही पूछ लो।'' कृष्ण महाराज स्वंय ही ऊपर चले गये, छींटा मारा जल का, जीवित कर दिया। कहते हैं -

''भगत जी! आपने प्राण क्यों त्याग दिये?''

''महाराज! मेरी प्रार्थना बहुत प्यार के साथ श्रवण करना। वह यह है कि मैंने इन स्त्रियों के हाथ के बनाये भोजन को न खाने का प्रण किया हुआ था कि मैं इनके हाथ का भोजन नहीं खाऊँगा।''

''क्यों?''

''ये तो जमादारिन हैं।''

''फिर तुमने हमारा ही धर्म-कर्म भ्रष्ट करना था?''

''नहीं महाराज! हैं तो ये पटरानियाँ पर मेरे लिये जमादारिन हैं।''

''वह कैसे?''

कहने लगा कि ''महाराज! मेरा बहुत छोटी उम्र में ब्याह हो गया था। मैं बाहर विदेश चला गया और मेरे पिता जी इसे ले आए, जो बड़ी है। जब इसे मेरे आने का पता चला तो इसे बहुत चाव हुआ। भोजन बनाने के लिये, चौका (रसोई) आदि लीपने के लिये गोबर लेने बाहर गई, जब परात में गोबर भर लिया तो सिर पर उठवा कर रखने वाला कोई नहीं था। इतने में मैं पहुँच गया, मुझे कहती है ''भाई! यह मेरे सिर पर रखवा दे, तेरा बहुत बड़ा पुण्य होगा।'' और जब मैं इसके सिर पर रखवाने लगा तो कहती है ''देखना! मेरे साथ स्पर्श मत करना। मैं पर पुरुष को स्पर्श नहीं करती और तेरे लिये मैं जमादारिन हूँ, ऐसे समझना।'' मैंने कहा कि ''मेरे लिये तू जमादारिन है।'' मैंने परात उठवा कर उसके सिर पर रखवा दी। जब घर आया तो मैं इसे मिला, मैं हैरान हो गया कि यह तो वही है। अब क्योंकि मैं प्रतिज्ञा कर चुका था, मैंने इसे कहा, ''तू मेरे पास मत आना, तेरे हाथों बनी हुई रोटी मैंने नहीं खानी क्योंकि मैं प्रतिज्ञा कर

चुका हूँ।''

इसके बारे में उसके पिता जी को भी पता चला तो उसने इसकी छोटी बहन के साथ विवाह करने की पेशकश की। जब शादी हुई, उस समय माता जी कहने लगी, ''बेटा! जैसे तू बड़ी लड़की को रखता है, उसी तरह से इसे भी रखना।'' मैंने कहा, ''माता! यह वचन मत ले तू मुझ से।'' कहती है ''नहीं बेटे! दोनों को एक समान समझना।'' जब बार बार मेरे पीछे पड़ गई और हठ न छोड़ा तो मैंने कह दिया ''जा माता! जैसा तूने कहा वैसा ही होगा। उसे तो मैंने जमादारिन कहा है, तो इसे तभी बराबर रख पाऊँगा यदि इसे भी जमादारिन कहूँगा?''

सो महाराज! इसलिये मैंने अपना प्रण नहीं तोड़ना था मेरी प्रतिज्ञा थी। मैं अपने प्राण त्याग देने, प्रतिज्ञा भंग होने से श्रेष्ठ समझता था। इसलिये मैंने अपने प्राण त्याग दिये। कृष्ण महाराज कहते हैं ''ठीक है, जीवित रहते ही प्रतिज्ञा हुआ करती है, अब तू मरने के बाद पुनः जीवित हुआ है अब हमारा वचन है कि इसके हाथों से तू खाना पीना शुरू कर दे।

कृष्ण महाराज कहते हैं ''क्यों अर्जुन! तू तो हमारी वैजयन्ती माला की रक्षा न कर सका। इसे देख ले अपना प्रण पालने के लिए अपनी जान दे दी। इसे 'सत' कहते हैं, साध संगत जी! दूसरा डण्डा। उदाहरण एक नहीं है, अनेक हैं।

राजा हरिश्चन्द्र को देख लो। सपना ही आया था उसे। सपने में ही दान किया था राज्य, और विश्वामित्र राज्य लेने के लिये आ गया। राज्य दे दिया फिर कहता है कि अब मुझे दक्षिणा दे। सो दक्षिणा देने के लिए अपने आप को बेचना पड़ा। उसे निखास (मनुष्यों के क्रय विक्रय का बाजार) पर जाकर बिकना पड़ा -

*अउगणु जाणै त पुंन करे किउ किउ नेखासि बिकाई॥*

*पृष्ठ - 1344*

कहते हैं, वहाँ जाकर क्यों बिकता? सत्य का पालन करने के लिये कष्ट..........पत्नी कहाँ है, बच्चा कहाँ है? बच्चा मर जाता है, दाह संस्कार नहीं करने देता।

सो इसे 'सत्य का जीवन' कहते हैं। यह जीवन हमारे अन्दर से शत प्रतिशत निकल गया है। अब तो बहुत ही आराम से झूठ बोलते हैं। हर बात पर झूठ बोलने की कोशिश करते हैं। एक तरफ तो हम झूठ

बोलते हैं और एक तरफ हम कहते हैं कि सेवा का फल मिल जाये; बिल्कुल नहीं मिलेगा, साध संगत जी! ऐसा कहा है महाराज ने यदि वह 10 कदम ऊपर को चलता है तो 20 कदम पीछे हट जाता है अर्थात 10 कदम और down (नीचे) चला जाता है, सेवा का मूल्य नहीं बन पाता, नाम जपे हुये का मूल्य नहीं पड़ता। सो इस प्रकार सच को पालना है -

*सचु ता परु जाणीऐ जा रिदै सचा होइ।*
*कूड़ की मलु उतरै तनु करे हछा धोइ।*

इसके साथ झूठ की मैल उतर जाती है और मन निर्मल हो जाता है तथा नाम का वास हो जाया करता है।

तीसरा हुआ करता है '**चोरी**'। चोरी दो प्रकार की बताई थी - एक तो यह है कि किसी की चीज़ वस्तु छुपा लेना, एक हुआ करती है मन की चोरी। ऐसी बातें करना जो किसी को पता न चले, बातें भी किये जाना पर पता लगने से डरते भी रहना। यह मन की चोरी हुआ करती है। ऐसी हालत में भी नाम नहीं चल सकता।

चौथा हुआ करता है, जिसे '**ब्रह्मचर्य**' कहते हैं। इस पर भी काफी विचार किया था। पाँचवी बात जो पिछले सप्ताह विचार की थी, वह है '**धीरज**'। धीरज की महाराज जी ने बहुत प्रशंसा की है बाणी में भी आता है। धैर्यवान पुरुष ऐसा है -

*आपद संपद आतप सीता। बिकल न होइ डुलाए चीता।*
*पृष्ठ - 108 श्री गु. पु. प्र. सू. ग्रंथ*

चाहे धूप हो, चाहे ठण्ड है, चाहे विपदा आ गई हो, चाहे सम्पत्ति नष्ट हो गई हो, डांवाडोल न हो। जैसे मर्ज़ी हालात आ जायें, उन्हीं मैं धैर्य से रहे, उसे धैर्यवान पुरुष कहते हैं। इसके लिये बाणी में ऐसा फ़रमान आता है -

*धारना - रुखां वरगा जेरा, पिआरे, लोड़ींदै दरवेशां नूं - 2, 2*
*लोड़ींदै दरवेशां नूं, लोड़ींदै दरवेशां नूं - 2, 2*
*रुखां वरगा जेरा पिआरे,......................।*

*फरीदा साहिब दी करि चाकरी दिल दी लाहि भरांदि।*
*दरवेसां नो लोड़ीऐ रुखां दी जीरांदि॥ पृष्ठ - 1381*

वृक्षों की कोई टहनियाँ काटता है, कोई ईंट पत्थर मारता है, उसने छाया भी देनी है और फल भी देना है। इसी प्रकार महात्मा होते हैं। कोई निन्दा करता है, कोई ईर्ष्या करता है, कोई अपमान करता है, बेअन्त प्रकार के

आदमी मिलते हैं लेकिन कितना बड़ा दिल (जिगर) होता है उनका।

पिछली बार प्रार्थना की थी कि गुरू तीसरे पातशाह महाराज तख़्त पर बिराजमान थे। दातू जी ने आकर ज़ोर से लात मार कर नीचे गिरा दिया। वृद्ध शरीर था। कितनी चोट लगी होगी गिरकर। गिरकर देखो, मन में क्या विचार आयेंगे हमारे? और फिर इतने समरथ पुरुष - यदि एक वचन भी मुख से निकाल दें तो सृष्टि का नाश कर दें। इतने समरथ थे कि आप चले जा रहे हैं, एक हड्डी से पैर लग गया। सिखों ने जाकर गुरू अंगद साहिब जी के पास प्रार्थना की कि महाराज! हड्डी के साथ पैर तो क्या लगना था बाबा अमरदास जी का कि कोई रूह निकल कर पहले तो काली हुई फिर सफेद होकर स्तुति करती हुई चली गई। महाराज कहते हैं, बाबा अमरदास, तेरे रोम रोम में प्रभु का निवास प्रत्यक्ष रूप में हो गया है और अब तू खडूर साहिब से गोइन्दवाल को जायेगा, कितने ही मरे हुये जीव परमेश्वर के हुक्म अधीन तेरे चरणों के साथ स्पर्श करेंगे - कीड़े मकौड़े आदि और वे सब जीवित हो जायेंगे। भाई! अब हम ही तेरे दर्शन करने आ जाया करेंगे तू मत आना।

सो इतनी शक्तियों के मालिक होते हुए आप नीचे गिर गये, कुछ कहा नहीं, चरण पकड़ लिये। वह फीका बोलते हैं, बुरी बातें कहते हैं, बहुत ताने उलहाने मारते हैं कि तू दास होकर तेरा साहस कैसे हुआ गद्दी पर बैठने का हमारे होते हुए, हम गुरू पुत्र हैं। आपके अन्दर कोई क्रोध नहीं आता, नम्रता ही नम्रता है, धैर्य हद से अधिक है और ऐसे लगता है जैसे धैर्य का घर ही हैं। आपने फ़रमान किया -

***यां ते अधिक सरीर कठोरा। तुमरो चरन म्रिदुल नहिं थोरा॥***

***पृष्ठ - 1462 (श्री गु. प्र. सू. ग्रंथ)***

हे गुरू साहिबजादो! मेरा शरीर बड़ी उम्र होने के कारण बहुत कठोर है, आपके चरण कितने नर्म हैं, आपकी उंगलियाँ कितनी नर्म हैं और ये बज्र शरीर के साथ लगी हैं, पातशाह जी! कहीं ऐसा तो नहीं हुआ कि आपको कोई चोट आई हो?

***हुयो होइगो कशट महाना। छिमहु भयो अपराध अजाना।***

***पृष्ठ - 1462 (श्री गु. प्र. सू. ग्रंथ)***

हे गुरू सुत जी! आप तो सदा ही पूजनीय हैं। ठीक ही किया आपने मुझे सजा दी, मैंने आपका आदर नहीं किया था। आप मुझे सन्देशा भेज देते, मैंने बाहर आकर आपका स्वागत करना था। कितनी विनम्रता है, कितना धैर्य है। कोई भी वचन मुख से नहीं निकला। यदि कह देते, उसी समय

पूरा हो जाना था। क्योंकि गुरू नानक का निवास था।

इस प्रकार गुरू दशमेश पिता फ़रमान करते हैं कि प्यारे! यदि बन्दगी करनी है, सत्य के मार्ग पर चलना है तो अपने तन को धीरज का घर बना लो -

*धारना - बणा लै पिआरिआ, धीरज, धाम, तन आपणा - 2, 2*
*धीरज धाम तन आपणा, धीरज धाम तम आपणा - 2, 2.*
*बणा लै पिआरिआ, धीरज धाम................।*

*धंनि जीउ तिह को जग मैं मुख ते हरि चित मैं जुधु बिचारै।*
*देह अनित न नित रहै जसु नाव चड़ै भव सागर तारै।*
*धीरज-धाम बनाइ इहै तन, बुधि सु दीपक जिउं उजीआरै।*
*गिआनहि की बढनी मनहू हाथ लै कातरता कुतवार बुहारै॥*

*कृष्णा अवतार*

***'धीरज - धाम बनाइ इहै तन'*** धीरज का धाम बना ले इस शरीर को, जल्दी मत कर, frustrate (निराश) मत हो, उतावला मत बन, frustration मत ला मन में - गलत काम हो जाते हैं। ***'बुधि सु दीपक जिउं उजीआरै'*** बुद्धि में जैसे दीपक जलता है ऐसे ही गुरू के ज्ञान का प्रकाश हो जायेगा फिर अन्धेरा इसमें से निकल जायेगा। जितने भी बड़े बड़े महान व्यक्ति हुए हैं, सभी धैर्यवान हुए हैं, उतावले नहीं हुए।

हम जब छोटे थे पढ़ा करते थे तो किताब के एक पाठ में लिखा हुआ था कि किसी प्रेमी ने बहुत ही प्यार के साथ कोई कुत्ता पाला। एक दिन जब वह किसी कार्य वश बाहर गया तो घर में सोये हुए बच्चे के पास उस कुत्ते को छोड़ गया। बाद में वहाँ बघिआड़ आ गया। बच्चे को उठाने के लिये तो कुत्ते ने खूब लड़ाई की बघिआड़ से और लहू-लुहान हो गया। बघिआड़ को मार दिया और सोते हुये बच्चे को बचा लिया और स्वंय दरवाज़े के सामने बाहर आकर मालिक की प्रतीक्षा करने लगा। जब मालिक ने आकर देखा तो पालने में तो बच्चा नहीं और कुत्ते की तरफ देखा, लहू-लुहान हुआ पड़ा है। सोचता है कि कुत्ते ने मारकर खा लिया मेरा बेटा। उसी समय उसने तलवार निकाली और कुत्ते के दो टुकड़े कर दिये। आगे गया तो हैरान हो गया देखकर कि यह तो बघिआड़ मरा पड़ा है और बच्चा खेल रहा है। रोया फिर बहुत कि मैंने कितनी जल्दी की। उतावले आदमी के सामने गड्ढे होते हैं। सो धैर्य रूहानी गुण है। इसलिये महाराज कहते हैं कि धीरज का घर बना

ले इस तन को, उतावला मत हो।

एक महान दार्शनिक 'सुकरात' हुआ है यूनान में। वह विवाह नहीं करवा रहा था। माँ बाप ने बहुत ज़ोर लगाया कि तू शादी कर ले। अन्त में जब कसमें आदि खांई तो वह कहता है फिर मैं अपनी मर्ज़ी से पत्नी का चयन करूँगा। कहते हैं यह शर्त हमें तेरी मन्जूर है। उस समय उसने कहा कि मुझे ऐसी पत्नी चाहिए जो मेरे साथ दिन में लड़ती रहा करे, कभी भी खुश होकर न बोले, कदम कदम पर मुझे रोकती रहे और लड़ती रहे। यह सुनकर सब हैरान हो गये कि यह कैसा कलह कलेश का घर बसाने चला है। आखिर ऐसी लड़की मिल गई जिसने उसे कभी भी spare (लिहाज़) नहीं किया और इधर इसे कभी भी गुस्सा न आता, धैर्य में रहता, दिन रात लिखता रहता। बहुत सिद्धान्त हैं सुकरात के, बहुत कुछ लिखा है इसने।

एक दिन उसकी पत्नी के मन में आया कि आज मैंने इसका धैर्य तोड़कर ही छोड़ना है, क्यों नहीं इन्हें गुस्सा आता? साथ की पड़ोसिनों ने कहना, देखो, वह कितना अच्छा है कि तू कितना इसके साथ झगड़ती है, कदम कदम पर टोकती है, फीका बोलती है पर मज़ाल है कि अपने चित्त की शान्ति खो जाये। वैसे ही रहता है, बोलता ही नहीं, चुप करके सभी कुछ सुनता रहता है। वह कहने लगी, मैंने आज तुम्हें दिखाना है कि वह कैसे गुस्सा नहीं करता। मैंने ही आज तक इन्हें कुछ नहीं कहा। उसने घर का सारा कूड़ा इकट्ठा करके एक बर्तन में डाल लिया और छत पर चढ़ गई। जब वह बाहर से आया तो इसने सारा कूड़ा इसके सिर पर फैंक कर मारा। वह जितनी गन्दगी थी, उसके कपड़ों पर गिर गई। उस समय वही अवसर था कि गालियाँ निकालता, इसे गुस्सा आता, पर हुआ क्या? ऊपर की ओर देखा, हंस पड़ा और बोला, मैंने तो यह समझा था कि गर्ज़ने वाले बादल कभी बरसा नहीं करते; आप तो गर्जती भी हैं और बरसती भी हैं; दोनों बातें करती हो। इतना बड़ा उसका दिल था।

एक बादशाह हुआ है इब्राहिम आदम। छह वर्ष कबीर साहिब की सेवा करने के बाद एक दिन माता लोई ने कहा कि आप इसे 'नाम' दे दो। कबीर साहिब कहने लगे ''नाम इतनी जल्दी नहीं दिया जाता, नाम का ग्राहक होना चाहिए पहले। जब तक मूल्य न दे सके, तब तक नाम देना ऐसे ही होता है, कोई मतलब नहीं होता? नाम का ग्राहक कोई कोई

होता है, सारा संसार नहीं हुआ करता।'' कहने लगी, ''देखो! सेवा करता है साधु संगतों की - बादशाह होकर भी।'' कहते हैं ''यह अभी बादशाह है अभी सेवादार नहीं बना।'' कहने लगे ''ऐसे करना कि घर का कूड़ा कर्कट डाल लेना तसले में और जब यह नहा धोकर आये उसके सिर पर फेंक देना फिर बताना क्या कहता है।''

जब वह स्नान करके आया गंगा में दोपहर के समय तो माता ने कूड़ा उसके सिर पर फैंक दिया। उस समय घबरा गया और कहता है ''मैं होता न अपने राज्य में, फिर बताता कैसे दूसरों पर कूड़ा फैंकते हैं?'' कबीर साहिब कहते हैं, ''क्या कहता था?'' माता जी कहती हैं, ''ऐसे कहता था.........।'' कहते हैं ''इसका तन अभी धीरज नहीं बना, धैर्यवान नहीं हुआ अभी अन्दर से। अभी इसे अभिमान है बादशाहत का। अभिमान जिसका टूट जाता है, उसमें धीरज आ जाया करता है, दूसरे में नहीं आता। हउमै जो है, यह धीरज नहीं आने देती। हउमै क्रोध में आती है और जिसने हउमै का नाश कर लिया, उसे क्रोध नहीं आया करता।'' सो इस तरह छह वर्ष और बीत गये, 12 वर्ष हो गये। कबीर साहिब कहते हैं अब परीक्षा ले इसकी।'' उसी तरह फिर किया। वहीं पर ही खड़ा हो गया और कहने लगा, ''माता! तूने तो मेरे सिर में केसर डाल दिया।'' खुश होकर नाचने लग पड़ा।

सो महाराज दशमेश पिता कहते हैं ***'धीरज - धाम बनाइ इहै तन बुधि सु दीपक जिउं उजीआरै।'*** इस बुद्धि में उजाला करो - धीरज धाम बनाकर। हम तो ज़रा-ज़रा सी बातों पर क्रोधित हो उठते हैं फिर नाम कैसे चल सकता है कैसे अन्दर वास कर सकता है? सो यह जो रहत थी, पाँचवी थी **'धीरज'।**

गुरू नानक पातशाह कहने लगे, राजन! छठी चीज़ होती है 'क्षमा'। क्षमा वह हुआ करती है कि अपने में बल है, शक्ति द्वारा किसी का बुरा कर सकते हैं, जिसने हमारा बुरा किया है लेकिन बल होते हुये भी नेकी करना यह क्षमा कहलाती है -

***खशटम यम है खिमां सुहाई।***
***मन महिं छोभ न कबहि उठाई॥*** ***पृष्ठ-108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)***

मन में गुस्सा आना ही नहीं, क्रोध आए ही न -

***भला कि बुरा बखानै जोइ। सहिन सील मन सभ ते होइ।***
***पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रंथ)***

लोग चाहे बुरा कहे या अच्छा, कुछ भी कहे जाये, सहनशील रहना। सो यह रूहानी गुण है जिसे क्षमा कहते हैं। यह भलों में हुआ करती है बुरे लोगों में नहीं; शक्तिशालियों में हुआ करती है।

गुरू अंगद साहिब जी - महाराज गुरू नानक साहिब जी के बाद आपने खडूर साहिब निवास कर लिया। संगतें दूर दराज़ से आती हैं और सत्संग सुनती हैं पर उसी गाँव के जो आदमी थे, गाँव में रहते हुए भी जानते नहीं थे कि यह गुरू हैं। इनमें कितनी शक्ति है। वह तो यही समझते थे कि खत्रियों के घर मेहमान आया हुआ है। बहुत लोग इसके पास आते हैं ये क्या करने आते हैं? लेकिन भाग्य में नहीं था कि वे संगत कर लें।

उसी गाँव में एक तपस्वी रहता था। वह चालीसे रखता रहता था, उससे उसके अन्दर छोटी-मोटी शक्ति आ गई, किसी के दिल की बात बता देना, किसी का जुआक (बच्चा) बीमार कर देना, किसी का ठीक कर देना, किसी की भैंस ने दूध देने लग जाना, किसी की भैंस को दूध देने से हटा देना, ऐसे नाटक चेटक किया करता था -

***नाटक चेटक कीए कुकाजा। प्रभ लोगन कहि आवत लाजा।***

***बचित्र नाटक***

पर उसके अन्दर गुरू महाराज के लिये इतनी ईर्ष्या थी कि हर समय जलता रहता था। कहता देखो! गृहस्थी है, घर में रहता है इसका क्या अधिकार है कि लोग इसे आकर शीश झुकाएं और इसके चरणों में माया भेंट करें, राशन भेंट करें, हालांकि महापुरुषों को कोई ज़रूरत नहीं होती केवल संसार का भला करने हेतु उनसे दान निकलवा लिया करते हैं, अपना नहीं कुछ भी करवाया करते।

बहुत महात्मा हैं अच्छा आदमी देखकर कह देते हैं, भाई तू दान नहीं करता। लंगर कर दे ताकि विघ्नों का नाश हो जाये। सो तपी कहता है ''देखो! जो इसके पास आते हैं, वे मेरे पास नहीं आते। अन्दर से जानते हैं कि वे बहुत ऊँचे हैं पर बाहर से कहना नहीं चाहते कि यह कुछ नहीं है; गृहस्थी लोग ऐसे ही बाहर से आकर इसे शीश झुकाते रहते हैं। सो बहुत ईर्ष्या है इसके अन्दर और निन्दा भी करता रहता है। जो उसके पास जाते हैं - गाँव के जाट खैरे (हितैषी) गोत्र के - भेंट लेकर, वे उसके सेवक हैं लेकिन सेवक वगैरा नहीं होते दुनियाँ में, यह तो स्वार्थ के बन्धे होते हैं। जहाँ काम बन जाये वहीं जाना और जहाँ न बने, वहाँ पर जाना छोड़ देते हैं। सो यह तपी हर समय मन में ईर्ष्या रखता।

एक बार ऐसा हुआ कि बरसात मौसम से पहले शुरू हो गई और लोगों ने फसलें बीज दीं। चरी, मक्की, कपास आदि के बीज बो दिये। उसके बाद काफी समय बीत गया, वर्षा न हुई और वे इस तपी के पास गये, जाकर कहने लगे, ''तपस्वी जी! हम तो आपके चेले हैं, हर समय आपको मानते हैं, गुड़ भी लाकर देते हैं, कपास भी लाकर भेंट चढ़ाते हैं, गेहूँ मक्की निकालते हैं तब भी, भैंस जब बछड़ा बछिया को जन्म देती है, दूध पीने से पहले आपके लिये लेकर आते हैं, घी इकट्ठा करते हैं तो भी पहले आपके चरणों में भेंट चढ़ाते हैं। महाराज! आप इसलिये हो कि हमारी रक्षा करो और हमारी रक्षा तब होती है यदि फसल अच्छी हो जाये अन्यथा हम तो भूखे मर जायेंगे। कहाँ से दान करेंगे यदि फसल ही नहीं होगी?'' उस समय उसे मौका मिल गया। कहने लगा -

''मैं क्या करूँ? गलती तो तुम्हारी है, मैं कुछ नहीं कर सकता।''

''हमें बताओ, हम गलती दूर करेंगे।''

''गलती क्या? तुम्हारी आँखों के सामने है तुम्हें दिखाई नहीं देता?''

''महाराज! बताओ तो सही, क्या बात है?''

''अब तुम्हें बोलकर ही बताऊँ? तुम अन्धे हो? तुम्हें नहीं पता चलता कि वह खत्री यहाँ बैठा शीश झुकवाये जाता है गृहस्थी आदमी और कितना बड़ा दोष लगा है इलाके को कि बरसात होनी ही बन्द हो गई। उसने बरसात बन्द करवाई है।''

इसे **'ईर्ष्या'** कहते हैं साध संगत जी! ईर्ष्या मन में स्वाभाविक बीमारी हुआ करती है। किसी का प्रताप न सह सकना, किसी की वाह-वाह न सह सकना, किसी की तरक्की न सहन कर सकना, किसी के चलते हुये काम को ज़र (सहन) न सकना, किसी के प्यार को देखकर सहन न कर सकना इसे ईर्ष्या कहते हैं। ईर्ष्या वाले आदमी का जन्म महाराज कहते हैं बर्बाद होकर चला जाता है -

***धारना - रोगी ईरखा दा हो के मना मेरिआ,***
***जनम गवा लिआ आपणा - 2, 2***
***मेरे पिआरे, जनम गवा लिआ आपणा - 2, 2***
***रोगी ईरखा दा हो के, मना मेरिआ,.............................।***

***सुआद बाद ईरख मद माइआ।***
***इन संगि लागि रतन जनमु गवाइआ॥*** *पृष्ठ - 741*

कितना हीरे जैसा अमोलक जन्म था, ईर्ष्या के साथ मिलकर बर्बाद कर लिया। किसी के पास कम हो जाना, किसी के पास अधिक हो जाना यह तो परमेश्वर की मौज़ है। किसी को भण्डारे बख़्श देता है और कोई कोशिश करता है फिर भी नहीं मिलता। ऐसा फ़रमान करते हैं -

*धारना - पिआरे इकनां नूं पलंघ निवार दे,*
*इकनां नूं है न गोदड़ी - 2, 2*
*मेरे पिआरे, इकनां नूं है ना गोदड़ी - 2, 2*
*पिआरे, इकनां नूं पलंघ निवार दे,...............।*

*दातै दाति रखी हथि अपणै जिसु भावै तिसु देई। पृष्ठ - 604*

यह तो उसके अपने हाथ की दात है किसी को बहुत दे देता है किसी को कम; किसी को बच्चों की दात दे देता है किसी को पैसे की दात दे देता है, किसी को ज़मीन जायदाद तो किसी को ऊँचे पद दे देता है, किसी का लड़का पढ़ने में निपुण हो जाता है, किसी का उच्च पद पर नौकरी लग जाना है, किसी का कारोबार अच्छा चल पड़ता है। महाराज कहते हैं क्यों दुखी होता है -

*अहिरख वाद न कीजै रे मन। सुक्रितु करि करि लीजै रे मन॥*
*पृष्ठ - 479*

यह तो वाहिगुरू की दात है -

*काहू दीन्हे पाट पटंबर काहू पलघ निवारा।*
*काहू गरी गोदरी नाही काहू खान परारा॥ पृष्ठ - 479*

एक तो निवार के पलंगों पर सोते हैं और एक वे हैं जिन्हें पराली भी नीचे बिछाने को नहीं मिलती। इसलिये ईर्ष्या नहीं किया करते किसी से क्योंकि -

*जिसु अंदरि ताति पराई होवै तिस दा कदे न होवी भला।*
*पृष्ठ - 308*

सींउक (दीमक) जिस वृक्ष को लग जाती है, उसे खूब खाद डाले जाओ, पानी दिये जाओ कुछ भी नहीं होता। सो ऐसा ईर्ष्या करती है।

महापुरुष सुनाया करते थे कि एक बार एक गरीब आदमी था उसके घर का गुज़ारा नहीं चलता था। कहीं संगत में आ गया, वहाँ पता चला कि -

*चारि पदारथ जे को मागै। साध जना की सेवा लागै॥ पृष्ठ-266*

सन्तों की सेवा करने लग गया। मन में यह ख्याल है कि कभी दयालु होकर स्वंय पूछेंगे। एक तो वे होते हैं जो पहले दिन ही आकर

कहते हैं – जी हमारा कारोबार भी चल जाये, हमारा यह काम हो जाए, वह काम भी हो जाये। एक प्रेमी कुछ दिन रहा। मैंने कहा यह कोई दुकान है भाई? यह भी दे दो, वह भी दे दो; यह तो तेरी भावना है, तेरी सेवा से गुरू ने प्रसन्न होना है तब मिलता है। मेरे हाथ में तो कुछ भी नहीं। इतने उतावले होते हैं वे। एक यह समझते हैं कि धीरे धीरे सेवा करते चलो, कभी न कभी गुरू प्रसन्न होगा, ज़रूर देगा क्योंकि किसी की, की गई मेहनत को वह बेकार नहीं समझते ज़रूर देकर जाते हैं।

सेवा करते हुए जब काफी समय हो गया। बड़ी लगन के साथ सेवा करता था। महात्मा ने भी देख लिया कि लगन से सेवा करता है पर वह आन्तरिक भेद जानते थे कि वह स्वार्थ के कारण बन्धा हुआ है, नाम जपने वाला नहीं है। एक दिन बुलाया, कहते हैं ''ऐ प्रेमी! बहुत समय से सेवा कर रहा है, कोई मांग है तेरी?'' कहता है ''हाँ महाराज! आप तो अर्न्तयामी हो।'' कहने लगे, ''बता, क्या माँग है?'' महाराज! गुज़ारा नहीं चलता घर का, दो वक्त की रोटी ही मिल जाये फिर वाहिगुरू का भजन करें क्योंकि मैंने यहीं से ही सुना है –

*भूखे भगति न कीजै। यह माला अपनी लीजै।* पृष्ठ - *656*

भूखे पेट भक्ति नहीं हुआ करती। महात्मा कहने लगे, ''देख सेवा का फल तो ज़रूर मिल जाता है पर यदि मन न सुधरा तो सुख नहीं मिल सकता। पैसा चाहिये?'' कहता है, ''हाँ महाराज।'' कहने लगे ''ले, यह शंख है हमारे पास, लीप पोच कर धूप दीप आदि देकर बजा दिया करना इसे और जो मांगेगा, मिल जाया करेगा, इतनी शक्ति का मालिक है यह। पर इसमें एक दोष है कि तेरा जो पड़ौसी है उसे double-double (दुगुना-दुगुना) मिला करेगा तेरे से। यदि तू एक सौ मांगेगा तो उसे दो सौ मिलेगा।'' कहता है ''महाराज! चाहे लाख मिल जाये, मुझे क्या लेना उससे?'' कहते हैं ''फिर तो तू सूरमा है यदि यह बात तू सहन कर गया क्योंकि बड़े बड़े सूरमा भी इस बात को सहन न कर सके।'' घर आ गया, सारी बात बता दी अपनी पत्नी को। वह इससे कुछ अधिक ही समझदार थी। वह न तो हंसी और न ही कोई खुशी प्रकट की; कहती है देख, अपना गुज़ारा तो चल जायेगा पर इन्होंने कौन सा काम किया है? ये तो हमें तंग करते हैं, ये ऐसे ही अमीर हो जायें?'' वह कहता है ''तूने क्या लेना, अपना गुज़ारा चलना चाहिए।'' कहती है ''मुझे नहीं अच्छी लगी यह बात। सन्तों को जाकर कह दे कि इनके घर कुछ न आये, हमारे ही घर आये।'' क्योंकि ऐसा कुदरती स्वभाव है। फ़रमान करते हैं –

*पर सुख पिख तप ताउ उरि नाही।*

बेगाने सुख को देखकर हृदय में जलन पैदा हो जाती है। जो तपता है वह व्यर्थ ही पाप दूसरे का अपने सिर पर ले लेता है –

*इक ता रिदे तपै दुख पावै। पिखो भलो किछु हाथि न आवै।*

एक तो हृदय तपता रहता है, एक ईर्ष्या करके पल्ले क्या पड़ता है? कुछ नहीं, आप ही जलता है –

*पुंन परमेसर कोप करंता।*

और दूसरा वाहिगुरू को कोप कर लेता है कि दातें (वरदान) मैं देता हूँ, खींझता फिरता है यह –

*मेरो दीओ किछु इह जरंता।*

मेरी दी हुई दातों (वरदान) को देखकर जलता रहता है –

*इतिआदिक इस महि बहु दोख। लालच तजै धरै संतोख।*

यह दोष है। सन्तोष में रहना चाहिए कि जो कुछ मेरी प्रालब्ध में है, मुझे मिल रहा है, धन्यवाद है उस परमात्मा का, कितना ही क्यों न आ जाये पड़ोसियों के पास।

इसने मांगना शुरू कर दिया। कोठी मांग ली, ज़मीन मांग ली, पैसा मांग लिया और सभी चीज़ें। शरीकों (पड़ौसियों) के दुगुने पौ बारह हो गये और यदि इसने कपड़े एक हज़ार के मांगने तो पड़ौसी के दो हज़ार के आ जाते। रोटी खानी भी बन्द कर दी। न घर वाली इसके साथ बोलती है, न यह उसके साथ बोलता है, अन्दर रोग लग गया ईर्ष्या का। परिणाम क्या हुआ? बोलने से भी जाते रहे। एक दिन अचानक कहने लगा –

''अब शंख बजाते हैं।''

''क्या बजायें, पहले थोड़ा बजाकर देखा है? यह पड़ौसियों के क्यों जाता है? कोई युक्ति ढूँढ।''

''मुझे आ गई युक्ति, तू लीप पोत कर।''

''यदि मांगना है तो सीधा मत मांगना।''

''तू देखती जा, मैं क्या करता हूँ।''

स्थान लीप पोत लिया, शंख बजाया और कहता है, ''हे शंख देवता! ऐसे कर मेरी एक आँख कानी कर दे।'' आँख कानी हो गई तो पड़ौसियों की दोनों आँखें कानी हो गईं, भाव अन्धे हो गये। फिर कहता है ''हे शंख देवता! मेरे घर के सामने एक कुँआ लग जाये।'' सो इसके घर के आगे एक कुआं लग गया और उसके घर के आगे दो लग गये। दरवाजे

में आकर खड़ा हो गया। वे बाहर निकलते हैं कि हम अन्धे हो गये, किसी को कहें। सो जो भी बाहर निकलता है, धड़ाम कुएं में गिरता। ये दोनों कानीं आँखों से खड़े देखते रहे। कहता है, अब आ गया न मज़ा। हम तो काने होकर जिन्दगी काट लेंगे पर ये तो अन्धे करके मार दिये। आज के बाद हम मांगते कुछ नहीं।

इसे ईर्ष्या का रोग कहते हैं, साध संगत जी। यह संसार में से हट नहीं सकता। गुरू महाराज बहुत बुरा मानते हैं इसे। नाम जपने वाले ईर्ष्या करते हैं। सेवा करने वाले ईर्ष्या करते हैं। सेवा करने वाले झूठ बोलते हैं। जीवन झूठ का ही बना लिया, फिर कहते हैं हमें नाम मिल जाये, नाम चल पड़े। नहीं चलेगा ऐसे, जब तक सावधानी नहीं बरतेंगे, नाम नहीं चलेगा।

सो ईर्ष्या में फंस गया तपस्वी, कहता है ''देखो! यह गृहस्थी होकर पूजा करवाता है। तुम्हें पता है, गृहस्थी यदि पूजा करवाये, परमात्मा कुपित हो जाता है और अब कुपित हो गया परमेश्वर।'' कहते हैं ''अब क्या होगा?'' कहता है, जाओ, पहले तो बरसात मांगो इससे। यदि बरसात करवाता है तो करवा दे, वरना मेरे पास आ जाना, मैं बरसात करवाऊँगा, मैं तुम्हें युक्ति बताऊँगा।''

ऐसा स्वाभाविक ही होता आया है साध संगत जी! सन्तों के साथ वैर करना संसार का स्वभाव है और दुष्टों के साथ प्यार करते हैं। ऐसा फ़रमान आता है बाणी में -

***धारना - सन्तां नाल वैर कमांवदे, सन्तां नाल वैर कमांवदे - 2***
***नाल दुशटां मोह पिआर, सन्तां नाल वैर कमांवदे - 2***

सन्तों के साथ वैर, दुष्टों के साथ मोह होता है। सो कहने लगा कि जाओ, जाकर कहो। सीधे मुँह नाम नहीं लेता, नाम लेना ही बुरा मानता है। कह नहीं सकता कि गुरू अंगद साहिब को कहो। कहता है, ''जाओ! कहो जाकर खत्री को कि वर्षा करवाए।'' वे चले गये सारे इकट्ठे होकर। गुरू महाराज कहने लगे, ''कैसे आये हो प्रेमियो?'' कहते हैं, ''सच्चे पातशाह! आपके पास दूर दराज़ से लोग आते हैं और हमने सुना है आपके पास बहुत सारी शक्तियाँ हैं। हमारी फसलें सूखी पड़ी हैं आप बरसात करवा दो। आप हमारे गाँव में रहते हो, तुम्हें बरसात तो करवानी चाहिये न।'' महाराज कहते हैं ''प्यारे! बरसात करवाना या न करवाना यह किसी के वश की बात नहीं हुआ करती। यह तो अकाल पुरुष के हाथों में है, ऐसा फ़रमान करते हैं -

*धारना - इहनां बदलां नूं काहनूं उठ उठ देखदैं,*
*मेघे हत्थ कुछ वी नहीं - 2, 2*
*मेरे पिआरे, मेघे हत्थ कुछ वी नहीं - 2, 2*
*इहनां बदलां नूं काहनूं उठ उठ देखदैं....................।*

*किआ उठि उठि देखहु बपुड़े इसु मेघै हथि किछु नाहि।*
*जिनि एहु मेघु पठाइआ तिसु राखहु मन मांहि॥ पृष्ठ - 1280*

गुरू महाराज कहते हैं, बादलों के वश में कुछ नहीं और किसी के भी वश की बात नहीं, प्यारियो! यह तो अकाल पुरुष की मौज है कहीं बरसात कर देता है, कहीं नहीं करता सब कुछ उसके हुक्म में चलता है। प्रबन्ध इतना बड़ा है कि सारा प्रबन्ध अपने आप ही हुआ पड़ा है मनुष्य के हाथ में कुछ भी नहीं है।

पिछले वर्ष अमेरिका में था मैं 1989 में। पिछले साल वहाँ सूखा पड़ा, लोग बहुत दुखी हुए। खेतों में से धूल उड़ती, फसलें पैदा न हुई, शोर मच गया कि यह क्या हो गया? सभी वैज्ञानिक जो कहा करते थे, वर्षा करते हैं, अमुक गैस छिड़क कर; बादल ही नहीं आये, वर्षा किससे करवाते? देखा ही नहीं हमने वहाँ तीन महीने तक बादल। परमेश्वर ने भेजा ही नहीं। यह तो वाहिगुरू के हाथ में है, सारा प्रबन्ध इन्टरवोवन (interwoven) है। ये जितने तारे, सितारे हैं, सभी अपने अपने हिसाब से चलते हैं। कहीं जल थल कर देते हैं और कहीं पानी की बूंद भी नहीं पड़ती। यह तो संसार के मनुष्यों के जैसे जैसे कर्म होते हैं, प्यारे! अकाल पुरुष वैसा ही फल दिया करता है। सुख और दुख अपने कर्मों का ही फल हुआ करता है -

***धारना - फल दितिआं बाझ न जाणा, फल दितिआं,***
***फल दितिआं बाझ न जाणा,***
***तेरिआं करमां ने बंदिआ, बंदिआ***
***तेरिआं करमां ने फल दितिआं - 2***

अकाल पुरुष की खेल ऐसी चलती है कि जैसे कर्म जीव करता है, वैसा ही फल पाता है। यह उसकी मौज है, उसमें दखल नहीं देना चाहिए। कहने लगे ''महाराज! हम तो वर्षा करवाने के लिए आये हैं, हमारी फसलें कैसे हरी भरी होगीं?'' महापुरुष प्रकृति के नियमों और कार्यों में दखल देना उचित नहीं समझते।

गुरू अंगद देव जी के लिए भाई जीवा और उनकी लड़की प्रतिदिन खिचड़ी बनाकर लाया करते थे। एक दिन बहुत काली घनी आंधी चली,

सुबह से ही चलने लग पड़ी थी। काफी कोशिश की, किसी तरह रुक जाये। घर भी ऐसे ही हुआ करते थे, अन्दर भी हवा लगती थी। चारपाईयां खड़ी कर करके देखें पर खिचड़ी न बन सकी। अन्त लड़की बोली ''पिता जी! आज तो हम लेट हो जायेंगे ठीक समय पर नहीं पहुँच सकेंगे। महाराज आन्धी बन्द कर दें।'' भाई जीवा उठकर बाहर आया और ऊपर की तरफ देखकर कहता है, ''हे अन्धेरी! तुझे पता नहीं, हमने गुरू महाराज जी के लिये भोजन तैयार करना है, खिचड़ी तैयार करनी है तू बनाने नहीं देती; रूक जा।'' आन्धी की ताकत नहीं थी की सतपुरुष का हुक्म टाल देती क्योंकि ये सभी हुक्म के अधीन चल रहे हैं –

***भै विचि पवणु वहै सद वाउ। भै विचि चलहि लख दरीआउ।***
***भै विचि अगनि कढै वेगारि। भै विचि धरती दबी भारि।***
***भै विचि इंदु फिरै सिर भारि। भै विचि राजा धरम दुआरु॥***

***पृष्ठ - 464***

ये सभी परमेश्वर के भय में रहते हैं और जो परमेश्वर के प्यारे हैं –

***जो किछु करै सोई प्रभ मानहि ओइ राम नाम रंगि राते।***
***तिन्ह की सोभा सभनी थाई जिन प्रभ के चरण पराते।***

***पृष्ठ - 748***

उनका कहा हुआ परमेश्वर को मानना पड़ता है। आन्धी रुक गई। खिचड़ी बना ली और जब महाराज के पास लेकर गये, महाराज ने खुशी न दिखाई। पहले महाराज बहुत प्यार से देखा करते थे, दूर से आते हुए ही प्यार की दृष्टि से कि ये कितनी सेवा करते हैं, दूर से आते हैं, खिचड़ी ज़रूर बना कर लाते हैं पर आज महाराज ने प्रसन्नता पूर्वक न देखा, नेत्र नहीं मिलाए। वे तो उसी चाव से आते हैं लेकिन जब पास आए तो महाराज ने पीठ कर ली। नमस्कार की, हैरान हो गये कि आज पीठ! पीठ तो बहुत बुरी होती है महात्मा की, साध संगत जी –

***करवतु भला न करवट तेरी। लागु गले सुनु बिनती मेरी।***
***हउ वारी मुखु फेरि पिआरे। करवटु दे मोकउ काहे कउ मारे॥***

***पृष्ठ - 484***

माता लोई कहती है, ''मुझे पीठ देकर मत मारो, आरे से चीर दो फिर –

***जउ तनु चीरहि अंगु न मोरउ। पिंडु परै तउ प्रीति न तोरउ॥***

***पृष्ठ - 484***

मेरा शरीर यदि छूट भी जाये, मैं प्यार नहीं तोड़ूंगी।'' कबीर साहिब को माता लोई कहती है, ''पर मैं आपकी पीठ नहीं सहन कर सकती, नाराज़गी नहीं सहन कर सकती।''

सो भाई जीवा बहुत हैरान हो गये। दूसरी तरफ जाकर नमस्कार की, महाराज ने फिर पीठ कर ली। रोने लग पड़े, ''पातशाह! क्या भूल हो गई? हम तो सदा ही गलतियाँ करते हैं। गरीब निवाज़! बताओ तो सही क्या गलती हो गई हमसे?'' कहने लगे, ''प्यारे! क्या हो जाता यदि आज हम खिचड़ी न खाते, घन्टा बीत जाता, दो घन्टे बीत जाते, आज का दिन बीत जाता फिर क्या हो जाता पर तुमने पता है कितनी बड़ी अवज्ञा की? तुमने अकाल पुरुष के प्रबन्ध में दखल दिया है। यह मिट्टी लेकर जा रही थी बेअन्त, बेअन्त प्रकार की कृमियों को उड़ाकर लिये जा रही थी देश में से। हवा शुद्ध हो जानी थी, pollution (प्रदूषण), गन्दी हवा ने उड़ जाना था और इस मिट्टी ने जाकर उन पत्थरों पर जम जाना था जहाँ बड़े बड़े साँप मिट्टी खाकर ही गुज़ारा करते हैं, तुमने कितनों की रोज़ी मार दी - एक हमें खाना खिलाने के लिये।''

इस प्रकार प्रकृति में दखल नहीं दिया करते। महापुरुष कहीं कहीं देते भी हैं, ऐसी बात नहीं है पर जब प्यार के वश हो जाएं फिर दखल दे भी देते हैं। सन्त महाराज बाबा अतर सिंह जी कोहाट से जा रहे थे और बीच में अफगानिस्तान का क्षेत्र आ गया और जब वहाँ से गुजरते हैं, ताँगे में बैठे जा रहे हैं। आगे कुछ योग्य अच्छे मुसलमान खड़े हैं, उन्होंने देखा कि कोई पीर जी आ रहे हैं क्योंकि सिखों की शक्लें उनके साथ मिलती जुलती हैं; ऐसे जैसे सफेद साफे, ऐसे ही खुली हुई दाढ़ी - थोड़ी थोड़ी लवां (मूछें) से पता लगता है कि यह मुसलमान मत का धारणी है यह किसी और मत का धारणी है। हम जब सिन्ध में होते थे, वहाँ बलोच बिल्कुल हमारी तरह हुआ करते थे। भ्रम पड़ जाता था कि यह सरदार है। पता तब चलता था जब वे 'सलाम' कहते थे।

इस प्रकार उन्होंने कहा कि कोई पीर आ रहा है। चेहरे का रंग देखा, रौब-दाब देखा; घोड़े की लगाम पकड़ ली; पीर जी! हम बहुत दुखी हैं, कृपा करो।'' बरसात नहीं हुई, हमारी फसलें सूखती जा रही हैं। बार बार प्रार्थना की कि आपकी पहुँच परमात्मा तक है।'' बहुत प्रार्थना सुनकर महापुरुष कहने लगे, ''हमारे हाथ में तो कुछ भी नहीं, हम प्रार्थना करके देख लेते हैं।'' ताँगे से उतर आये, बैठ गये। कहते हैं ''लो भाई! हम तो करते हैं प्रार्थना और अब बरसात उतनी ही मांगना जितनी ज़रूरत हो। यह न हो कि बहुत मांग लो।'' कीर्तन करना शुरू कर दिया। जब आधा एक घन्टा बीत गया, बादल आ गये, एकदम बरसना शुरू कर दिया। बहुत वर्षा हुई मूसलाधार। बाजे में भी पानी भर गया, साथ ही जो सितार

वगैरा थे, तबला था, उनमें भी पानी भर गया अब तबले बजते नहीं थे। महापुरुष बोले ''ऐसे जैसे भी है करते रहो, बजाते चलो।'' अन्त में पठान उठकर खड़े हो गये, चरणों में नमस्कार की, ''पीर जी! बहुत वर्षा हो गई अब तो मुंडेर भी टूटने लग गईं।''

सो यह सभी चीज़ें हुक्म में चलती हैं -

*धारना - पउण पाणी ते देवते सारे,*
*चलदे ने भै विच जी - 2, 2*
*मेरे पिआरे, चलदे ने भै विच जी - 2, 2*
*पउण पाणी ते देवते सारे..........................।*

ये सभी अकाल पुरुष के भय में हैं। अपनी मर्ज़ी नहीं है न हवा की, न सूरज की, न चन्द्रमा की, न तारों की, ये सभी हुक्म में सेवा करते हैं। महाराज कहते हैं -

*पाताल पुरीआ लोअ आकारा। तिसु विचि वरतै हुकमु करारा।*
*हुकमे साजे हुकमे ढाहे हुकमे मेलि मिलाइदा॥ पृष्ठ - 1060*

कहते हैं, भाई! ये सभी हुक्म में चलते हैं। वश नहीं चलता किसी का, यह तो सभी कुछ परमेश्वर के हाथ में है -

*धारना - उहीओ गल हुंदी ऐ, भाउंदी जो तैनूं मालका - 2, 2*
*भाउंदी जो तैनूं मालका, भाउंदी जो तैनूं मालका - 2*
*ओहीओ गल हुंदी ऐ..........................।*

सो गुरू अंगद देव जी महाराज कहते हैं, ''प्यारियो! जिद न करो, मेरे प्रभु को ऐसा ही अच्छा लगता है।'' वे वापिस चले गये। कहते हैं, ''तपस्वी जी! पूछ आये हम।'' वह कहता है ''बरसात करवाता है या नहीं।'' कहते हैं ''वह तो ऐसे कहता है...........।'' तपस्वी कहता है, ''फिर! बरसात तो मैंने ही करवानी है पर मैं तभी करवा सकता हूँ यदि उसे (गुरू अंगद देव साहिब को) गाँव से निकाल दो। बरसात तो फिर अपने आप ही हो जायेगी क्योंकि पाप होता है इसलिये वर्षा नहीं हो रही।'' इस प्रकार भड़का दिए और पक्के इरादे कर दिये सभी के कि यदि ऐसे नहीं जाते तो धक्के मार-मार कर निकाल दो। उस समय गुरू महाराज के पास फिर आये और सम्मान के साथ नहीं बोलते। कितनी बे-अदबी थी एक उदाहरण से पता चल जायेगा -

वहाँ खडूर साहिब का एक चौधरी था मलूका। सत्संग चल रहा है, गुरू महाराज जी पलंग पर बिराजमान हैं। किसी ने कहा कि मलूका! तू

बीमार हैं, ये गुरू महाराज समरथ हैं, ये एक वचन कर दें ठीक हो जायेंगा। उसे दौरा पड़ता था। बड़े अभिमान के साथ गया और कहता है, हमारे गाँव के खत्रियों के घर में रहता है, आप ही चौधरी बना हुआ है इलाके का। जाकर महाराज जी के सिराहने की तरफ बैठ गया। सारी संगत नीचे बैठी है, कहता है ''महाराज! मैं इस गाँव का चौधरी हूँ और तुम्हारे पास एक काम आया हूँ।'' महाराज जी में कितनी नम्रता थी और सहनशीलता थी, कहते हैं –

''बताओ चौधरी जी! क्या बात है?''

''अंगदा! मुझे मिरगी का दौरा पड़ता है और पता चला है तू दूर कर देता है, तू हमारे गाँव में रहता है, मेरी मिरगी दूर कर दे।''

''चौधरी मलूके! तेरी मिरगी तो हट जायेगी पर तू शराब मत पीना।''

''अच्छा।''

सो मिरगी खत्म हो गई, सात आठ साल बीत गये।

एक दिन सत्संग चल रहा है और उधर वह चौबारे पर बैठा है – चारपाई बिछाकर। सेवादार को कहने लगा, ''देख, कैसे काले काले बादल आ रहे हैं और तू बोतल ले आ जाकर।'' कहता है ''चौधरी! तुझे कहा था उन्होंने कि शराब मत पीना।'' कहता है, ले, ऐसे ही कह दिया उन्होंने। अपने आप ही दूर हो गई मेरी मिरगी तो। शराब न पीने से कभी खत्म हुई है? उसने कोई दवाई दी है? यह तो खत्म होनी ही थी।'' सब कुछ भूल गया। शराब ले आया, पी ली, पीकर जिधर महाराज जी बैठे सत्संग कर रहे थे उस तरफ आकर झुककर कहने लगा ''ओ अंगदा! ले हमने तो पी ली।'' महाराज सहज स्वभाव कहते हैं, '' ले, फिर मिरगी भी आ गई।'' वचन मुख से निकलने की देर थी, धड़ाम से गर्दन के बल गिर पड़ा उसी समय। यह अदब के बारे में बात बताई है कि इतना समय वहाँ पर रहे, सारे भारतवर्ष से संगतें आया करती थीं पर पड़ौसी को नहीं पता चला। वह कितनी बेअदबी के साथ बोलता है।

सो यह गाँव वालों को पता न चल सका कि कितने बड़े महापुरुष, अकाल पुरुष, निरंकार, हमारे नगर में आकर बैठे हैं कि कोई थोड़ी बहुत इज़्ज़त करे, चार भैंसों का दूध ही दे आया करें, चार सेर अनाज ही दे आया करें। नहीं, कुछ नहीं देना बल्कि उस तपस्वी के पास ले जाते। वह शराब पी लेता था अन्दर जाकर, और ईर्ष्या इतनी अधिक थी कि गुरू

महाराज जी की तरफ आने ही नहीं देता था। रोज़ बेकार की अनहुई बातें करता। ईर्ष्या, निन्दा ऐसी चीज़ है साध संगत जी! कोई निंदा कर लो, दूसरे के मन में बात डाल दो, वह न तो उसका हृदय साफ कर सकती है और न ही भूल सकता है, वहीं रुक जायेगा। इसलिये इसका सबसे बड़ा पाप है -

*निंदा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करंनि।*
*मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि॥* *पृष्ठ - 755*

कहने लगे, ''फिर तपस्वी जी! कैसे करें? वर्षा करवाओ, हम तो बहुत दुखी हैं।'' कहता है, ''मैं बरसात कैसे करवा सकता हूँ? जब तक वह गाँव में है मैं नहीं बरसात करवा सकता। यदि तुम्हारे अन्दर हिम्मत है तो बाहर निकाल दो उसे गाँव से। उसी समय वर्षा शुरू हो जायेगी।'' ये सभी इकट्ठे होकर मन को पक्का करके महाराज जी की तरफ आ गये और कहते हैं कि यदि वैसे न निकले तो हम बाजू पकड़कर बाहर निकाल देंगे। कोई बात नहीं कितना ज़ोर लगायेगा। इससे तो हम कमज़ोर नहीं हैं। यही अभिमान हुआ करता है क्योंकि सार नहीं जानते -

*धारना - नहींओ जाणदे मूरख सार गुरां दी - 2, 2*
*सार गुरां दी, मूरख सार गुरां दी - 2, 2*
*नहीओं जाणदे मूरख........................।*

नहीं जानते कि ***'सतिगुर पुरखु अगमु है निरवैरु निराला।'*** इस बात का उन्हें नहीं पता, मामूली आदमी समझते हैं कि ऐसे ही बैठा है; लोग तो मूर्ख हैं जो इसके पास जाते हैं।

सो वह मन को मज़बूत करके कहने लगे, ''हम तुम्हें एक ही बात कहते हैं, हम सब ने एक मत होकर निश्चय कर लिया है सभी ने, कि हमें बरसात की ज़रूरत है, यदि वर्षा न हुई हमारी फसलें बर्बाद हो जाएंगी और हमें गाँव छोड़कर उजड़ना पड़ेगा। आप गाँव में रहते हो इसलिए वर्षा जरूर करवाओ। यदि नहीं बरसात करवानी तो हम यह फैसला करके आये हैं कि तुम्हें इस गाँव में नहीं रहने देना और न ही यहाँ वापिस आने देना है। हमें तपस्वी ने बताया है कि तुम्हारे कारण ही बरसात नहीं हो रही। आप पाप करते हो, गृहस्थी होकर पूजा करवाते हो।'' महाराज कहते हैं ''प्यारियो! कोई बात नहीं, यदि हमारे गाँव छोड़ने से बरसात हो जाये, तो हम तो खुशी खुशी जाने को तैयार हैं। कहते हैं ''खुश होकर जाओ, दुखी होकर जाओ; नहीं जाओगे तो हम निकाल कर फैंक देंगे। चार आदमी पकड़ लेंगे तुम्हें बाजुओं से, और फिर गाँव से बाहर निकाल कर आयेंगे।''

महाराज कहते हैं ''हम तो स्वंय ही जाने को तैयार हैं।''

कितना बड़ा दिल (जिगरा) है साध संगत जी। सारी दुनियाँ के मालिक, करोड़ों, ब्रह्मण्डों के मालिक, जिसकी क्रिया को कोई जानता नहीं, ऐसा फ़रमान है -

*सतिगुर पुरखु अगंमु है निरवैरु निराला।*
*जाणहु धरती धरम की सची धरमसाला।*
*जेहा बीजै सु लुणै फल करम सम्हाला।*
*जिउ करि निरमलु आरसी जगु वेखणि वाला।*
*जेहा मुहु करि भालीऐ तेहो वेखाला।*
*सेवक दरगह सुरखरू, बेमुखु मुह काला॥*

*भाई गुरदास जी, वार 34/1*

ऐसा है वह, जिसकी क्रिया अगम्म है, समझ से बाहर है, निरवैर है, निराला है, कोई वैर नहीं है मन में कि वह तपस्वी भेज रहा है - सिखा सिखा कर। फिर उस तपस्वी के लिये कोई शिकवा नहीं कि प्रेमियो! तुम्हें वह तपी ऐसे ही कह रहा है। यह बात नहीं है कि ताकत नहीं थी उनमें। एक फुरना कर देते, सारे बेट (गाँव) में बरसात हो जानी थी लेकिन हद से ज्यादा क्षमा के भण्डार थे। कहने लगे ''अच्छा प्यारियो! तुम्हें कष्ट उठाने की ज़रूरत नहीं है कि आप बाजुओं से पकड़ कर बाहर निकालें। हम अपने आप ही चले जाते हैं।'' सिखों ने पूछा ''महाराज! क्या क्या उठाना है?'' महाराज कहते हैं ''कुछ नहीं उठाना।'' एक पलंग उठा लिया सिखों ने, बाकी घर भरा हुआ ही छोड़ दिया। कहते हैं ''कोई नहीं, इन प्रेमियों के काम आ जायेगा।'' चले गये, जाकर महाराज जी एक रोही में, एक खान रज़ादा गाँव था, जंगल में बैठ गये। महाराज कहते हैं ''भाई! यहीं पर ही पलंग बिछा दो यहीं पर ही हम वृक्षों की छाया के नीचे बैठ जाते हैं।'' वहीं बैठ गये, गाँव वालों को पता चला, हैरान हो गये कि गुरू अंगद साहिब को, सारी सृष्टि के मालिक को इस प्रकार निरादर करके निकाल दिया इन मूर्खों ने। सारा गाँव आ गया, ''पातशाह! देखना, गाँव मत छोड़ जाना। इलाका मत छोड़ना। यह क्षेत्र आपकी बदौलत ही बस रहा है, अन्यथा उजड़ जायेंगे, कृपा करो।'' महाराज जी एक रस वृत्ति में बैठे हैं, वहीं पर ही सत्संग शुरू हो गया और इधर वे तपस्वी के पास आ गये। कहने लगे, ''निकाल आए हैं हम उसे बाहर।'' कहता है ''वर्षा भी आ गई समझो।'' अन्दर बैठ गया, खाता है पीता है, खुश हो गया कि अच्छा हो गया। अब नहीं आयेगा वापिस। अब यह गाँव तो मेरा सेवक बन गया सारा। सो इस तरह एक दिन बीत गया, दो दिन बीत गये, कहते हैं ''बरसात?'' तपी

कहता है ''बरसात मेरे हाथ में है। मैं मन्त्र पढ़ता हूँ, वह बादल से मुझे दिखाई देते हैं उठते हुए अब आए कि आए।'' तीसरा दिन भी बीत गया। कहते हैं ''तपी जी! फसलें तो डूब गईं, दीमक (सीऊक) फसलों को खाने लग गई, पत्ते सड़ गये और झड़ने शुरू हो गये।'' कहने लगा ''आ गई बरसात।'' चौथा दिन भी बीत गया, पाँचवा दिन भी बीत गया और जैसे जैसे दिन बीतते जाते हैं त्यों त्यों वे उतावले पड़ते जाते हैं। कईयों ने सोचा कि हमने कहीं पाप तो नहीं कर दिया? वह किसी को क्या कहते थे? हम कितने कड़वे होकर, कितने कठोर होकर बोले उनके साथ। मामूली सा भी आदर नहीं किया ऐसे लालच में पड़े हैं बरसात के। फिर चले गये, कहते हैं ''तपी जी! तुम्हारे कहने पर हमने गुरूओं को भी गाँव से बाहर निकाल दिया।'' कहता है ''तभी तो बरसात होगी। क्यों ऐसे ही मूर्ख बनते हो। तुम मेरे शिष्य हो या नहीं?'' कहते हैं ''हैं तो तेरे शिष्य पर वर्षा ज़रूर करवाओ। दूध तुम्हारे पास तभी लेकर आयेंगे यदि भैंसों को खाने के लिये चारा मिलेगा।'' अगला दिन भी बीत गया।

इतने में बाबा अमरदास जी महाराज आप गोइन्दवाल साहिब से खडूर साहिब आए। चलकर देखते हैं कि कोई चहल पहल नहीं है, यह क्या हो गया, कहाँ चले गये सभी। जहाँ महाराज जी बैठा करते थे, दरवाज़े खुले पड़े हैं। एक सिख बैठा है वह बहुत वैराग में बैठा है। बाबा जी ने पूछा, ''क्या बात हो गई?'' कहने लगा, ''बात क्या हुई? इन मूर्खों ने गुरू महाराज का बहुत निरादर किया है। यहाँ तक कि नीच कर्म पर उतर आये कि हम बाजू से पकड़ कर बाहर निकाल देंगे।'' महाराज कहते हैं ''हम तो खुद ही चले जाते हैं।'' बाबा जी कहते हैं ''हैं! इतनी हिम्मत! इतने समरथ महापुरुषों के साथ इस प्रकार यह संसार व्यवहार करता है।'' कहते हैं, ''मुझे सारी बात विस्तार से बता।'' सारी बात बता दी।

सिख को सभी बुरी बातें सहन करनी बड़ी आसान होती है। यदि सहन नहीं कर सकता तो अपने गुरू की निन्दा सहन नहीं कर सकता। यह बात सिख (शिष्य) के लिये मौत है, साध संगत जी! महापुरुषों की अपनों की, गुरू की निन्दा और उस समय जब ऐसा हाल हो जाये तो उसकी जुबान पर आकर स्वंय परमेश्वर बैठ जाया करता है। यदि उस समय उसके मुख से कोई वचन निकल जाये, वह टाला नहीं जा सकता। ऐसा फ़रमान करते हैं -

***धारना - से बचन होवंदे, भगत मुखै ते बोलदे - 2, 2***
***परगट पहारा जापदे, परगट पहारा जापदे।***

*सभ लोक सुणंदे भगत मुखै ते बोलदे*
*से बचन होवंदे, भगत मुखै ते बोलदे।*

*नानक वीचारहि सन्त जन चारि वेद कहंदे।*
*भगत मुखै ते बोलदे से वचन होवंदे।*
*प्रगट पहारा जापदा सभि लोक सुणंदे॥* *पृष्ठ - 306*

कहते हैं, ऐसा नहीं कि अन्दर ही रहता है। प्रकट हो जाता है और सारी दुनियाँ देखती है। गुरू की निन्दा सुनकर शिष्य (सिख) के मुख से कोई वचन निकल जाये, महात्मा की निन्दा सुनकर उसके साथ प्यार करने वाले के मुख से कोई वचन निकल जाये, वह वचन कभी भी व्यर्थ नहीं जाता, नहीं टलता। वह तो जैसे कोई बाण मारता है, ऐसे लगता है। ऐसी बहुत सारी बातें हमारे देखने में आई हैं।

सो इस प्रकार बाबा अमरदास जी महाराज कहने लगे, ''हैं! इतनी हिम्मत! फिर महाराज जी ने कोई वचन न किया?'' नहीं महाराज! वह तो ऐसे था कि जैसे किसी ने कुछ कहा ही न हो। वह तो कहते थे, भाई! यदि हमारे जाने से बरसात हो जाती है, तुम्हारा भला हो जाये तो हमारा यहाँ से चले जाना ज़रूरी हो जाता है क्योंकि हमने तो भला ही करना है। कोई खेद नहीं किया, कोई चीज़ नहीं उठाई और ये लोग खुश होकर महाराज का निरादर करते रहे। साथ ही यह भी कहते रहे कि फिर वापिस यहाँ लौटकर मत आना। देख लो! बात तुम्हें सच्ची बता दी है। बाबा जी कहते हैं -

''अब कहाँ है महाराज?''

''सुना है कि खान रज़ादे गाँव की जो जूह (गाँव की सीमा) है वहाँ जाकर बैठे हैं। उस गाँव के प्रेमियों ने रोक लिया और वहीं बन्धे बैठे हैं प्यार में - बाहर रोही में।''

''बरसात के लिये यहाँ बुलाओ किसी को।''

बुला लिया और बाबा जी कहने लगे -

''भाई! कितना निरादर किया है गुरू महाराज जी का; अब वर्षा करवा ली तुमने?''

''जी, बरसात तो हुई नहीं। हम तो सोचते हैं कि महाराज जी को भी बाहर निकाल दिया - बहुत बुरा काम किया।''

''अब ला बुलाकर चौधरियों को।''

सारे बुला लिये और बड़े रौब के साथ बोले -

''क्यों भाई! बरसात करवा ली तपी से? करवा देगा?''

''बाबा! बरसात तो करवाई नहीं।''

''फिर तुमने यह जो काम किया है, अच्छा किया है या बुरा?''

''अब हमें लगने लग गया कि बुरा किया है हमने ऐसे ही कर दिया।''

''फिर बरसात करवानी है?''

''हाँ महाराज! बरसात तो हमें ज़रूर चाहिये।''

''फिर सुनो! दिन रह गया है थोड़ा सा; इस तपी को जिस जिस खेत में पकड़ कर ले जाओगे, उस खेत के चारों मेढ़ों के बीच बीच में ही वर्षा होगी, बाहर नहीं होगी।'' वचन कर दिया साध संगत जी ***'भगत मुखै ते बोलदे से वचन होवंदे।'***

अब प्रकृति को कितना कठिन हो गया - एक खेत में बरसात करनी। सीधा पानी पड़ना और साथ वाले खेत में एक छींटा (बूँद) भी नहीं पड़ना- कितना कठिन वचन कर दिया। मानती है प्रकृति। प्रकृति की हिम्मत नहीं कि महात्मा के मुख से वचन निकल जाये और प्रकृति उसके सामने रास्ता रोक कर खड़ी हो जाये।

एक सन्त फकीर दास जी हुए हैं - डेरा बाबा नानक में। भैंसे चराते चराते एक छोटे सी तलैया (तालाब) में बिठा दीं। पानी था नहीं और भैंसे कीचड़ से लथपथ हो गई। रावी की तरफ मुँह कर लिया। कहते हैं ''ओ रावी! हमारे गाँव की तलैया सूखी पड़ी है, तुझे पता नहीं कि हमारी भैंसे कीचड़ से लथपथ हो गई हैं? भरकर जा पानी से। गर्मी का महीना, पानी बहुत नीचा चला जाता है; ऐसा उछाला मारा सारी की सारी (जोहड़) तलैयां भर दी। फिर कहते हैं अब की बार ही नहीं, हर साल भर कर जाया कर - वैशाख के महीने, फिर जेठ आषाढ़ बीतने के बाद बरसातें शुरू हो जाती हैं। बाबा जी चोला छोड़ गये पर रावी हर साल उसी तरह से तलैयां भरती रही।

बाबा साहिब सिंह जी महाराज गये वहाँ एक बार। सारे बेदी कुल वालों ने इकट्ठे होकर प्रार्थना की जो डेरा बाबा नानक के थे कि बाबा जी! आप समरथ पुरुष हो और गुरू नानक का रूप हो आप। यहाँ फकीर

दास जी एक सन्त हुए हैं बेदी कुल में से, उन्होंने रावी को कह दिया था और तभी से रावी हर साल उछलती है और हमारे घरों में पानी भर जाता है कोई तरीका बताओ। कहते हैं ''कड़ाह प्रसाद की देग तैयार करो, हम नम्रता पूर्वक बेनती करेंगे। देग बनाकर रावी के किनारे पर ले गये। प्रार्थना की कि ले रावी! एक सन्त तुझे कह गया था कि हर साल पानी भरकर जाया कर और एक अब कहता है कि पानी अपने किनारों के अन्दर ही रखना फिर वापिस डेरा बाबा नानक मत आना। सो आज तक नहीं आई। वहाँ चाहे जितना मर्जी उछले, कितना ही पानी क्यों न आ जाये; नहीं आती वहाँ पर। सो ये वचन हुआ करते हैं -

*भगत मुखै ते बोलदे से वचन होवंदे।* *पृष्ठ - 306*

बाबा अमरदास जी ने वचन कर दिया कि उसी खेत में बरसात होनी है, चाहे आधे बीघे का, चाहे दो बीघे का, चाहे दस एकड़ का है। जाओ, जल्दी ले जाओ। अब वे वहाँ जाकर आवाज़ें लगाने लग पड़े, उतावले हुये पड़े हैं जाट। मुँह-फट तो वे होते ही हैं। कहते हैं 'जट विगाड़े मुरशद नाल' मुरशद के साथ बिगाड़ने में एक मिनट लगाते हैं।

गुरू दँसवें पातशाह महाराज ने कहा था सिखो! सात दिन ठहरो तुम्हारे सारे कष्ट जो दो अढ़ाई सौ साल में आने हैं अभी निवृत्त हो जायेंगे; अन्यथा तुम्हें बहुत अधिक कष्ट उठाने पड़ेंगे। कहते हैं, ''महाराज! वह तो हम कष्ट उठा लेंगे पर सात दिन नहीं हमसे बिताए जाने।'' महाराज कहते हैं ''फिर तुम ऐसे करो। लिख दो कि हम तेरे सिख (शिष्य) नहीं तू हमारा गुरू नहीं।'' कागज़ पर लिख कर दे दिया तुरन्त दस्तखत कर दिये। बिगाड़ ली सारी जिन्दगी की बनी बनाई - एक सैकिण्ड में बिगाड़ ली।

सो वे चले गये तपी के पास। पहले तो ''तपा जी, तपस्वी जी, कहा करते थे और अब कहते हैं -

''ओ तपिया! बाहर आ। अब बता बरसात करवानी है या नहीं?''

''तुम कैसे बोलते हो? तुम्हें होश नहीं है?''

''अब हमें होश नहीं! होश हमारी जाती रही। बात कर, बरसात करवानी है या नहीं?''

इतने में अन्दर घुस गये। उसके सेवकों को मारे धक्के - बाजुओं से पकड़ कर, और धक्के मारते हुये ले आते हैं। तपी कहने लगा -

''तुम बात करो मुँह से।''

''अब बात नहीं होती मुँह से।''

उसे पकड़कर जो मुखिया था वह कहता है, ''देखो भाई! खींच तान मत करो, पहले मेरा खेत सामने है मुझे लेकर जाने दो।'' अब तपस्वी चलता नहीं, वे उसे घसीट कर ले जाते हैं। महाराज कहते हैं अब सुख पा लिया सन्तों के साथ बिगाड़ कर -

*धारना - सुख कदे न पाउंदे जी,*
*मुगध नर सन्तां नाल खहंदे - 2, 3.*

*सुखु न पाइनि मुगध नर सन्त नालि खहंदे।* *पृष्ठ - 306*

जिस जिस ने भी सन्तों के साथ बिगाड़ पाई, उसका सर्वनाश ही हुआ -

*दुरबासा सिउ करत ठगउरी जादव ए फल पाए॥* *पृष्ठ - 693*

***'सन्तन सेती मशकरी कुल डूबण की रीति।'*** जिसने डूबना हो, वह सन्तों के साथ विरोध पैदा कर लो क्योंकि ऐसा फ़रमान है -

*हरि जुगु जुगु भगत उपाइआ पैज रखदा आइआ राम राजे।*
*हरणाखसु दुसटु हरि मारिआ प्रहलाद तराइआ।*
*अहंकारीआ निंदका पिठि देइ नामदेउ मुखि लाइआ।*
*जन नानक ऐसा हरि सेविआ अंति लए छडाइआ॥* *पृष्ठ - 451*

निन्दक चाहे कबीर साहिब के पीछे लगे हैं, चाहे नामदेव जी के, चाहे रविदास जी के, चाहे आजकल के सन्तों के ***'सन्तन सेती मशकरी कुल डूबण की रीति।'*** महाराज कहते हैं, जिसने मरना हो, सन्तों के साथ विरोध पैदा कर लो -

*सुखु न पाइनि मुगध नर संत नालि खहंदे।*
*ओइ लोचनि ओना गुणै नो ओइ अहंकारि सड़ंदे।* *पृष्ठ - 306*

वह तो कहते हैं कि ये अच्छे बन जायें। प्रार्थना करते हैं सच्चे पातशाह!-

*जगत जलंदा रखि लै आपणी किरपा धारि।*
*जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि॥* *पृष्ठ - 853*

पातशाह! बचा ले दुनियाँ को, जल रही है, मर रही है; आवाज़ आती है कि दुनियाँ में पाप बढ़ गये। पातशाह! तू वख्शनहार है, इन जीवों की रक्षा कर, तेरे हैं ये जीव।

सो इस प्रकार तपी को बाहर निकाल लिया। अब तपी कहता है, ''तुम मेरे चेले हो। यह क्या करने लग पड़े?'' ''बताओ! कौन से खेत में जाना है?'' कहते हैं ''धीरे धीरे मत चल।'' भगाते हैं बाजू पकड़

पकड़ कर। खेत में ले गये, उधर सूरज की तरफ देखते हैं। जिस खेत में पानी पड़ गया, क्यारियां भर गई; दूसरा कहता अब तूने बस ही नहीं करना? आपस में खींचा तानी हो गई; एक अपनी ओर खींचता है, दूसरा अपनी ओर खींचता है। बीच में फंसा तपी चीखें मारता है क्योंकि खहिआ (बिगाड़ लिया) पूरे गुरू के साथ। खहता (झगड़ा मोल लेना) वह है जिसके मन्द भाग्य होते हैं -

*धारना - भाग जिनां दे मंदे, खहिंदे नाल साधूआं दे - 2, 2*
*नाल साधूआं दे खहिंदे नाल साधूआं दे - 2, 2*
*भाग जिनां दे मंदे................।*

*ओइ विचारे किआ करहि जा भाग धुरि मंदे।* *पृष्ठ - 306*

महाराज जी (सन्त बाबा ईशर सिंह जी राड़ा साहिब वाले) जब तप करने के बाद दीवान लगाने लगे क्योंकि पहले आपने बड़ी घोर तपस्या की थी, इतनी तपस्या कर पाना बहुत ही कठिन है, 9 वर्ष तक आपने धरती से पीठ तक नहीं लगाई। कैसे सो लिया करते थे, कैसे बैठते थे? स्वंय बताया महाराज जी ने कि हम धरती से पीठ नहीं लगाते थे। 9 वर्ष तक पीठ नहीं लगाई। ऐसे ही नहीं इतने महान महापुरुष बन जाते। आपके नगर (आलोवाल, जिला पटियाला) वाले कुछ प्रेमियों ने प्रार्थना की कि आपको गाँव में से गये काफी समय हो चुका है। हमने सुना है आप दीवान लगाते हैं। सो गाँव में अखण्ड पाठ भी कर दो और दीवान भी लगा दो। बड़ी मुश्किल से महाराज जी माने। दो स्थानों पर महाराज जी नहीं जाया करते थे - एक पटियाला तथा एक अपने गाँव क्योंकि साथियों को नहीं पता हुआ करता महापुरुषों का। वे वैसे ही आधा नाम लेकर आवाज़ें लगाते हैं। काफी देर के बाद महाराज जी जाने लगे, 1953 में पहली बार गये, उससे पहले नहीं जाया करते थे। सो प्रार्थना की और महाराज कहते हैं, ''देख लो! गाँव वालों को श्रद्धा वगैरा कुछ नहीं होती।'' कहते हैं, ''नहीं, महाराज! दीवान भी लगाना है।'' महाराज कहते हैं, ''गाँव वालों में श्रद्धा नहीं हुआ करती, वे तो ऐसे देखा करते हैं कि फलाणे (अमुक) का लड़का है, फलाणे का बेटा है बल्कि ईर्ष्या करते हैं।

महाराज वहाँ चले गये और कीर्तन उन दिनों में आप खड़े होकर किया करते थे। कीर्तन शुरू कर दिया और उधर बिरादरी के जो आदमी थे इनसे ईर्ष्या करते थे कहने लगे कि यदि इन्होंने शबद पढ़ा, हमने पढ़ने नहीं देना; पहले ही सन्देशा भेज दिया कि हमने नहीं पढ़ने देना।

हमें भी कहा करते थे दीवान नहीं लगाने देना। एक गाँव है - किशनपुरा। वहाँ से हमें सन्देशा आया कि हमने दीवान नहीं लगाने देना। हमने कहा तुम्हारे यहाँ तो लगना ही नहीं कभी - हम तो लगाते नहीं।

सो महाराज जी चले गये। उन्होंने कहा, यह तो आ गये, हमने दीवान नहीं लगने देना। वह पटियाला से - बाजा होता है ग्रामोफोन ले आए और जो शैला होता था - पटियाला, उसके बहुत गन्दे गन्दे गीत हुआ करते थे, रिकार्ड किये हुए। उन्होंने लाकर दूसरी तरफ मुँह करके बजाना शुरू कर दिया जिधर महाराज जी ने दीवान लगाना था। जब महाराज जी कीर्तन करने लगे, कहते हैं ''प्रेमियों! उसे बन्द कराओ, इतना गन्दा रिकार्ड है, स्त्रियाँ बैठी हैं, संगत बैठी है। गुरू महाराज जी की हजूरी है।'' चार पाँच आदमी कहने गये। वह कहते हैं ''तुम अपना काम करो, हम अपना काम करते हैं। हमारा मन नहीं करता कुछ सुनने को? हमने नहीं सुनना दीवान।'' महाराज जी अखण्ड कीर्तन करते रहे, कोई विचार न की। दूसरा दिन हो गया, तीसरे दिन फिर आदमी भेजे कि जाओ पूछो! प्रार्थना करो हाथ जोड़कर कि गुरूओं के साथ नहीं किया करते ऐसी बातें, गुरू ग्रन्थ साहिब जी की बेअदबी न करें; अति का तो खुदा भी वैरी हुआ करता है। फिर प्रार्थना की जाकर। तीसरा दिन आ गया। महाराज कहते हैं ''अच्छा भाई! अब मित्रों-मित्रों की लड़ाई वह जाने, ये जाने।'' वे शराब पीया करते थे, वहीं पर ही लड़ने लग पड़े आपस में। दो कत्ल हो गए वहीं पर खून हो गये, दौड़े भागे फिरते हैं, पुलिस ने आकर सभी पकड़ लिए, कईयों को फांसी हो गई, बाकियों को उम्र कैद हो गई। महाराज कहते हैं -

*ओइ विचारे किआ करहि जा भाग धुरि मंदे॥* *पृष्ठ - 306*

दरगाह में से ही मन्द भाग्य लिखे थे -

*जो मारे तिनि पारब्रहमि से किसै न संदे॥* *पृष्ठ - 306*

जिसे पारब्रह्म ने ही मार दिया, उसे कौन बचाये -

*वैरु करहि निरवैर नालि धरम निआइ पचंदे॥* *पृष्ठ - 306*

निरवैरों के साथ वैर करते हैं फिर पच-पच कर मरते हैं -

*जो जो संति सरापिआ से फिरहि भवंदे।*
*पेडु मुंढाहूं कटिआ तिसु डाल सुकंदे॥* *पृष्ठ - 306*

बाबा करम सिंह जी महाराज (होती मरदान) आपके पास संगत जाती है और वह एक गाँव में से गुज़र कर जाया करती थी जैसे दशमेश पिता के पास बजरूड़ में से निकल कर जाया करते थे, वहाँ से रास्ता था। उन

गाँव वालों ने क्या किया कि संगत के पीछे कुत्ते छोड़ने शुरू कर दिये, कुत्ते आकर संगतों को काट खाते, कपड़े फाड़ दिया करते, भगदड़ मच जाया करती। बाबा जी के पास प्रार्थना की। बाबा जी कहते हैं कि ऐसे करो प्रेमियो! दूसरा रास्ता कितनी दूर का है? कहते हैं ''मील दो मील का चक्कर पड़ता है।'' बाबा जी कहते हैं ''उधर से आ जाया करो भाई।'' संगत उस रास्ते से आने लग गई। ये कुत्ते लेकर उस रास्ते पर भी बैठने लग गये और जब संगत आती, कुत्ते छोड़ देते उनके पीछे। संगत ने प्रार्थना की कि बाबा जी, अब तो कोई रास्ता नहीं है वह भी रोक लिया, यह भी बन्द कर दिया। कहते हैं ''अच्छा भाई! फिर निरंकार जाने और ये जानें।''

सो ऐसा हुआ कि मूल (जड़) ही कट गया, ***'पेडु मुंढाहूं कटिआ तिसु डाल सुकंदे॥'*** अब डालियाँ सूखने लग गईं, आदमी मरने शुरू हो गये, बीबी कोई भी न मरे, आदमी सारे ही मरते जायें रोज़ - कभी दो, कभी तीन, कभी चार। आखिर सारे ही मर गये और एक दस महीने का बच्चा रह गया। वह स्त्री सियानी थी, बच्चा ले जाकर बाबा जी के चरणों में रख दिया और कहती है महाराज! चाहे मारो, चाहे रखो; यह हमारे आदमियों का कसूर था, उन्होंने अपनी करनी का फल पा लिया। कृपा करो, अब दया के घर में आओ।'' कहते हैं ''बीबी! अच्छा हुआ तू संगत की शरण में ले आई। यह अब अल्लाह ने रख लिया और इसका नाम भी 'अल्लाह दित्ता' रखना।'' सो इस प्रकार महाराज कहते हैं, वे तो खत्म हो जाते हैं ***'पेडु मुंढाहूं कटिआ तिसु डाल सुकंदे।'***

अब तपी को पकड़ कर खींचते फिरते हैं - पाॅटयाँ बना लीं। कहते हैं सूरज तो डूबता जा रहा है, कभी इधर वाले खींचने लग गये जैसे रस्सा खींचते हैं, कभी उधर वाले खींचते हैं। एक के हाथ में इधर वाली बाजू आ गई, एक के पास दूसरी तरफ वाली बाजू आ गई; एक ने टांगे पकड़ लीं और घुमाते फिर रहे हैं। हड्डियाँ निकल आईं। जिसके हाथ में हड्डी आ गई दौड़कर अपने खेत में ले जाता है वहीं पर ही बरसात हो जाती है। बुरा हाल हो गया उसका। सारे ही आ गये और कहने लगे ''बाबा अमर दास जी! आपके हम बहुत धन्यवादी हैं, तूने बरसात करवा दी; हमारी आँखे खोल दीं। इस तपी ने हमें विमुख कर दिया था। अब कृपा कर उन्हें वापिस ले आ। यदि तेरे में इतनी ताकत है, वे तो सारी शक्तियों के भण्डार हैं। हम भूल गये, गलती की। दूसरे दिन महाराज ने

सारा गाँव पंचायत, भेंट लेकर दूध इत्यादि की काढ़नियाँ (मटके) सिर पर रखकर महाराज जी के पास गलती माफ करवाने के लिये जाते हैं और वहाँ जाकर प्रार्थना करते हैं बार बार -

*धारना - तेरे वरगा न दिआल सच्चे पातशाह,*
*पापी मेरे वरगा कोई न - 2, 3*

*हउ अपराधी गुनहगार हउ बेमुख मंदा।*
*चोरु यारु जूआरि हउ पर घरि जोहंदा।*
*निंदकु दुसटु हरामखोरु ठगु देस ठगंदा।*
*काम क्रोधु मदु लोभु मोहु अहंकारु करंदा।*
*बिसासघाती अकिरतघण मै को न रखंदा।*
*सिमरि मुरीदा ढाढीआ सतिगुर बखसंदा॥*

***भाई गुरदास जी, वार 36/21***

महाराज जी की हजूरी में गये। बाबा अमरदास जी ने जाकर नमस्कार की तो गुरू महाराज ने पीठ कर ली। दूसरी तरफ गये तो महाराज जी ने फिर पीठ कर ली। हैरान हो गये महाराज! क्या बात हो गई? उधर गये फिर महाराज जी ने पीठ कर ली। उस समय आप जी ने अति अधीनता के साथ प्रार्थना की -

***धारना - बखश लेहु महाराज, हम ते बिगरी, हम ते बिगरी - 3***

''पातशाह! भुल्लकड़ हूँ, गुनाहगार हूँ, आप तो सदा ही बख्शविन्द हो; कृपा करो पातशाह! क्या गलती हो गई? आप कृपा करके सीधे रास्ते पर लाओ।'' महाराज कहते हैं, ''हे भद्र पुरुष! तपी को क्यों मरवाया तूने? क्यों ऐसा वचन किया? इतनी शक्तियों का भण्डार होकर ज़र (सह) न सका।'' ''पातशाह! सब कुछ सहन कर सकता हूँ मैं; टुकड़े टुकड़े कर दो, कोई फरियाद, कोई वचन नहीं करता मैं। पर पातशाह! हजूर की निरादरी नहीं सहन कर सकता। इतने निरादर के साथ आपको निकाला गया, इतना अपमानित किया। ऐसे दुर्वचन बोले इन लोगों ने और उसने इनको कितना बहकाया, कितना गलत रास्ते पर डाला कि आपके साथ हाथापाई पर उतर आए। पातशाह! मैं कैसे सहन कर सकता हूँ, मेरी तो मृत्यु हो जाती है। सिख (शिष्य) नहीं जीवित रह सकता यदि कोई गुरू की बेइज़्ज़ती कर दे, बेअदबी कर दे। पातशाह! मेरे वित (हद से अधिक) बहुत अधिक बातें हो गईं, मार्ग दर्शन करो।'' कहते हैं ''बाबा अमरदास! हम यदि चाहते तो सब कुछ कर सकते थे; किसी की ताकत नहीं थी, पर सहज में ही व्यवहार करना चाहिए। आज तो हो गया, आगे के लिये कभी भी शक्ति नहीं दिखानी, अजर को जर लो। कितनी तकलीफें आनी हैं, किसी को

गर्म गर्म तवों पर बिठाना है, किसी को देग में उबालना है, कहीं बच्चों को शहीद करना है, दीवारों में चिनवाना है बच्चों को, कितना अपमान करना है फिर शक्तियाँ ही दिखाते रहा करेंगे? नहीं शक्ति दिखानी, जर (सह) जा; माफ किया।'' ''पातशाह! आप क्षमा के भण्डार हो, आप तो स्वंय मालिक हो सबके।''

सो इस प्रकार '**क्षमा**' का ज़िक्र हो रहा था कि 'क्षमा' परमेश्वर के रास्ते पर चलने के लिए कितना मज़बूत डण्डा है। यदि क्षमा के बगैर चढ़ना चाहे नहीं चढ़ सकता क्योंकि जहाँ क्षमा होती है, वहाँ स्वंय हुआ करते हैं -

***धारना - जहाँ लोभ तहि काल है, जहां लोभ तहि काल है - 2***
***जहां खिमां तहि आप, जहाँ लोभ तहि काल है - 2***
***जहा लोभ तह कालु है,..................॥***

जहाँ लोभ होगा, वहाँ काल होगा और -

***...........जहा खिमा तह आपि॥*** ***पृष्ठ - 1372***

जिसके ह्रदय में क्षमा होगी वहाँ वाहिगुरू बसता है -

***कबीर जहा गिआनु तह धरमु है जहा झूठु तह पापु॥ पृष्ठ -1372***

जहाँ ज्ञान होगा, वहाँ धर्म होगा; जिस ह्रदय में झूठ है, फरेब है वहाँ पाप ही पाप होगा। डरो झूठ से प्यारे! यह बहुत बुरी चीज़ है। सहज स्वभाव ही झूठ बोले जाते हैं। साथ में पता भी होता है कि आदमी झूठ बोले जा रहा है पर सन्त नहीं कहा करते चुपकर, जाते हैं कि यह तो मूर्ख आदमी हैं लेकिन वहाँ पाप आ जाते हैं जहाँ झूठ हो।

इसी प्रकार एक बार मूसा जी ने खुदा से प्रार्थना की कि हे प्रभु! कृपा करके मुझे यह तो बताओ कि आपकी दरगाह में कौन मकबूल है? मकबूल कहते हैं - प्रवान कौन है?

मूसा जी ने अर्ज़ की कि ऐ बारे अल्लाह, मकबूल तेरे बन्दों में है कौन सिवा। यह बता कि बन्दे तेरे बेअन्त हैं, तुझे कौन सा मकबूल है, कौन सा प्यारा है। इरशाद हुआ, वह है मेरा बन्दा जो ले सके और न ले, बदी का बदला। जिसके अन्दर ताकत हो, एक वचन से ही फनाह कर दे; ताकत हो बदला लेने की लेकिन फिर भी जो बदला न ले, क्षमा कर दे वह मकबूल हुआ करता है।

सो इस प्रकार क्षमा, क्रोध का नाश करती है। क्रोध अन्धकार होता

है –

*क्रोध अंधकार के बिकार उर भए अति,*
*त्रिकुटी चढाए खल फीक मुख बोलई।*
*नैन करे लाल सु बिहाल होठ डसे अति,*
*जरे अंग अंग सु भुजंग बिख घोलई॥* **प्रबोध चंद्र नाटक**

कहते हैं नेत्र चढ़ जाते हैं, त्रिकुटी में बल डाल लेता है फीका मुख कर लेता है और फिर फीकी ही बातें करता है, नेत्र लाल हो जाते हैं और होंठ दबाने शुरू कर देता है और अंग अंग में से ऐसे होता है जैसे चोट मारो साँप को पर उसे मारो मत; जैसे वह विष घोलता है इस प्रकार क्रोधी आदमी विष घोलता है –

*धीर जे गंभीर नीर सागर समान अति,*
*भजे न बिकार नहि रंच उर डोलई॥*
*खिमा वन्त सन्त भगवंत के महंत जन,*
*बोले मधु बैन जन अमी झुक झोलई।* **प्रबोध चंद्र नाटक**

जो साधु होते हैं वे समुद्र की तरह होते हैं, गम्भीर होते हैं, रंच मात्र भी नहीं डोलते – क्रोधी के वचन सुनकर और अमृत जैसे वचन बोलने से नहीं हटते –

*खेद न ज़बान को न सीस को महान दुख,*
*चित को न ताप नहि देह दुख पाइ है॥*
*हिंसा आदि दोख बिन क्रोध को निफोट हनो,*
*खिमा मेरो नाम जग मेरो जस गाइ है॥* **प्रबोध चंद्र नाटक**

क्षमा कहती है, मैं क्रोध का नाश करती हूँ और न ही सिर दुखने देती हूँ न ही जुबान से कड़वी बातें करने देती; न चित्त में कोई संताप रहने देती हूँ और न ही हिंसा का दोष लगने देती हूँ। सो इस प्रकार क्षमा कहती है कि मेरा यश लोग गाते हैं और मैं क्रोध का नाश कर देती हूँ–

*सु खिमा कहि देव सुनो मन मैं नर क्रोध करे तब मोन गहीजै॥*
**प्रबोध चंद्र नाटक**

कहते हैं, कौन से हथियार हैं तेरे पास? क्षमा कहती है कि जब कोई आदमी क्रोध करता है, मैं मुँह बन्द कर लेती हूँ; बोलती ही नहीं, जवाब ही नहीं देती –

*वहि गार बके मुख भीतर जो पुन तां प्रति कोमल वाक भनीजै॥*
**प्रबोध चंद्र नाटक**

जब वह गालियाँ निकालता चला जाता है, बन्द ही नहीं करता फिर मैं मीठे बोल बोलती हूँ कि न प्यारे! तुझे गुस्सा आ गया। ऐसे ही मत क्रोध कर। क्रोध करना अच्छा नहीं, ऐसे ही तुझे गलत-फहमी हो गई -

*जु धिकार करे सु परे तिह आ पद पेख महां करुणा उर कीजै॥*

*प्रबोध चंद्र नाटक*

यदि धिक्कार है, धिक्कार है, करता है, धक्के मारता है; हम चरण पकड़ लेते हैं - बहुत दया पूर्वक, हम वचन करते हैं -

*तन ताड़न मैं हरखे उर मैं क्रित पूरब सु मे अब खीजै॥*

*प्रबोध चंद्र नाटक*

कहती है यदि घूंसे मारता है तो हम ऐसे मसझते हैं कि मेरे पिछले जन्म के पाप झड़ गये। यह क्षमा कहलाया करती है, ऐसा बाणी में फ़रमान है -

*धारना - पैर तिनां दे चुंम, जिहड़े मारन तैनूं मुक्कीआं - 2, 2*
*मारन तैनूं मुक्कीआं, जिहड़े मारन तैनूं मुक्कीआं - 2, 2*
*पैर तिनां दे चुंम...............।*

*फरीदा जो तै मारनि मुकीआं तिन्हा न मारे घुंमि।*
*आपनड़ै घरि जाईऐ पैर तिन्हा दे चुंमि॥* *पृष्ठ - 1378*

*फरीदा थीउ पवाही दभु। जे सांई लोड़हि सभु।*
*इकु छिजहि बिआ लताड़ीअहि। तां साई दै दरि वाड़ीअहि॥*

*पृष्ठ - 1378*

गुरू दशमेश पिता कहते हैं -

*अलप अहार सुलप सी निंद्रा दइआ छिमा तन प्रीति॥*

*शबद हज़ारे पातशाही 10*

यदि मिलना है परमात्मा को, तो ये गुण धारण कर ले प्यारे। सो यह छठा यम है, नियम है, इसकी व्याख्या की है।

गुरू महाराज गुरू नानक साहिब कहने लगे राजा शिवनाभ! ये जीवन के डण्डे जब तक तू कायम नहीं करता आगे नहीं बढ़ सकता - नाम की ओर। यह ज़रूरी है कि पहले इन्हें धारण कर इसकी तैयारी कर क्योंकि -

*विणु गुण कीते भगति न होइ॥* *पृष्ठ - 4*

गुण पैदा करने पड़ते हैं फिर भक्ति हुआ करती है। यदि कोई कहे जी मेरे अन्दर गुण हैं, मुझे भक्ति करने की क्या ज़रूरत है। महाराज कहते हैं -

*मन एकु न चेतसि मूड़ मना। हरि बिसरत तेरे गुण गलिआ॥*

*पृष्ठ - 12*

जब परमात्मा को भूल जायेगा तो इन गुणों ने खत्म हो जाना है,

विकार पड़ जाते हैं, कृमि पैदा हो जाते हैं, कीड़े पड़ जाते हैं; ये गुण हउमै के गुण कहलाने लग जाते हैं Natural (प्राकृतिक) नहीं रहते।

इसलिये यदि वाहिगुरू जी की ओर बढ़ना है यदि नाम को प्राप्त करना है तो यह आन्तरिक रहतों (नियमावली) का मैंने ज़िक्र किया है, इन्हें ध्यान से समझो; गीत मत बनाओ इसे। ईर्ष्या को, क्रोध को मारने वाली यदि कोई चीज़ है तो वह 'क्षमा' है। क्षमा में रहो। क्षमा जिसके हृदय में होगी, वहाँ वाहिगुरू के नाम की धुन्कार पैदा होगी। जहाँ क्रोध होगा वहाँ नाम की धुन प्रकट नहीं होती। जहाँ ईर्ष्या होगी, वहाँ रस की लिवतार टूट जाया करती है, नहीं आया करती हृदय में। सो ये बेकार बातें हैं। इन्हें भूल जाओ और अपना जीवन सफल बनाओ। अब समय इज़ाज़त नहीं देता। आनन्द साहिब का पाठ होगा फिर गुरू सतोतर में बोलने का कष्ट करना।

– आनन्द साहिब –

– गुरू सतोतर –

– अरदास –

# ੧ओंकार सतिगुर परसादि

*शान.............................................................................................................. ।*

*सतिनामु श्री वाहिगुरू, धंन श्री गुरू नानक देव जीउ महाराज।*

*डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।*
*डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ पृष्ठ - 256*

*फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।*
*नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ पृष्ठ - 289*

*धारना - आप मुक्त मोहि तारे जी,*
*ऐसे गुरां तों बलि बलि जाईऐ - 2, 2*
*ऐसे गुरां तों बलि बलि जाईऐ - 2, 2*
*आप मुकत मोहि तारे जी,............... ।*

*नाराइन नरपति नमसकारै।*
*ऐसे गुर कउ बलि बलि जाईऐ आपि मुकतु मोहि तारै॥ रहाउ॥*
*कवन कवन कवन गुन कहीऐ अंतु नही कछु पारै।*
*लाख लाख लाख कई कोरै को है ऐसो बीचारै॥१॥*
*बिसम बिसम बिसम ही भई है लाल गुलाल रंगारै।*
*कहु नानक संतन रसु आई है जिउ चाखि गूंगा मुसकारै॥ २॥*
*पृष्ठ - 1301*

*धारना - कित बिध मन धीरे जी, कित बिध मन धीरे जी - 3*

*सुंदर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे।*
*ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे।*
*मन इछे सुख माणदा किछु नाहि विसूरे।*
*सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे।*
*बिनु हरि नाम न सांति होइ कितु बिधि मनु धीरे॥ पृष्ठ - 707*

साधु संगत जी! गर्ज़ कर बोलना जी 'सतिनामु श्री वाहिगुरू' गुरू महाराज जी की हजूरी में आप एकत्र हुए हो। अति प्यार का प्रसंग श्रवण कर रहे थे। सारा संसार शान्ति के लिए अनेक प्रकार के प्रयत्न करता है। कोई माया के अन्दर सुख ढूँढता है, कोई पुत्रों की प्राप्ति में सुख ढूँढता है, कोई बहुत बड़ी बड़ी इमारतें बनाकर सुख ढूँढता है, कोई राजसी ऊँचे पद प्राप्त करके सुख ढूँढता है। अनेक धारणायें चल रही हैं संसार में, मान्यताएं हैं। बड़ी ठोस दलीलें हैं इनके पीछे कि यदि पैसा न हो तो आदमी कैसे सुखी हो सकता है? अच्छी कोठी में रहने के लिये जगह न मिलती हो, सवारी के लिये पास कुछ न हो और चार आदमियों में इज्ज़त न हो, राजसी शक्ति हाथ में न हो, कैसे आदमी सुखी हो जायेगा? और

सुख के यत्न करने के लिए इन चीज़ों की प्राप्ति के लिये आदमी दिन-रात एक कर देता है कि मैं सुखी हो जाऊँ पर कोई सुखी हुआ है? ज्यों ज्यों प्रकृति का प्रसार होता है - प्रवृति का, उतना ही उसमें से दु:ख निकलता चला जाता है। यदि एक सेर सुख निकलता है तो उसके पीछे एक मन यानि 40 किलो दु:ख छिपा पड़ा है -

***सुखु मांगत दुखु आगै आवै। सो सुखु हमहु न मांगिआ भावै॥***

*पृष्ठ - 330*

कहते हैं ऐसे सुख की प्राप्ति की कोई आवश्यकता नहीं जो सुख मांगने के बाद, दुख आगे आ जाये। विचार करके देख लो। पुत्र की प्राप्ति नहीं हुई, मारा मारा फिरता है, बहुत ऐसे काम करता है, जगह जगह जाकर शीश झुकाता है; जहाँ नहीं भी झुकना था वहाँ जाकर भी शीश नवाता है। पुत्र प्राप्त हो जाता है। आखिर वही पुत्र पैदा होकर बीमार हो जाता है। वह जो सुख थोड़ी देर के लिये प्राप्त हुआ था वह कितने दु:ख में बदल गया? भागा फिरता है कि कहीं इसे ऐसा न हो जाये, वैसा न हो जाये। कोई बच्चा नालायक निकल आये, गलत संगत में पड़ जाये, शराबी बन जाये, जुआरी बन जाये, चोर-चकार बन जाये; कितना दुख खड़ा हो जाता है। सुख तो थोड़ी देर के लिए महसूस हुआ था; बाद में कितना दु:ख प्राप्त हुआ।

महाराज कहते हैं, संसार के जितने भी बड़े बड़प्पन हैं ***'सुन्दर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे।'*** सुखों की गिनती कोई नहीं है और रसों के भोगों में कोई रुकावट नहीं है क्योंकि शरीर स्वस्थ न हो, मीठी चीज़ खाने को मन करता हो, डाक्टर मना कर देता है कि तुझे रक्त शर्करा (blood sugar) है मीठा मत खाना। उसका मन करता हो फल खाने को, खा नहीं सकता। कोई रस भोगने को मन करता हो, नहीं भोग सकता क्योंकि बीमारी का डर है लेकिन महाराज कहते हैं इतने सुख हों, इतने रस हों जिनका कोई effect प्रभाव न होता हो, ***'ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे।'*** मोती तथा हीरे आदि लगाकर decoration (सजावट) की हो कोठियों की और ***'मन इछे सुख माणदा किछु नाहि विसूरे।'*** जितने मन में विचार आते हैं उतना ही उसे सुख प्राप्त हो जाता है और किसी सुख को भोगने के बाद दुख न आता हो पर यदि वाहिगुरू याद नहीं आता, चित्त में नहीं बसता.........। हम मौखिक रूप से वाहिगुरू को याद कर लेते हैं, चित्त में नहीं बसा अभी। श्वांस के साथ नाम जपते हैं पर चित्त में नहीं बसा। कहते हैं, यदि चित्त में नहीं बसा तो विष्ठा के कीड़े

जैसा हाल हुआ करता है। कुरलाता फिर रहा है संसार, हाय हाय हो रही है चारों ओर, कोई सुखी नहीं। महाराज कहते हैं -

*ऐसा जगु देखिआ जूआरी। सभि सुख मागै नामु बिसारी॥*

*पृष्ठ - 222*

नाम को भूलकर संसार सुख चाहता है। इतना बड़ा जुआरी है कि इसे यह पता ही नहीं कि गलत दाव पर दाव लगाये जाता है, नाम की ओर नहीं आता। दूसरी तरफ महाराज जी कहते हैं कि यदि इन चीज़ों की प्राप्ति न हो - अच्छी कोठी न हो, अच्छी सवारी न हो, चार आदमियों में सम्मान न हो, कोई जायदाद न हो फिर आदमी का मन कैसा होता है? कहते हैं यदि तो बन्दगी वाला है तो उसका मन परम शान्त हुआ करता है - सभी परिस्थितियों में रहते हुए -

*बसता तूटी झुंपड़ी चीर सभि छिंना।*
*जाति न पति न आदरो उदिआन भ्रमिंना।*
*मित्र न इठ धन रूप हीण किछु साकु न सिंना।*
*राजा सगली स्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना।*
*तिस की धूड़ि मनु उधरै प्रभु होइ सु प्रसंना॥* *पृष्ठ - 707*

यदि नाम में मन रमा हुआ है तो कहते हैं वह तो सारी सृष्टि का राजा है। सो इसलिये सुख को संसार चाहता है पर सुख 'नाम' की प्राप्ति के बिना नहीं हुआ करता।

सो पिछले दीवानों से यह विचार चल रही है कि आदमी नाम को कैसे प्राप्त कर सकता है; किस प्रकार उस अवस्था तक पहुँच सकता है जहाँ गुरू महाराज हमें बार बार पहुँचाने का इशारा करते हैं। सारा संसार नाम जपता है -

*राम राम सभु को कहै कहिऐ रामु न होइ।*
*गुर परसादी रामु मनि वसै ता फलु पावै कोइ॥* *पृष्ठ - 491*

कहते हैं जितनी देर तक चित्त में नहीं बसता, मन में नहीं बसता तब तक सारा संसार कहे जाता है - कहने से तो बात नहीं बनती। ज़रूर इस बात में कोई भेद है, जिसे समझने की ज़रूरत है। संकेत है - महाराज जी का कोई खास, जिसे हमें समझना चाहिये कि नाम हम जपते हैं, अमृत बेला में उठते हैं, नितनेम करते हैं पर यह सब कुछ करते हुए भी फिर क्या कारण है - हमारे अन्दर वही बातें, वही गुस्सा है, वही निन्दा है, वही नफरत है, वही कु-रस है; रस में हम आते ही नहीं हैं; वही frustration (झुन्झलाहट) है, उसी तरह मन में माहौल चलता है फिर क्या कारण है?

नाम में प्रभाव नहीं है या हमारी approach (पहुँच) में अन्तर है?

श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की जो बाणी है साध संगत जी! सारे संसार के धार्मिक इतिहास में केवल एक ही चीज़ है जिसे मौलिक कहा जा सकता है जो originality (मूल रूप) में पूरी तरह कायम है, जिसकी authenticity (प्रमाणिकता) पूरी तरह मानी जाती है; बाकियों में क्या गड़बड़ है? बाकियों का यह है कि जितने धर्म ग्रन्थ हैं वह जिन्होंने उच्चारण किये हैं उन्होंने लिखे नहीं, लिखने वाले तो बाद में आये हैं। बाईबल में ईसा जी के वचन हैं। काफी देर बाद यह लिखित रूप में अस्तित्व में आई। तब तक यह केवल याद-दाश्त पर ही कायम रही। यादगार का कोई विश्वास नहीं हुआ करता। याद आदमी की बदल जाया करती है। आज याद है, कल हैरान होते हैं कि इस आदमी का मुझे नाम ही नहीं याद आता, देखा तो है मैंने; कितनी याद-दाश्त है हमारी। रोज़ दो चार हज़ार आदमियों के साथ वासता पड़ता हो, कितनी याद-दाश्त हम रख सकेंगे। सो वे याद-दाश्त पर लिखी गई है। जो 'गीता' उच्चारण की गई है, वह convey की गई है, जिसे बाद में व्यास जी ने लिखित रूप प्रदान किया। वेद ऋषियों मुनियों के अनुभवों में से आए; काफी देर बाद याद-दाश्त के बल पर लिखे गये। कुरान शरीफ, मोहम्मद साहिब बोलते चले गये लेकिन बाद में उस सारे को लिखा और पढ़ा गया और बहुत सारी ऐसी आयतें थीं, जो निकालनी पड़ी, लिखित रूप में नहीं आई। यह केवल गुरबाणी ही है जो लिखित रूप में चली आ रही है। बाबा मोहन जी के पास पोथियां थीं। गुरू महाराज जी, गुरू पाँचवें पातशाह जी ने रूप दिया लिखित- 'गुरू ग्रन्थ साहिब' जो हमारे सामने प्रकाश है, यह उनकी कृपा है। इसके बाद दूसरी बार टैस्ट हुआ कि समरथ गुरू जो है, उसका connection (सम्बन्ध) दरगाह से है क्योंकि यह बाणी सारी relay (आकाश वाणी) हुई है अपनी उच्चारण की हुई नहीं है -

***हउ आपहु बोलि न जाणदा मैं कहिआ सभु हुकमाउ जीउ।***

*पृष्ठ - 763*

अन्दर से चीज़ आती थी उसे लिखित रूप गुरू महाराज ने दिया।

गुरू दसवें पातशाह महाराज जी ने जब दमदमा साहिब (साबो की तलवन्डी) यह कहा कि भाई अब हमें फुर्सत है, तुम्हारे साथ हमने वचन किया था कि श्री गुरू ग्रन्थ साहिब के अर्थ आप सब को सुनायेंगे। जाओ, धीर मल से बीड़ लेकर आओ, साथ ही उतारा कर लेंगे (नकल उतार

लेना), साथ की साथ अर्थ करते जायेंगे। उस समय उसने जवाब के रूप में तर्क किया। कहने लगा ''यदि वह सचमुच ही गुरू नानक का रूप हैं तो फिर इन्हें क्या कठिनाई है, अपने अनुभव से बाणी उच्चारण कर लें। बहुत सारे युद्ध हो चुके थे, आखिरी युद्ध में आनन्दपुर साहिब छोड़ना पड़ा, साहिबजादों की शहीदी हुई, छोटे साहिबजादों को नीवों में चिनवा दिया गया और उस समय केवल दो सिंह (सिख) साथ हैं, आप मालवा पहुँचते हैं। काफी सारी संगत पिछली थी, काफी सारी नई थी। कईयों के मनों में यह शंका पैदा होती थी कि गुरू महाराज जी ने शक्ति क्यों न प्रयोग की; जब आप समरथ हैं तो शक्ति प्रयोग कर लेते। इन सभी संशयों का उत्तर देना ज़रूरी था।

सो महाराज कहने लगे ''एक तम्बू लगाओ, भाई मनी सिंह लिखा करेंगे।'' 14 वर्ष की आयु थी इनकी। ''सच्चे पातशाह! मैं 14 वर्ष का बच्चा हूँ, मुझे क्या पता बाणी के अनुभव का? इनमें कहाँ पर 'ऊ' की मात्रा लगती है। कहाँ पर छोटी 'इ' तथा बड़ी 'ई' तथा 'आ' आदि की मात्राएं लगती हैं? पातशाह! मुझे तो व्याकरण का भी ज्ञान नहीं है। मुझे गुरबाणी के गूढ़ भावों का कोई पता नहीं है।'' महाराज ने कहा ''भाई मनी सिंह! कलम रखते जाना, अकाल पुरुष ने चलानी है।'' आप समाधि स्थित होकर बैठ जाते हैं तथा आप लगभग पौने तीन पृष्ठ प्रतिदिन उच्चारण किया करते थे और प्रतिदिन ही उसकी कथा किया करते थे। सारी गुरबाणी इस प्रकार अनुभव में से आपने उच्चारण की। सो यह authnticity (प्रमाणिकता) है। पहली बीड़ मिलाकर देख लो, यह मिला लो; एक अक्षर का अन्तर है वहाँ ***'कहु कबीर जन भए खलासे प्रेम भगति जिह जानी।'*** है इसमें -

***कहु कबीर जन भए खालसे प्रेम भगति जिह जानी॥*** *पृष्ठ - 654*

है। जानबूझ कर यह अन्तर डाला गया था। सो गुरू ग्रन्थ साहिब एक ऐसा है, हम पर ऐसी कृपा की है कि हमें यह बिल्कुल सही बाणी मिल गई और इसके अन्दर जो कुछ भी है, अकेली अकेली बात पर हमें विचार करना चाहिये।

सो आपने फरमाया -

***राम राम सभु को कहै कहिऐ रामु न होइ॥*** *पृष्ठ - 491*

कि 'राम राम' 'वाहिगुरू वाहिगुरू' सभी करते हैं पर होता तो है नहीं, मन में नहीं बसता, चित्त में नहीं समाता, फिर ज़रूर ही इसमें कोई रहस्य

है। इस भेद को जानने के लिये राजा शिवनाभ गुरू नानक पातशाह से प्रार्थना करता है - लंका का राजा, ''हे सतगुरू! कृपा करके वह मार्ग बताओ जिसके द्वारा प्रभु तक पहुँच सके और मैंने सुना है कि वह अन्दर ही है आदमी के - एक रास्ता। कृपा करके उस रास्ते पर प्रकाश डालो।''

इसी प्रकार माता जीतो जी ने आकर महाराज दशमेश पिता जी के पास प्रार्थना की कि पातशाह! जो आन्तरिक अवस्थाएं हैं, आप कृपा करके बताओ ताकि हम उन्हें प्रकट करने का यत्न करें और उस रास्ते पर चलकर उस स्थान पर जिसे परम पद कहते हैं, पहुँचा जा सके, परम अवस्था में निवास किया जा सके। सो दोनों बातें एक ही थी। गुरू नानक पातशाह शिवनाभ को कहने लगे ''राजन! दो रास्ते हैं - एक रास्ते को ***'कष्ट मार्ग'*** कहते हैं, एक को ***'सहज मार्ग'*** कहते हैं। रास्ते तो बेअन्त हैं पर ये दो रास्ते हैं जो गुरमत में प्रवान हैं।

कहने लगा ''महाराज! मुझे दोनों का ही ज्ञान करवा दो।'' तो महाराज पहले यह बताते हैं कि जो थोड़ा कठिन मार्ग है, फालतू समय जिनके पास है वे कर सकते हैं लगन वाले कर सकते हैं; वह रास्ता इस प्रकार है पिछले चार दीवानों में इस पर विचार हो चुकी है उसकी कुछ रहतें होती हैं। जब तक आदमी उन नियमों का पालन नहीं करता तब तक भव सागर से पार नहीं हो सकता। जैसे एक जहाज़ है उसमें 50-60 छिद्र हो जायें; क्या होगा? समुद्र का पानी उसमें भरना शुरू हो जायेगा। जब तक उन छिद्रों को plug (बन्द) नहीं करते, समुद्र पार नहीं किया जा सकता। जहाज डूब जायेगा - पानी भरने से। इसी प्रकार हमारे अन्तसकरण में कुछ holes (छिद्र) हैं, छेक हैं। ऐसे समझ लो कुछ गिरावटें हैं। जब तक हम इनको plug (बन्द) नहीं करते तब तक कोई बात नहीं बनती। या ऐसे समझ लो कुछ तारें हैं, जब तक वे disconnected (टूटी पड़ी) हैं तब तक उड़ान नहीं भरी जा सकती। सो उनके बारे में पीछे विस्तार के साथ विचार की गई थी।

सबसे पहले मनुष्य के मन में अहिंसा की ज़रूरत है - किसी जीव को दुख न देना -

*दूखु न देई किसै जीअ पति सिउ घरि जावउ। पृष्ठ - 322*

इज्ज़त मान के साथ अपने घर जायेंगे यदि हमने किसी जीव को दुख न दिया - न शारीरिक तौर पर, न वचन के रूप में, न मानसिक रूप में, न बुद्धि द्वारा, न ही अपने आत्मिक बल के साथ। पाँच प्रकार की हिंसा हुआ करती है। पाँच प्रकार की हिंसा त्याग कर जब हम उसका पालन करते हैं

कि जुबान से रूखा नहीं बोलना, शरीर से किसी को नुकसान नहीं पहुँचाना, मन से किसी का बुरा नहीं चितवना; रोज़ ही कहना ***'नानक नाम चढ़दी कला तेरे भाणे सरबत का भला।'*** दिल से कहना - दुश्मनों का भी भला, पातशाह! जो मेरे साथ बुरा व्यवहार करते हैं, उनका भी भला करना, वे भूले भटके हुए हैं, उन्हें भी ज्ञान बख्श।

पिछली बार मैंने बताया था कि बाबा फरीद जी जा रहे हैं और चलते चलते रास्ते में एक बहुत गलत आदमी मिल गया। उसने आकर एक तो सामान छीन लिया - जो छोटे मोटे एक दो वस्त्र थे, साथ ही धक्के मुक्के भी बहुत मारे। मुरीद कहने लगे, बाबा जी! हम यह देख नहीं सकते। कहते हैं नहीं, शान्त रहो, जब वह चला गया इनके नेत्रों में से आँसू बह चले। तो मुरीदों ने पूछा "मुरशद! जब वह हाज़िर था, धक्के मारता था उस समय हम कहते थे कि इसे पकड़ लें; अब तुम क्यों रोते हो?" कहते हैं "मैं इसलिए नहीं रो रहा, मैं तो अल्लाह ताला को कहता हूँ, हे अल्लाह ताला! तूने इस आदमी को कितना भ्रमित किया हुआ है, तू इस पर कृपा कर इसके अवगुणों को माफ कर। वह तो गलत रास्ते पर जा रहा है, डूबने वाले रास्ते पर जा रहा है।" यह तो मैं प्रार्थना कर रहा हूँ - अल्लाह ताला के पास। थोड़ी देर बाद क्या देखते हैं कि वही आदमी वापिस आ गया, आते ही चरणों में गिर पड़ा, साथ ही कहता है "फकीर सांई! मैं बहुत भूला भटका हुआ हूँ। मुझे बहुत पश्चाताप हो रहा है कि मैंने तुझे बहुत दुख दिया। सो कितनी उच्च अवस्था है कि धक्के मारने वाले का भी भला चाहते हैं। सो यह ***'अहिंसा'*** कहलाती है। ***'नानक नाम चढ़दी कला तेरे भाणे सरबत का भला।'*** न बुद्धि द्वारा किसी का नुक्सान करना, न आत्मिक बल द्वारा।

दूसरा हुआ करता है ***'सत्य'*** सत्य का जीवन। अन्दर से भी वैसा और बाहर से भी वैसा। कोई छिपाने वाला जीवन न हो, छिपी हुई बात न हो जीवन में कोई भी। वैसा ही हो जैसा वह है as it is; बुरा है तो भी जनता के सामने; अच्छा है तो भी जनता के सामने; छिपा कर न करे। बाज को कोई बुरा नहीं कहता क्योंकि उसका स्वभाव है झपटा मारना। बगुले को सभी बुरा कहते हैं क्योंकि वह धोखा देता है। आंखें बन्द करके एक टांग के बल पर खड़ा रहता है और जब शिकार पास आ गया उसी समय चोंच के साथ मछली पकड़ लेता है। उसे बुरा कहते हैं क्योंकि दिखावा करता है। दिखाई कुछ और देता है पर अन्दर से कुछ और है।

सो सत्य का जीवन होना चाहिए, धोखा नहीं जीवन में होना चाहिए, पर्दा नहीं चाहिए।

तीसरा हुआ करता है ***'चोरी न करना'***। न शारीरिक चोरी हो - किसी की चीज़ उठा लेना और न ही मानसिक चोरी हो। मानसिक चोरी उसे कहते हैं कि पाप करके छिपाकर रखे हुए हैं और अब बाहर से अच्छा बना फिरता है। लोग प्रशंसा करते हैं। कभी नहीं कहता कि मैं बुरा हूँ, तुम मेरी क्यों प्रशंसा किये जा रहे हो, तुम्हें नहीं पता कि मैं कितना बुरा हूँ। कई आदमी रस्मी तौर पर कह देते हैं कि मैं बहुत बुरा हूँ लेकिन यदि कोई दूसरा कह दे, फिर गले पड़ जाते हैं। प्रार्थना करेंगे -

***हउ अपराधी गुनहगारु हउ बेमुख मंदा।***
***चोरु यारु जूआरि हउ पर घरि जोहंदा॥***

***भाई गुरदास जी, वार 36/21***

लेकिन अन्दर से नहीं मानते। यदि कोई थोड़ा सा भी कुछ कह दे तो गले पड़ जायेंगे। इसका मतलब है कि मन और जीभ का आपस में मेल नहीं है। वह कुछ और समझता है, जुबान कुछ और बोल रही है। चित्त साथ नहीं देता -

***ममा मन सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ।***
***मन ही मन सिउ कहै कबीरा मन सा मिलिआ न कोइ॥***

***पृष्ठ - 342***

सो यह बात जीवन में से निकाल देनी चाहिए -

चौथा विचार किया था कि मनुष्य में ***'ब्रह्मचर्य'*** होना चहिए -

***एका नारी जती होइ, पर नारी धी भैण वखाणै॥***

***भाई गुरदास जी, वार 6/8***

***निज नारी के संगि नेहुं, तुम नित बढैयहु।***
***पर नारी की सेज, भूलि सुपने हूं न जैयहु॥*** ***दसम ग्रन्थ***

सो ब्रह्मचर्य पालन करना, रक्षा करना अपने शरीर के ओज़ की, ताकत की।

पाँचवा हुआ करता है ***'धीरज'*** होना चाहिए। धैर्य के बारे में विचार की थी कि गुरू अमरदास जी का किस तरह से निरादर किया - दातू जी ने लेकिन आपके वचन क्या थे? चरण भी पकड़ लिये उनके, दबाने लग गये और कहते हैं साहिब जी! तुम गुरू साहिबज़ादे हो और मैं नफ़र (दास) और मेरी हड्डियां बड़ी कठोर हैं, आपके कोमल चरणों को कोई चोट तो नहीं आई? अति का धीरज है, हद होती है अन्तिम सीमा तक।

फिर उससे आगे है ***'क्षमा'।*** गुरू अंगद साहिब महाराज ने कैसे क्षमा की उन आदमियों पर और जिन्होंने महाराज जी को खडूर साहिब से बाहर निकाला और बाबा अमरदास जी ने जब तपस्वी को उसके व्यवहार का फल चखाया तो महाराज जी ने पसन्द न किया कि वह तो भूला भटका जीव है पर तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिये था। सो क्षमा होनी चाहिये मन में।

उसके बाद हुआ करती है ***'दया'।*** यह साँतवी चीज़ है। सो जब तक दया नहीं आती मन में ***'दइआ बिन सिद्ध कसाई।'*** करुणा बहुत बड़ी चीज़ है। जहाँ 'दया' है वहीं धर्म है –

*धौलु धरमु दइआ का पूतु।* पृष्ठ - 3

यदि दया ही नहीं है हृदय में तो धर्म पैदा नहीं हुआ करता। सो उस समय महाराज बताते हैं कि –

*सपतप दुखू न देखै काही॥* पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)

कहते हैं साँतवा जो यम है वह है किसी को दुखी देखकर हंसे न –

*जैसा बितु तैसा होइ वरतै अपुना बलु नही हारै॥* पृष्ठ - 679

जितनी ताकत गुरू ने दी है उतनी ताकत अपनी प्रयोग करके दूसरे के दुख को निवृत करने का कोई न कोई यत्न करना चहिये। सो वह तभी कर सकता है यदि दया हो –

*दया करै सभ को निरबाही॥* पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)

सो दया जिसने भी की है वे बहुत ऊँची पदवी पर पहुँचे हैं।

राविआ एक सूफी फकीर हुई है – स्त्री। मोहम्मद साहिब के जो दूधिया भाई (सगा भाई) थे, उनके द्वारा ***'सूफी मत'*** चलाया गया। आप वाहिगुरू जी की हजूरी में रहकर भजन किया करते थे। जब मरकबे में जाते थे तो आपका शरीर काँपता रहता था। मुरीदों ने पूछा ''मुरशद! जब आप समाधि में होते हो, मरकबे में होते हो, आपका शरीर क्यों काँपता रहता है?'' कहने लगे ''प्रेमियों ! जब मैं बारेगाह खुदा (दरगाह) में पहुँचता हूँ – वाहिगुरू की दरगाह में, वहाँ मैं देखता हूँ कि बहुत बड़े बड़े जपी, तपी, दानी, नाम जपने वाले, तपीश्वर स्थान स्थान से बेअन्त ब्रह्मण्डों में से वहाँ पहुँचे हुए, वे उसकी महिमा का गान करते हैं। वह इतना समरथ है कि मैं वहाँ डरता रहता हूँ कि मुझे वहाँ कोई फुरना न आ जाये। दरगाह में बैठकर मैं कोई बे-अदबी न कर बैठूँ। इसलिये मेरा शरीर काँपता रहता है क्योंकि हजूरी का भजन होता है। साध संगत जी! जब तक हम हजूरी का भजन नहीं करते, हजूरी में बैठकर वाहिगुरू वाहिगुरू

नहीं करते, वे शून्य 'सुन्न' को आवाज़ें लगाने के समान हुआ करती है। जब तक हजूरी नहीं, सामने नहीं देखते जिसका नाम लेते हैं, वह सामने होना चाहिए। यही कारण है कि हाज़िरी न होने के कारण, हमारे सामने वह ध्येय न होने के कारण हम 'राम राम' 'वाहिगुरू वाहिगुरू' किये जाते हैं पर युक्ति के साथ जल्दी ही बात निपट जाया करती है। बिना युक्ति के बहुत लम्बा चक्कर काटना पड़ता है। एक आदमी कह देता है - Mathematician (गणितज्ञ) कि भाई ग्यारह हज़ार एक सो ग्यारह को ग्यारह हजार एक सो ग्यारह बार जमा करो। वह जमा करेगा, कितना समय लग जायेगा, चौबीस घंटे लग सकते हैं 11,11 = 22; 22 और 11 = 33 ऐसे करता रहे, कब ग्यारह हज़ार एक सौ ग्यारह बार आयेगा। जो सूत्र (formula) जानता है वह तुरन्त इसे गुणा कर देगा। यह सारी सूत्र की बात है। सो इस प्रकार जब हम सूझ बूझ के साथ नाम जपेंगे उस समय बहुत बड़ा फल थोड़े से समय में ही प्राप्त हो जाया करता है।

सो उसकी एक मुरीद थी बीबी राविआ। वह presense of God (परमेश्वर की हजूरी) हर समय रखती थी, वाहिगुरू को हर वक्त हाज़िर नाज़िर समझती थी और सर्वस्व में परमेश्वर रमा हुआ देखा करती थी। एक बार मक्का के हज़ को जा रही थी और चलते चलते जब 60 मील के करीब रह गया मक्का, उस समय साथ के संगी साथी आगे निकल गये और यह पीछे रह गई तथा एक कुएं पर नज़र चली गई। क्या देखती है कि एक कुतिया कुएं के चारों ओर पिल्लों (कतूरों) को लिये हुए इधर उधर चक्कर लगा रही है। वह भावना में बह गई। जब ब्रह्मभाव में चला जाये, दूसरे का दुख अपना लगने लग जाया करता है, अपने आप को महसूस होता है। दुखी वह होता है, महसूस अपने आपको होता है और उसे लगा कि इन्हें बहुत प्यास लगी हुई है और इन्हें पानी कैसे पिलाया जाये। वह घुटने टिका कर झांक कर देखती है, कुएं में झाँक कर देखती है लेकिन कुएं का पानी बहुत नीचा है। आखिर इसने अपने वस्त्र फाड़ फाड़ कर रस्सियां बनानी शुरू कर दीं। ऐसा करते हुए इसने सारे वस्त्र फाड़ दिये - केवल एक वस्त्र के अतिरिक्त। अब वह उसे पानी में भिगो भिगो कर बाहर निकाल निकाल कर निचोड़ देती, फिर भिगो देती फिर निचोड़ देती। इस तरह सभी को पानी पिलाया और उस कुतिया ने ऐसा किया, ऊपर की ओर देखा जैसे परमेश्वर की दरगाह में दुआ करती है। अब वस्त्र इसके पास कोई नहीं है। टीले में रेत के अन्दर गड्ढा खोदा उसने - गले तक का, उसमें बैठ गई।

उधर हाज़ी हज करने के लिये जा रहे हैं। हैरानी हुई कि काहबा नज़र नहीं आ रहा किसी को भी। सभी प्रार्थना करते हैं कि यह क्या बात हो गई? आज पहली बार है हमें काबा क्यों नहीं दिखाई दे रहा? तब आकाशवाणी हुई कि काहबा जो है वह रावीआ के दर्शन करने गया हुआ है और 60 कोस की दूरी पर है, वहाँ जाकर दर्शन करो। सारे हाजी दर्शन करने आते हैं और वहाँ पर दर्शन हुए। उस समय के जो बड़े मुखिया थे- इब्राहीम उन्होंने दुआ की हे अल्लाह ताला! यह क्या रहस्य है? कहने लगे, रहस्य क्या है? रावीआ ने मुझे जीवों में समझकर दया की और उस दया का फल है कि काहबा उसके दर्शनों के लिये आया हुआ है। सो जब वे रावीआ के पास पहुँचते हैं, हैरान हो गये कि जंगली जानवर सारे इकट्ठे होकर बैठे हैं। बघिआड़ और बकरी दोनों पास पास बैठे हैं। और भी ज्यादा हैरानी यह हुई कि रावीआ के पास आये तो जानवर अपने अपने रूप में आकर गायब हो गये और उसके बाद इन्होंने कहा कि रावीआ! बाहर आओ। कहती है मेरे पास वस्त्र नहीं हैं। वस्त्र दिये गये, विचार शुरू हुई। कहने लगे कि क्या बात तूने कौन सा कर्म किया जिसकी वज़ह से काहबा तेरा हज करने के लिये स्वंय आया है? कहने लगी मैंने कोई काम नहीं किया। मेरे दिल में दया उत्पन्न हुई, इन जीवों पर दया की है -

***अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु॥*** *पृष्ठ - 136*

इसलिये कहने लगे ये जानवर विरोधी स्वभाव के क्यों बैठे हैं? वह कहने लगी ''हाजियो! मेरे मन में कोई वैर नहीं है, मुझे सब कुछ ब्रह्म दृष्टि आ रहा है। जहाँ ब्रह्म दृष्टि हो वहाँ सभी का स्वभाव बदल जाता है। सो जब मरदाना कीर्तन करता है, पातशाह! ये शेर बैठे हैं ये हिरन बैठे हैं, विरोधी स्वभाव वाले जानवर आकर बैठे हैं। कहते हैं, मरदाना! शबद की तार ने सभी की सुरत को वहाँ पहुँचा दिया जहाँ अद्वैत हुआ करती है एक हो जाते हैं क्योंकि अन्दर से एक हैं। बाहर से हम अलग अलग हो गये हैं।

सो इस प्रकार महाराज कहते हैं ***'दया करै सभ को निरबाही।'*** सो **'दइआ'** साँतवी चीज़ है भजन के लिये जो अत्याधिक जरूरी है। यदि जानवर काट काट कर खाये जाते हैं, दया कहाँ से आ जाएगी। साध संगत जी! कई कहते हैं फिर तो जानवर बढ़ जायेंगे। भाई! तुम्हारी डयूटी लगी हुई है जानवर मारने की? जिसने भजन बन्दगी करनी है वह भजन बन्दगी करने वाले कर्म करे। जिन्होंने हिसाब किताब (लेखे पत्ते) लेने देने हैं - आज ये उन्हें काटते हैं, कल को वे इन्हें काटेंगे -

***कबीर खूबु खाना खीचरी जा महि अंम्रितु लोनु।***
***हेरा रोटी कारने गला कटावै कउनु॥*** ***पृष्ठ - 1374***

आज गला काट कर खाता है। कल को कटवाना भी पड़ना है गला। सो इस प्रकार दया बहुत बड़ी चीज़ है।

आठवाँ होता है ***'कोमल हृदय'***। दिल बहुत नर्म रखना, क्रूर हृदय न रखना, कपट भरा हृदय न रखना, खोटा हृदय न रखना; कोमल रखना। जिसका कोमल हृदय होगा, उसके मुख से सुन्दर बातें निकलती हैं, क्रूर बातें खोटी बातें नहीं करता, ताने, उलाहने नहीं दिया करता क्योंकि हृदय कोमल है -

***असटम कोमल हिरदा राखै। शुभ उपदेश सभन सों भाखै॥***
***पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

वह जब भी देगा किसी को शुभ उपदेश ही देगा, किसी को misguide (गलत सलाह) नहीं करेगा।

सो इस प्रकार नौंवा जो नियम है - यम, उसे मर्यादा कहते हैं खाने की -

***नौमे यम मिरजाद अहारा॥*** ***पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

मर्यादा में रहकर खाना। वह क्या होता है -

***अलप अहार सुलप सी निंद्रा दया छिमा तन प्रीति॥***
***शबद हज़ारे पा. 10***

तीन प्रकार का खाना हुआ करता है - एक तमोगुणी होता है, एक रजोगुणी होता है, एक सतोगुणी होता है।

***'तमोगुणी'*** खाना होता है मांस मछली, शराब, अण्डे आदि खा लेना, गली सड़ी चीज़े खा लेना। यह सारा तमोगुणी आहार, वृत्ति को तमोगुण करता है इससे मनुष्य में आलस्य बढ़ जाता है। वाहिगुरू से विमुख हो जाता है। अन्दर से प्रतीति कम हो जाती है, न गुरू के साथ रहती है प्रतीति, न वाहिगुरू पर प्रतीति रहती है और अन्दर नींद छा जाती है, परमेश्वर से बहुत दूर चला जाता है। वह अधिकारी नहीं हुआ करता।

दूसरा हुआ करता है ***'रजोगुणी'*** खाना। चटपटे खाने, स्वाद लगा लगाकर खाना -

***मिठा करि कै खाइआ बहु सादहु वधिआ रोगु॥*** ***पृष्ठ - 785***

***खसमु विसारि कीए रस भोग। तां तनि उठि खलोए रोग॥***

*पृष्ठ - 1256*

रोगी हो जायेगा प्यारे! आहार संयम से कर, विचार करके किया कर -

*भला बुरा लख करै विचारा।*
*खावण भूख अहार है जेतो।*
*चौथो भाग खाइ कम तेतो॥ पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

यदि चार रोटियां खाते हो तो एक रोटी छोड़ दिया करते हैं, तीन खा लो। यह तीसरा हुआ करता है सतोगुणी आहार। सतोगुणी खाना हुआ करता है - भूख से कम खाना और दाल सब्जियाँ, दूध, दही, मक्खन, घी, फल आदि। ये चीजें सभी सतोगुणी हैं और सतोगुणी मन बनाती हैं 'जैसा अन्न वैसा मन' सतोगुणी मन भजन कर सकता है। न रजोगुणी कर सकता है, न तमोगुणी कर सकता है। यदि भजन बन्दगी करने बैठेगा तो भी उबासियाँ आनी शुरू हो जायेगीं। यदि जबरदस्ती करेगा तो मन नहीं लगेगा, भागेगा क्योंकि खाना ही ऐसा खाता है। तीन गुण हर समय हमारे अन्दर चलते हैं - रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण सारे - संसार में। महाराज कहते हैं तीन गुणों में जो भी है वह सोया पड़ा है -

*तिही गुणी संसारु भ्रमि सुता सुतिआ रैणि विहाणी॥ पृष्ठ - 920*

दसवीं रहत है जिसे पवित्रता कहते हैं शुचिता कहते हैं -

*दसवें यम सों सौच लखीजै॥ पृष्ठ -108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

कहते हैं पहली शुचिता है ***'वस्त्रों की'***; चाहे चार पाँच रूपये गज़ के खरीदे हों; जरूरी नहीं कि 100 रूपये गज़ के लेकर खरीद कर पहनो पर वे पवित्र होने चाहिये, मैले नहीं होने चाहिए। पसीने से बदबू आती है - स्वंय को भी आयेगी, दूसरों को भी आयेगी, वह अन्दर प्रभाव डालती है। कहते हैं स्वच्छ वस्त्र पहनने चाहिये, चाहे कितने ही सस्ते क्यों न हों।

दूसरी शुद्धि है ***'शरीर की'***। शरीर को स्नान करवाना। गर्मी आती है कईयों के शरीर में से बदबू आती है, दुर्गन्ध आया करती है, वह जैसे नियम बताया गया है उसी प्रकार स्नान करे, अपने शरीर को पवित्र रखे।

तीसरी पवित्रता हुआ करती है ***'वचनों की'***। वचनों पर कोई ऐसी चीज़ न आने दे जिससे जुबान मैली हो जाये।

चौथी पवित्रता हुआ करती है मन की। मन में विकार न आने देना। यदि मन पवित्र नहीं है तो -

*मनि मैलै सभु किछु मैला तनि धोतै मनु हछा न होइ॥ पृष्ठ-558*

पाँचवी पवित्रता हुआ करती है ***'बुद्धि की'।*** बुद्धि को गुरबाणी की विचार करके निर्मल करना; इसमें से बुराईयां दूर करना, इसमें से वल निकालने।

इससे अगली पवित्रता हुआ करती है अहमभाव की। अहमभाव में समझना कि मैं कोई अलग चीज़ नहीं हूँ –

***कहु कबीर इहु राम की अंसु।*** *पृष्ठ - 871*

***मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु॥*** *पृष्ठ - 871*

मैं तो वाहिगुरू की अंश हूँ। शरीर के साथ मेरा सम्बंध केवल दृष्टा मात्र है और मैं शरीर नहीं हूँ। सो यह विचार जो गुरबाणी की है इससे मैं भाव शुद्ध हो जाया करता है मैल उतरती है। दूसरा, नाम से मैल उतरती है। सो यह दसवीं चीज़ महाराज फरमाते हैं –

***दसवें यम सों सौच लखीजै।***
***जल म्रितका इसनान करीजै।***
***राग द्वैख की मल उरमाही॥*** *पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

जो राग और द्वैष की मैल लगी हुई है हृदय में, मेरी-तेरी की मैल लगी हुई है इसे छोड़ दे –

***तज कर सौच करत है ताहीं।***
***यम दस इस प्रकार जताए॥*** *पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

कहते हैं दस यम तो अब हमने बता दिए। कौन कौन से हैं ध्यान से श्रवण कर लो। पहला तो होता है अहिंसा, दूसरा सत्य, तीसरा चोरी न करना, चौथा ब्रह्मचर्य, पाँचवा धीरज, छठा क्षमा, साँतवा दया, आठवा कोमल हृदय (चित्त) नौवां अल्प आहार और दसवाँ शुचिता। कहते हैं ये तो ज़रूरी है। इन्हें यम कहते हैं।

दूसरे होते हैं ***'नेम'*** नियम। वे भी दस प्रकार के हैं। पहला होता है तप। गुरू घर में जो तप है वह है साध संगत जी! सेवा का तप – पानी पिलाना, पंखा झुलाना, दरियां बिछाना, जूते साफ करने, लंगर तैयार करना, बर्तनों की सफाई। इस तप का बहुत बड़ा फल है –

***प्रथमै तप सो तीन प्रकारा॥*** *पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

तीन प्रकार का तप हुआ करता है –

***रज तम बहुर सांतकी सारा॥*** *पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

एक रजोगुणी तप होता है, एक सतोगुणी तप होता है, एक तमोगुणी तप होता है।

*छुपा अगन जल सों तन तावा॥    पृष्ठ-108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

धूनियाँ रमा कर बैठ जाना, भूखे रहना, रोटी न खाना, पानी न पीना, उलटे लटकना, जलधारे करना और एक टांग के बल पर खड़े होना, कांटों पर सोना, पत्थरों पर सोना, जागते रहना, सोने न देना शरीर को - दुखी करना-

*इहै तामसी फ़ल का गावा॥    पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

इसे तामसी तप कहते हैं और फल इसका बहुत कम हुआ करता है -

*रिदै गयान इस ते नहि होइ। देत न फल किछ कर है जोइ॥*
*पृष्ठ - 108 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

इससे ज्ञान नहीं हुआ करता, फिर फल भी नहीं मिलता। इसके मुकाबले में जो गुरू की सेवा करना है वह सारे तपों का सार है, तपों का शिरोमनी तप है - यहाँ भी इज्ज़त और दरगाह में भी मान। ऐसा फ़रमान है -

*धारना - नाम जपीए तां दूर हुंदे दुखड़े*
*सेवा करके माण पाईदा - 2, 2*
*मेरे पिआरे, सेवा करके माण पाईदा - 2, 2*
*नाम जपीए तां,....................।*

*गुर की सेवा पाए मानु॥    पृष्ठ - 864*

*विचि दुनीआ सेव कमाईऐ। ता दरगह बैसणु पाईऐ।*
*कहु नानक बाह लुडाईऐ॥    पृष्ठ - 26*

सेवा का फल यहाँ भी वाह-वाह और जब संसार से जायेंगे तो मान प्राप्त होगा दरगाह में। सो सेवा के बिना जो शरीर है महाराज कहते हैं वह मुर्दा हुआ करता है। सेवा में भेद होता है। यदि सेवा करने वाला यह कहे कि मैं सेवा करता हूँ, वह सेवा न करे, ईर्ष्या करे तो उसकी सेवा निरर्थक हो जाया करती है, Neutral Gear लग जाया करती है। सेवा तो करता है पर फल नहीं दे पाती क्योंकि हउमै में भरा हुआ सेवा करता है। हउमै वाली, दिखावे वाली सेवा का कोई मूल्य नहीं हुआ करता, थकावट ही पल्ले पड़ती है। निष्काम भाव से जो गुरू को हाज़िर नाज़िर समझकर भाग्य समझते हैं कि सच्चे पातशाह! मेरे जैसे निकम्मे आदमी को भी सेवा पर लगा लिया, शुक्रिया है तेरा; देखना, कहीं हटा न देना मुझे। उसकी सेवा का सही मूल्य मिलता है। इस प्रकार से गुरू घर का सबसे श्रेष्ठ तप सेवा है। पहले मैंने प्रार्थना की थी कि तामसी तप हुआ करते हैं ये और इनसे हृदय में ज्ञान नहीं होता और इससे कोई फल प्राप्त नहीं हुआ करता। फल क्या प्राप्त होता है - क्रोध प्राप्त होता है। शाप देने लग जायेगा, frustration (झुन्झलाहट) आ जायेगी। जो भी हठ योग करेगा,

दूसरों को काट खाने को दौड़ेगा, फीका बोलेगा क्योंकि अन्दर कुछ आया नहीं, क्रोध आया है।

दूसरा तप हुआ करता है जिसे राजसी तप कहते हैं। यह वह होता है कि बार बार मन को रोकना बुरे कामों से। फुरना आया फिर रोक लेना, अकस्मात विचार उठा फिर अन्दर रोक लेना। यह पहले वाले की अपेक्षा अधिक फल देता है क्योंकि इन्द्रियां अपने स्वभाव के अनुसार कार्य करती हैं। नेत्रों ने देखना है तो इन्हीं को कहना -

*पर त्रिअ रूपु न पेखै नेत्र॥* *पृष्ठ - 274*

कानों ने सुनना है तो इन्होंने अन्दर से कहना कि -

*करन न सुनै काहू की निंदा॥* *पृष्ठ - 274*

किसी की निन्दा नहीं सुननी। यह तपस्या इन्द्रियों की -

*रोक कुकरम रिखीक जि करनी॥पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

इन्द्रियों को बार बार रोककर जो तप करना है इसे राजसी तप कहते हैं-

तीसरा ***'सान्तकी तप'*** हुआ करता है कि वृत्ति नाम में लगी रहे। जपुजी साहिब पढ़ रहा है, सुखमनी साहिब पढ़ रहा है, वृत्ति बाहर दौड़ती है, उसे रोककर वापिस मोड़कर फिर उसी जगह ले आना, फिर दौड़ती है फिर रोककर दोबारा ले आना। पाठी श्री गुरू ग्रन्थ साहिब का पाठ करते हैं, वृत्ति निकल गई। अक्षर तो जुबान पढ़ती चली जाती है, आँखे देखे चली जाती हैं लेकिन जिसने साथ देना था वह भागा फिरता है फुरना कर रहा है। उसे बार बार लाकर, रोक रोक कर फिर लाना इसे सान्तकी तप कहते हैं। वृत्ति टिक जाती है। सो इसका फल बहुत ज्यादा हुआ करता है।

दूसरा जो नेम है उसे ***'सन्तोष'*** कहते हैं। सन्तोष दो प्रकार का हुआ करता है। एक तो यह होता है कि हाथ में कुछ नहीं आता, न मेहनत करता है; कुछ भी नहीं करता और कहता है मैं सन्तोषी हूँ। यह सन्तोष नहीं हुआ करता, साध संगत जी! हाथों में तो पदार्थ आता नहीं और अपने मुँह से कहे जाता है, मैं तो सन्तोषी हूँ।

*हाथ पदारथ आवत नाही। हौं संतोखी अस मुख प्राही॥*
*पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

जो अपने आप ही कहता है कि मैं सन्तोषी हूँ, वह दलिद्री होता है सन्तोषी नहीं हुआ करता। एक वे हैं, मेहनत करते हैं, मेहनत करने के बाद 'यथा लाभ सन्तुष्टै' जो कुछ हाथ में आ गया, उसी में सन्तुष्ट रहना कि मैंने

कोई कोताही तो नहीं की है, जितना परमेश्वर ने मुझे बल दिया है, जितनी बुद्धि दी है, उसके अनुसार मैं कार्य करता हूँ। ठीक है जो मेरे भाग्य में आ गया, वह मेरे लिये ठीक है। सो -

*बिना संतोख नहीं कोऊ राजै॥* *पृष्ठ - 279*

जब तक सन्तोष नहीं आता तब तक जो मन है, यह भटकन में ही भागा फिरता है, तृष्णा की आग लगी हुई है। महाराज कहते हैं -

*त्रिसना बिरले ही की बुझी हे।*
*कोटि जोरे लाख क्रोरे मनु न होरे।*
*परै परै ही कउ लुझी हे॥* *पृष्ठ - 213*

विरला है कोई संसार में जिसके अन्दर तृष्णा नहीं है। वह आगे ही आगे बढ़ता जाता है। कोई सन्तुष्ट होता ही नहीं। इस प्रकार फ़रमान करते हैं महाराज -

*धारना - रजदा न कोई है, बिनां संतोख पिआरे - 2, 2*
*बिनां संतोख पिआरे, बिनां संतोख पिआरे - 2*
*रजदा न कोई है,............।*

***'बिना संतोख नही कोऊ राजै।'*** फ़रमान है पातशाह का कि नहीं कोई सन्तुष्ट होता जब तक सन्तोष न आये -

*सुपन मनोरथ ब्रिथे सभ काजै॥* *पृष्ठ - 279*

एक बार कोई प्रेमी गरीबी का सताया हुआ सत्संग में आ गया। वहाँ से पता चला कि -

*चारि पदारथ जे को मागै। साध जना की सेवा लागै॥* *पृष्ठ-266*

कोई महात्मा रहते थे आस पास - करनी कमाई वाले। उनकी सेवा करने लग गया। फिर भी अच्छा था, कई तो पहले दिन ही आकर कहने लग जाते हैं महाराज! ये भी दे दो, वह भी दे दो, यह भी मांग पूरी कर दो जैसे दुकान खुली होती है। जानता था; काफी समय सेवा करते हुये हो गया। एक दिन महात्मा ने पूछा, प्यारे! तू भी काफी समय से सेवा कर रहा है, क्या मनोरथ लेकर सेवा करता है? कोई रूहानी मनोरथ है या सांसारिक मनोरथ है? क्योंकि दोनों चीज़ें मिल जाया करती हैं। कहने लगा महाराज! गरीबी का सताया हुआ हूँ। एक वक्त की यदि रोटी मिल जाये, दूसरे वक्त का कोई पता नहीं मिलेगी या नहीं मिलेगी। अपनी गरीबी का हाल सुनाया। महात्मा का दिल द्रवित हो गया। जब चित्त द्रवित हो जाये फिर महात्मा के अन्दर लहर उठती है कुछ देर के लिये। वैसे नहीं उठा करती। वैसे यदि कहे मुझे यह वर दे दो, यह भी दे दो; वह चुप चाप

कहते तो रहते हैं कि तू कहलवाये जाता है; कहलवाये जा लेकिन वह बात नहीं हुआ करती। सो महात्मा कहने लगे प्यारे! तेरी गरीबी का इलाज तो हम बता देंगे पर तेरी भूख नहीं हम मिटा सकते क्योंकि भूख का इलाज और है, वह चीज़ तूने मांगी नहीं। उसका भी कोई इलाज है? महाराज इस प्रकार फ़रमान करते हैं -

*धारना - त्रिसना बुझ जांदी है, प्रभ जी दा सिमरन करके - 2, 2*
*प्रभ जी दा सिमरन करके - 2, 2*
*त्रिशना बुझ जांदी है,............।*

*प्रभ कै सिमरनि त्रिसना बुझै।* *पृष्ठ - 263*

कहने लगे तृष्णा को बुझाने वाली बात तूने नहीं मांगी हमसे। तेरी भूख का इलाज तो कर देंगे पर तृष्णा का नहीं होगा। जब तक तृष्णा है तब तक भर पेट आदमी भी भूखा ही है -

*भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार।* *पृष्ठ - 1*

कितने भी पदार्थ क्यों न प्राप्त हो जाएं लेकिन मन की भूख नहीं मिटा करती। जब तक मन भूखा है तब तक परमेश्वर में मन नहीं लगता क्योंकि तृष्णा की उड़ाने भरता रहेगा। बैठेगा नाम जपने के लिये, उड़ानें तृष्णा के जहाज़ पर बैठ कर भरेगा। सो वृत्ति नहीं टिका करती। सन्तोषी जो है उसका स्थान बहुत ऊँचा हुआ करता है।

एक ऋषि था जिसका नाम चाण्क्य था। आपका बहुत सन्तोषी परिवार था, बन्दगी किया करते थे। एक लड़का था, एक लड़की थी, पत्नी और आप। कोई दुभक्ष पड़ गया अकाल पड़ गया। सात दिन बीत गये भूखे बैठे हैं, कोई चीज़ नहीं है। आखिर इन्होंने दाना दाना चुगना शुरू कर दिया। कुछ भखड़ा चुना, कई और चीज़ें मिलाई, भोजन तैयार कर लिया चार हिस्से कर लिये, जब खाने लगे उस समय एक अतिथि आ गया। कहने लगा महाराज! मैं बहुत भूखा हूँ, मेरी भूख निवृत्त करो। तब ऋषि ने अपने हिस्से का भोजन उसे दे दिया। तब वह बोला "देखो! मेरी भूख नहीं मिटी है। और भोजन के लिये कहकर फिर भूखा भेज देना, इसके समान कोई दोष नहीं हुआ करता। जब एक बार कह दिया - भोजन कर लो फिर उसे भूखा ही भेज देना, यह दोष हुआ करता है। वह कहता है मैं भूखा हूँ। घर वाली कहने लगी, मेरा हिस्सा दे दो। वह भी खा लिया। इतने में लड़के ने भी अपना हिस्सा दे दिया, लड़की ने भी दे दिया, खा पीकर चला गया। दूसरा दिन हुआ फिर भोजन तैयार किया। ठीक उसी

वक्त जब वे भोजन उठाकर मुँह में ग्रास डालने लगा उस समय फिर आ गया अर्थात तीन दिन ऐसे ही करता रहा, साथ ही यह भी देखता रहा कि इनके मन में कोई तर्क तो नहीं उठ रही। खुशी खुशी दे रहे हैं या खींझकर दे रहे हैं। जब उसने देखा कि ये तो प्रसन्नता पूर्वक खिला रहे हैं तो उसी समय दर्शन दे दिये भगवान ने। कहते हैं तेरे सन्तोष की परीक्षा ली है। सन्तोष में तू खरा उतरा है। सन्तोष बहुत ऊँचा गुण है। सो इस प्रकार फ़रमान करते हैं कि सन्तोष जब तक मन में नहीं आता तब तक भजन बन्दगी नहीं हुआ करती। यह हुआ करता है कि पहले तो हाथ में कुछ नहीं आया वैसे ही सन्तोषी कहलाता है; वह नहीं हुआ करता -

***तिस तै रिदै हरख नहिं होइ। निज कीरत को चाहत सोइ॥***

***पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

वह कह तो देता है, दिल में कीर्त चाहता है पर दिल में खुशी नहीं उसे प्राप्त हुई -

***दूजै यथा लाभ संतोख। धारत है योगी बिन दोख॥***

***पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

दूसरा यह होता है कि जो कुछ मिल गया - प्रालब्ध अनुसार, उसी में सन्तुष्ट रहना -

***वसत न प्रापत तौ हरखाई॥ पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

यदि नहीं मिला तो भी खुश, मिल गया तो भी खुश -

***जे प्रापत ह्वै तउ सुख पाई॥ पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

सो महात्मा कहने लगे प्यारे! तूने पदार्थ तो मांग लिए पर तेरे मन की भूख का इलाज जो है वह तो तूने हमसे मांगा नहीं, वह सन्तोष हुआ करता है। सन्तोष और नाम दोनों का आपस में सम्बन्ध है। चार बत्तियाँ दे दी महात्मा ने। कहते हैं ''यह पहली बत्ती जलाकर आधी रात को चले जाना। जहाँ यह बुझ जाए, वहाँ धरती खोद लेना, वहाँ पर खजाना होगा। वह तेरे से खत्म नहीं होगा सारी आयु। यदि मान लो खत्म हो जाये तो दो नम्बर बत्ती जला लेना उत्तर दिशा की ओर चले जाना, यदि वह भी खत्म हो जाये तो तीन नम्बर बत्ती जलाकर पश्चिम दिशा की ओर चले जाना। यदि वह भी खत्म हो जाये तो फिर तू अपने भाग्य पर शाकिर (सन्तुष्ट) रहना; यह चौथी बत्ती मत जलाना। यदि यह जलाई, यह क्रूर दिशा है दक्षिण वाली, उधर मत जाना। घर आ गया, बहुत खुश है।

जब आधी रात हो गई उस समय बत्ती जलाई और चल पड़ा। कुछ

दूर जाकर जहाँ वह बुझ गई, वहाँ खुदाई की, तो तांबे के पैसों का खज़ाना निकल आया। बहुत खुश हुआ कि बहुत धन है यह तो पैसे की बरकत भी बहुत थी। घर आ गया, खुश हो रहा है। आधा दिन तो खुश रहा। जब आधा दिन बीत गया तो कहने लगा, चलो आज दो नम्बर वाली भी देख लेते हैं, क्या हर्ज़ है? आधी रात को फिर दूसरी बत्ती जलाई और चल पड़ा। जब उत्तर दिशा में गया - पहाड़ों वाली दिशा में, वहाँ एक जगह पर जाकर बुझ गई। वहाँ खुदाई की तो चाँदी का खजाना निकल आया; बहुत खुश हुआ। कहता है लो, ऐसे ही तांबे के सिक्कों के साथ माथा पच्ची करनी थी, यह चांदी कितनी बढ़िया है। यही ही हम प्रयोग करेंगे तांबे का क्या करना है। बड़ा खुश रहा आधे दिन तक। अगले दिन फिर मन में आया कि वह भाग भी देख लें, कम से कम पता तो चल जायेगा कि वहाँ क्या है? फिर अच्छा अच्छा माल पहले खर्च कर लेंगे, गन्दा गन्दा बाद में। सो उधर गया। जब पश्चिम दिशा की ओर जाकर बत्ती बुझी, खुदाई की तो क्या देखता है कि सोने की मोहरों का खजाना निकल आया। कहता है लो, सन्तों ने मुझे लम्बे चक्कर में डाल दिया कि पहले तांबे को खर्च कर, फिर चांदी को, फिर मोहरों को। मोहरों को क्यों न इकट्ठी करूँ। लेकर जाया करूँगा। मिट्टी डाल दी उस पर और घर आ गया। साथ ही सोचता जा रहा है कि सन्तों ने कहा था कि चौथी दिशा में मत जाना, भूलकर भी मत जाना। मन में ख्याल आने लग गये कि उस तरफ हीरे होंगे, लाल होंगे, किसी और को सन्तों ने देने होंगे; क्यों न मैं ही ले लूँ?

सो आधी रात के बाद दक्षिण दिशा में चला गया। बत्ती बुझने पर उसने जगह खोदी तो एक दरवाज़ा निकला। दरवाजे के अन्दर चला गया, आगे ही आगे बढ़ता जा रहा है। आगे चलकर क्या देखता है कि एक आदमी बैठा है, वह चक्की चला रहा है और एक चक्कर आकर इसके माथे के सामने घूमने लग गया। इसने दुहाई मचानी शुरू कर दी; कहता है, यह तो चक्कर है, यह तो मुझे मार देगा, मैं कैसे बच सकता हूँ? वह कहता है प्यारे! इस चक्की के हत्थे को हाथ में पकड़ ले जल्दी से जल्दी- यदि बचना है तो। इसने तुरन्त ही चक्की के हत्थे को हाथ लगा दिया। इसका हाथ उसके साथ चिपक गया, उसका छूट गया। कहने लगा अब क्या होगा? कहता है, अब तू चक्की पीस जैसे मैं पीसता था। कोई तेरे से अधिक बड़ा तृष्णालु आयेगा यहाँ, वह तेरा पीछा छुड़ायेगा। इस प्रकार तृष्णा जो है यह मनुष्य को जन्म मरण में घेरे रखती है।

गुरू नौंवे पातशाह से पूछा ''पातशाह! उपदेश इतना सुनते हैं आपका, सत्संग भी करते हैं, सेवा भी करते हैं फिर क्या कारण है कि भजन बन्दगी की तरफ चित्त क्यों नहीं लगता? कृपा करके हमें यह बताओ कि वह कौन सा दोष है जिसके कारण चित्त भजन बन्दगी में नहीं लगता?''

गुरू महाराज कहते हैं देखो, यह आदमी तृष्णा से मोहित हो गया है –

*एह त्रिसना वडा रोगु लगा मरणु मनहु विसारिआ॥ पृष्ठ - 919*

यह रोग लग गया जैसे टी. बी. लग जाती है। यह तृष्णा का रोग लगा हुआ है और इसने मौत को मन से भुला दिया। मरना भूल गया तो फिर परमेश्वर याद नहीं रहता। इस तरह फ़रमान करते हैं –

*धारना - नहिओ मरन पछाणदा, झूठे लालच लग के बंदा - 2, 2*
*झूठे लालच लग के बंदा, झूठे लालच लग के बंदा- 2*
*नहीओं मरन पछाणदा..............।*

*चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी।*
*छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी।*
*हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना।*
*झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना।*
*अजहू कछु बिगरिओ नही जो प्रभ गुन गावै।*
*कहु नानक तिह भजन ते निरभै पदु पावै॥ पृष्ठ - 726*

महाराज कहते हैं साध संगत जी! यह झूठे लालच में फंस गया – एक सच्चा लालच होता है, एक झूठा लालच होता है। झूठा लालच वह होता है जो चीज़े छोड़ जानी हैं। सच्चा लालच वह होता है जो चीज़े हमारा शरीर छोड़ने के बाद हमारे साथ जायें। सो महाराज कहते हैं, झूठे लालच में पड़कर मौत को नहीं पहचानता, मरना भूल गया है और इसे पता नहीं है कि ***'चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी। छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी। हरि गुन काहि न गावई मूरख अगिआना।'*** महाराज जी कहते हैं कि तू मूर्ख हैं, अज्ञानी हैं। कहता है जी मैं तो पढ़ा लिखा हूँ, यूनिवर्र्सटी ने मुझे ड़िग्री दी हुई है – पी. एच. डी. की। महाराज कहते हैं फिर तेरी पढ़ाई, पढ़ाई ही है। Bookworm (किताबी कीड़ा) है, यह पढ़ाई, पढ़ाई नहीं है –

*नानक सो पड़िआ सो पंडितु बीना जिसु रामु नामु गलि हारु॥*
*पृष्ठ - 938*

यह पढ़ाई नहीं है जो तुझे यमदूतों से नहीं छुड़वा सकती। रोज़ी रोटी के लिये पढ़ता है? रोटी तो तेरी प्रालब्ध के साथ परमेश्वर ने लिखकर

भेजी है -

*काहे रे मन चितवहि उदमु जा आहरि हरि जीउ परिआ।*
*सैल पथर महि जंत उपाए ता का रिजकु आगै करि धरिआ॥*
*पृष्ठ - 955*

*ना करि चिंत चिंता है करते॥* *पृष्ठ - 1070*

वह तो वाहिगुरू को है -

*नकि नथ खसम हथ किरतु धके दे।*
*जहा दाणे तहां खाणे नानका सचु हे॥* *पृष्ठ - 653*

वह तो तेरी प्रालब्ध ने तुझ से करवा ही लेना है जो कुछ करवाना है। सो पढ़ाई तो असली वह है जो तुझे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या, निन्दा, चुगली नफरत से मुक्त करके तेरे मन में शान्ति पैदा कर दे। यदि यह पढ़ाई नहीं है तो भाई रूहानी यूनिवूसटी में डिग्री मिलती है - मूर्ख की -

*पड़िआ मूरखु आखीऐ जिसु लबु लोभु अहंकारा।* *पृष्ठ - 140*

जिसने लब, लोभ और अहंकार से मुक्ति नहीं पाई, वह कहते हैं पढ़ा हुआ मूर्ख है। मूर्खों की डिग्री मिलती है।

सो इस प्रकार महाराज कहते हैं, तू मूर्ख तथा अज्ञानी है, इतना मूर्ख और अज्ञानी है, यदि अब भी सिमरण नहीं करता ***'झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना।'*** कहते हैं तृष्णा का बन्धा हुआ लालच में पड़ गया और अब मरने को भी नहीं पहचानता। जब आदमी लालच में पड़ जाता है, बहुत गलत काम करता है। जितने दुनियाँ में खून हो रहे हैं, छीना झपटी हो रही है, सभी कुछ लोभ के कारण चल रहा है और परिणाम क्या निकलता है? कोई मारा जा रहा है, कहीं कुछ हो रहा है, किसी को कुछ हो रहा है।

एक बार कबीर साहिब के पास बहुत सारे महात्मा बैठे हैं। वहाँ उन्होंने एक कौतुक देखा माया का, और कहने लगे भगत जी! यह स्त्री आपके पास आई है, बहुत सुन्दर वस्त्र पहने हुए है और वह आपको नमस्कार करना चाहती है, आपने इसे दूर से ही डांट मार दी। वह दूसरी स्त्री आई है, उसके फटे हुए कपड़े हैं, गरीबनी है और आपने उसे बड़े प्यार के साथ पास बिठाकर वचन किये। यह हमारी समझ में नहीं आई, बात। कहते हैं ''हे भक्तो! वह माया थी।'' कहते हैं महाराज! उसके केश पीछे से गर्दन पर से क्यों घिसे हुये हैं और आगे माथे वाले भी घिसे हुये हैं?

कहते हैं, बुलाकर पूछ लो। बुला लिया और कहते हैं कि यह क्या बात है? कहने लगी, ''मेरा मस्तक इसलिये घिस गया है मैं सन्तों के चरणों में आकर माथा रगड़ती हूँ कि मुझ से कोई काम ले लो, मुझ से कोई काम ले लो। पर ये सन्त मुझे अपने पास नहीं फटकने देते; मुझे ठगिनी कहते हैं। पास बिल्कुल भी नहीं आने देते कि तू फंसा लेगी, हमें तेरी ज़रूरत ही नहीं। जहाँ माया आयेगी वहाँ परमेश्वर भूल जाता है।

गुरू नानक पातशाह के पास जब माया आई, अनेक रूप धारण करके आई। महाराज कहते हैं -

*मोती त मंदर ऊसरहि रतनी त होहि जड़ाउ।*
*कसतूरि कुंगू अगरि चंदनि लीपि आवै चाउ।*
*मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ॥* *पृष्ठ - 14*

मोतियों के मन्दिर, सुगन्धियों से भरे महल हों; ये तो परमेश्वर को भुला देते हैं -

*धरती त हीरे लाल जड़ती पलघि लाल जड़ाउ।*
*मोहणी मुखि मणी सोहै करै रंगि पसाउ।* *पृष्ठ - 14*

मोहनियाँ हों, पलंग हों और हीरे जवाहारातों की decoration (सजावट) हो और धरती पर चम-चम, जग-मग करते हों; महाराज कहते हैं भूल जायेगा परमेश्वर को यह देखकर -

*सिधु होवा सिधि लाई रिधि आखा आउ।*
*गुपतु परगटु होइ बैसा लोकु राखै भाउ।*
*मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ॥* *पृष्ठ - 14*

रिद्धियाँ सिद्धियाँ शक्तियाँ आ गई; मक्खियाँ आ जायेंगी बेअन्त - यह दे दो जी मुझे, यह दे दो जी मुझे, मेरा यह काम खराब है जी, मुझे वचन दे दो जी, मुझे अमुक चीज़ दे दो जी..........।'' कहते हैं परमेश्वर भूल जायेगा कि नहीं, जब उनसे बात करेगा -

*सुलतानु होवा मेलि लसकर तखति राखा पाउ।*
*हुकमु हासलु करी बैठा नानका सभ वाउ।*
*मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ॥* *पृष्ठ - 14*

और चौथा रूप धारण किया है माया ने राजसी शक्ति का। इसमें पड़ कर भी वाहिगुरू को भूले रहता है। सो यह भी भुला देती है।

वह कहती है सन्त मुझे पास नहीं फटकने देते कि तू परमात्मा को भुलवा देती है। मैं माथा टेकती हूँ कि महाराज! मैं दासी बनकर सेवा करूंगी। वह कहते हैं तेरा भरोसा नहीं किस समय तू ठग ले। इस वज़ह

से मेरे सामने वाले केश घिस गये हैं। पिछले केश? कहती है, ये पामर लोग हैं जो पापी, विषयी लोग यह मुझे लेकर विषयों में खर्च करते हैं, शराबों कबाबों, बुरे कर्मों पर खर्च करते हैं, मैं इनसे दूर भागती हूँ। पिछले केश इन्होंने पकड़ पकड़ कर खींच लिये। कहते हैं ''कोई कौतुक दिखा।'' कहती है ''देख लो, कौतुक मेरे बहुत ही खतरनाक हैं; जंगल में चलो। कहती है तुम्हें लोभी का कौतुक दिखाती हूँ। माया की थैली रास्ते में फैंक दी।

चार मित्र चले आ रहे हैं – इकट्ठे चले हैं, इकट्ठे ही कहीं जाना है और इकट्ठों ने ही वापिस आना था। चलते चलते जब माया की थैली देखी चमक रही थी, मोहरें चमक रही हैं। कहने लगे, ले भाई! कोई चीज़ है, हमने चार भागों में बांट लेनी है। आगे गये, बहुत खुश हुये; थैली उठा ली, मोहरों की भरी पड़ी है।

एक तरफ हो गये कि कहीं कोई देख न ले, कोई आ न जाये जिसकी गिर गई हो, कुमार्ग पर चलने लग पड़े। थोड़ी दूर गये कहते हैं कि हम बांट लें। उछलते हैं, कूदते हैं कि इतना धन तो हमें कभी भी प्राप्त नहीं होना था, यह तो हमारी किस्मत ही खुल गई। पहले हम खा पी लें, फिर बाटेंगे। दो मित्रों को भेज दिया कि जाओ, रोटी ले आओ, गाँव में से। वे दोनों चुप करके चले जा रहे हैं, इधर ये दोनों चुप करके बैठे हैं। एक कहता है –

''तू बोलता नहीं?''

''तू बोल।''

''यदि मैं बात करूं तो तू बुरा तो नहीं मानेगा?''

''नहीं।''

''यदि हम दोनों ही ले लें ये मोहरें – किसी ढंग से?''

''मैं भी यही सोचता हूँ कि हम दोनों को ............।''

''फिर अपनी बात बन गई। हम अपनी रोटी खा चलते हैं और उनकी रोटी में ज़हर डाल देंगे। खायेंगे, मर जायेंगे। पास ही नदी बहती है, घसीट कर फैंक देंगे।''

सो ऐसा ही किया। उधर वे भी चुप करके बैठे हैं। एक कहने लगा ''कोई बात सुना। हमें खुश होना चाहिए इतना पैसा मिला है। क्या सोच रहा

है?''

''तू क्या सोचता है?''

''तू बता पहले।''

''मैं कहता हूँ कि ये मोहरें हम दोनों ही ले लें।''

''यही बात मैं सोच रहा था।''

''फिर बात कैसे बने?''

''वे रोटी लाकर रखेंगे, एक का गला तू काट देना, एक का मैं काट दूँगा और उठाकर नदी में फैंक देंगे फिर हमें यह सारी मोहरें मिल जायेंगी।''

ऐसे ही किया। इन्होंने उन्हें मार दिया। उन्होंने इन्हें मार दिया और माया वहीं की वहीं पड़ी रह गई।

कहती है क्यों सन्त जी! देखा मेरा कौतुक! मैं लोभी आदमियों को ऐसे काबू में करती हूँ, ऐसे पाप करवाती हूँ।

गुरू महाराज कहते हैं, प्यारे! लोभी का कोई विश्वास मत करना। यह ऐसा धोखेबाज होता है, ऐसी जगह पर धोखा देगा जहाँ कोई वश भी न चले -

***लोभी का वेसाहु न कीजै जे का पारि वसाइ।***
***अंतिकालि तिथै धुहै जिथै हथु न पाइ॥ पृष्ठ - 1417***

जहाँ कुछ भी न बन सके, वहाँ आकर धोखा देना है इसने -

***धारना - करीं न विसाह, कदे भुल के भी लोभी दा - 2, 2***
***भुल के वी लोभी दा, भुल के वी लोभी दा - 2, 2***
***करीं न विसाह,...........................।***

जहाँ कुछ भी नहीं बनता, वहाँ लोभी आदमी मारा करता है। सो इस प्रकार महाराज कहते हैं -

***कबीर इहु तनु जाइगा सकहु त लेहु बहोरि।***
***नांगे पावहु ते गए जिन के लाख करोरि॥ पृष्ठ - 1365***

लाख करोड़ कहते हैं 100 खरब रूपये वाला भी जब संसार से जाता है...........। कितने लोगों को गुरू नानक पातशाह मिले। पहले तो दुनी चन्द को मिले, सात करोड़ रूपया उसके पास जमा था। महाराज ने कौतुक दिखाया। पहले तो उसके पिता का श्राद्ध था कहा, ''तेरे पिता को भोजन

नहीं मिला। तेरा पिता तो बघिआड़ बना बैठा सात दिन से भूखा है। जा, भोजन ले जा।'' निश्चय हुआ उसे जब अपने पिता से सारी बातें सुनीं। कहता है ''पुत्र! ऐसा हाल होता है परमेश्वर के नाम के बिना। मैं तामसी यौनि में पड़ गया, बघिआड़ बना दुखी हुये फिरता हूँ। तेरे घर में परमेश्वर स्वंय आया हुआ है, वचन मान ले, अपनी गति करवा ले। तेरे कारण मेरा भी उद्धार हो जायेगा। तूने दर्शन किये हैं उनके, तेरे दर्शन करके मुझे देव देह प्राप्त हो गई।'' आकर चरणों में गिर पड़ा -

''कृपा करो महाराज! मुझे कोई सेवा बताओ।''

''सेवा तो कोई नहीं।''

''मरदाना! सुई है?''

''हाँ महाराज!''

''ला।''

''यह पकड़ लो सेठ जी सुई।''

''महाराज, क्या करूं?''

''तेरे से अगली दरगाह में ले लेंगे।''

सोचा ही नहीं कि महाराज जी क्या कह गये? घर वाली को जाकर सुई दे दी कि सन्तों ने यह बात कही है? वह थोड़ी सियानी थी कहने लगी, ''सेठ जी! अगली दरगाह में? यदि छाती पर रखेंगे, शरीर ने जल जाना है; राख भी नहीं जायेगी साथ, हड्डियाँ भी नहीं रहेंगी, सुई कहाँ से ले चलेंगे?'' जाओ, सन्तों का कोई गुप्त भेद है इसमें, पूछो उन्हें जाकर।'' दोबारा आ गया -

''पातशाह! सुई तो साथ नहीं जायेगी।''

''जहाँ तेरा धन जायेगा - सात करोड़, वहाँ उसके साथ यह नहीं जा सकेगी?''

''पातशाह! यह तो साथ नहीं जायेगी।''

''फिर तूने तो इकट्ठा कर रखा है। क्या करेगा, क्या लाभ है, कोई फायदा भी है इसका?''

''पातशाह! मेरे तो नेत्र खुल गये। महाराज! यह साथ भी जा सकता है?''

महाराज कहते हैं -

*कीचै नेकनामी जो देवै खुदाइ। जो दीसै जिमी पर सु होसी फनाइ।*
*दायम व दौलत कसे बेशुमार। न रहिंगे करोड़ी न रहिंगे हज़ार।*
*दमड़ा तिसी का जो खरचै अर खाइ। देवै दिलावै रजावै खुदाइ।*
*होता न राखै अकेला न खाइ। तहकीक दिल दानी वही भिसत जाइ॥*
*नसीहत नामा पातशाही 10*

कहते हैं, ''अकेला मत खा लेना, इसे धर्म पर दान कर दे; करदे सेवा, संसार दुखी है, चीज़ें बना दे इनके लिये, बेअन्त चीज़े हैं, खर्च कर दे।'' सारा धन खर्च कर दिया। महाराज कहते हैं ''घर?'' ''महाराज यह भी इसी धन का है।'' कहते हैं इसे धर्मशाला बना दे, सत्संग किया कर। यह भी तेरे साथ जायेगा।'' साधु बना दिया। कारूं के पास जाते हैं। पता चला कि बहुत सारा धन इकट्ठा किया हुआ है। एक प्रेमी ने पूछा -

''तुम्हारा ऐसा हाल क्यों है? फटे हुये कपड़े, टूटे फूटे घर, बर्तन मिट्टी के, वे भी टूटे हुए। क्या बात है?''

''महाराज! यहाँ धन नहीं है, पैसा नहीं है।''

''पैसा कहाँ गया।''

''सारा धन कारूं बादशाह ने इकट्ठा कर लिया।''

दरवाज़े के आगे खड़े होकर बातें करते हैं - कारूं के किले के सामने और सिपाही बता रहा है। महाराज! कहते हैं ''कैसे कर रहा है?'' कहता है ''महाराज, क्या बताएं? एक बार वज़ीरों ने रिपोर्ट दे दी कि सारा धन आ गया। बादशाह कहता कि नहीं, अभी भी होना है लोगों के पास, मैं निकलवाऊँगा।'' एक लड़की को बग्घी में बिठाकर बाज़ार में मुनादी फिरवा दी कि इस लड़की की शादी उसके साथ की जायेगी जो एक दिनार (सिक्का उस देश का) लेकर आयेगा। एक नौजवान ने देखा, घर आकर कहने लगा, माता! एक दिनार में मिल रही है लड़की - एक रूपये की। मुझे एक रूपया दे दे। कहती है ''बेटा! रूपया तो है नहीं। आखिर उसने कहा ''यदि रूपया न मिला तो मैं मर जाऊँगा।'' माँ की ममता जाग पड़ी और कहती है ''जा फिर अपने पिता की कब्र खोद ले। उसके मुँह में एक रूपया डाला था वह निकाल ले।'' रूपया लेकर आ गया। जब रूपया लेकर गया, पेश किया, वहीं पर ही गिरफ्तार कर लिया गया। कारूं के सामने पेश किया गया कहता है बता! रूपया कहाँ से मिला?'' कहता है ''मैंने तो अपने बाप की कब्र में से उसके मुँह में से निकाला है।'' हुक्म दे

दिया कि सारे कब्रिस्तान खोद डालो और रूपये निकाल लो। ऐसा हाल किया हुआ है महाराज इसने।'' महाराज कहते हैं ''जाओ, उसे जाकर कह दो कि तुझे कोई दरवेश मिलना चाहता है।''

उस समय महाराज जी ने ठीकरियां इकट्ठी करनी शुरू कर दीं। जब कारूं आया, सूचना मिली बाहर आकर दर्शन करने लगा तो बहुत प्रभावित हुआ। जब महाराज जी के दर्शन किये, दातों तले उंगली दबा ली। कहता है ''ऐसे दरवेश के तो कहीं भी दर्शन नहीं किये आज तक। इतना शान्त! देखते ही शान्ति आ गई। शान्ति ही नहीं आई अन्दर ज्ञान पैदा होना शुरू हो गया लेकिन उनकी क्रिया पर हैरान होता है। दो तीन आवाज़ें लगाईं, ''दरवेश! बताइये क्या काम है?'' और महाराज जी जल्दी जल्दी ठीकरियाँ इकट्ठी किये जा रहे हैं। कारूं की तरफ भी देखते हैं। आखिर पास आकर कहने लगा -

''ऐ दरवेश! ये ठीकरियाँ आप क्यों इकट्ठी किये जा रहे हैं?''

''हमें अच्छी लगती हैं।''

''क्या करोगे?''

''हमने दरगाह में साथ लेकर जानी हैं अपने।''

''आप मस्ताने हो।''

''हम क्यों मस्ताने हैं। तूने जहाँ 45 गंज धन के इकट्ठे किये हुए हैं वहीं रख देंगे। जहाँ इतना भार लेकर जायेगा, यह एक छोटा सा थैला नहीं जायेगा ठीकरियों का?''

''यह तो मेरे साथ नहीं जाना।''

''तेरे पिता ने भी इकट्ठे किये थे, वे कहाँ है?''

''वह तो यहीं छोड़ गया।''

''फिर तू भी यहीं छोड़ जायेगा।''

''दरवेश! मुझे सुमति दो।''

सुमति तो यह है कि सारा धन प्रजा पर खर्च कर दे। तूने प्रजा भूखी मार दी और पैसे इकट्ठे करने की धुन में मस्त हो गया है।''

सो महाराज कहते हैं -

*कबीर इहु तनु जाइगा सकहु त लेहु बहोरि।*
*नांगे पावहु ते गए जिन के लाख करोरि॥* *पृष्ठ - 1365*

महमूद गज़नवी ने 16 हमले किये हिन्दुस्तान पर। सोमनाथ के मन्दिर में से चार अरब रूपया लूटा, बेअन्त धन लूटा। 50 वर्ष की उम्र में आकर उसे अधरंग हो गया और उसे पता चल गया कि अब मैं नहीं बचूँगा। मन में लालसा जागी कि एक बार मैं देखना चाहता हूँ सारा धन, जो मैं लूटकर लाया हूँ। ढेरों के ढेर लगा दिये गये और wheel chair (पहिये वाली कुर्सी) पर बिठा कर धकेलते हुए ले जाते हैं; कभी इधर देखता है, कभी उधर देखता है; इस युद्ध में इतने हज़ार आदमी मारे और उसमें इतने हज़ार आखिर अफसोस किया, मन में कहने लगा मैंने बहुत भारी भूल की। मेरे साथ तो कुछ भी नहीं जायेगा और मेरी औलाद भी निकम्मी है इनसे तो लूट लेना है दूसरों ने तथा गज़नी के लोगों ने लोगों पर विपदा आ जायेगी। अब मैं तो बचना नहीं तुम पन्धनामा (वसीयत) लिखो। उस समय पन्धनामा....... एक तो वसीयत होती है कि मेरे मरने के बाद जायदाद किसको दी जाये और एक पन्थनामा होता है आन्तरिक अनुभव जिसमें लिखा जाता है और उसमें अपना अनुभव लिखाता है। कहने लगा कि मेरे हाथ कफन से बाहर रखना और मुनादीवाला मुनादी फेरेगा कि यह महमूद गजनवी जा रहा है जो खरबों रूपये लूटकर लाया था। किसी कवि ने इस प्रकार लिखा है -

*मेरे हाथ ए कफण तों बाहर रखणे,*
*की लै चलिआं हां आपणे नाल मैं हुण,*
*सिखिआ लए मैंथों पा धिकार मैनूं।*
*सारी उमर ही लहू विच रहे डुबे, वेले अंत दे रहे फिटकार मैनूं।*
*हाइ नफ़स सैतान दे लग आखे, भुल गई सी मौत दी सार मैनूं।*
*न मैं सोचिआ ऐस जहान अंदर, मिली पातशाही ए दिन चार मैनूं।*
*करां कंम कोई नेक मरद वाला, देणी खुदी तकबरी हार मैनूं।*
*बेगुनाहां दी खल उतारदा रिहा, आइआ तरस न कदे इक वार मैनूं।*
*जांदी वारी खाली हथीं चलिआ हां,*
*लख लख वार धिकार फिटकार मैनूं।*

सो महाराज कहते हैं प्यारे! ऐसा हाल हुआ करता है। इससे बच तू, सन्तोष धारण कर। जब सन्तोष तेरे अन्दर आ जायेगा उस समय जो तेरा रूहानी सफर है, वह चलना शुरू हो जायेगा। जब तक तेरे अन्दर सन्तोष नहीं आता तब तक तू भजन बन्दगी नहीं कर सकता। तेरा भजन भी रोटियों का और पैसों का ही होगा। वृत्ति टिकाये बैठा है, आँखे बन्द

करके बैठा है। घूमता कहाँ है; पैसे इकट्ठे करने के लिए। इस प्रकार ये सारी बातें हुआ करती हैं।

सो तीसरा जो नेम है, वह हुआ करता है जिसे ***'आस्तिक बुद्धि'*** कहते हैं। पहले वाहिगुरू पर पूरा भरोसा होना चाहिए। यदि भरोसा कच्चा है फिर भजन बन्दगी नहीं हुआ करती। इस प्रकार फ़रमान करते हैं -

***धारना - गुर की परतीत जी जिसदे मन विच है भाई -2, 2***
***जिस दे मन विच है भाई, जिस दे मन विच है भाई -2***
***गुर की परतीत जी,.......................।***

***जा कै मनि गुर की परतीति। तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति॥***
***पृष्ठ - 283***

यदि गुरू पर प्रतीति ही नहीं है, भरोसा ही नहीं है, अपनी मनमति के अनुसार ही चलना है फिर नहीं इस रास्ते पर चला जा सकता। सो आस्तिक बुद्धि होनी चाहिये।

***वाहिगुरू को जाप कर हरखै मन सुख पाइ॥***
***पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

आस्तिक बुद्धि धारण कर। यदि निश्चय ही नहीं है फिर बात ही क्या बनेगी? यदि श्रद्धा ही न हो, यदि झोली (आँचल) ही पास न हो तो दात कहाँ से प्राप्त हो सकती है? श्रद्धा के बारे में बताते हैं कि एक बार एक महात्मा कथा कर रहे थे और पास ही रास्ते में एक घुड़सवार गुज़र रहा था। एक प्रेमी ने कहा, ''प्यारे! ठहर कर चले जाना, देख ऐसी कथा कभी कभी हुआ करती है। महात्मा कथा कर रहे हैं तू भी श्रवण कर ले।'' कहता है ''घोड़ा?'' कहने लगा घोड़ा यहीं बान्ध दे, कोई नहीं ले जाता तेरे घोड़े को। वह प्रेमी बैठकर कथा श्रवण करने लग गया। महात्मा ने वचन किया -

***भई परापति मानुख देहुरीआ। गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।***
***अवरि काज तेरै कितै न काम। मिलु साध संगति भजु केवल नाम।***
***सरंजामि लागु भवजल तरन कै। जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै॥***
***पृष्ठ - 12***

***गुर सेवा ते भगति कमाई। तब इह मानस देही पाई।***
***इस देही कउ सिमरहि देव। सो देही भजु हरि की सेव॥***
***पृष्ठ - 1159***

एक घंटा कथा सुनता रहा और मन ही मन साथ ही फैसला करता गया कि अरे मन! मुझे तो पता ही नहीं है कि इतनी यौनियां पार करने के

बाद, 83, 99, 999 योनियों के बाद यह मनुष्य देही प्राप्त हुई है। यह तो मुझे आज ही पता चला है। 100 प्रतिशत निश्चय हो गया। संगत चली गई, आप बैठा रहा। महात्मा को मिला और कहने लगा, हे महापुरुषो! यह तो आपने मुझ पर बहुत अपार कृपा की है, मेरे नेत्र खोल दिये, मैंने तो आज पहली बार आपकी कथा श्रवण की है। यह बात तो मैंने कभी सोची ही नहीं थी। मैं तो समझता था कि पैदा हुए हैं, ज़मीन जायदाद बनाकर, पैसे कमाकर संसार से चले जाते हैं। जाना तो मुझे याद नहीं है पर ऐसे ही कभी कभी ख्याल आ जाता है कि माँ बाप भी चले गये, हमने भी चले जाना है। कहाँ जाना है यह तो कोई पता नहीं। यह तो आपके मुख से सुनकर मेरे हृदय को चोट लगी है। मुझे भी वह रास्ता बताओ मैं कैसे करूँ?

सो महात्मा ने बताया तू कोई पूर्ण महात्मा की तालाश कर क्योंकि जब तक कोई पूरा साधु नहीं मिलता तब तक रास्ता नहीं मिला करता। गुरू शरण में जा और गुरू धारण कर; वहाँ तुझे रास्ता मिलेगा। उस रास्ते की कमाई कर, फिर कमाई करके तुझे कुछ प्राप्ति होगी। कहने लगा महाराज! यह घोड़ा मैं आपको भेंट करता हूँ। आप इसकी सवारी किया करो आपने मेरे नेत्र खोल दिये, और तो मेरे पास देने के लिये कुछ है नहीं। उस समय सारे काम छोड़कर तीव्रतर वैराग लग गया। दुनियाँ छोड़ दी, जाकर महापुरुष कोई पूर्ण था उसकी संगत में रहा। 14 वर्ष तक मेहनत करके उस पद पर पहुँच गया जिसके लिये ऋषि मुनि बड़े बड़े, पूरी ताकत के साथ तपस्या करते हैं, जंगलों में रहकर कन्द मूल खाते हैं। सो 14 वर्ष बाद अवस्था प्राप्त करके जब वहाँ दोबारा वापिस आया तो वैसी ही कथा फिर हो रही थी। आ गया, कुछ आदमी जाने पहचाने थे; फिर पहचाने, तब काले बाल थे -

''प्यारे! तुम तभी से ही कथा सुनते आ रहे हो?''

''हाँ''

''रोज़ सुनते हो?''

''हाँ।''

''..............।''

''क्या बात, चुप हो गया?''

''मैंने तो एक ही सुनी थी वहीं मेरे बाण लगा हृदय में, मुझे बीन्ध कर रख दिया उसने। शुक्र है कि मैंने कथा सुन ली और मुझे उस पद की

प्राप्ति हो गई जिसके लिये महापुरुष बार बार संकेत किया करते थे, वह परम आनन्द मुझे प्राप्त हो गया, अपने स्वरूप का मुझे ज्ञान हो गया।

सो मतलब यह कि हम सुनते हैं, सुनते ही चले जाते हैं सुनते ही चले जाते हैं, करते नहीं हैं, दृढ़ता नहीं हमारे मन में पैदा होती। कभी मन में यह नहीं आता कि आज तो जो बीत गया, सो बीत गया - अब तक, अब नहीं जाने देना वक्त, अब तो भजन करना ही है। फैसला यहीं पर ही कर लो। यह तभी सम्भव है यदि आस्तिक बुद्धि हो। आस्तिक बुद्धि जो है यह तीसरा नेम है।

***तीसर आसतक बुधि है गुर बच द्रिड़ निसचाइ॥***

***पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

गुरू के वचनों को दृढ़ करके, निश्चय करके माने।

चौथा हुआ करता है ***दान*** । दान तीन प्रकार का होता है एक तमोगुणी, एक रजोगुणी होता है, एक सतोगुणी। इसका फल बहुत होता है, एक तो माया से मोह टूटता है दूसरा अपनी कमाई दूसरों के काम आती है -

***घालि खाइ किछु हथहु देइ। नानक राहु पछाणहि सेइ॥***

***पृष्ठ - 1245***

महाराज कहते हैं यदि रास्ता पहचानना है तो कठिन परिश्रम करके कुछ दिया कर। सो यहाँ फ़रमान करते हैं -

***चौथे दान देन को दाता। सो रज तम सत गुन त्रै भांता॥***

***पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

वह भी तीन प्रकार के होते हैं एक रजोगुणी, एक तमोगुणी, एक सतोगुणी-

***कलहि क्रोध सो बिन सुभ काला। देत तामसी रीत बिसाला॥***

***पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

कलह हो, क्रोध हो, बिना शुभ स्थान के विचार किये -

***खेतु पछाणै बीजै दानु॥*** ***पृष्ठ - 1411***

बिना खेत पहचाने अर्थात (असली पात्र जाने) जो दान करता है और कलह क्रोध के साथ देता है। वह कहते हैं हमने तो लेना ही है तुझ से। कहता है हम तो नहीं देते। वह दुखी होकर दान देता है। कहते हैं, इसका फल प्राप्त नहीं हुआ करता, निष्फल हुआ करता है और कलह क्रोध के बिना जो दान देता है -

***कलहि क्रोध सो बिन सुभ काला॥***

*पृष्ठ - 109 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

बिना शुभ काल के कलह क्रोध के वश होकर -

*देत तामसी रीत बिसाला॥ पृष्ठ - 109 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

वह तामसी दान हुआ करता है उसका फल नहीं हुआ करता। फल के स्थान पर पाप हुआ करता है। दूसरा दान होता है -

*निज जस हेत देत सो दाना॥ पृष्ठ - 109 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

यश के लिये कि मुझे लोग अच्छा कहें, मेरी अरदास हो। विशेष रूप से लिखवाता है कि मेरी अरदास करो बता दो कि यह हज़ार रूपया देता है, दो हज़ार दे रहा है, जयकारा बोलें मेरे नाम पर, दान पर; देखें जो सैकेट्री है वह मुझे खड़ा करे कि इन्होंने जी पाँच हज़ार दान दिया है और उधर जयकारा लगवायें; मेरा नाम हो, यश हो। कहते हैं यह जो दान है -

*अहै राजसी फल लघ जाना॥ पृष्ठ - 109 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

इसे राजसी दान कहते हैं; बहुत कम फल हुआ करता है इसका -

*करकै बिनै सुपातर देखी॥*

प्रार्थना के साथ देते हैं कि महाराज! यह तुच्छ सी माया है इसे किसी लेखे में डाल दो -

*इहु सांतकी फल सु विसेखी॥ पृष्ठ - 109 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

यह सान्तकी दान हुआ करता है और फल बहुत होता है। वह भी दान ऐसे नहीं देना कि मैं दे रहा हूँ। वह यह समझकर कि वाहिगुरू मुझे देता है और उसका दिया हुआ मैं दे रहा हूँ -

*वाहिगुरू के जान कै सभै पदारथ देय।*
*तनक न अपना मानई ताहिं अखै फल लेय॥*

*पृष्ठ - 109 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

उसका फल अक्षय प्राप्त हुआ करता है। अक्षय फल वह होता है जो फल नष्ट न हो। बाकी फल नष्ट हो जाते हैं -

*तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु।*
*नानक निहफल जात तिहि जिउ कुंचर इसनानु॥ पृष्ठ - 1428*

पर जो वाहिगुरू का समझ कर देता है, वह अक्षय फल देता है नाश नहीं होता बहुत बड़ा फल हुआ करता है।

एक बार विक्रमाजीत राजा ने अपने राज ज्योतिषी से पूछा ''मैंने वह कौन सा कर्म किया है जिसकी वज़ह से मुझे ताशकन्द से लेकर बर्मा तक और नीचे मध्य प्रदेश तक का राज्य प्राप्त हुआ है और अफगानिस्तान

आदि सारा।'' सात दिन की मोहलत दे दी। कुछ नहीं समझ में आता। साथ ही यह भी कह दिया कि दण्ड दूँगा यदि तू यह न बता सका। उदास चित्त देखकर साँतवे दिन उसकी लड़की ने पूछा कि ''पिता जी! आप 6-7 दिनों से न कुछ खाते हो, न पीते हो, क्या बात है? यदि कोई चिन्ता हो मन में तो बता देना चाहिए। कहते हैं, दीवारों से ही बात कर लो, हो सकता है दीवार ही कोई जवाब दे दे। अन्दर बात मत रखो, अन्दर रखी बात आदमी को खा जाती है।'' कहने लगा -

''बेटी! विक्रमाजीत बादशाह ने सवाल किया है और मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा।''

''पिता जी! यह तो कुछ भी बात नहीं है; आप जाकर कह दो, कल मेरी लड़की जवाब देगी।''

''जवाब दे देगी बेटी?''

''हाँ।''

जाकर कह दिया ''महाराज! कल आपके दरबार में मेरी लड़की जवाब देगी।'' दूसरे दिन दरबार में लड़की हाज़िर हुई। कहने लगी ''महाराज! बता तो मैं देती हूँ पर आपको यकीन नहीं आयेगा; यदि विश्वास न हुआ, तुम सबूत मांगोगे। सो प्रमाण सहित मैं बताना चाहती हूँ। आप ऐसा करो कि यहाँ से 35 मील पर एक महात्मा रहते हैं और राख घोलकर पीते हैं, वह तुम्हारा जवाब देंगे।'' राजा वहाँ चला गया। वहाँ जाकर बादशाह कहता है ''सन्त जी! मैंने यह बात पूछनी है।'' कहता है ''बादशाह! हमें पता है पर तुम्हें विश्वास नहीं आयेगा। तुम्हें विश्वास आयेगा - एक और सन्त हैं यहाँ से 30 मील पर रहते हैं वह गर्म गर्म अंगारे मुँह में डाल कर खाते रहते हैं, तू उनसे जाकर पूछ ले।''

वहाँ चला गया। उन्होंने भी जवाब दे दिया और कहने लगे ''बादशाह! हमारी बात पर तुझे यकीन नहीं आयेगा। तुझे यकीन दिलवाने वाला कल पैदा होना है, अमुक स्थान पर। उसने पैदा होते ही मर जाना है - थोड़ी देर बाद; तेरी प्रतीक्षा कर रहा है और तू उसे गोदी में लेकर पूछ लेना तुझे जवाब दे देगा।'' वहाँ चला गया, जहाँ बताया था। दूसरे दिन बच्चा पैदा हुआ, बुला लिया उसने, गोदी में लिया, सवाल पूछा ''ऐ बच्चे! यह बता मुझे इतना बड़ा राज्य कैसे प्राप्त हुआ?'' उस समय वह बोला कि विक्रमाजीत! तू, मैं, अंगारे खाने वाला और वह राख पीने वाला तथा वह लड़की, हम पिछले जन्म में इकट्ठे थे और हम चारों तपस्या किया करते थे। वह लड़की दो दो रोटियाँ हमारे लिये लाया करती थी -

आठ पहर के बाद। उस समय एक बार भगवान हमारी परीक्षा लेने के लिये आ गये और उन्होंने आकर यह बात कही कि मैं भूखा हूँ, मुझे कुछ खाने को दे दो। कहता है पहले सन्त ने एक रोटी दे दी। वह बोला इससे तो मेरी भूख नहीं मिटती भाई। उसने आधी रोटी और दे दी। कहता है इससे भी मेरा पेट नहीं भरेगा। कहता है अब तो मेरे पास आधा ही रह गया, मैं राख खाऊँगा?'' कहते है 'तथा अस्तु।' उसी समय से वह राख ही खाता चला आ रहा है।

दूसरे के पास गये, उसने भी डेढ़ रोटी दे दी और जब बाकी की आधी रोटी मांगी, वह कहने लगा मैं अंगार खाऊँगा - तुझे आधी देकर। मैंने भी तो कुछ खाना है। उन्होंने 'तथा अस्तु' कह दिया। तभी से वह अंगारे खाता आ रहा है और मेरे पास जब आया और डेढ़ रोटी देने के बाद जब आधी रह गई उस समय मैंने कहा कि मैं भूखा मरूंगा तुझे सारी रोटी देकर। कहते हैं 'तथा अस्तु।' तभी से मैं पैदा होता हूँ, मर जाता हूँ।

इतनी देर में तेरे पास आ गये। तूने दोनों रोटियाँ दे दीं। उसके बाद प्रार्थना की कि महाराज! हमारा नेम तो नहीं है, हम मांगने तो नहीं गये आज तक क्योंकि हम परमेश्वर के भरोसे पर रहते हैं, जो आ जाता है खा लेते हैं। मिल जाये तो खा लेते हैं, न मिले तो हम परमेश्वर की रज़ा में रहते हैं; आज्ञा दो मैं जाकर मांगकर और ले आऊँ। कहते हैं 'नहीं'। तुझे दर्शन दे दिये। हम भी तेरे पास थे, दर्शन हमें भी हुए। हमने कहा, यह तो भगवान थे और उस समय हमने प्रार्थना की कि महाराज! हमारी मुक्ति कैसे होगी?'' कहते हैं ''यह जो साधु है यह अगले जन्म में बादशाह बनेगा और इन दो रोटियों के बदले में इसे बादशाहत मिलेगी क्योंकि इसने सर्वस्व दान कर दिया। सर्वस्व दान का बहुत भारी फल हुआ करता है। उन्होंने सवाल किया कि महाराज! हमारी मुक्ति? कहते हैं जब यह भरी जवानी में होगा उस समय हम इसके मन में फुरना (विचार) पैदा करेंगे कि यह पूछेगा कि मुझे इतना बड़ा राज्य कैसे प्राप्त हुआ? उस समय यह जो लड़की है इसे हम पिछले जन्म का ज्ञान देंगे। यह इस तरह जब तुम्हारे पास भेजेगी और जिस दिन आकर तुम्हारे से पूछेगा तब तुम्हारा छुटकारा होगा तीनों का। सो कहने लगा महाराज! आप आ गये हमसे पूछ लिया और अब मैं भी शरीर छोड़ रहा हूँ और आपके वापिस पहुँचते पहुँचते वे दोनों सन्त भी शरीर छोड़ देंगे तथा वह लड़की भी शरीर छोड़ जाएगी और अब हम जा रहे हैं दरगाह में।

सो इसे ***'अक्षय फल'*** कहते हैं जिस फल का नाश न हो। सो

वह दान होता है जो वाहिगुरू का दिया हुआ समझकर फिर नम्रता पूर्वक दे देना। गुरू घर में खेत है गुरसिख। गुरू घर में जहाँ लंगर चलते हों, सेवा होती हो, पढ़ाई होती है, जहाँ गरीबों की देखभाल होती हो, बीमारों की रक्षा होती है, उस स्थान पर दान देने के लिए गुरू महाराज जी ने इस तरह से हमें ताकीद की है –

*धारना – पिआरे जी दान दिता गुरसिखां नूं – 2, 2*
*इह दोहीं जहानी फलदै, इह दोहीं जहानी फलदै – 2*
*पिआरे जी दान दिता..................।*

*सेव करी इनही की भावत और की सेव सुहात न जीको।*
*दान दीयो इनही को भलो अर आन को दान न लागत नीको।*
*आगै फलै इनही को दीयो जग महि जस और दीयो सभ फीको।*
*मो ग्रिह महि मन ते तन ते सिर लौ धन हौ सभ ही इनही को॥*

*दशम ग्रन्थ*

गुरू दशमेश पिता महाराज – आपने बहुत बड़ा यज्ञ किया। उस समय आपने बहुत ही प्यार के साथ गुरसिखों को भोजन खिलाया। पर जो ब्राह्मण वर्ग था, वह नाराज़ हो गया रोने लग पड़ा। उनका बड़ा पण्डित कहने लगा, ''महाराज! हमें तो किसी ने पूछना नहीं है कलयुग में आपने हमें रद्द कर दिया। कहने लगे ''प्रेमियो! तीनों युगों के अन्दर तुम्हारा वरतारा (व्यवहार) रहा लेकिन अब जो सच्चे पण्डित हैं वे गुरू के सिख हैं जिनके अन्दर ज्ञान है। ब्रह्म के ज्ञान वाले ब्राह्मण हुआ करते हैं। सो अब ***'सेव करी इनही की भावत और की सेव सुहात न जीको।'*** हमारे चित्त को अच्छी नहीं लगती – और किसी की सेवा की हुई। ***'दान दीयो इनही को भलो अर आन को दान न लागत नीको।'*** बाकी दान दिया हुआ फल नहीं देता ***'आगै फलै इनही को दीयो जग महि जस और दीयो सभ फीको।'*** जग में यश होता है इन्हें दिया हुआ, और दरगाह में जाकर फलता है ***'मो ग्रिह महि मन ते तन ते सिर लौ धन हौ सभ ही इनही को।'*** मेरे घर में तो मेरा शरीर, मेरे बच्चे, मेरा जो कुछ भी है, चारो साहिबजादे और मेरा धन, मेरा सिर, मैंने तो सब कुछ इन्हें दान दे दिया। चमकौर में दोनों पुत्र दान कर दिये, सरहंद की दीवारों में दोनों छोटे साहिबजादे दान कर दिये, अपने आपको दान कर दिया, पिता का दान कर दिया। सर्वस्व दानी जग में कोई कोई हुआ करता है। यह गुरू दशमेश ही थे जिन्होंने सर्वस्व दान कर दिया था और महाराज कहते हैं इनके लिये मैंने सब कुछ दान किया है। आप फ़रमान करते हैं –

*जग भोग नईवेद लख गुरमुखि मुखि इकु दाणा पाइआ।*

और भाई गुरदास जी कहते हैं कि लाखों यज्ञों के बराबर लंगर में एक दाना डाला हुआ बराबरी करता है। वह दाना ब्रह्मज्ञानी के पास पहुँच जाना है उसके आहार का अंग बन जाना है, पीस कर अन्दर जाता है; कितना फल हो जाता है।

गुरू साँतवे पातशाह महाराज एक बार ऐसा ही विचार बता रहे थे। एक सिख खड़ा हो गया, कहने लगा ''महाराज! धन वाले, पैसे वाले दान कर सकते हैं, गरीब कैसे कर सकता है?'' कृपा करके यह भी बताओ क्योंकि हम गरीब हैं, निर्धन हैं, हमारे पास कुछ नहीं है और हम दान कैसे करें? हमें कैसे फल प्राप्त हो?'' महाराज कहते हैं ''प्यारे! ऐसी बात नहीं है। पैसे वाले के पास बेअन्त धन है; गरीब के पास खाने पीने के लिये कुछ नहीं है। देना दोनों का एक समान हुआ करता है। एक लाखों रूपये के profit (लाभ) कमाने वाला हज़ार रूपया दान दिया करता है। एक को कुछ भी profit (लाभ) नहीं हुआ वह एक रूपया दान कर देता है। उसका दान एक रूपये वाले का लाख वाले से अधिक है। कहता है -

''महाराज! कृपा करके समझाओ हमें। मन करता है कि हम दान करें पर है ही नहीं कुछ।''

''कितनी रोटियां खाया करता है?''

''चार''

महाराज कहते हैं तीन खाया कर, भजन किया कर और एक रोटी का आटा किसी बर्तन में डालता जाया कर। जब सेर हो जाये, लंगर में डाल आया कर। लंगर में देना जहाँ रोटियाँ पकती हों। जहाँ आटा बिकता हो वहाँ नहीं देना। जहाँ किसी भूखे की भूख निवृत्त होती है वहाँ देना है। दूसरा खड़ा हो गया ''महाराज! मुझे चार रोटियों की भूख है और मुझे मिलती ही दो हैं, मेरा भी कोई हल हो सकता है?'' इतनी देर में एक स्त्री भी उठ खड़ी हुई ''महाराज! हम अति के गरीब हैं, आधा भोजन मिलता है, आधा भूखे रहते हैं हम।'' महाराज कहते हैं ''ऐसे किया करो बीबी! एक चुटकी निकाल लिया कर आटे की, वह चुटकी एक बर्तन में डालती रहा कर। जब बर्तन भर जाये वहीं लंगर में डाल दिया। गुरू घर में खा लिया जायेगा, तुरन्त दान मिल जायेगा - तुरन्त दान महा कल्याण। कहते हैं ''महाराज! इतना सा भी दान फल दे जाता है?'' कहते हैं हाँ, तुम्हें यहीं एक किरतपुर की ही बात बताते हैं।

यहाँ एक गुरसिख बहुत गरीब था। वह बहुत कठिनाई से गुज़ारा किया करता था। टूटे हुये छप्पर में रहता था। एक चिड़ा और चिड़िया शार्प वश, कुकर्म वश इस यौनि में पड़ गये लेकिन अन्दर उनमें ज्ञान था। उन दोनों ने विचार किया कि यह तो गरीबी से मरा हुआ है इसलिये इसका कुछ भला करना चाहिए हमें। इस मूर्ख को पता नहीं है कि दलिद्र का नाश, दान द्वारा हुआ करता है। दलिद्री दान करने लग जाये, उसका दलिद्र दूर होना शुरू हो जाया करता है। इसे पता नहीं है चलो, दो दाने तू उठाया कर, दो दाने मैं उठाया करूँगी; गुरू साँतवे पातशाह के लंगर में फेंक आया करेंगे। वे ऐसा ही करने लग पड़े। जैसे जैसे दाने लंगर में डालने लग गया वैसे वैसे उसकी कमाई में वृद्धि होने लग गई। आखिर अमीर हो गया, नया घर बना लिया। भूल गया परमेश्वर को कि उसने दिया है। अपनी अक्ल देखकर कहने लगा कि मैंने ही कमाई की है और शराबों कबाबों में पड़ गया, गलत रास्ते पर चल पड़ा। नास्तिक बुद्धि हो गई। पहले गरीब था दुखों से भरा हुआ था। दुख में ही परमेश्वर को याद रखता है आदमी और जब इसके पास धन आ जाता है फिर मस्ती आ जाती है और परमेश्वर भूल जाता है। कोई ही है जो पैसा पाकर, प्रभुता पाकर भी, परमेश्वर को याद रख सके। कोई बिरले बिरले पुरुष हैं, अन्यथा कदम डगमगा जाते हैं, कोई नहीं परमात्मा को याद रखता; दुख आने पर ही याद करता है। सो इस प्रकार उन्होंने सोचा -

''यह तो बुरा काम हो गया, यह तो पाप करने लग पड़ा।''

''फिर?''

''फिर, यही है कि यह तो उसी हाल में ही ठीक है।''

''उसी हालत में कैसे लाएं?''

''गुरू घर का दाना जिस कमाई में आकर पड़ना शुरू हो जाये उसके घर गरीबी आ जाती है, वह कमाई नष्ट हो जाती है।''

***तिउ धरमसाल दी झाक है विहु खंडूपाजु॥***

***भाई गुरदास जी, वार 35/12***

जैसे ज़हर के कैपसूल खाता है आदमी - चीनी से लगे हुए, इसी प्रकार धर्मशाला के दान का पैसा खाना बुरा हुआ करता है। लालच के वश आकर खाता है। सो कहते हैं वह लाओ। उसके बाद गुरू घर के लंगर के दो दाने इसके घर फैंकने शुरू कर दिये फिर उसी तरह से उतना ही गरीब हो गया। अमीरी देखकर गरीबी सहन करना बहुत कठिन होता है। रोया,

सटपटाया कि महाराज! मैं बड़ी अच्छी रोटी खा रहा था, अब मैं हाथ तो सोने को लगाता हूँ पर मिट्टी बन जाती है, कृपा करो। महाराज कहते हैं "प्यारे! तेरी जो अमीरी आई थी, दान का फल मिला था तुझे। चार दाने तेरी कमाई में से लंगर में पड़ते थे, अब तू विकारी बन गया है अब चार दाने लंगर के तेरे घर आते हैं; तेरी कमाई नष्ट हो गई। सो जा कुछ दान किया कर, गुरू घर में कुछ सेवा किया कर। सो इस प्रकार कहते हैं भाई! दो दानों वाला ही पहुँच गया, उसे भी प्राप्ति हो गई। जितनी किसी की श्रद्धा है उतना ज़रूर दान देना चाहिए गुरू के निमित्त। यदि गुरू के निमित्त नहीं निकालोगे तो चार भागीदार हैं इसके - एक तो बीमारी है, एक आग है, एक चोर है और एक राज दण्ड है। ये कहते हैं कि यदि हमारे बड़े भाई 'धर्म' को न मिले तो फिर हम ज़ोर जबरदस्ती से छीन लेते हैं और साथ में दुखी भी करते हैं, निकाल हम लेते हैं। बीमारी लगा देंगे कोई राजसी संकट पैदा हो जायेगा, टैक्स लग जायेगा, कोई और बात हो जायेगी या चोर आकर ले जायेंगे।

सो इस प्रकार दसवें पातशाह महाराज कहते हैं जो दान है ***'दान दीयो इनही को भलो अर आन को दान न लागत नीको। आगै फलै इनही को दीयो जग महि जस और दीयो सभ फीको।'*** बाकी सब फीका है। ***'मो ग्रिह महि मन ते तन ते सिर लौ धन हौ सभ ही इनही को।'*** हम ने तो कहते हैं भाई! अपना शरीर भी दान किया हुआ है, बच्चे भी दान किये हुये हैं। सब कुछ दान किया हुआ है, सो दान जो है यह चौथा नेम है। यह ज़रूरी होता है। प्रार्थना की थी कि तीन प्रकार का दान हुआ करता है एक तामसी होता है - कलह क्रोध के साथ दिया गया, खीझकर दिया गया। दूसरा अपने यश के लिये दिया गया यह राजसी दान होता है, इसका फल कम होता है, तीसरा होता है उचित स्थान देखकर दान देना ***'खेतु पछाणै बीजै दानु।'*** सो यह जो ठीक स्थान देखकर देना ***'करकै बिनै सुपातर देखी। इहु सांतकी फल सु विसेखी।'*** इसका फल बहुत ज्यादा होता है ***'वाहिगुरू के जान कै सभै पदारथ देय। तनक न अपना मानई ताहि अखै फल लेय।'***

अपना मानकर न दे कि मैं देता हूँ; वाहिगुरू का समझ कर दे।

*दरब किधो बिदिया को दाना। देत सांतकी हवै निरमाना॥*

*पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

दान पैसे का भी होता है, कोई पढ़ा लिखा विद्या का दान करो, कोई सियाना आदमी अक्ल का दान करो, सेहतमन्द है स्वास्थ्य का दान करो-

*तिह को फल ह्वै अमित बिसाला॥*

*पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

कहते हैं बहुत ज्यादा फल होता है -

***बेद सन्त भाखत इस ढाला॥ पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

वेद भी, सन्त भी सभी कहते हैं। सो यह चौथा नेम (नियम) हुआ करता है।

पाँचवा नेम होता है **पूजा**। गुरू की पूजा करना -

***पंचम पूजा मन कर करनी। रिदै भावनी गुर महिं धरनी॥***
***पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

रस्म पूरी नहीं करनी, मन में पूजा करना है। गुरू को यह समझता है कि वह परमेश्वर है -

***सफली पूजा होवत तां की। सभ भावनी सो मत जांकी॥***
***पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

भावना से पूजा किया करता है उसकी पूजा सफल हुआ करती है -

छठा जो है वह हुआ करता है ***'गुरू की बाणी पर निश्चय करना'*** यदि बाणी पर निश्चय है तभी फल प्राप्त होता है; यदि विश्वास भरोसा ही नहीं है, महाराज कहते हैं ऐसे झूठ कपट करके -

***जो बिनु परतीती कपटी कूड़ी कूड़ी अखी मीटदे***
***उनका उतरि जाइगा झूठु गुमानु॥ पृष्ठ - 734***

ऐसे ही आँखे बन्द करके बैठा है, अन्दर निश्चय नहीं है बाणी पर। बाणी कुछ और कहे जाती है, मन की मति छोड़ता नहीं। सो यह निश्चय होना चाहिए -

***छठम नेम निज गुर शबद तांके जे अनसार।***
***तिस ही को पढहै सुनै तिस को करै विचार।***
***गुरू सिधांत बिनां जो आन। तिस के बचन सुनै नहिं कान॥***
***पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

जो गुरू ग्रन्थ साहिब के सिद्धान्त के साथ वचन नहीं मिलते, वे कानों से सुना ही न करे, कहीं संशय पड़ जायेगा। यदि सुनेगा, ऊट पटांग बातें होती हैं बहुत। मन घड़न्त बातें बनाई होती हैं वे सिद्धान्त के साथ मिलती नहीं - गुरू ग्रन्थ साहिब के। गुरू पर निश्चय रखना, यह छठा नेम हुआ करता है।

साँतवा है पाठ सुनना प्यार से, निश्चय से -

***सपतम पठै सुनै जहिं रीती। वरतै तहिं अनसार सप्रीती।***
***बिनां दंभ गुर सबद कमावन। करै सदा ह्वै तन मन पावन॥***

*पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

यह भेख नहीं करना, दम्भ नहीं दिखाना। लोगों के सामने आँखे बन्द कर करके बैठे रहना, अन्दर से लगन नहीं है। माला हाथ में ले ली, अन्दर से परमेश्वर के साथ चित्त नहीं जुड़ता और 'माला फेरन मसखरे टिका लाउण शैतान।' अन्दर से वृत्ति नहीं जुड़ी हुई, बाहर से दिखावा करता है और इसके बारे में तो गुरू महाराज जी ने बहुत सख्त ताड़ना की है। ऐसा फ़रमान किया है पढ़ो प्यार से -

***धारना - लोकां नूं वस करदै मूरख भेख दिखा के - 2, 3***

***भेख दिखाए जगत कौ लोगन को बस कीन।***
***अंतकाल काती कटयो बास नरक मो लीन॥***

*पृष्ठ - 58, बचित्र नाटक*

***पूंअर ताप गेरी के बसत्रा। अपदा का मारिआ ग्रिह ते नसता।***
***देसु छोडि परदेसहि धाइआ। पंच चंडाल नाले लै आइआ॥***

*पृष्ठ - 1348*

बाहर बाहर से भेखी है पर अन्दर से विषयों की भावना। महाराज कहते हैं, दम्भ से रहित, भेख से रहित, पाखंड से रहित होकर बात कर ***'बिना दंभ गुर शबद कमावन। करै सदा ह्वै तन मन पावन।'*** बिना दम्भ, बगैर भेख से, बिना धोखा दिये गुरू शबद की कमाई कर। तन और मन को पवित्र करता है गुरू का शबद। सो यह साँतवी चीज़ है।

आँठवा जो नेम है वह है ***साँतकी वृत्ति***। सांतकी वृति में रहना। क्रोध की वृत्ति में न रहना, रजोगुणी वृत्ति में न रहना।

***असटम ब्रिति सांतकी राखै। निव चलणा मधरी मुख भाखै।***
***नवमो नेम पाठ जो करना। तिह मैं अपर न बचन उचरना॥***

*पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

नम्रता में रहे और मुख से मीठे वचन बोले, कड़वे शब्द न बोले -

***दसवें ब्रहम होम जो करावै। भूखे सिख सन्त मुख पावै॥***

*पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

ब्रह्म होम क्या होता है? भूखे को भोजन खिलाना। दूसरा होता है -

***दुती होम है गयान का रस रिखीक के दरब॥***

*पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

यह इन्द्रियों को वश में करना -

***गिआन अगन महि होम ही तन हंतादक सरब॥***

*पृष्ठ - 109 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

इन सभी को 'मैं मेरी' को दग्ध कर देना, यह 'होम' हुआ करता है और यह जो होम है साधुओं तथा गुरसिखों को भोजन खिलाना, यह ब्रह्म होम हुआ करता है और इसका फल बहुत हुआ करता है, अश्वमेघ यज्ञ का फल प्राप्त होता है। इस प्रकार फ़रमान करते हैं -

*धारना - असमेध जग दे बराबर फल होवे,*
*लंगर छकावे सिख नूँ - 2, 2*
*मेरे पिआरे लंगर छकावे सिख नूं - 2, 2*
*असमेध जग दे बराबर........................।*

*पंच बार गंग जाइ, बार पंच प्राग नाइ,*
*तैसा पुंन एक गुरसिख कउ नवाए का।*
*सिख कउ पिलाए पानी, भाउ करि कुरखैत,*
*अश्वमेध जग फल सिख कउ जिवाए का।*
*जैसे सत मंदर कंचन के उसार दीने,*
*तैसा पुंन सिख कउ इक सबद सिखाए का।*
*जैसे बीस बार दरसन साध कीआ काहू,*
*तैसा फल सिख कउ चाप पग सुआए का॥*

*भाई गुरदास जी, कबित्त 673*

बन्दगी करने वाले महापुरुष को भोजन खिलाने का फल अश्वमेघ यज्ञ के बराबर होता है। सो यह ***'दसवें ब्रहम होम जो करावै।'*** दसवां जो नेम है, वह ब्रह्म होम का है भोजन खिलाने का ***'भूखे सिख सन्त मुख पावै।'***

सो इस प्रकार गुरू नानक पातशाह कहने लगे, ''राजा शिवनाभ! यह हमने तुझे दस 'यम' बताए हैं और दस नेम बताये हैं; 20 रहतें हैं जो आन्तरिक हैं, धारण करनी पड़ती हैं। जब धारण करता है फिर नाम की सीढ़ी आती है जिस पर चढ़ना है। उसका फिर तीसरा डण्डा हुआ करता है एकान्त स्थान पर बैठना, जहाँ शोर शराबा न हो, जहाँ आवाजाई न हो, आराम से बैठ सकता हो और जहाँ कुछ सुनाई न देता हो। एक आसन बना लो, एक चौकी बना लो घर में, वहाँ रोज़ बैठा करें उसी स्थान पर। वहाँ क्या होता है जहाँ हम रोज़ बैठेंगे; वहाँ भजन के जो जलाल हैं, अन्दर से जो लहरें निकलती हैं उनका वातावरण बन जाता है। वहाँ पर जूते लेकर मत जाओ, उस स्थान को पवित्र रखो, झूठे हाथों वहाँ न जाओ स्नान करने के बाद वहाँ जाकर बैठो, शुद्धि पवित्रता रखो। जब बैठोगे, बैठते ही चित्त वाहिगुरू की ओर लग जायेगा। चौथा जो होता है वह महाराज फ़रमान करते हैं कि उसे प्राणायाम कहते हैं, सांस आता है उसके द्वारा। यह मन जो है यह श्वांस की सवारी करता है। यदि मन को रोकना

है, सांस को रोक ले, मन रूक जायेगा क्योंकि घोड़ा पकड़ लिया तो सवार किधर जायेगा। सो इसके बारे में बहुत लम्बी चौड़ी व्याख्या है -

*सूर सरु सोसि लै सोम सरु पोखि लै*
*जुगति करि मरतु सु सनबंधु कीजै॥*
*मीन की चपल सिउ जुगति मनु राखीऐ*
*उडै नह हंसु नह कंधु छीजै॥* *पृष्ठ - 991*

'सूर सरू' कहते हैं सूरज नाड़ी को 'सोम सरू' चन्द्रमा नाड़ी। इन्हें सिधा लो, इन्हे मर्यादा में ले आओ; मर्यादा में लाकर फिर presence of mind (मन की एकाग्रता) अन्दर आ जायेगी अन्यथा नहीं आती है। सो यह ज़रूरी हुआ करता है भजन करने वाले के लिये। भजन करने के बेअन्त तरीके हैं - रसना से जपते हैं, माला की सहायता से जपते हैं, मूल मन्त्र जपते हैं, बाणी पढ़ते हैं। बाणी से शुरू होकर मूल मन्त्र, फिर रसना से नाम होता है फिर श्वास श्वास नाम हुआ करता है। सो उसके बारे में फ़रमान करते हैं कि ध्यान अन्दर रखना पड़ता है - एक जगह पर। चाहे तो नाक पर ध्यान रखो, हवा वहाँ से आती है, चैक करो कि अब सांस अन्दर को जा रहा है अब बाहर को जा रहा है और अन्दर को जाता है सांस के साथ ही नाम जपना है, बाहर को निकलते समय भी नाम जपना है। जैसी जिसकी वृत्ति हो - किसी की 'सतनाम वाहिगुरू' की है, किसी की 'वाहिगुरू' की है किसी की 'वाहि' और 'गुरू' की है; जैसा जैसा जो कोई अधिकारी हुआ करता है वैसी ही महात्मा बता दिया करते हैं कि तू इसको follow (अनुकरण) कर सकता है। आम आदमियों को यह पता नहीं चलता कि मैं क्या कह रहा हूँ; हर आदमी यह नहीं जान सकता क्योंकि आन्तरिक खेल का पता नहीं चलता इस लिए इस बात का पता नहीं चलता, श्वांस कन्ट्रोल का नहीं पता चलता और गुरू महाराज कहते हैं -

*पूरे गुर का सुनि उपदेसु। पारब्रहमु निकटि करि पेखु।*
*सासि सासि सिमरहु गोबिंद। मन अंतर की उतरै चिंद॥*

*पृष्ठ - 295*

इस तरह पढ़ लो -

*धारना - सुआस सुआस दे गेड़े, जप लउ वाहिगुरू-2, 3*

जिसका नाम जपना है, उसे पहले पास करके देख कि मेरे आस-पास चौगिर्दे सभी जगह वाहिगुरू परिपूर्ण है; इस निश्चय में आओ फिर ***'सासि सासि सिमरहु गोबिंद। मन अंतर की उतरै चिंद।'*** सो उसके बारे में जिस प्रकार लिखा हुआ है, मैं प्रार्थना कर दूँ कि नासिका का ध्यान करे, चाहे आज्ञा चक्र का, चाहे नाभि का ध्यान करे; एक स्थान पर सुरत टिकानी पड़ेगी -

*अंग चत्रथो प्राणा याम। पूरक कुंभक रेचक नाम॥*

*पृष्ठ - 110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

इसके तीन भेद होते हैं - एक रेचक होता है, एक पूरक होता है एक कुम्भक होता है -

*बाहर ते मन सुरत टिकावै। दहिने सुर ते प्रान चढावै॥*

*पृष्ठ - 110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

चन्द्रमा नाड़ी से प्राण अन्दर खींचे श्वांस, यह इड़ा हो जाया करता है -

*खैंचत दवादस मात्रा जोड़। ओअंकार जपै तब सोइ॥*

*पृष्ठ - 110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

कहते हैं बारह बार 'वाहिगुरू वाहिगुरू.........' करे, बड़ा प्राणायाम है। हम तीन बार करवाते हैं। पाँच प्यारों को कहा हुआ है कि तीन बार बताया करो; जब तीन बार सिद्ध कर ले फिर चार बार, फिर पाँच बार, फिर छह बार और फिर दुगुना अन्दर रोके। यदि तीन बार 'वाहिगुरू वाहिगुरू वाहिगुरू' कहता है श्वांस खींचते समय तो छह बार वाहिगुरू सांस रोककर कहना है। तीन बार दूसरी नाड़ी जो है दांई, तीन बार कहना है फिर छह बार वाहिगुरू वाहिगुरू सांस को स्थिर करके कहना है फिर तीन बार नीचे को मांस जाते हुए कहना है। जब श्वांस टिक जायेगा, कन्ट्रोल में आ जायेगा फिर ऐसे लगेगा कि श्वांस मेरा लम्बा है और नाम जल्दी जल्दी बोला जाता है फिर चार बार कर लो, फिर इससे बढ़कर पाँच बार कर लो, फिर बढ़ जाये छह बार कर लो फिर सात बार। जितना जितना किसी को शौक हो उतना कर सकता है। ज्यादा इसलिये नहीं बताया जाता कि एक अंग को तो पकड़ लेते हैं, ब्रह्मचर्य को पकड़ते नहीं। ब्रह्मचर्य को न पकड़ सकने के कारण पागल हो जाता है। शरीर में से ताकत तो सारी बेकार कर दी, नाम किससे जपेगा। नाम तभी जपा जा सकता है यदि शरीर तन्दरूस्त है। शरीर में दोष पैदा कर दो अपने आप ही, फिर नहीं जप हुआ करता। इसलिये यही बताया जाता है कि रसना से नाम जपे जा। वाहिगुरू वाहिगुरू-

*रसना जपीऐ एकु नाम।*
*ईहा सुखु आनंदु घना आगै जीअ कै संगि काम॥*
*कटीऐ तेरा अहं रोगु। तूं गुर प्रसादि करि राज जोगु॥* *पृष्ठ -211*

सो रसना द्वारा 'वाहिगुरू वाहिगुरू' करता जा, तुझे यही ठीक है। यदि तेरे शरीर में तन्दरूस्ती है, यदि गर्मी दौरा करे शरीर में, खुश्की करे शरीर में तो फिर तू श्वास के नाम पर आ जा। यह सन्त देखकर बता दिया करते हैं। सब पर यह लागू नहीं हुआ करता। तन्दरूस्ती शरीर में पूरी हो फिर इधर बढ़ो अन्यथा फिर इसमें गर्मी खुश्की बढ़कर आदमी झल्ला

(पागल) सा होना शुरू हो जाया करता है। यो यह महाराज जी ने उस समय बताया था क्योंकि उस समय सभी ब्रह्मचारी हुआ करते थे और बिमारियाँ जो फैली हैं ये तब नहीं थी, साहित्य (litrature) गन्दा नहीं आया था, किसी का मन नहीं डोला करता था, सभी टिक कर रहा करते थे। अब ये कलयुग के आदमी सभी हिल गये हैं। इसलिये अब तरीका और है। उस समय जो उन्होंने बताया वह मैं प्रार्थना करता हूँ ***'बाहर ते मन सुरत टिकावै। दहिने सुर ते प्रान चढावै। खैंचत दवादस मात्रा जोड़। ओअंकार जपै तब सोइ।'*** तब तक वाहिगुरू वाहिगुरू किये जा। यही उपदेश गुरू महाराज दसवें पातशाह ने माता जीतो जी को दिया था -

*जिते प्राण अंतर ठहिरावै। कुंभक तेतो नाम कहावै॥*

*पृष्ठ - 110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

जितनी देर तक प्राण रोकना है उसे कुम्भक कहते हैं। 24 मात्रा ओंकारा, 24 बार वाहिगुरू वाहिगुरू कहना है। यह सबसे अधिक है लेकिन जो योगी हैं वे 84 बार कहा करते हैं -

*जप करै तहिं समहि उचारा। बावें सुर सिउं करे उतारा॥*

*पृष्ठ - 110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

फिर बांई तरफ श्वांस ले आना। पहले बाएं से शुरू करें दायें पर उतार ले, फिर दाएं से खींचे बायें पर उतारो, फिर बायें से खीचो, दायें पर उतारो। इस प्रकार अदला-बदली करते रहना है। इसकी युक्ति हुआ करती है। आसान युक्ति भी हुआ करती है। जैसा जिसका स्वभाव हो प्रकृति हो, वैसा ही इसका lesson (पाठ) सीखना पड़ता है। पाँच प्यारों द्वारा हमने कहा हुआ है तुम lesson (पाठ) दे दिया करो एक बार। यदि तो शौक होगा तो चल पड़ेंगे, नहीं होगा तो उनकी मर्जी है। अमृतपान इसीलिये करवाते हैं कि भाई नाम मिला है तुम्हें, नाम की कमाई करो। सो कमाई करनी चाहिए दृढ़ता होनी चाहिए ***'बावें सुर सिउं करे उतारा। दवादस मात्रा जप ओअंकारा।'*** बारह बार ***'ओंकार'*** या ***'वाहिगुरू'*** का नाम जप कर श्वास छोड़ दे -

*रेचक यांको नाम कहीजै। सने सने जो छोडन कीजै॥*

*पृष्ठ - 110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

फिर धीरे धीरे छोड़े, ऐसे ज़ोर लगाकर नहीं -

*तैसे ही बांए ते दांए। दांए ते बांए सु चढाए॥*

*पृष्ठ - 110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

ऐसे करता रहे, नाम जपता रहे। इसके साथ सुरत टिक जायेगी, मन इधर उधर भागने से हट जायेगा। इससे और क्या होगा - अन्दर रस पैदा हो

जायेगा, रसना को रस आयेगा, झरनाहट आनी शुरू हो जायेगी फिर मन करेगा कि अब मुझे कोई बुलाए न, न ही कोई उठाये। मन क्योंकि टिक जाता है रस में आ जाता है। जब तक यह रस पैदा नहीं होता तब तक जबरदस्ती ही नाम जपता है, अन्दर सुरत नहीं टिकी। सो ऐसा करते करते जितनी मेहनत कर लेगा फिर नाम जो है श्वांस से ऊपर अपने आप ही निकल जाता है, श्वांस का ध्यान ही नहीं रहता। श्वांस अपने आप ही आता है अपने हिसाब से आता है कि नहीं आता, इसका भी कुछ पता नहीं होता। आता तो ज़रूर होगा क्योंकि शरीर चलता है लेकिन अपने आप ही आता है अपने हिसाब से। उस समय नाम धुन सुननी शुरू हो जाती है। नाम की अवस्थाएं हैं -

पहले तो ज़ोर ज़ोर से 'वाहिगुरू वाहिगुरू' कहे। इसे ***'ऊचा नाम'*** कहते हैं। दूसरा ***'अपासू नाम'*** होता है। अपासू नाम होता है होंठ हिलते रहना पर आवाज़ न आना; अपने आपको ही पता चलता है, जीभ हिलती है, होंठ हिलते हैं। इसका फल ऊँचा बोलने से हज़ार गुणा अधिक हुआ करता है। इसके बाद मानसिक नाम हुआ करता है। ***'मानसिक नाम'*** में अन्दर मनन हुआ करता है वाहिगुरू का और दूसरा ध्यान हुआ करता है वाहिगुरू का; दो बातें हुआ करती हैं जिन्हें ***'अजपा जापु'*** कहते हैं। जीभ के बिना जो होता है उसके बारे में इस प्रकार फ़रमान है -

***धारना - जप लै पिआरिआ, बिनां जीभ दे वाहिगुरू - 2, 3***

***बिनु जिहवा जो जपै हिआइ। कोई जाणै कैसा नाउ॥ पृष्ठ -1256***

फल कितना होता है - हज़ार गुणा बढ़ जाया करता है - रसना के नाम से। पहले बोलना - वैखरी नाम हुआ करता है, दूसरा अपासु नाम हुआ करता है - रसना के साथ जपना, तीसरा मानसिक नाम हुआ करता है - बिना जीभ के, जीभ हिलती नहीं है -

***बिनु जिहवा जो जपै हिआइ। कोई जाणै कैसा नाउ॥ पृष्ठ -1256***

***चलत बैसत सोवत जागत गुर मंत्र रिदै चितारि।***
***चरण सरण भजु संगि साधू भवसागर उतरहि पारि॥ पृष्ठ - 1006***

सो यह जो नाम है अभ्यास करने से यह आ जाया करता है। बाकी आम जो है.........कई प्रेमियों को ऐसा लगता है कि बात तो आपने सुना दी पता भी चल जाये न। सो साध संगत जी! कई बार यहाँ प्रार्थना की है; जिन्हें शौक हैं न, वे बात को जल्दी समझ जाते हैं और पकड़ लेते हैं जिन्हें शौक नहीं है ग्राहक ही नहीं है वे बात को नहीं समझते -

***राम पदारथु पाइकै कबीरा गांठि न खोल्ह।***

*नही पटणु नही पारखू नही गाहकु नही मोलु॥* *पृष्ठ - 1365*

चारों ही बातें नहीं हैं - न कोई मूल्य देने वाला है, न कोई ग्राहक है, न कोई दुकान है, न सौदा है -

*कबीर एकु अचंभउ देखिओ हीरा हाट बिकाइ।*
*बनजनहारे बाहरा कउडी बदलै जाइ॥* *पृष्ठ - 1372*

सन्तों की सेवा किये जाओ - 10-12 साल, तब कहीं जाकर जीभ के बिना नाम जपने की युक्ति बताते हैं। फिर वह चलता भी है ऐसे नहीं हुआ करता। फिर अन्दर नाम धुन पैदा हो जाती है। सो महाराज कहते हैं ऐसा करते करते -

*खुलै राहि त्रिकुटी इस ढारा॥* *पृष्ठ-110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

सुरत चढ़ जाती है आज्ञा चक्र में। यहाँ सहंसर दल कमल आ जाता है, यहाँ चित्त एकाग्र हो जाता है। ज्यों ज्यों चित्त एकाग्र होगा त्यों त्यों आन्तरिक शक्तियाँ भ्रमाने लग जायेंगी। तीन माया है जो आदमी को घेरती हैं - जिज्ञासु को। पहली तो बाहरी माया है इससे बच जाता है आदमी। दूसरी आन्तरिक माया है जिसे ***'मानसी माया'*** कहते हैं। बाहर वाली चेतन माया है और यह जड़ माया है। आन्तरिक 'मानसी माया' है। तीसरी जो है वह बहुत ही जबरदस्त माया है, वह है शक्तियों की माया, इससे कोई कोई बिरला पुरुष है जो पार हो जाता है - सारे नहीं पार हो सकते क्योंकि वह इतनी लुभावनी है दिल को मोह लेती है। आवाज़ें आती हैं कि तू मुझे अंगीकार कर ले, मैं तुझे 12000 मील दूर तक सब कुछ दिखा दूँगी। महाराज जी ने एक बार मुझे बताया। मैंने महाराज जी से प्रार्थना की, ''आपका जीवन कोई लिख रहा है, मुझे चिट्ठी आई है कि यदि आप जानते हो तो हमें बताइये।'' महाराज जी कहते हैं ''सन्तों के जीवन का किसी को पता नहीं होता क्योंकि यह गुप्त होता है सारा।'' मैंने थोड़ा सा ज़ोर देकर कहा, ''कृपा करो महाराज! यह संशय तो निवृत करो क्योंकि भेद की बात आपने की है।'' कहते हैं ''जब चित्त एकाग्र होता है - सहंसर दल कमल में, वहाँ शक्तियों का मण्डल है, वहाँ शक्तियाँ आती हैं; छोटा मोटा आदमी तो फिसल जाता है वह तो फिर -

*रिधि सिधि सभु मोहु है नामु न वसै मनि आइ।* *पृष्ठ - 593*

वह तो नाम से गया क्योंकि नाम तक पहुँचा ही नहीं, हउमै में पड़ गया-

*हउमै नावै नालि विरोधु है दोइ न वसहि इक ठाइ॥* *पृष्ठ - 560*

महाराज जी कहते हैं पहले आवाज़े आनी शुरू हुई। एक आवाज़ आई कि मैं सारी धरती (earth planet) पर जो कुछ हो रहा है सभी कुछ दिखा दूँगी, मुझे आप अंगीकार कर लो, मेरा नाम दूर दर्शक सिद्धी है। दूसरी आई

कि मैं सभी की गुप्त बात बता दिया करूँगी, दिल में कोई क्या सोचता है, किसने कौन सा गुप्त काम किया है और मेरा नाम अन्तर्तात्मा सिद्धि है मुझे अंगीकार कर लो। फिर कहते हैं आवाज़ आई कि बड़े से बड़े राजा पुरुष को, बड़े से बड़े जो पुरुष हैं, उन्हें तुम्हारे चरणों में हाज़िर करूँ, मेरा नाम प्रेरणा शक्ति है। कहते हैं इसी तरह एक और आई कि मैं तुझे एक क्षण भर में सूरज मण्डल से भी ऊपर सारे मण्डल दिखा दूँगी– जितना कुछ गुप्त हो रहा है; मुझे अंगीकार करो। एक और आई कि शरीर जितना चाहे भारी कर लो, चाहे जितना मरज़ी सूक्ष्म कर लो। महाराज जी कहते हैं हमें इतना वैराग था, हमने आँख उठाकर भी न देखा। कहते हैं इसके बाद आन्तरिक नेत्रों के सामने आनी शुरू हो गई – शक्लों के रूप में, बहुत beautiful (सुन्दर) शक्ल है स्त्री रूप में सिद्धियों की। कहते हैं वहाँ मोहित हो जाता है आदमी। हमें क्योंकि वैराग बहुत जबरदस्त था, हमने आँख उठाकर भी उन्हें न देखा। सो यह रिद्धियों सिद्धियों का मण्डल महात्मा की संगत के बिना पार नहीं हुआ करता; वहाँ फिसल जाता है आदमी। इसके बाद त्रिकुटी आ जाती है। त्रिकुटी में तीन चीज़ें हुआ करती हैं – धिआता, धिआन, ध्येय। ये जब एक रूप हो जाते हैं फिर त्रिकुटी पार कर जाते हैं। महाराज फ़रमान करके बताते हैं कि ऐसा करने से –

***खुलै राहि त्रिकुटी इस ढारा। ठहिरहिं प्राण जि दसवें द्वारा॥***
***पृष्ठ – 110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

फिर दशम द्वार में प्राण ठहर जाया करते हैं लेकिन आज के महात्मा प्राणों की बात नहीं करते। आज के सन्त सुरत की बात करते हैं क्योंकि –

***सुरति सबदि भवसागरु तरीऐ......................। पृष्ठ – 938***

सुरत को शबद के साथ लगाना है, प्राणों को नहीं; प्राणों का तो थोड़ा सा सहारा लेकर अन्दर चढ़ना है। सो वहाँ फिर –

***तबै अनाहद की धुन खुल है॥ पृष्ठ – 110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

वहाँ अनहद की धुन खुलती है –

***नउ दरवाजे काइआ कोटु है दसवै गुपतु रखीजै।***
***बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै।***
***अनहद वाजे धुनि वजदे गुर सबदि सुणीजै॥ पृष्ठ – 954***

वहाँ गुरू का शबद सुनाई देता है –

***धारना – वाहिगुरू वाहिगुरू सुणदै, घट विच तेरे, घट विच तेरे।***
***सतिनाम सतिनाम सुणदै घट विच तेरे, घट विच तेरे – 3***

***नउ दरवाजे काइआ कोटु है दसवै गुपतु रखीजै।***

*बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै।*
*अनहद वाजे धुनि वजदे गुर सबदि सुणीजै।*
*तितु घट अंतरि चानणा करि भगति मिलीजै।*
*सभ महि एकु वरतदा जिनि आपे रचन रचाई।*
*वाहु वाहु सचे पातिसाह तू सची नाइ॥* *पृष्ठ - 954*

यहाँ शब्द सुनता है, हर समय नाम धुन सुनती है और इसे मानसिक नाम कहते हैं - मानसिक जपा हुआ। इसका फल बढ़ता ही चला जाता है, हज़ारों हज़ारों की संख्या में बढ़ता है। पहला रसना का नाम है, फिर कंठ का नाम है, हृदय का नाम है, फिर नाभि का नाम है। हृदय में जब जाता है यह मानसिक नाम बन जाया करता है और अन्दर धुन सुननी शुरू हो जाया करती है। जब धुन सुनती है फिर ध्यान की बारी आ जाया करती है।

चार प्रकार का ध्यान होता है। उसके बारे में एक बार गुरू पाँचवें पातशाह के पास गुरसिख आये। उन्होंने प्रार्थना की कि सच्चे पातशाह! क्योंकि हम इस योग के भाग में श्रवण करते हैं कि ध्यान ज़रूरी चीज़ हुआ करता है और आप कृपा करके यह बताओ कि ध्यान किसका धरना चाहिये। सो महाराज कहने लगे तुम किसका ध्यान करते हो? कहने लगे ''महाराज हमें पता ही नहीं; कोई चर्तुमुखी भगवान का ध्यान करता है, कोई किसी का कोई किसी की।'' महाराज कहते हैं देखो गुरू और परमेश्वर एक ही हुआ करता है और गुरू का जो ध्यान है वह सबसे श्रेष्ठ हुआ करता है-

*धारना - धरिए मन विच धिआन गुरां दी मूरत दा - 2, 3*

*गुर की मूरति मन महि धिआनु।*
*गुर कै सबदि मंत्र मनु मान॥* *पृष्ठ - 864*

सो गुरू जो होता है उस पर निश्चय रखना कि यह वाहिगुरू स्वंय ही है। जब तक हम यह निश्चय नहीं करते तब तक गुरू से हमें कोई लाभ नहीं हुआ करता। जिन्होंने यह निश्चय मन में रख लिया कि गुरू और गोबिन्द दोनों एक हैं, वे पहुँचे हैं। जिनके मन में इससे कम निश्चय है वह रह गये।

एक बार गुरू अंगद देव जी महाराज संगत में बैठे हैं और आपने भाई बाला जी से पूछा, कहते हैं ''भाई बाला! आप गुरू नानक पातशाह जी के साथ नौ खण्डों, सातो दीपों, जहाँ जहाँ भी उन्होंने कौतुक किये, सभी देखे। आप गुरू नानक पातशाह को क्या समझते रहे?'' कहने लगा ''महाराज! गुरू नानक पातशाह तो पूरे सन्त थे।'' महाराज कहते हैं ''अच्छा भाई, तू सन्त हुआ।'' बाबा बूढ्ढा जी को पूछा, ''बाबा जी! आप क्या समझते रहे?''

कहने लगे, "महाराज! गुरू नानक पातशाह पूर्ण ब्रह्मज्ञानी थे।" वह बोले, "अच्छा बाबा जी! आप ब्रह्मज्ञानी हुए।" सभी को पूछा। चार प्रकार का निश्चय हुआ करता है गुरू पर - पहला तो यह हुआ करता है कि मेरा गुरू बहुत अच्छा सन्त है, दूसरा हुआ करता है कि मेरा गुरू सारे सन्तों से बड़ा सन्त है, तीसरा हुआ करता है मेरा गुरू वाहिगुरू जैसा ही है, चौथा निश्चय हुआ करता है कि मेरा गुरू तो स्वंय परमेश्वर है।

फिर सभी ने मिलकर पूछा "पातशाह! आप गुरू नानक पातशाह को क्या समझते रहे?" उस समय महाराज जी के नेत्र बन्द हो गये, भाव में आ गये, पुतलियों के पास से दोनों नेत्रों में से एक एक आँसू नीचे गिरा; थोड़ी देर बाद आप बोले, कहते हैं "प्यारे! करोड़ों ब्रह्मण्डों का मालिक स्वंय ही परमेश्वर गुरू नानक का स्वरूप धारण करके संसार का उद्धार करने आये थे। और हम उन्हें पारब्रह्म परमेश्वर समझते थे।" सो सभी कहने लगे "पातशाह! इसलिये आप भी पारब्रह्म परमेश्वर के दर्जे को प्राप्त हो गये।" सो जैसा निश्चय हो, वैसा ही होता है।

सो यह ध्यान जो है यह त्रिकुटी में रखा जाता है। जब त्रिकुटी खुलती है ***'खुलै राहि त्रिकुटी इस ढारा। ठहिरहिं प्राण जि दसवें दवारा। तबै अनाहद की धुन खुल है। दरसन परम जोत को मिल है।'*** वहाँ ज्योति का प्रकाश होता है -

***झिलमिल कार महान प्रकासा। जहिं पिख हवै विशेश सुख रासा।***

***जिउं जिउं धरही धयान को तिउं तिउं धुन वध जाइ॥***
***पृष्ठ - 110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

जैसे जैसे ध्यान धारण करता जाता है वैसे वैसे ध्यान बढ़ता जाता है, वैसे वैसे ही नाम धन बढ़ता जाता है।

इसके बाद पाँचवा जो अंग है वह है 'प्रतिहार'। प्रतिहार होता है- बार बार मन को रोकना, बार बार मन को रोकना, मन भागता है फिर रोकना -

***पंचम अंग सु जोग को प्रतयाहारहि पाइ।***
***अंग इसी के जुगल विचारो॥ पृष्ठ-110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

इसके दो विचार हैं -

***प्रथमहु गिआन रिखीक सुधारो॥ पृष्ठ-110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

ये ज्ञानेन्द्रियाँ हैं - आँख, कान, नाक। इनका सुधार करना, बाह्‌मुख से अन्र्तमुख लाना इन्हें -

***वाहिर मुख ते अंतर लिआवन। निजा नंद महु करहि टिकावन॥***

*पृष्ठ - 110 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

निज आनन्द भजन का जो आनन्द है बाहर से मन को घेर कर इसके अन्दर टिकाओ -

*दुतिओ अंग सुनहु चित लाइ। असन सु रज तम जुगल तजाइ॥*

*पृष्ठ - 110 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

उसके साथ रजोगुण छोड़ दो, साथ ही तमोगुण छोड़ दो -

*सतो गुणी लहि अलप अहारं॥ पृष्ठ -110 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

थोड़ा आहार लेकर सतोगुणी रहना -

*प्रातिआहार सु नीक बिचारं॥ पृष्ठ - 109 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

इससे प्रतिहार का जो भाग है पूरा हो जाता है। बार बार मन को बाणी के सहारे रोक रोक कर अन्दर लाना।

इसके बाद अगला छठा अंग होता है ***धारना***। धारना होता है संकल्प उठे तो रोक देना, फिर संकल्प उठे फिर रोक देना। मन से झगड़ते रहना-

*मन ही नालि झगड़ा मन ही नालि सथ मन ही मंझि समाइ॥*

*पृष्ठ - 83*

इसकी देखभाल रखना कि संकल्प उठने नहीं देना -

*तिह ते पुन पुन करै हटावन। जोरै धिआन बिखै मन पावन॥*

*पृष्ठ - 110 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

फिर कहते हैं ध्यान में मन लगाओ -

*सपतम अंग जोग का धयान। द्वै प्रकार का लखहु सुजान।*

*पृष्ठ - 110 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

दो प्रकार का ध्यान होता है -

*गुर मूरत का धरै जु धयाना। सो बाहरि मुख धिआन बखाना॥*

*पृष्ठ - 110 ( श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ )*

लेकिन महापुरुष तीन प्रकार का बताया करते हैं - पहला ध्यान हुआ करता है जिसे 'प्रतीक ध्यान' कहते हैं। ***'प्रतीक ध्यान'*** का अर्थ है किसी पवित्र हस्ती पर भावना बिठा लेना कि वह परमेश्वर है और उसका ध्यान करना। जब अजामल को उपदेश दिया महात्मा ने तो यह कहा कि अजामल तू अपने पुत्र पर नारायण भावना रखना हम नाम भी नारायण रख देते हैं। भावना बनती नहीं थी, पुत्र समझता था। कोशिश करता था कि मेरी भावना बन जाये। भावना बनना कोई आसान काम नहीं हुआ करता, बहुत कठिन है भावना बनना लेकिन जब अन्त समय आ गया -

*अंतकाल जमदूत वेखि पुत नाराइणु बोलै छहिआ।*

*भाई गुरदास जी, वार 10/20*

*अजामलि प्रीति पुत्र प्रति कीनी करि नाराइण बोलारे॥ पृष्ठ-981*

नारायण को आवाज़ लगाई और भावना क्योंकि नारायण में लगी हुई थी इसलिये नारायण कहकर आवाज़ लगाई -

*मेरे ठाकुर कै मनि भाइ भावनी जम कंकर मारि बिदारे॥*

*पृष्ठ - 981*

इसे प्रतीक ध्यान कहते हैं कि महापुरुष, गुरू पर यह भावना रखना कि यह परमेश्वर है। दूसरा हुआ करता है सम्पत ध्यान। यह होता है गुरू को परमेश्वर का स्वरूप समझना कि यह तो स्वंय ही परमेश्वर है। बाणी भी ऐसा फ़रमान करती है -

*धारना - गुर गोबिंद, गोबिंद गुरू है, नानक भेद न भाई - 2, 2*
*नानक भेद न भाई, नानक भेद न भाई - 2, 2*
*गुर गोबिंद, गोबिंद गुरू है.....................।*

*समुंदु विरोलि सरीरु हम देखिआ इक वसतु अनूप दिखाई।*
*गुर गोविंदु गुोविंदु गुरू है नानक भेदु न भाई॥ पृष्ठ - 442*

सो गुरू और गोबिन्द को एक ही समझना यह सम्पत ध्यान कहलाता है। तीसरा हुआ करता है ***'अहंग्रह ध्यान'***। अहंग्रह ध्यान में ध्यान का अन्तर है। पहले साकार का ध्यान हुआ करता है। कई प्रेमी यहाँ तर्क करते हैं कि साकार का ध्यान तो बुत्त परस्ती (मूृत पूजा) हो गई। बुत्त तो हम पूजते हैं - हमारा शरीर भी बुत्त है, कोठियां भी बुत्त है, पैसा टका भी बुत्त है, पुत्र भी बुत्त है, स्त्री भी बुत्त है। सभी में से श्रेष्ठ यदि कोई बुत्त है वह गुरू का वजूद है और गुरू को जब हम ध्यान में लाते हैं तो परम पवित्र वजूद हमारे अन्दर आकर निवास कर लेता है। सो यह पहला ध्यान हुआ करता है -

*गुर मूरत का धरै जु धयाना। सो बाहरि मुख धिआन बखाना॥*

*पृष्ठ - 110 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

यह बृहमुख ध्यान होता है इसके बाद अर्न्तमुख ध्यान होता है -

*गुर मूरति गुर सबदु है साधसंगति विचि परगटी आइआ॥*

*भाई गुरदास जी, वार 24/25*

गुरू के शब्द की धुन का ध्यान धरना -

*धुनि महि धिआनु धिआन महि जानिआ गुरमुखि अकथ कहानी॥*

*पृष्ठ - 879*

सो फिर जब शब्द का ध्यान करते हैं यह ***'अहंग्रह ध्यान'*** हुआ करता है इसके पिछली ओर वाहिगुरू की पूरी शक्ति होती है। जब हम वाहिगुरू कहते हैं अक्षरों के पीछे देखो, कौन है जिसे हम कह रहे हैं। जब वह हमारे निश्चय में आ जाये फिर क्या होता है वह ध्यान अहंग्रह ध्यान होता है। तीन फूल उसकी भेंट करने होते हैं - पहला फूल होता है ***'बोध-ज्ञान;'*** दूसरा हुआ करता है ***'सम'*** कि सभी में वहीं बसा है, तीसरा होता है ***'सम नाम'*** कि वह सभी जगह परिपूर्ण है, दूसरा और कोई नहीं है; श्रद्धा के साथ प्यार के साथ उसकी पूजा करना। सो तीन फूलों के साथ पूजा हुआ करती है निगुर्ण की। निगुर्ण का ध्यान नहीं हुआ करता, निगुर्ण का ज्ञान हुआ करता है चौथा ज्ञान। सो इस प्रकार जब हम शब्द का ध्यान करते हैं शब्द हमारे अन्दर रम जाता है -

***गुरू के चरन रिदै लै धारउ। गुरु पारब्रहमु सदा नमसकारउ।***
***मत को भरमि भूलै संसारि। गुर बिनु कोइ न उतरसि पारि॥***

***पृष्ठ - 864***

सो गुरू का ध्यान करते करते अवस्था कैसी हो जायेगी - ध्याता, धिआन और ध्येय तीनों की त्रिकुटी खत्म हो जायेगी गायब हो जायेगी। इसके बाद विवेक मण्डल में वृति अपने आप प्रवेश कर जायेगी। सो यह ज्ञान का मण्डल खुल जाया करता है - दशम द्वार का मण्डल। सो वहाँ शब्द का ध्यान होता है, धुन बजती है हर एक के अन्दर -

***नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु। देही महि इस का बिस्रामु।***
***सुंन समाधि अनहत तह नाद। कहनु न जाई अचरज बिसमाद॥***

***पृष्ठ - 293***

***धुनि महि धिआनु धिआन महि जानिआ गुरमुखि अकथ कहानी॥***

***पृष्ठ - 879***

जब ऐसी अवस्था हो जाया करती है फिर समाधि लग जाया करती है -

***जबै अनाहद धुन खुल जावै। किधो जोत को धिआन लगावै॥***

***पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

कितने प्रकार की ज्योतियां हैं बेअन्त प्रकार की ज्योतियां महाराज बताते हैं -

***इहु अंत्रक मन महु पहिचानहु. असटम अंग समाध बखानहु॥***

***पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

साँतवा ध्यान आ गया। आँठवा फिर समाधि लग गई -

***जब मन ठहिरहि होइ अडोला। तिह को नाम समाध अमोला।***
***सो समाधि है उभै प्रकारी। निर विकलप साकलप उचारी॥***

***पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

दो किस्म की समाधि होती है - एक का नाम है ***'नि्विकल्प'*** और एक का नाम है ***'साविकल्प'***। साविकल्प में अपना ज्ञान रहता है। नि्विकल्प समाधि में त्रिकुटी 'ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय' भी टूट कर नि्विकल्प समाधि होकर इससे भी ऊपर चला जाता है उसे ***'सहज समाधि'*** कहते हैं -

***सो सा विकलप कहित हैं जोगी पुरख सुजान।***
***आप भिंन नहि भिंन धिआना। येह सभ ब्रहम रूप कर जाना॥***

*पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

न आप रहा, न ध्यान रहा; परमात्मा का ही रूप बन गया। अब वहाँ सुनता क्या है, जितना भी सुनता है सारा ही नाम सुनता है, जितना भी देखता है - सारा ही ज्ञान। ब्रह्म दृष्टि हो जाया करती है। इस प्रकार फ़रमान है-

***धारना - नाम हरी दा जपदे, सारे वणां दे पंखेरू -2, 2***
***वणां दे पंखेरू, सारे वणां दे पंखेरू - 2, 2***
***नाम हरी दा..................।***

***जो बोलत है म्रिग मीन पंखेरू सु बिनु हरि जापत है नही होर॥***

*पृष्ठ - 1265*

इतना ध्यान परिपक्व हो जाता है कि नाम की धुन ही सुनाई देती है। सो यह नि्विकल्प समाधि जब लग जाती है अपना आप लीन हो जाता है वाहिगुरू में।

सो महाराज कहने लगे ''राजन! राजा शिवनाभ! ये आठ अंग तुझे योग के बताए हैं; इसे कष्ट योग कहते हैं। इसका यदि कोई पालन करता है, इसमें परिणाम निकलते हैं, आन्तरिक खेंले नज़र आती हैं, रोशनी आती है, अनहद शब्द आता है। दूसरा जो है वह इससे भी आसान है। उसे गृहस्थी भी कर सकते हैं, कारोबार करने वाले भी कर सकते हैं, व्यापारी नौकरी करने वाले सभी कर सकते हैं उसका नाम भक्ति योग है।'' महाराज! वह भक्ति योग भी बताओ। सो महाराज ने फिर भक्ति योग पर प्रकाश डाला।

अब क्योंकि समय इज़ाजत नहीं देता, यहीं पर ही समय समाप्त है। अगली बार इस पर विचार की जायेगी। यह कष्ट योग की बात की है प्रार्थना की है और भक्ति योग की महाराज जी ने करवाई फिर अगले प्रोग्राम में करेंगे। अब सारे प्रेमी गुरू सतोतर में बोलो।

- आनन्द साहिब -

- गुरू सतोतर -

– अरदास –

# १ओंकार सतिगुर परसादि

*शान.............................................................................................................।*

*सतिनामु श्री वाहिगुरू, धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज।*

*डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।*
*डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ पृष्ठ - 256*

*फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।*
*नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ पृष्ठ -289*

*जैसा बालकु भाइ सुभाई लख अपराध कमावै।*
*करि उपदेसु झिड़के बहु भाती बहुड़ि पिता गलि लावै।*
*पिछले अउगुण बखसि लए प्रभु आगै मारगि पावै॥ पृष्ठ -624*

*धारना - प्यारे जब ते दरशन पाइआ, संसा उतर गइआ - 2, 2*
*संसा उतर गइआ, संसा उतर गइआ - 2, 2*
*पिआरे जब ते दरशन पाइआ, संसा............*

*ठाकुर तुम सरणाई आइआ।*
*उतर गइओ मेरे मन का संसा जब ते दरसनु पाइआ॥ १॥ रहाउ॥*
*अनबोलत मेरी बिरथा जानी अपना नामु जपाइआ।*
*दुख नाठे सुख सहिज समाए अनद अनद गुण गाइआ।*
*बाह पकरि कढि लीने अपुने ग्रिह अंध कूप ते माइआ।*
*कहु नानक गुरि बंधन काटे बिछुरत आनि मिलाइआ॥ पृष्ठ -1218*

*धारना - जिहड़ी देही नूं लोचदे देवते, जिहड़ी देही नूँ*
*जिहड़ी देही नूँ लोचदे देवते*
*उह देही मिल गई ऐ पिआरिआ, पिआरिआ*
*उह देही मिल गई ऐ, जिहड़ी देही नूं - 2*
*जिहड़ी देही नूं लोचदे देवते, जिहड़ी देही नूं - 2*

*गुर सेवा ते भगति कमाई। तब इह मानस देही पाई।*
*इस देही कउ सिमरहि देव। सो देही भजु हरि की सेव॥*
*पृष्ठ -1159*

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलो 'सतनाम श्री वाहिगुरू'। दूर दराज से आप इस पवित्र स्थान पर सत्संग का लाभ उठाने के लिए, यात्रा करने के लिये ट्रकों, ट्रालियों, बसों, पैदल तथा अन्य सवारियों स्कूटरों, साइकलों आदि द्वारा पहुँचे हो। जितने कदम कोई चलकर आया है हर कदम का फल एक यज्ञ के बराबर हुआ करता है। जो प्रेमी संगत को लेकर आते हैं, आधा फल उन्हें भी प्राप्त होता है। यहाँ पर आकर जो मन चित्त लगाकर

गुरू की बाणी कानों द्वारा श्रवण करते हैं बुद्धि से विचार करते हैं और अपनी बारी पर गर्ज़ गर्ज़ कर बोलते हैं महाराज कहते हैं -

*कई कोटिक जग फला सुणि गावणहारे राम॥* *पृष्ठ - 546*

कई करोड़ों यज्ञों का फल उन्हें प्राप्त होता है जो सुनते हैं फिर गाते हैं। सो चित्त को एकाग्र करके मन को इधर उधर नहीं भटकने देना, नेत्रों के साथ गुरू स्वरूप के दर्शन करो, कानों से बाणी श्रवण करो, बुद्धि से विचार करो और हृदय में धारण करो फिर क्या लाभ होगा? हमने जो पाप किये हुए हैं - जन्म जन्मातरों से, वे सभी कट जायेंगे जायेंगे क्योंकि नाम में बहुत बड़ी शक्ति है -

*रे मन राम सिउ करि प्रीति।*
*स्रवन गोबिंद गुनु सुनउ अरु गाउ रसना गीति।*
*करि साध संगति सिमरु माधो होहि पतित पुनीत॥* *पृष्ठ - 631*

अर्थात पानी से पवित्र बन जायेगा। सो मनुष्य देही प्राप्त हुई है साध संगत जी! यह बहुत बड़ी उपलब्धि है पर क्यों मिली है? महाराज कहते हैं प्यारे! ऐसे ही इसे मत गँवा, वह तो गुरू की सेवा तथा नाम जपने के लिये मिली है। यह देही अति दुर्लभ है, इसे 'नर-नारायणी देह' कहते हैं। इसका मूल्य तो वे जानते हैं जिन्हें यह प्राप्त नहीं हुई। ऐसी देही प्राप्त करके यदि शराब ही पीनी है, कबाब मांस ही खाना है, निन्दा चुगली करनी है फिर तो बहुत नुकसान दायक सौदा हो गया। आया तो नाम जपने के लिये था पर नाम जपने के लिये यह जो देही प्राप्त हुई है इस देही को प्राप्त करने के लिये स्वर्ग में बैठे देवता लोग भी तरसते हैं और इस देही को धन्य कहते हैं नर-नारायणी देही कहते हैं, वैष्णव देही कहते हैं।

एक बार की बात है गुरू दसवें पातशाह बैठे हैं काफी सारी संगत बैठी है, प्रवचन हो रहे हैं। माता जीतो जी के बारे में वचन चल पड़े कि देखो महाराज! कितनी भजन बन्दगी किया करती थीं शरीर त्याग दिया अपने आप। गुरू महाराज कहते हैं भाई! यह कलयुग की महिमा है। कलयुग के अन्दर नाम का इतना प्रताप है कि बीबियां (स्त्रियाँ) भी पार निकल सकती हैं। प्राचीन काल में इन्हें बहुत सारे कर्म करने की अनुमति नहीं हुआ करती थी। ओंकार का नाम ये रसना पर नहीं ला सकती थीं, पाप लग जाया करता था पर कलयुग में प्रताप इतना बढ़ गया कि चाहे पुरुष हो, चाहे स्त्री, सभी पार उतर सकते हैं। महाराज कहते हैं एक बार एक बधिक (शिकारी) ने बहुत सारा शिकार मार डाला। अनेक जानवर मार डाले उसने उड़ने वाले भी मार दिये, भागने वाले भी मार डाले हिरन

आदि। उसके मन में ग्लानि आ गई। सोचता है कि मेरे जैसा पापी तो संसार में कोई होना ही नहीं। इतने जीव मैंने हंसते, खेलते-कूदते हुए मार दिये। मेरा क्या हाल होगा? साधुओं से मैंने सुना है कि दरगाह में लेखे देने पड़ते हैं। यह भी सुना है कि यदि जीव जन्तु मारेगा तो यह सभी तेरा मांस खायेंगे। वैराग हो गया मन में, साथ ही यह भी सोचा कि अब मैं अपने आपको सजा दूँ।

राजा विक्रमाजीत का उस समय हुक्म था - शिकार न करने का। वह उनके हुक्म की उल्लंघना करता था। पता चला कि राजा विक्रमाजीत आ रहे हैं। वह सामने आ गया शिकार सहित। राजा ने हुक्म दिया कि शिकारी को पकड़ो और इसे सजा दे दो। हुक्म की पालना हुई। पकड़कर कैदखाने में डाल दिया और साथ साथ प्रतिदिन इसे पीटना, मारना शुरू कर दिया। उस समय के कानून की जो सज़ा होती थी, वह उसे पूरी दी गई। वह चिल्लाता था कि वहाँ एक स्त्री जो महलों में नौकरी किया करती थी, उसके मन में दया आई कि देखो नर देह है, कितना कष्ट उठा रही है। हमारी स्त्री देही है यदि मेरी यह देही काम आ जाये - किसी परोपकार के लिये तो कितना अच्छा हो। उसने आदमियों का भेष धारण करके पहरेदारों के साथ मिलकर उस शिकारी को छुड़वा दिया और आप जेल में कैद हो गई।

काफी दिन बीत गये, कोई महीने, डेढ़ महीने के बाद राजा विक्रमाजीत ने कहा कि वह कैदी पेश नहीं हुआ, पेश करो। वह स्त्री जो पुरुष वेश में थी जब पेश हुई तो राजा कहने लगा, ''तूने इतने जानवर मारे हैं।'' वह कहती ''ठीक है मैंने पाप किया है।'' उसने नहीं बताया कि मैं स्त्री हूँ। वैसे ही करती रही जैसे शिकारी किया करता था। उसने कहा ''पर तेरे राज्य में एक बहुत बड़ा दोष है।'' विक्रामाजीत कहने लगा ''क्या दोष है?'' वह कहती है ''दोष यह है कि यहाँ बेकसूरों को सजा मिलती है?'' राजा कहता है ''ऐसी बात तो है नहीं, मेरे राज्य में तो पूरा इन्साफ होता है।'' वह कहने लगी ''मैंने जेल में रहते हुए तेरा नमक खाया है, मैं पुरुष से स्त्री बन गई, मुझे विष्णु देही वापिस कर दे।'' न्यायकारी राजा हुआ करते थे। वह हैरान हो गया इसकी बात सच मान ली, कहने लगा ''अच्छा! जब तक तेरी देही मनुष्य की नहीं होती, मैं भी तब तक तख्त पर नहीं बैठूंगा।''

राजा जंगल में चला गया। इधर जो शिकारी था उसके दिल में चोट

लगी, कहता है ''मैं कितना बुरा हूँ लेकिन मेरे लिये भी कोई स्त्री मनुष्य का चोला पहन कर, मुझे छुड़ाने के लिये अपनी जान देने के लिये जेल में कैद हो गई। अब मुझे चाहिए कि मैं भजन बन्दगी करूं। अच्छे महात्मा के पास जाकर नाम की प्राप्ति की।

बुरा आदमी यदि अच्छे रास्ते पर चल पड़े तो फैसला पक्का कर लेता है। जो दोगला होता है वह कोई निर्णय नहीं कर पाता। यदि बुरा आदमी यह फैसला कर ले कि मैंने यह काम नहीं करना तो फिर वह पार उतर जाता है। वालमीकि ने फैसला कर लिया नाम जपने का, पाप छोड़ने का- पार उतर गया। गनका ने फैसला कर लिया पार उतर गई, बीच में न लटकी रही। सो शिकारी ने फैसला कर लिया कि मैंने प्रभु की भक्ति करनी है। बहुत घोर तप करना शुरू कर दिया। राजा विक्रमाजीत घूमता फिरता वहीं चला गया। जब तप देखा उसका, इसने बताया कि मैं विक्रमाजीत हूँ। उसने परवाह नहीं की कि मुझे क्या ज़रूरत है! सन्तों को क्या ज़रूरत होती है किसी की। लापरवाही देखकर इसके मन में बहुत शौक पैदा हुआ कि यह तो बहुत अच्छा साधु है। क्यों न मैं इसे अपना गुरू बना लूँ? यह भी तप करने लग गया, दूर कहीं जाकर। जब विक्रमाजीत ने यह बात कही कि देखो यह जीव जो मनुष्य था मैंने जेल में डाल दिया था वह औरत बन गई। अब मैं अपने आपको सजा देता हूँ कि जब तक मैं इसे पुनः मनुष्य नहीं बना लेता, यह मेरे तख्त पर बैठकर राज्य करेगी और मैं तप करूंगा। सो वह स्त्री राज तख्त पर बैठ गई और तख्त पर बैठते ही हुक्म दे दिया कि विष्णु पदवी का कोई साधु हो उसे पकड़ कर पेश करो। हुक्म का पालन करने के लिये सारे हिन्दुस्तान में फौज मारी मारी फिरती है पर कहीं कोई न मिला। अन्त में एक महात्मा मिले और सारी बात उन्हें बता दी। महात्मा कहने लगे कोई बात नहीं, उस औरत को मनुष्य का चोला मिल जायेगा। जाओ तुम सभ वापिस चले जाओ। सो सन्तों का वचन हो गया। उसे मनुष्य देही प्राप्त हो गई -

***नारी ते जो पुरखु करावै पुरखन ते जो नारी।***
***कहु कबीर साधू को प्रीतमु तिसु मूरति बलिहारी॥ पृष्ठ - 1252***

परमेश्वर नारियों को पुरुष बना सकता है, मनुष्यों को नारियां बना देता है। उस समय वह वापिस आ गया तो उस स्त्री ने फौज को कहा कि मुझे मनुष्य का जामा मिल गया है अब विक्रमाजीत को ढूँढ कर लाओ। विक्रमाजीत को जब ढूँढ कर लाया गया तो उसने कहा कि मेरे गुरू को लाओ। तो वे उस शिकारी को भी ले आये। विक्रमाजीत ने उसे गुरू बनाकर पूजा करनी शुरू कर दी। उसे अपना मन्त्री बना लिया और स्वंय

तख्त पर बैठ गया।

महाराज कहते हैं देखो! उस स्त्री ने कुर्बानी की, मन में दया आई और शिकारी ने नाम जपा, विक्रमाजीत ने भी नाम जपा। कितनी उच्च पदवी हो गई कि उस स्त्री को भी मनुष्य देही प्राप्त हो गई। सो यह मनुष्य देही विष्णु देही है। अब कलयुग में नारियों की देही भी नाम बल के कारण पवित्र देही बन गई है यह पतित देही नहीं रही। सो मनुष्य देही चाहे स्त्री की है चाहे पुरुष की है दोनों पवित्र हैं। यह मिली है तुझे -

***गुर सेवा ते भगति कमाई। तब इह मानस देही पाई।***
***इस देही कउ सिमरहि देव। सो देही भजु हरि की सेव।***
***भजहु गोबिंद भूलि मत जाहु। मानस जनम का एही लाहु॥***
***पृष्ठ -1159***

महाराज कहते हैं वाहिगुरू का नाम लो, देखना कहीं भूल मत जाना। यही असली लाभ है क्योंकि और कोई ऐसा तुझे जन्म प्राप्त नहीं होगा जिसमें तू वाहिगुरू को मिल सके। यही शरीर है जिसमें तू परमेश्वर से मिल सकता है -

***धारना - इहो तेरी वारी ऐ, गोबिंद मिलणे दी - 2, 2***
***गोबिंद मिलणे दी, इहो तेरी वारी ऐ - 2, 2***
***इहो तेरी वारी ऐ.............।***

***भई परापति मानुख देहुरीआ।***
***गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।***
***अवरि काज तेरै कितै न काम॥ पृष्ठ - 12***

महाराज कहते हैं कि बाकी जितने काम तू करता है प्यारे! ये किसी काम के नहीं हैं -

***मिलु साध संगति भजु केवल नाम।***
***सरंजामि लागु भवजल तरन कै।***
***जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै। पृष्ठ - 12***

माया के प्यार में पड़कर तेरा जन्म व्यर्थ जा रहा है। सो फ़रमान करते हैं कि ***'भजहु गोबिंद भूलि मत जाहु। मानस जनम का एही लाहु।'*** देखना भाई! भूल मत जाना। यही लाभ है; परमेश्वर का भजन कर लो।

***जब लगु जरा रोगु नही आइआ।***
***जब लगु कालि ग्रसी नही काइआ। पृष्ठ -1159***

जब तक बुढ़ापे का रोग नहीं लगता क्योंकि बुढ़ापा एक रोग हुआ करता है; नाम जपना है तो बचपन से ही जपना शुरू कर दे - किशोर

अवस्था से> यह बचपन में जपा हुआ नाम बहुत फलीभूत होता है क्योंकि इनमें राग द्वैष की बीमारी नहीं हुआ करती। जवानी में अन्धेरी आती है मनुष्य पर; गरीब से गरीब, बुरे से बुरा भी हिल जाया करता है और डगमगा कर नर्क में गिर जाता है। शराबी - कबाबी मांस - मछली, चोरी-चकारी, दंगे-फसाद - चार दिन की होती है जवानी। इन चार दिनों में यह गधे के बच्चे की तरह छलांगे लगाता है फिर बुढ़ापा रोग शुरू हो जाता है। बुढ़ापा खा जाता है जवानी को, नामों निशां भी नहीं रहने देता। याद करता है शीशे के सामने खड़ा होकर कि मैं कभी जवान होता था। पुरानी फोटो देखकर सोचता है कि मैं ऐसा सुन्दर हुआ करता था, क्या बन गया? सो महाराज कहते हैं इससे पहले पहले नाम जप ले ***'जब लगु जरा रोगु नही आइआ। जब लगु कालि ग्रसी नही काइआ।'*** बुढ़ापे में बीमारी लग जाती है आदमी को। कभी मेहदा (उदर) खराब हो जाता है, कभी जिगर (दिल) खराब हो जाता है, गुर्दा खराब हो गया, heart trouble (दिल की तकलीफ) हो गई, blood pressure (रक्त चाप) बढ़ गया, कोई और बीमारी अधरंग जैसी हो गई फिर कैसे नाम जपेगा; बहुत कठिन है, फिर नाम नहीं जपा जाता फिर तो हाय हाय ही होती है और बीमारी को ठीक करने के आहर (कोशिश) में लगा रहता है। सो नाम जपने का समय तो बचपन में ही हुआ करता है -

*रामु जपउ जीअ ऐसे ऐसे। ध्रू प्रहिलाद जपिओ हरि जैसे॥*

*पृष्ठ - 337*

अटल और अमर है ध्रुव और प्रहलाद! ध्रुव केवल पाँच वर्ष का था अमर हो गया। भगत नामदेव हैं, कबीर जी हैं, रविदास जी हैं, इन सभी ने छोटी उम्र से ही नाम जपा। जवानी में किसी बिरले को कोई ज्ञान हो जाये, यह बहुत अच्छी बात है पर बुढ़ापे में किसी को इसका ज्ञान हो जाये यह बहुत कठिन बात है। बुढ़ापे का ज्ञान नाम नहीं जपने देता, कुछ इसके ऊपर बिमारियों का ढेर जमा हुआ होता है, निन्दा, चुगली, ईर्ष्या नफरत, शंका, डर आशा, तृष्णा अन्देशा आदि डायनें अन्दर बैठी काटती रहती हैं; फिर नाम जपेगा या इनका मुकाबला करेगा? सो नाम जपने की बेला छोटी उम्र ही हुआ करती है। महाराज कहते हैं ***'जब लगु कालि ग्रसी नही काइआ।'*** जब तक कोई ऐसी बीमारी न लगे कि अब तो मैंने मर ही जाना है, उससे पहले पहले नाम जप ले -

*जब लगु बिकल भई नही बानी। भजि लेहि रे मन सारिगपानी॥*

*पृष्ठ - 1159*

अर्थात जब तक तोतली जुबान न हुई, जैसे पपीहा 'पिउ-पिउ' करता है, ऐसे ही कर ले तू भी 'वाहिगुरू वाहिगुरू' 'राम राम' 'अल्लाह अल्लाह।' कोई नाम ले ले क्योंकि फ़रमान है -

*बलिहारी जाउ जेते तेरे नाव है॥* *पृष्ठ - 1168*

जितने भी नाम हैं सभी परमेश्वर के नाम हैं। सभी ओंकार शब्द में से निकले हैं और इसी में ही समा जायेंगे। सारी सृष्टि का आकार ओंकार में से ही हुआ है, इसी शब्द में से उत्पत्ति हुई है, इसी में सभी ने समा जाना है। कोई नाम जप ले, जो भी तेरे से जपा जाता है पर ले ले किसी पूरे गुरू से -

*अब न भजसि भजसि कब भाई। आवै अंतु न भजिआ जाई॥*
*पृष्ठ - 1159*

फिर तो यमदूतों को देखकर डरेगा। फिर 'राम राम' कहेगा? फिर तो सगे सम्बन्धी ही पीछा नहीं छोड़ते। कहते हैं, कोई बात तो बता जा। उधर वे चढ़ाई करने लगते हैं, बोल नहीं निकलता, आँखों से ही बातें हो पाती हैं फिर तो कोई बात नहीं बनती -

*मन की मन ही माहि रही।*
*ना हरि भजे न तीरथ सेवे चोटी कालि गही॥* *पृष्ठ - 631*

*अब न भजसि भजसि कब भाई। आवै अंतु न भजिआ जाई।*
*जो किछु करहि सोई अब सारु। फिरि पछुताहु न पावहु पारु॥*
*पृष्ठ - 1159*

सो इस प्रकार यह मानस देही नाम जपने के लिये प्राप्त हुई है अब प्रश्न पैदा होता है कि नाम कैसे जपें? क्योंकि गुरू महाराज कहते हैं -

*राम राम सभु को कहै कहिऐ रामु न होइ।*
*गुर परसादी रामु मनि वसै तां फलु पावै कोइ॥* *पृष्ठ - 491*

गुरू की कृपा हो जाये, विधिपूर्वक जपा हुआ नाम मन में बस जाये, तब किसी को फल प्राप्त हुआ करता है। सो यह प्रश्न जब गुरू नानक साहिब संगलादीप गये वहाँ राजा शिवनाभ ने उनसे पूछा था ''सच्चे पातशाह! कौन कौन सी विधियाँ हैं नाम जपने की? आप कृपा करके बतायें।'' महाराज जी ने फरमाया कि राजन! दो विधियाँ हैं - एक को भक्ति योग कहते हैं और एक को कष्ट योग कहते हैं। तू बता कौन सा मार्ग अपनाना चाहता है?'' राजा कहता है ''महाराज! मुझे दोनों ही बता दो, जो आसान होगा वह मैं अपना लूँगा।'' महाराज कहते हैं, पहले हम तुझे कष्ट योग के बारे में बताते हैं। लो सुनो।

इसके अन्दर कुछ रहतें (नियमावली) होती है - दस यम होते हैं, दस नेम होते हैं। इसके आठ भाग होते हैं। ये सभी लगभग मिलाकर 26 होते हैं। ध्यान से यदि सुनेगा तेरी समझ में आ जायेगा। वह बहुत सावधान होकर सुनने लगा -

महाराज कहते हैं पहला यम **अहिंसा** होता है। न मन से, न शरीर से, न बुद्धि से, न वचन से, किसी का बुरा नहीं करना। दिल से कहना ***'नानक नाम चढ़दी कला तेरे भाणे सरबत दा भला।'*** बुरा बिगाना चितवीए अपना ही हो जाए।' अर्थात दूसरे का बुरा सोचने से अपना बुरा हो जाता है -

*पर का बुरा न राखहु चीत। तुम कउ दुखु नही भाई मीत॥*
*पृष्ठ - 386*

दुख नहीं आयेगा, बेगाने का बुरा मत सोचो।

दूसरा होता है **'सत्य'**। सत्य का जीवन होना चाहिये। दिखावे का, पाखंड का जीवन नहीं होना चाहिए।

तीसरा होता है **'चोरी न करना'**। कोई काम ऐसा मत कर जो चोरी का हो - न आँखों से चोरी कर, न कोई पाप कर। पाप करेगा तो डरता रहेगा, छिपा रहेगा कि यदि पता चल गया तो मेरे साथ कैसा व्यवहार होगा? उसकी चिन्ता तेरे मन में लगी रहेगी।

चौथा हुआ करता है **'ब्रह्मचर्य'**। जत-सत अपना कायम रखना।

पाँचवा हुआ करता है **'धीरज'**।

छठा हुआ करता है **'क्षमा'**।

साँतवा हुआ करता है **'दया'**।

आँठवा हुआ करता है **'कोमल चित्त'**

नौवां हुआ करता है **'अल्प आहार सुल्प सी निंद्रा'**।

दसवाँ हुआ करता है **'शुचि'** अर्थात मन की पवित्रता, शरीर की पवित्रता, वस्त्रों की पवित्रता, विचारों की पवित्रता, बुद्धि की पवित्रता, वचन की पवित्रता।

*भरीऐ मति पापां कै संगि। उहु धोपै नावै कै रंगि॥* *पृष्ठ - 4*

महाराज कहते हैं भाई! इन दस अंगों को **'यम'** कहते हैं और **'सम'** भी कहते हैं।

बाकियों को **'नेम'** कहते हैं। पहला है **'तप'** सेवा करना। तीन प्रकार का होता है तप - रजोगुणी, तमोगुणी और सतोगुणी। इन सबसे श्रेष्ठ गुरू की सेवा करना, सभी तपों का शिरोमणि तप है।

फिर दूसरा **'दान'** हुआ करता है। यह भी तीन प्रकार का हुआ करता है - तमोगुणी दान, रजोगुणी दान, सतोगुणी दान। खींझकर दिया गया दान, कुपात्र को दिया गया दान, कुसमय दिया गया दान, पाप करवाने लग जाता है। अपनी प्रशंसा के लिये, बड़प्पन के लिये, कार्य सिधि के लिये दिया गया दान रजोगुणी होता है। नम्रता सहित परमेश्वर की वस्तु समझकर दिया गया दान सतोगुणी दान होता है। इसका फल बहुत अधिक हुआ करता है।

तीसरा नेम हुआ करता है **'सन्तोष'**।

चौथा हुआ करता है **'आस्तिक बुद्धि'**।

पाँचवा **'पूजा'**।

छठा **'गुरू शबद पर विश्वास'**।

साँतवा होता है - **जो कुछ गुरबाणी कहती है उसके अनुसार अपने जीवन को ढ़ालना; उलट बिल्कुल न जाना।**

आँठवा हुआ करता है **'सान्तकी वृत्ति'**। क्रोध न आने देना, वृत्ति में frustration (झुन्झलाहट) न आने देना, निराशा न आने देना; शान्त रहना है। कोई बुरी बात भी कह गया तो भी शान्त रहना, धैर्य रखना।

नौवां हुआ करता है **'नितनेम',** नितनेम कभी न तोड़ना। जो भी नितनेम है वह पूरा करना है।

दसवाँ हुआ करता है **'ब्रह्महोम'** - भूखे को भोजन खिलाना।

ये दो अंग हो गये - एक **'यम'** और एक **'नेम'**। महाराज कहते हैं भाई! फिर तीसरा अंग होता है **'आसन'**। ऐसे एकान्त आसन पर बैठना जहाँ कोई विक्षेपता न हो। भजन करने के लिये जगह ढूँढ लेना; कोई चौंकी बना लेना, कोई आसन ले लेना, फिर वहीं पर ही रोज़ भजन करना। वह स्थान पवित्र हो जाता है, वहाँ मन एकदम टिक जाता है।

चौथा हुआ करता है **'प्राणायाम'।** श्वासों को सन्तुलन में लाकर नाम जपने की युक्ति महापुरुषों से जाकर पूछना जिन्हें अभ्यास की परिपक्वता के साथ आन्तरिक भेदों की थाह प्राप्त होती है।

पाँचवा होता है '**प्रतिहार**'। बार बार मन को रोकना, बार बार रोकना, मन दौड़ता है फिर रोककर शबद में लगाना।

छठा हुआ करता है '**धारना**'। मन एकाग्र करने के लिए गुरू के चरणों से जोड़ना। जुड़ता नहीं, फिर रोककर जोड़ना। पापों से बचना, बार बार मन को दिलासा देना और उच्च अवस्था की ओर ले जाना –

***अगाहा कू त्रांघि पिछा फेरि न मुहडड़ा॥*** *पृष्ठ – 1096*

साँतवा हुआ करता है '**ध्यान**'। ध्यान साकार का हुआ करता है – एक गुरू का ध्यान और दूसरा शबद का ध्यान। तीन प्रकार का ध्यान हुआ करता है – प्रतीक सम्पत और अंहग्रह। सो तीनों प्रकार के ध्यान महापुरुषों से पूछ लो। जहाँ जिसको उचित लगता हो, उसे उसी ध्यान में लगा दिया करते हैं कि तूं इस प्रकार ध्यान कर।

आँठवा अंग हुआ करता है '**समाधि**'। कहते हैं समाधि लग जाना। जब बार बार भजन करते करते फुरने समाप्त हो जाएं फिर समाधि लग जाती है और त्रिकुटी में से पार होकर दशम द्वार में वृत्ति पहुँच जाती है।

महाराज कहते हैं ''हे राजन! यह तो है कष्ट योग। यह थोड़ा सा कठिन है। अब हम तुझे भक्ति योग बताते हैं। यह ध्यान से सुनना, ये गृहस्थी भी कर सकते हैं, कारोबार वाले भी कर सकते हैं, बाल बच्चों का पालन पोषण करते हुए भी हो सकता है, अध्यापक भी कर सकता है, व्यापारी भी, फौजों में नौकरी करने वाले, बहुत अधिक व्यस्त रहने वाले आदमी, कारखानों में काम करने वाले आदमी सभी कर सकते हैं क्योंकि यह बहुत आसान है। यह बात नहीं कि इसका फल बहुत कम है; फल इसका भी उतना ही है, वैसा ही है। यह भी उसी जगह पहुँचा देता है।'' दोनों हाथ जोड़कर राजा कहने लगा ''पातशाह! पहली बात मैं समझ गया।''

हमने पिछले पाँच दीवानों में पहली बात सुनी है, पूरी तरह बहुत विस्तार के साथ इस पर विचार की है। अब भक्ति योग क्या होता है अब इसे थोड़ा सा समझने का यत्न करो। भाई! जो बहुत अधिक शौक रखते हैं वे मन एकाग्र करके सुनना क्योंकि फिल्म बन रही है, पता नहीं कौन कौन देखेगा और किस किस का भला होगा? सो ध्यान दो, हमारा भी भला हो जायेगा यदि ध्यान से सुनेंगे। महाराज कहते हैं –

***प्रिथमै यम, मन राखन नीवैं॥*** *पृष्ठ-111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

कहते हैं पहली रहत (नियम) है कि मन को विनम्र रखना। मन विनम्र कैसे रहता है? यदि तो यह कहो कि हम अच्छे हैं फिर तो मन

विनम्र नहीं रहता। मन विनम्र रहता है यदि दिल से हम कहें -

*हम नही चंगे बुरा नही कोइ।* *पृष्ठ - 728*

*आपस कउ जो जाणै नीचा। सोऊ गनीऐ सभ ते ऊचा॥*

*पृष्ठ - 266*

विनम्रता का पलड़ा हमेशा भारी हुआ करता है। नम्रता में रखना है अपने आपको, अहंकार में नहीं आना, बड़ा नहीं बनना -

*प्रिथमै यम, मन राखन नीवां॥ निज गुन ते निरमान सदीवा।*
*पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

परमेश्वर ने गुण दिये हुए हैं - किसी को कीर्तन करने का, किसी को व्याख्या करने का, किसी को डाक्टरी का, कोई इन्जिनियर है, कोई वैज्ञानिक है, कोई अफसर है, कोई अध्यापक है। महाराज कहते हैं ऐसे ही अभिमान में मत फंस जाना कि ज़मीन जायदाद बहुत है, ट्रैक्टर ले लिया। अभिमान में मत आ जाना, विनम्र रहना; विनम्र वृक्षों को फल लगता है, जो वृक्ष ऊँचा होता है, उसे फल नहीं लगता। इस तरह पढ़ लो -

*धारना - फल नीविआं रुखां नूं लगदे, फल नीविआं*
*फल नीविआं रुखां नूं लगदे,*
*उचा हो के मारिआ गिआ, सिंबला, सिंबला*
*उचा हो के मारिआ गिआ, फल नीविआं - 2*

*सिंमल रुखु सराइरा अति दीरघ अति मुचु।*
*ओइ जि आवहि आस करि जाहि निरासे कितु।*
*फल फिके फुल बकबके कंमि न आवहि पत।*
*मिठतु नीवी नानका गुण चंगिआईआ ततु॥* *पृष्ठ - 470*

पन्छी सिम्बल पेड़ की तरफ आते हैं हरे हरे फल देखकर, हरे हरे पत्ते देखकर, पर फल फीके तथा फूल बकबके (स्वाद रहित) हैं, गलघोटुआ लगता है फल खाने के बाद, इसलिए निराश होकर चले जाते हैं। महाराज कहते हैं ''देख! विनम्रता में रहना प्यारे।'' ऊँचे में क्या दोष है? कहते हैं ''ऊँची ज़मीन हो, वर्षा हो जाये तो पानी सारा बह जायेगा और ज़मीन भी कट जायेगी। निचला खेत उस कटी हुई मिट्टी को सम्भाल लेगा, पानी को सम्भाल लेगा और उस निचले खेत में धान लग जायेंगे। ढलान वाले खेत में मक्की की भी वत (जहाँ मिट्टी खेती योग्य न रहे) नहीं रहेगी क्योंकि वह ऊँचा होने के कारण मारा गया। नुकसान हुआ न ऊँचे होने का? खजूर का पेड़ ऊँचा होता है पर राही के लिये छाया भी नहीं दे सकता और फल भी नहीं देता।

इसीलिये महाराज फरमाते हैं कि विनम्र जो है वह झुका हुआ ठीक होता है –

*कबीर बांसु बडाई बूडिआ इउं मत डूबहु कोइ।*
*चंदन कै निकटै बसै बांसु सुगंधु न होइ॥* *पृष्ठ – 1365*

बांस चन्दन के पास रहता है लेकिन उसमें सुगन्धि नहीं होती क्योंकि वह ऊँचा है, अहंकार भरा हुआ है उसके अन्दर 'हंकारिया सो मारिया।' सो भक्ति योग की पहली रहत यह है कि मन को विनम्र रखना। अपने गुण का प्रकटीकरण न करना कि मैं राग जानता हूँ, मैं अमुक बातें जानता हूँ, मैं पाठी बहुत बढ़िया हूँ, मैं सन्त हूँ, लोग मुझे मानते हैं। ऐसी बात मन में बिल्कुल नहीं आने देनी। विनम्र रहना हमेशा मन में यह ध्यान रखना कि –

*हम नही चंगे बुरा नही कोइ। प्रणवति नानकु तारे सोइ॥*
*पृष्ठ – 728*

*कबीर सभ ते हम बुरे हम तजि भलो सभु कोइ।*
*जिनि ऐसा करि बूझिआ मीतु हमारा सोइ॥* *पृष्ठ – 1364*

*सभ की रेनु होइ रहै मनूआ सगले दीसहि मीत पिआरे।*
*सभ मधे रविआ मेरा ठाकुरु दानु देत सभि जीअ सम्हारे॥*
*पृष्ठ – 379*

भाई! अच्छा मैं हूँ नहीं और बुरा कोई दिखाई नहीं देता। यह वृत्ति हर समय रखो। यह पहली रहत है भक्ति योग की। कोई कठिन नहीं है। कारोबार वाला चाहे कितना भी क्यों न हो, मन विनम्रता में ही रखना है।

इस पर कोई समय नहीं लगता कोई और पाबन्दी नहीं है केवल अपने मन को साधना है।

दूसरी रहत है कि सत्संग में विधि पूर्वक जाये। सत्संग में जाने के लिये कोई टिकट नहीं लेना पड़ता, न कोई रोक-टोक है पर यह है कि भाग्य के बिना मिलता नहीं सत्संग। चलते समय ही कोई न कोई रूकावट पड़ जाती है यदि भाग्य में न हो –

*बिनु भागां सतसंग न लभै बिनु संगति मैलु भरीजै जीउ।*
*पृष्ठ – 95*

*दूजो नेम जाइ सतिसंगति। कथा कीरतन सुनि मिल पंगत॥*
*पृष्ठ – 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

संगत में बैठकर चित्त एकाग्र करके कथा कीर्तन सुने, यहाँ वाहिगुरू की प्राप्ति हुआ करती है। क्योंकि वाहिगुरू जी सत्संगत में रहते हैं, इस

प्रकार फ़रमान है -

*धारना - जिथों हरि पाईऐ जी - 2, 2*
*सतिसंगत नाम निधान है - 2, 2*
*जिथों हरि पाईऐ जी...........- 2*

सत्संगत नाम खजाना है। जब नाम मिल गया फिर परमेश्वर भी मिलेगा -

*सतिसंगति नाम निधान है जिथोंहु हरि पाइआ।*
*गुरपरसादी घटि चानणा आनेरु गवाइआ।*
*लोहा पारसि भेटीऐ कंचनु होइ आइआ॥ पृष्ठ - 1244*

जैसे लोहे को पारस से स्पर्श कर दो, उसी समय सोना बन जायेगा। इसी प्रकार सत्संगत में कितना ही विकारी पुरुष क्यों न आ जाये और विनम्रता सहित, श्रद्धापूर्वक और एकाग्रता के साथ पूरी विधि के साथ सत्संग करता है तो जैसे लोहा, पारस के स्पर्श से सोना बन जाता है उसी प्रकार उसका जीवन भी शुद्ध हो जाया करता है -

*नानक सतिगुरि मिलिऐ नाउ पाईऐ मिलि नामु धिआइआ।*
*जिन कै पोतै पुंनु है तिनी दरसनु पाइआ॥ पृष्ठ - 1244-1245*

सो इस प्रकार जो दूसरा नियम है वह है सत्संगत में जाये, कथा कीर्तन मिलकर सुनना।

तीसरी रहत है ***'एकान्त देश'***। एकाग्र चित्त होकर बैठना। जिज्ञासु कहते हैं कि महाराज जी, आप कहते हो कि काम काज, खेतीबाड़ी भी करो, Teacher (अध्यापक) बनकर बच्चों को पढ़ाओ भी, व्यापारी बनकर व्यापार भी करो फिर एकान्त देश कहाँ से बन जायेगा हमारा? महाराज कहते हैं कि देखो, एकान्त देश मन से सम्बन्ध रखता है -

*सो इकांती जिसु रिदा थाइ॥ पृष्ठ - 1180*

कहते हैं कि युक्ति हुआ करती है कि सभी चीज़ों में एक वाहिगुरू को देखना शुरू कर दे कि यह सब वाहिगुरू ही है। जब इस प्रकार देखेंगे अच्छा बुरा चितवना नहीं करेंगे, उस समय फिर चित्त एकाग्र हो जायेगा और एकान्त देश हमें प्राप्त हो जायेगा -

*और दूसरा लखई नाहिं। एको बिआपक सभ घट माहिं॥*
*पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

चित्त में यह निर्णय कर ले क्योंकि यह बात सत्य है। साध संगत जी! एक तो होता है कि 'मान लिया' पर ये वचन 'मान लिया' नहीं, यह बात तो वास्तव में सच है कि यहाँ सभी में वाहिगुरू बसता है फिर किसी को बुरा

नहीं कहेंगे। बुरा तो कहना ही नहीं। इस प्रकार फ़रमान करते हैं -

*धारना - पिआरे मंदा किसनूं कहीए, सभ घटि राम वसदै - 2, 2.*
*सभ घटि राम वसदै, सभ घटि राम वसदै - 2, 2*
*पिआरे, मंदा किसनूं कहीए,.........।*

*फरीदा खालकु खलक महि खलक वसै रब माहि।*
*मंदा किस नो आखीऐ जां तिसु बिनु कोई नाहि॥ पृष्ठ - 1381*

सो इस प्रकार सभी में परमेश्वर देखना।

चौथा अंग होता है ***'आसन'*** -

***चौथो आसन समझहु चित। पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

अपना जो चित्त है इसे आसन बना लो, इसे एकाग्र करो -

***करहि गुबिंद विखै थित ब्रित॥ पृष्ठ -111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

वाहिगुरू को हाज़िर-नाज़िर समझ कर उसमें वृत्ति को टिकाओ, भागने मत दो किसी तरफ।

पाँचवी रहत ***'प्राणायाम'*** हुआ करती है। प्राणायाम के तीन अंग होते हैं - पूरक, कुम्भक, रेचक। एक श्वांस अन्दर खींचना होता है, एक रोकना होता है और एक श्वांस छोड़ना होता है।

***पूरक गुरके बचन सुन सभै करख कर लेय॥***
***पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

सत्संग करते हो ये वचन सारे हृदय में इकट्ठे करते चले जाओ। कहते हैं यह तो सांस को अन्दर खींचना क्योंकि वह कष्ट योग है और यह भक्ति योग है। दोनों में फर्क है साध संगत जी! उसमें श्वांस खींच कर नाम को अन्दर लेकर जाना है। इसमें गुरू के वचन अपने अन्दर धारण करते जाना है, खींचे जाना है कोई वचन बाहर नहीं जाने देना -

***बचन सुन समझी वसत, जो रिदै सदा थिर केय॥***
***पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

जो वचन अब सुन लिया, समझ लिया, उसे हृदय में धारण कर लेना, सम्भाल कर रखना -

***कर अभ्यास न तहि परहरै॥ पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

ऐसा न हो कि इसे भूल जाओ बल्कि इसका अभ्यास करते हुए पक्का करते रहो कि क्या कहा था सत्संग में। दो प्रकार का सत्संग होता है - एक बहिरंग और एक अन्तरंग होता है। यहाँ से वचन सुनकर बोलो मत किसी

के साथ, बात चीत मत करो, घर जाकर सोचो कि क्या कहा था; तीसरी रहत कौन सी थी; चोथी कौन सी थी फिर –

*सद ठहरावन मन महिं करै।* *पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

इसे मन में स्थिर कर ले। जो कुछ गुरू महाराज जी की बाणी कहती है, इसे मन में स्थिर करने की कोशिश करो, ऐसे ही इसे गवाओ मत, हवा में मत उड़ाओ –

*कुंभक दुजो इसी प्रकारा॥* *पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

यह कुंभक होता है वचनों को सम्भाल कर हृदय में रखना, फिर होता है तीसरा सांस बाहर छोड़ना। इसे रेचक कहते हैं। गुरू जी कहते हैं कि सांस बाहर नहीं निकालना; बाहर निकालनी है बुराईयाँ। सांस जैसे चल रहा है इसे चलने दो। इस पूरक रेचक, कुम्भक का श्वांस के साथ सम्बन्ध नहीं है, मन के साथ सम्बन्ध है। बुद्धि के साथ सम्बन्ध है गुरू जी फ़रमान करते हैं –

*निन्दा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करंनि।*
*मुह काले तिन निंदकां नरके घोरि पवंनि॥* *पृष्ठ - 755*

गुरू साहिब कहते हैं कि निन्दा छोड़ दो, चुगली छोड़ दो, ईर्ष्या छोड़ दो –

*जिसु अंदरि ताति पराई होवै तिसदा कदे न होवी भला॥*
*पृष्ठ - 308*

छोड़ दो ईर्ष्या –

*पर का बुरा न राखहु चीत। तुम कउ दुखु नही भाई मीत॥*
*पृष्ठ - 386*

अन्यथा दुखी होगे। मत रखो किसी का बुरा चित्त में। गुरू ग्रन्थ साहिब की बात सुनो। वह बात सुनकर छोड़ने वाली बातों की सूची बनाते चले जाओ। यह भी महाराज कहते हैं छोड़ दो, वह भी छोड़ दो। उन बातों को, चीज़ों को छोड़ना शुरू कर दो। इसे रेचक कहते हैं –

*सतिगुर बचन जु तजना कहा। तहिं तज देय होत सुख महां॥*
*पृष्ठ - 111 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)*

उसे तज दे, फिर महान सुख प्राप्त हो जाता है।

छठा अंग है ***'धिआन'*** का। उधर कष्ट योग में भी छठा 'ध्यान' का और इधर भक्ति योग में भी छठा ध्यान का अंग है। ध्यान यह होता है कि गुरू की बाणी पढ़ते हुये, सुनते हुए कीर्तन करते समय, गाते समय, गुरू के वचनों में ध्यान लगाये, अर्थों में ध्यान लगाये कि महाराज जी

क्या कह रहे हैं -

***सबद अरथ महिं राखहि धयाना। फुरन न देहि संकलप अपाना॥***
***पृष्ठ - 111-112 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

ऐसा न हो कि गुरू ग्रन्थ साहिब का पाठ करता हो और मन छलांगे लगाता फिरता हो। कभी भारत में तो कभी अमेरिका में, कभी घर तो कभी दफ्तर, कभी कहीं और कभी कहीं। कई प्रेमी कहते हैं जी बाणी तो हम पढ़ते हैं, मन नहीं टिकता। मन को टिकाना बहुत मुश्किल बात है, खेल नहीं है साध संगत जी। परमेश्वर के प्यारे सन्त बता देते हैं कि तू बोल बोल कर बाणी पढ़ा कर और अपने कानों में श्रवण किया कर।

''क्या ऐसे किया करता है?''

''नहीं जी, ऐसे तो कभी नहीं किया।''

''अब किया कर, तेरी सुरत टिक जायेगी।''

''जी और कोई युक्ति बताओ।''

''भाई! तू ऐसे किया कर कि अक्षरों की जो मात्राएं आदि लगी होती हैं उन्हें ध्यान से देखता जाया कर।''

''जी, इसके आगे की युक्ति?''

''भाई! बाणी के अर्थ समझा कर फिर अर्थों के भावों में मन लगाया कर, फिर तेरी समाधि लग जायेगी।''

***खशटम धयान अंग सुन जैसे। पढन सुनन गुर बच बैसे॥***
***पृष्ठ - 111-112 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

***'सबद अरथ महिं राखहि धयाना। फुरन न देहि संकलप अपाना।'*** शब्दों के अर्थो में ध्यान लगा ले और संकल्प न फुरने दे - बाणी पढ़ता हुआ -

***सपतम अहै धारना अंगा। तहिं सरूप सुनीये रुच संगा॥***
***पृष्ठ - 112 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

महाराज कहते हैं कि सांतवी इसमें है ***'धारना'***। वह क्या होती है? महाराज कहते हैं -

रूचि के साथ सुन हमारी बात को क्योंकि यह कोई कहानी नहीं हम तुझे सुना रहे हैं। यदि तेरी रुचि न हुई, तेरा ध्यान नहीं लगेगा और बात तेरे पल्ले नहीं पड़नी। सो ध्यान लगाकर सुन भाई -

***मन संकलप विखै जे जावै। पुन तहि रोक सबद महिं लावै॥***

***पृष्ठ - 112 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

जब संकल्प में मन चला जाये - बाणी पढ़ते हुये, तभी रुक जाओ, फिर से जहाँ से मन हट गया था, वहीं से फिर पढ़ना शुरू कर दे। 'जपुजी साहिब' सारा पढ़ लिया। कहता है जी मुझे पता ही नहीं चला, ***'केती छुट्टी नालि।'*** का ही पता चला कि 'जपुजी साहिब' खत्म हो गया। कहते हैं फिर से पढ़ जिस तुक से भाग गया था, वहीं से फिर शुरू कर दे। यह मन पर पहरा देना कहलाता है बार बार। इसे 'धारना' कहते हैं। ऐसा करते हुए हमारे मन के अन्दर फिर स्थिरता आ जायेगी।

***जब मन टिकिओ घरी दो चारा। तहि को नाम समाध उचारा॥***

***पृष्ठ - 112 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

जब मन एक घड़ी (25 मिनट) टिक गया, दो घड़ी (50 मिनट) टिक गया, 100 मिनट टिक गया फिर ***'तहि को नाम समाध उचारा'*** उसे ***'समाधि'*** कहते हैं -

***शबद विखै जब लागी समाध। तिसहि वधावहि तन मन साध।***

***पृष्ठ - 112 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

जब समाधि शबद में लगने लग जाये फिर इसे बढ़ाते चले जाओ, तन और मन को साध कर बढ़ाओ इसे। यह समाधि उतनी ही बड़ी है जितनी कष्ट योग वाले की समाधि है जो श्वांस को खींच खींच कर दशम द्वार में जाकर वृत्ति टिकाते हैं। यह भी उसके बराबर पहुँच जाया करता है-

***असट जाम जम शबद विखै जब। पूरन होत समाध भले तब।***

***पृष्ठ - 112 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

जब आठों पहर शबद में सुरत लगी रहे तो समझो कि समाधि पूरी हो गई -

***भगत जोग इह जानीए कलि महि पंथ सुखेन॥***

***पृष्ठ - 112 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

कहते हैं कलयुग में सबसे सरल रास्ता है यह। इसका मुकाबला और कोई रास्ता नहीं कर सकता -

***कशट योग दुसतर अहै होइ न जेनं केन॥***

***पृष्ठ - 112 (श्री गु. पु. प्र. ग्रन्थ)***

वह पहला रास्ता हमने कष्ट योग का बताया था। जिस प्रकार से अहिंसा आदि 10 अंग बताये थे, दस नेम बताये थे - आसन प्राणायाम,

प्रतिहार, धारना, ध्यान और समाधि के अंग बताये थे – साविकल्प और निृवकल्प समाधि, सहज समाधि। महाराज कहते हैं कि सहज समाधि इसके साथ भी लग जाती है।

गुरू नानक साहिब कहने लगे, ''राजन! अब तुम सारी बात पर विचार कर लो, याद कर लो। दोनों रास्ते पहुँचा देते हैं वहाँ। जो तुझे सरल लगता है अपना ले।''

सो गुरू दसवें पातशाह हमें बहुत ही आसान विधि से इस प्रकार फ़रमान करके बताते हैं, सभी बोलो भाई –

***धारना – ऐसो कर संनिआसा रे मन, ऐसो कर संनिआसा – 3***

***रे मन ऐसो करि संनिआसा।***
***बन से सदन सभै करि समझहु मन ही माहि उदासा॥***
***शबद हज़ारे पाः 10***

सन्यासी की बहुत महिमा वेद शास्त्र करते हैं और लोग सन्यासी बनने के लिए घर बार छोड़ते हैं, केशों को एक एक करके उखाड़ा जाता है। स्त्रियाँ सन्यासी बनती हैं, केश मुंडवा दिये जाते हैं, रुण्ड मुण्ड हो जाते हैं घर छोड़ देते हैं वस्त्र विशेष प्रकार के पहनते हैं। बहुत जिम्मेवारी आ जाती है।

सिख कहते हैं ''महाराज! क्या हम भी सन्यास कर सकते हैं?'' महाराज कहते हैं ''देखो! ध्यान से सुनना। आप घर में रहते हुए भी सन्यासी बन सकते हो, स्त्रियाँ सन्यासी बन सकती हैं, पुरुष सन्यासी बन सकते हैं घर छोड़ने की ज़रूरत नहीं। ***'बन से सदन सभै करि समझहु...........'*** जो बाल बच्चे हैं जैसे वृक्ष होते हैं जंगल के अन्दर; कोठियाँ हैं, कारोबार हैं, इन्हें जंगल के वृक्षों की तरह समझने लग जाओ। ***'मन ही माहि उदासा।'*** मन में वैराग धारण कर लो कि इस संसार में तो हमने रहना ही नहीं है। यह बात मन में धारण करके देखो –

***फरीदा किथै तैडै मापिआ जिनी तू जणिओहि।***
***तै पासहु ओइ लदि गए तूं अजै न पतीणोहि॥ पृष्ठ – 1381***

वैराग करो, उदास रहो। किसी चीज़ की जकड़ में मत आओ। प्रयोग करो सब कुछ। ज़मीन है ठीक है वाहिगुरू ने दी है, नौकरी चाकरी आदि दी है लेकिन इनके शिकंजे में मत आओ, चित्त में उदासी रखो –

***जत की जटा जोग को मजनु नेम के नखन बढाओ॥***
***शबद हज़ारे, पाः 10***

महाराज कहते हैं कि सिर की जटायें बढ़ाने की बजाये जत धारण करो। जटायें तो मैली हो जाती हैं इनमें जूँ भी पड़ जाती हैं, कठिन हो जाता है इनकी सम्भाल करना पर यह जत गुण पैदा करता है। एक वार्ता ध्यान से सुनो –

गुरू दसवें पातशाह महाराज लिखते हैं कि एक बार की बात है कि जहाँगीर राजा के दरबार में एक सन्त राम बहुत खूबसूरत जवान था, 6 फुट से ऊँचा था, नैन नक्ष इतने सुन्दर थे कि जैसे परमात्मा ने उसे खाली समय में बनाया हो। जहाँगीर की लड़की उस पर मोहित हो गई। उसने अपने पिता को कहा, ''अब्बा जान! मैं यह जो तुम्हारा सिपाही है पहरा दे रहा है फौज का उसके साथ शादी करना चाहती हूँ। मेरी शादी इसके साथ कर दो अन्यथा मैं मर जाऊँगी। ज़िद पर अड़ गई। जहाँगीर ने सोचा कि इस सिपाही का आगे पीछे तो कोई है नहीं; फिर सोचता रहा। कहने लगा कि चलो इसे मैं गर्वनर बना दूँगा, बड़ा बना दूँगा, जागीर तो मैंने ही देनी है, मैंने ही बड़ी पदवी देनी है। यदि लड़की को पसन्द आ गया है तो कोई बात नहीं। सलाह करता है कि मैं इसे किसी राज्य का गर्वनर बना दूँगा और इसके साथ अपनी लड़की की शादी कर दूँगा पर वह इस्लाम धारण कर ले।

सन्त राम का एक मित्र महलों में काम करता था। उसे इस बात का पता एक दासी से चल गया और आकर सन्त राम को मुबारक वाद देने लगा। कहने लगा ''सन्त राम जी, मुबारक हो, बधाई हो।'' सन्त राम पूछने लगा, ''क्या बात है?'' वह कहता है तेरी शादी शहज़ादी के साथ होने वाली है और तुझे गर्वनर बनाया जा रहा है, शादी के बाद एकदम। कल आज्ञा (order) जारी हो जानी है और तुझे इस्लाम धारण करना पड़ेगा। उस समय सन्त राम बोले, ''मित्र! यह तो बहुत बुरी बात हुई। इसमें तो मेरे जति का अन्त हो जायेगा; मेरा धर्म नष्ट हो जायेगा। मुझे यह नहीं चाहिये।'' वहीं से भाग गया।

इधर जब पता चला कि सन्त राम भाग गया है तो जहाँगीर ने हुक्म दे दिया कि उसे देश की सीमा से बाहर मत जाने दो। वह देश की सीमा से बाहर जाता हुआ पेशावर में पकड़ा गया। हथकड़ियाँ लगाकर जहाँगीर के समक्ष पेश किया गया। जहाँगीर कहने लगा, ''मैं अपनी लड़की का रिश्ता तेरे साथ कर रहा हूँ, यह बात तू क्यों नहीं मान लेता। साथ ही मैं

तुझे गर्वनर भी बना रहा हूँ पंजाब का।'' सन्त राम कहता है ''बादशाह सलामत! यह बात मुझे मन्जूर नहीं है क्योंकि मैंने जति धारण किया हुआ है। मैं अपने जति के प्रण से नहीं टल सकता।''

अन्त में बादशाह को क्रोध आ गया और उसका सिर कटवा दिया। अपनी लड़की से कहा कि वह माना नहीं, मैंने उसका सिर धड़ से अलग करवा दिया। लड़की ने कहा कि मुझे उसका सिर एक बार दिखा दो। सो थाल में रखकर उसका सिर उठाकर ले आए। लड़की जब उसे हाथ लगाने लगी तो सिर सवा हाथ ऊपर उठ गया। वह हाथ ऊपर करती तो सिर सवा हाथ और ऊपर उठ जाता। दरबारी कहने लगे देखो, ये गुरू के सिख कैसे हैं; सिर काट दिया है, मरने के बाद भी अभी तक अपना धर्म छोड़ने को तैयार नहीं है।

सो गुरू महाराज कहते हैं कि भाई! ये जटायें बनाओ जति की ***'जत की जटा जोग को मजनु.............'*** जो स्नान तीर्थों पर करते हो, वे वाहिगुरू के नाम के साथ जुड़ने के करो।

***'..........नेम के नखन बढ़ाओ।'*** नितनेम रोज़ करना, बाणी पढ़ना, अमृत बेला में जागना। जो रास्ता बताया है, उसी प्रकार से नितनेम कभी नहीं तोड़ना। यदि नितनेम तोड़ देते हैं तो समझो मैल चढ़नी शुरू हो जाया करती है। ये नेम के नाखून बढ़ाना है -

*गिआन गुरू आतम उपदेसहु नाम बिभूत लगाओ॥*

*शबद हज़ारे पा: 10*

अब गुरू बनाना है ज्ञान को, गुरू बाणी को -

*बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे।*
*गुरबाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरू निसतारे।* *पृष्ठ - 982*

गुरू ग्रन्थ साहिब की बाणी को गुरू बना लो और आत्मा को (अपने आप को) उपदेश दो। बाणी पढ़ सुनकर लोगों को उपदेश मत दो, अपने आपको उपदेश दो और नाम जपने की विभूति लगाओ, राख लगाने की ज़रूरत नहीं। वाहिगुरू वाहिगुरू, राम राम, अल्लाह अल्लाह करो, यह भभूति शरीर को लगाओ। फिर -

*अलप अहार सुलप सी निंद्रा दया छिमा तन प्रीति॥*

*शबद हज़ारे पा: 10*

अब खाना जो है, कल मैंने बताया था कि यदि चार रोटियों की भूख हो तो तीन ही खाया करो। इसे अलप आहार कहते हैं। फिर नींद जो है -

आदमी की नींद 6 घंटे, स्त्री की नींद 7 घंटे, बच्चों की नींद 8 घंटे और मूर्ख की नींद 9 घंटे है। 9 घंटे सोया करता है मूर्ख आदमी। महाराज कहते हैं नींद और कम कर दो और प्यार करो सभी के साथ, दया करो, क्षमा करो -

***सील संतोख सदा निरबाहिबो हैबो त्रिगुण अतीति॥***

*शबद हज़ारे पाः 10*

Character (आचरण) - शुभ आचरण होना चाहिए। सन्तोष धारण करो तथा रजोगुण और तमोगुण में वृत्ति दौड़ाये न फिरो।

***काम क्रोध हंकार लोभ हठ मोह न मन सिउ लयावै॥***

*शबद हज़ारे पाः 10*

ये पाँच चीज़ें - काम, क्रोध, लोभ मोह, अहंकार त्याग दो और छठा हठ छोड़ दो।

***तब ही आतम तत को दरसे परम पुरख कह पावै।***

*शबद हज़ारे पाः 10*

कितनी भयानक हैं ये पाँच चीज़ें। एक मोह की ही बात बताते हैं कितना भयानक है यह।

एक बार गुरू नानक पातशाह ने चलते चलते एक रमणीक स्थान देखा, कुँआ लगा हुआ है और रहट चल रहा है, महाराज जी उसके पास जाकर बैठ गये। सुन्दर स्थान था। पास ही किसान अपने खेत में काम कर रहे हैं। इतनी देर में भोजन आ गया उनका और बुजुर्ग ने कहा साधु बैठे हैं, इन्हें भोजन खिला दे। सो अति प्यार के साथ उसने महाराज जी को भोजन खिलाया - दही, मक्खन, लस्सी आदि के साथ सलूनी (नमकीन) रोटियाँ। महाराज बहुत प्रसन्न हुए और बुजुर्ग को कहने लगे, ''हे वृद्ध पुरुष! तूने हमें भोजन खिलाया है, चित्त प्रसन्न हो गया हम सब का; तेरी मुक्ति कर दें? उस समय बुजुर्ग नाराज़ हो गया और कहता है, ''सन्त जी! मैंने कौन सा गुनाह कर दिया है, मैंने तो भोजन ही खिलाया है, बल्कि आप मुझे कोई चीज़ दो। आप तो मुझे मुक्ति देने लग गये।'' महाराज हंसने लग पड़े। मरदाना बोला, ''हे वृद्ध पुरुष! ये तुझे अच्छी चीज़ ही दे रहे हैं।'' वह कहता है, ''मुझे मुक्ति-वुक्ति कुछ नहीं चाहिए, मैं तो अभी और जीना चाहता हूँ।'' महाराज कहते हैं ''मरदाना! यह समझता नहीं, देनी ज़रूर है मुक्ति, यह उधार रहा हमारे सिर पर। अच्छा भाई'' कह कर महाराज चले गये।

वह बुजुर्ग कुछ दिनों के बाद मर गया। जब महाराज दोबारा आये तो क्या देखते हैं कि बैल बना हुआ है। हल चल रहा है, अन्दर वाले बैल को सामने नहीं आने देता। जहाँ हलाई मुड़ती है, वहीं से दौड़कर मुड़ जाता है, परानीं नहीं लगने देता। महाराज खड़े होकर कहने लगे, ''बच्चा! वह बुजुर्ग कहाँ है?'' वह कहता है ''जी, वह तो आपके जाने के बाद थोड़े से ही दिनों के बाद चढ़ाई कर गया।'' महाराज कहते हैं कि ''हम बातें कर ले इस बैल के साथ?'' बैल रोक लिया और कहने लगे ''क्यों प्यारे! जब हमने तुम्हें कहा था कि मुक्त कर दें तो तू माना नहीं। अब बैल बन गया, अब कर दें मुक्त?'' वह कहता है ''न महाराज! मेरे बच्चे बहुत गरीब हैं। यदि मैं मर गया तो इन्हें कोई और कई हज़ार रूपयों का लेना पड़ेगा; चल लेने दो अभी मुझे।''

महाराज फिर चले गये। जब फिर वापिस आये तो देखते हैं कि कुत्ता बना हुआ है। महाराज कहते हैं ''भाई बैल कहाँ है?'' बच्चा कहता है ''महाराज! वह तो मर गया, अफारा हो गया था।'' महाराज ने कुत्ते को बुला लिया, कहने लगे ''हे वृद्ध पुरुष! अब बता, अब तेरी मुक्ति कर दें?'' फिर कहता है ''महाराज! सन्तान मेरी बहुत खराब है, शराब पी कर सो जाते हैं रात को, मामूली सा ताला लगा देते हैं दरवाज़े पर। चोर आते हैं, मैं भौंकता रहता हूँ रात भर। पुरवा हवा चलती है, नींद आ रही होती है, मेरे भौंकने को भी नहीं सुनते। चोर मुझे डण्डे मारते हैं। ये देखो मेरी पीठ टेढ़ी (झुकी) हुई पड़ी है।'' महाराज कहते हैं ''फिर अब तो तुझे मुक्त कर दें?'' वह कहता है ''सच्चे पातशाह! गरीब हो जायेंगे बच्चे, चोर चोरी करके ले जायेंगे।'' कहते हैं ''चल मरदाना! अभी यह नहीं मानता।'' उसके बाद एक यौनि उसे साँप की मिली।

महाराज एक बार फिर आ गये तो मरदाना पूछने लगा ''महाराज! अब वह बुजुर्ग कहाँ है?'' कहते हैं ''अब वह घर में मिलेगा।'' घर चले गये, 'सत करतार।' की आवाज़ दी। कहने लगे, ''मरदाना! वह देख, गन्दी नाली में कीड़ा बना हुआ है, तिनके से उठा कर ले आ।'' कहते हैं, ''क्यों प्यारे! अब तो कीड़ा बन गया अब तो मुक्ति कर दें तेरी? हमारे सिर पर तेरा उधार है, भोजन खाया था।'' कहता है ''महाराज! अब तो मैं कुछ नहीं करता, ये बच्चे रोटी खाते हैं, दाल खाते हैं और बची कुची नाली में फैंक देते हैं, यही खाकर गुज़ारा करता हूँ। फिर मैं नाली के किनारे पर मुँह रखकर अपनी औलाद को देखता रहता हूँ - पोते पोतियों

को खेलते हुये, और तो मैं कुछ नहीं करता महाराज।'' महाराज कहते हैं ''मरदाना! ऐसे नहीं जाना इसने, 'वाहिगुरू' कहकर पैर रख दे इसके ऊपर।'' मरदाना ने पैर रखा, उसने दिव्य देह धारण कर ली, सुरत लौट आई। महाराज कहते हैं, ''प्यारे! देख, मोह के वश होकर कैसे कैसे भयानक जन्म धारण किये हैं तूने। मुक्ति तो इस अवस्था को कहते हैं जो तुझे अब प्राप्त हुई है; अब बता कितना आनन्द है?''

''महाराज! मुझे तो पता ही नहीं था। मैं तो यही समझता रहा कि आप मारने को मुक्ति कहते थे।

सो इस प्रकार यह एक चोर है। महाराज कहते हैं -

*काम क्रोध हंकार लोभ हठ मोह न मन सिउ लयावै।*
*तब ही आतम तत को दरसै परम पुरख कहि पावै॥*

*शबद हज़ारे पाः 10*

इन चीज़ों को छोड़ दे। गलत चीज़ें मत खाया कर -

*बाबा होरु खाणा खुसी खुआरु।*
*जितु खाधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार॥* *पृष्ठ - 16*

इसलिये छोड़ दे इन चीज़ों को -

*परहरि काम क्रोधु झूठु निंदा तजि माइआ अहंकारु चुकावै।*
*तजि कामु कामिनी मोहु तजै ता अंजन माहि निरंजनु पावै।*
*तजि मानु अभिमानु प्रीति सुत दारा तजि पिआस आस राम लिव लावै।*
*नानक साचा मनि वसै साच सबदि हरि नामि समावै॥* *पृष्ठ-141*

गुरू साहिब कहते हैं, ये रहतें हैं भाई! वाद विवाद छोड़ दो, ऐसे ही बेकार में लोगों के साथ झगड़े मत किया कर, झूठा ही लड़ता रहता है -

*छोडि आपतु बादु-अहंकारा मानु सोई जो होगु॥* *पृष्ठ - 713*

*बादु बिबादु काहू सिउ न कीजै। रसना राम रसाइनु पीजै॥*

*पृष्ठ - 1164*

सो यह योग गुरू दसवें पातशाह हमें बताते हैं कि बाल बच्चों के साथ रहो, सारे कारोबार करो; कुछ नहीं करना, केवल अपने मन को सुधारना है। इस शरीर को समझने का यत्न करो। यह शरीर क्या है? यह पाँच तत्वों का बना हुआ एक खिलौना सा है, एक कोठी है। इसे हम अपना आपा समझे बैठे हैं।

यदि मैं अपनी कार में बैठा हूँ और मुझे कोई पूछे कि तेरा नाम

क्या है? इस कार का नम्बर है 3781 और मैं बताता रहूँ, जी मेरा नाम 3781 है। वे कहेंगे कि तू अपना नाम बता? मैं कहता जाऊँ कि 3781। कोठी का नम्बर है 781, वे पूछे कि तुम्हारा नाम क्या है, मैं कोठी का ही नम्बर बताता रहूँ 781; तो वे मुझे कहेंगे कि इसका दिमाग हिल गया है। यह तो तेरी कोठी का नम्बर है, मैं तेरा नाम पूछता हूँ और मैं कोठी का नम्बर 781 अपने आप को बताता रहूँ। यह एक दृष्टान्त है।

इसी प्रकार यह शरीर हमारा, एक मकान है, साध संगत जी! इसके अन्दर हम रहते हैं। हम शरीर नहीं है, हम तो ऐसे करोड़ों शरीर भोग चुके हैं -

*कई जनम भए कीट पतंगा। कई जनम गज मीन कुरंगा।*
*कई जनम पंखी सरप होइओ। कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ॥*

*पृष्ठ - 176*

कभी साँप का भी शरीर मिला, कभी बैल का भी मिला, कभी कीड़े का, कभी मृग का, कभी मछली का, कभी वृक्ष भी बने, कभी पत्थर भी बने इसी चक्कर में घूमते फिरते हैं। सो अपने आपको समझो। अब जो शरीर हमें मिला है, यह पाँच तत्वों का है। इसमें 25 प्रकृतियों के साथ हमारे आँख, कान, नाक, आदि बने हुए हैं; पाँच प्राण हैं इसके अन्दर और पाँच हवायें हैं फिर मन है, चित्त है, बुद्धि है और अहमभाव है। इसके ऊपर हम रहते हैं। अब जहाँ हम रहते हैं इसके साथ ही परमात्मा रहता है।

महाराज कहते हैं तुझे अन्दर से ही परमात्मा ने मिलना है, परमेश्वर मिलेगा; अन्दर से ही मिलने का यत्न कर। पहले समझ तू है कौन? कल मैंने प्रार्थना की थी कि हम किस तरह से आज्ञा चक्र से त्रिकुटी में जा सकते हैं, किस प्रकार से त्रिकुटी में से निकल कर दशम द्वार में प्रवेश कर सकते हैं। चाहे भक्ति योग है या कष्ट योग है, दोनों विधियों द्वारा दशम द्वार तक पहुँचा जा सकता है। इस देही के अन्दर एक द्वार है जिसे दशम द्वार कहते हैं, जिसका हमें पता नहीं, गुप्त है; उसे sixth sence कहते हैं - अंग्रेज़ी जानने वाले। बिअन्न अखड़ियाँ कहते हैं, गुरू महाराज दसवां द्वार कहते हैं। इस प्राकर फ़रमान करते हैं -

*धारना - गुपत रखिआ, देही विच, दुआरा दसवां - 3*

*नउ दरवाजे काइआ कोटु है दसवै गुपतु रखीजै।*
*बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै।*
*अनहद वाजे धुनि वजदे गुर सबदि सुणीजै।*
*तितु घट अंतरि चानणा करि भगति मिलीजै।*

*सभ महि एकु वरतदा जिनि आपे रचन रचाई।*
*वाहु वाहु सच्चे पातशाह तू सची नाई॥* *पृष्ठ - 954*

महाराज कहते हैं कि यदि तो भाई तुझे उस द्वार का पता चल गया जिसमें बैठकर परमात्मा को देखा जा सकता है तब तो तेरा संसार में आना सफल हो गया, अन्यथा फिजूल पैदा हुआ है कुछ भी नहीं तेरी देही। क्या है! तेरे से तो पशुओं की देही अच्छी है। पशुओं की हड्डियाँ बिकती हैं, चर्म बिकता है; तेरा कोई भी अंग किसी काम नहीं आता -

*नरू मरै नरु कामि न आवै। पसू मरै दस काज सवारै॥*
*पृष्ठ - 870*

तू खाता है, पीता है - अमृत, पर कितनी गन्दी चीज़ बन जाती है। कोई देखना भी पसन्द नहीं करता उसे -

*बिसटा असत रकतु परेटे चाम। इसु ऊपरि ले राखिओ गुमान॥*
*पृष्ठ - 374*

इस देही में है क्या? विष्ठा पड़ी है, हड्डियां हैं, खून पड़ा है, पाक पड़ी है, मैल पड़ी है। इसके साढ़े तीन करोड़ रोमों में से हर समय मैल पसीने के रूप में निकलती रहती है। तू इस पर गुमान किये बैठा है? फ़रमान है -

*एक वसतु बूझहि ता होवहि पाक। बिन बूझे तूं सदा नापाक॥*
*पृष्ठ - 374*

अर्थात यदि तो तूने अपने अन्दर पा लिया उस 'आत्म तत्व' को, पहुँच गया उस द्वार पर जहाँ पहुँचकर आत्म तत्व का ज्ञान होता है तब तो तू पवित्र बन गया। फिर जहाँ तेरा चरण टिकेगा वह धरती पवित्र हो जायेगी, जहाँ स्नान करेगा वह जल पवित्र होकर रोगियों के रोग दूर कर देगा अन्यथा तू महा अपवित्र है, कुछ नहीं है garbage bag है। यह जीव भटकता फिरता है बार बार, आत्म तत्व की तो इसे ज़रूरत ही नहीं। दरवाज़े पर ताला लगा दिया अब इस ताले को जंग लग गया। क्या पता ताला कब से लगा हुआ है। पता नहीं खरब साल बीत गये, पता नहीं करोड़ खरब साल हो गये, पता नहीं अरब खरब सालों से लगा हुआ है। जब से सृष्टि की रचना हुई उसी दिन से ताला लग गया -

*थिति वारु ना जोगी जाणै रुति माहु ना कोई।*
*जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई॥* *पृष्ठ - 4*

उस दरवाजे को ताला लगा हुआ है।

अब गुरू घर में हम आ गये, कलयुग में हो गया हमारा जन्म; बहुत ही अच्छा हो गया; अच्छे भाग्य थे, हम गुरू नानक साहिब की

बाणी सुनने लग पड़े। अब गुरू जी यह कहते हैं ''प्यारे! इस ताले को खुलवाना है या बन्द रखकर ही चले जाना है संसार से? है तुझे ज़रूरत? यदि बन्द रह गया फिर -

*इसु पउड़ी ते जो नरु चूकै सो आइ जाइ दुखु पाइदा॥*

*पृष्ठ - 1075*

फिर तू यौनियों में भटकता फिरेगा। 84 लाख टिन्ड (बाल्टियां) हैं एक कुएं की, 42 लाख एक तरफ से नीचे की ओर जा रही है तथा 42 लाख दूसरी ओर ऊपर को आ रही है। कोई जानवर बैठा है नीचे, वह बाहर निकलना चाहता है। वह टिन्ड (बाल्टी) शिखर पर आई और यदि वह छलांग लगा दे पानी में से तब तो निकल गया बाहर और यदि टिण्ड (बाल्टी) के साथ ही चिपका रह गया तो फिर दोबारा नीचे की ओर चल पड़ा, फिर चौरासी लाख टिन्ड कब खत्म होनी है तब बारी आयेगी। इसी तरह प्यारे! तू अब नीचे को जाना चाहता है या कुछ बनना चाहता हैं? साध संगत जी कोई भी नहीं चाहता कि मैं फिर से कुत्ता बिल्ला बन जाऊँ संसार में, यह तो चाहता है कि मैं आदमी बन जाऊँ, फिर मनुष्य बेशक बन जाऊँ पर अच्छा बनूँ। अच्छा तभी बनेगा यदि तू अब दान करेगा, अन्यथा नहीं बनना। यदि दान न किया, आगे भी भूखा ही मरेगा। यदि अच्छी फसल काटनी है तो अब खेती बीज ले नाम की क्योंकि फ़रमान है -

*हुणि वतै हरि नामु न बीजिओ अगै भुखा किआ खाए।*

*पृष्ठ - 450*

सो यदि अपने आपको जानने की ज़रूरत है तो चाबी पूछ ले कहाँ है? क्योंकि ज़ंग लगा हुआ ताला तेरे से नहीं खुलेगा -

*जिसका ग्रिहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई।*
*अनिक उपाव करे नहीं पावै बिनु सतिगुर सरणाई॥ पृष्ठ - 205*

न तो ताला ही टूटता है कोई तरीका नहीं है जिससे तू उसे खोल सके। यह तो सतगुरू की शरण में आकर नाम की चाबी लेनी पड़ेगी तुझे। युक्ति के साथ ताला खुलेगा। सो वह है -

*बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै॥ पृष्ठ - 954*

बज्र कपाट खुलेंगे नहीं। गुरू का शब्द ले ले, उस शबद का नाम का अभ्यास कर। जैसा पहले पाँच दीवानों में बताया गया है, उस प्रकार की रहतें धारण कर ले फिर तू जाकर यह चाबी लगा फिर यह दरवाज़ा खुल जायेगा। दरवाज़ा जब खुल गया उसकी कोई पहचान (निशानी) भी है? महाराज कहते हैं ''हाँ भाई! वहाँ बाजे बजते होंगे पाँच प्रकार के,

ध्वनियाँ निकलती होंगी। इसे अनहद शबद कहते हैं *'अनहद वाजे धुनि वजदे गुर सबदि सुणीजै।'* गुरू का दिया हुआ शबद वहाँ सुनता है अपने आप ही -

*अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ॥* *पृष्ठ - 1291*

फिर -

*बिनु जिहवा जो जपै हिआइ। कोई जाणै कैसा नाउ॥* *पृष्ठ-1256*

वहाँ नाम की धुन सुनती है -

*हरि जीउ गुफा अंदरि रखि कै वाजा पवणु वजाइआ॥* *पृष्ठ -922*

इसके अन्दर जीव भी रख दिया वाहिगुरू ने और अब पवन का इसमें बाजा बज रहा है। ऐसा फ़रमान करते हैं महाराज -

*धारना - वजदा है वाजा पउण दा वजाइआ - 2, 2*
*पउण दा वजाइआ वाजा पउण दा वजाइआ - 2, 2*
*वजदा है वाजा,................।*

*हरि जीउ गुफा अंदरि रखि कै वाजा पवणु वजाइआ।*
*वजाइआ वाजा पउण नउ दुआरे परगटु कीए दसवां गुपतु रखाइआ॥*
*पृष्ठ - 922*

दस पवनें (हवायें) इस शरीर के अन्दर हैं। दस हवाओं के साथ यह शरीर चलता है। पाँच प्राण हैं, पांच छोटे प्राण हैं। सो वह दसवां द्वार गुप्त रख दिया। अब जिसने खोलना है वह गुरू के द्वार पर आकर भावना बनाये, प्यार लाये -

*गुरूद्वारै लाइ भावनी इकना दसवा दुआर दिखाइआ॥* *पृष्ठ - 922*

जब प्यार हृदय में समा जायेगा तो युक्ति मिल जाती है नाम जपने की। उसके साथ फिर सुरत दसवें द्वार में चढ़ जाती है। जब दसवां दरवाज़ा दिखाई देता है तो -

*तह अनेक रूप नाउं नव निधि तिस दा अंतु न जाई पाइआ॥*
*पृष्ठ - 922*

अन्त ही नहीं है वहाँ अगम निगम का ज्ञान हो जाता है -

*कहै नानकु हरि पिआरै जीउ*
*गुफा अंदरि रखि कै वाजा पवणु वजाइआ॥* *पृष्ठ - 922*

इस स्थान पर पहुँच कर जो महाराज कहते हैं बार बार कि वाहिगुरू सभी में बसता है -

*सभै घट रामु बोलै रामा बोलै राम बिना को बोलै रे॥*
*पृष्ठ - 988*

इसका ज्ञान हो जाता है। छठी sence जाग जाती है, तीसरा नेत्र, तीसरा तिल, शिवनेत्र, बिअन्न अखड़ियाँ जिसे कहते हैं वे खुल जाती हैं और वहाँ परमेश्वर दिखाई देने लग जाता है -

*दसम दुआरा अगम अपारा परम पुरख की घाटी।*
*ऊपरि हाटु हाट परि आला आले भीतरि थाती॥* *पृष्ठ - 974*

*देही नगरी नउ दरवाजे। सिरि सिरि करणैहारै साजे।*
*दसवैं पुरखु अतीतु निराला आपे अलख लखाइआ॥* *पृष्ठ - 1039*

सो वाहिगुरू वहाँ रहता है। वह कृपा करता है, गुरू मिलाता है फिर गुरू से शबद मिल जाता है। सो इस प्रकार महाराज कहते हैं कि उसकी युक्ति यह है कि भाई! इस जीव की सुरत नौ दरवाजों में घूमती फिरती है, दसवें का इसे ज्ञान ही नहीं है -

*धारना - नौ घर देख जो कामण भूली,*
*वसत अनूप न पाई जी - 2, 2*
*वसत अनूप न पाई जी, वसत अनूप न पाई जी 2, 2*
*नौ घर देख जो कामण भूली,...............।*

यह जीव आत्मा नौ घरों में भटक गया। आंखों द्वारा बाहर की तरफ भागा फिरता है, कानों से निन्दा, जीभ द्वारा सारा दिन बक बक करते समाप्त हो जाता है। इन दरवाज़ों द्वारा भागा ही फिरता है बाहर की तरफ। ऐसे समझ लो कि एक पन्छी था बड़े आराम से रहता था एक मन्दिर में। उस मन्दिर के नौ दरवाजे बाहर को खुलते थे और एक दरवाज़ा अन्दर को खुलता था जिधर बहुत आराम था। ठण्डा कमरा था। पन्छी कहीं बाहर निकल गया। अब उसे अपना घर नहीं मिलता। बेचारा नौ दरवाजों में ही भटकता फिरता है, काफी समय बीत गया, अपना घर न मिला। इसी प्रकार हमारा जीव आत्मा, परमात्मा से बिछुड़ कर अरबों, खरबों सालों से साध संगत जी, भटकता फिरता है, कुत्ता बिल्ला बनता फिरता है पर इसे अपना घर न मिल सका। अब इसे मनुष्य देही मिल गई और इसके अन्दर अब इसे अपना घर ढूँढने का अवसर मिला है, यह कैसे मिलता है? महाराज कहते हैं -

*नउ दर ठाके धावतु रहाए॥* *पृष्ठ - 124*

आँखों को ठाक (बन्द कर) लो। बन्द कर देते हैं न मन्त्र पढ़कर। जैसे किसी को साँप डंक मार जाये तो साँप के मन्त्रों के जानने वाला मन्त्र पढ़कर रस्सी या धागा बान्ध कर ठाक (रोक) देता है फिर ज़हर नहीं चढ़ती। दाढ़ दुखती हो ठाक दी जाये फिर नहीं दुखती। इसी प्रकार महाराज कहते हैं कि नौ दरवाज़ों को ठाक लो - वाहिगुरू वाहिगुरू करके बाणी

पढ़कर। जब ये ठाके जायेंगे फिर -

*दसवै निज घरि वासा पाए।* *पृष्ठ - 124*

दसवे द्वार में अपने आप ही वास हो जायेगा -

*उथै अनहद सबद वजहि दिनु राती गुरमती सबदु सुणावणिआ॥*
*पृष्ठ - 124*

दिन रात वहाँ अनहद शबद की धुन हो रही है पर गुरू की मति धारण करने से वह शबद सुना जा सकता है। जिज्ञासु पूछते हैं, महाराज! कोई और भी निशानी है? महाराज कहते हैं -

*जह झिलमिलिकारु दिसंता। तह अनहद सबद बजंता।*
*जोती जोति समानी। मै गुरपरसादी जानी।*
*रतन कमल कोठरी। चमकार बीजुल तही॥* *पृष्ठ - 657*

वहाँ प्रकाश होता है, प्रकाश ही प्रकाश होता है फिर -

*नेरै नाही दूरि। निज आतमै रहिआ भरपूरि॥* *पृष्ठ - 657*

कईयों को नज़दीक दिखाई देता है और कईयों को नज़दीक नहीं बल्कि दूर दिखाई देता है। जो बाहर भटकते फिरते हैं उनके लिये नज़दीक नहीं, दूर है पर दूसरों के लिये पास है। जहाँ मैं रहता हूँ, वहीं परमात्मा रहता है -

*जह अनहत सूर उजारा। तह दीपक जलै छंछारा॥* *पृष्ठ - 657*

महाराज कहते हैं ये पहचान है। भाई! नौ दरवाज़ों को बन्द कर ले, गुरू शबद द्वारा बन्द किये जाते हैं और कोई मन्त्र नहीं है इनको बन्द करने के लिये।

सो साध संगत जी! सारी बात है गुरू की कृपा की। पूरे गुरू की कृपा जिस पर हो जाये, उसका फिर निज घर में वास हो जाता है। निज घर वह है जहाँ परमेश्वर वाहिगुरू रहता है। वहाँ परम आनन्द है, सुख ही सुख है, दुख का नामों निशान नहीं है। अरबों खरबों गुणा अधिक सुख है सारे भोगों से - बैकुंठ से भी अधिक पर मिलता उसे है जिस पर गुरू की कृपा हो जाये। इस प्रकार पढ़ लो -

*धारना - किरपा पूरिआं गुरां दी हो जाए,*
*निज घर वासा मिलदै - 2, 2*
*निज घर वासा मिलदै, निज घर वासा मिलदै - 2, 2*
*किरपा पूरिआं गुरां दी.......................।*

*बाहरि ढूंढन ते छूटि परे गुरि घर ही माहि दिखाइआ था॥*
*पृष्ठ - 1002*

गुरू ने कृपा करके इस शरीर में ही दिखा दिया। इसलिए कहते हैं तू बाहर मत ढूँढता फिर –

***काहे रे बन खोजन जाई।***
***सरब निवासी सदा अलेपा तोही संगि समाई॥*** *पृष्ठ - 684*

तेरे साथ ही रहता है वाहिगुरू, परमेश्वर।

कई आकर कहते हैं जी हमें डर लगता रहता है। भाई! अपने अन्दर की तरफ देख लिया कर। गुरू तेरे साथ ही रहता है, दूर नहीं है, सन्त उसके साथ ही रहते हैं क्योंकि उस घर में वास मिला हुआ होता है साधुओं को –

***घर महि घरु देखाइ दे सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु॥***
*पृष्ठ - 1290-1291*

गुरू इस शरीर रूपी घर में वह घर दिखा देता है जिसमें परमेश्वर, वाहिगुरू रहता है और मैं रहता हूँ, आत्मा रहती है –

***पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु॥*** *पृष्ठ - 1290*

वहाँ की निशानी है पाँच शब्द बजते हैं, धुन उठती है दिन रात –

***दीप लोअ पाताल तह खंड मंडल हैरानु।***
***तार घोर बाजिंत्र तहि साचि तखति सुलतानु॥*** *पृष्ठ - 1291*

वहाँ सच के तख्त पर वाहिगुरू बैठा है –

***सुखमन कै घरि रागु सुनि सुंनि मंडलि लिवलाइ।***
***उलटि कमलु अंम्रितु भरिआ इहु मनु कतहु न जाइ।***
***अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ॥*** *पृष्ठ - 1290*

ये बहुत गहरी बातें हैं। नाम जपने वाले, शौक रखने वाले, इन्हें ज़रूर समझने की कोशिश करें कि महाराज ने यह जो फ़रमान किया है, 'उलट कमल' क्या हुआ? अन्दर अमृत कैसे भर जाता है? अन्दर तो अमृत है नहीं। महाराज कहते हैं कि अन्दर अमृत भरा पड़ा है –

***घर ही महि अंम्रितु भरपूरु है मनमुखा सादु न पाइआ।***
***जिउ कसतूरी मिरगु न जाणै भ्रमदा भरमि भुलाइआ।***
***अंम्रित तजि बिखु संग्रहै करतै आपि खुआइआ॥*** *पृष्ठ - 644*

हम तो ज़हर इकट्ठी किये जा रहे हैं, अन्दर अमृत के भण्डार भरे पड़े हैं। महाराज कहते हैं कर ले स्नान अमृत कुन्ड में, तेरा कमल उलटा हुआ पड़ा है। यह जब सीधा हो गया, तुझे अमृत की लहरें आया करेंगीं, अमर हो जायेंगा फिर मरेगा नहीं दोबारा। वाहिगुरू में समा जायेंगा जिस समय बिना जीभ से नाम जपने का तुझे ज्ञान हो गया। सो इस प्रकार इस

मन को जब हमने रोक लिया; पूरा गुरू मिल जाये, दशम द्वार की प्राप्ति हो जाती है –

*धावत थंमिआ सतिगुरि मिलिऐ दसवां दुआरु पाइआ।*
*तिथै अंम्रित भोजनु सहज धुनि उपजै जितु सबदि जगतु थंमि रहाइआ॥*
*पृष्ठ – 440*

गुरू महाराज ने ये बातें ऐसे तो नहीं लिखी, हम तो समझने का प्रयत्न ही नहीं करते।

पहली कक्षा में जब हम दाखिल हुआ करते थे उस समय हमें घुग्गीआं (पंछी) कौवों, बन्दरों आदि की बातें पढ़ाया करते थे समझाने के लिये कि दो बिल्लियाँ लड़ पड़ी रोटी के लिये। वहाँ बन्दर आ गया रोटी का बंटवारा करने के लिये। वह रोटी कभी एक पलड़े में फालतू डाल देता और बराबर करने के लिये फालतू रोटी खा लेता, कभी दूसरे पलड़े में फालतू डाल देता। ऐसे करते करते दोनों की रोटी खा गया; फिर कौवे की कहानी आदि आदि। ये बातें तो पहली, दूसरी, चौथी कक्षा तक के बच्चों के लिये होती हैं। जब आदमी उच्च पढ़ाई करता हुआ आगे बढ़ता चला जाता है फिर और बातें हुआ करती हैं। हम तो पहली कक्षा ही नहीं छोड़ते। पढ़ाने वाला अध्यापक पहली जमात को पढ़ाता है, कितना कठिन है? किसी ने पी. एच. डी. की हो, पहली कक्षा को पढ़ाने के लिये उसे लगा दो, उसके लिये बहुत कठिन है क्योंकि हम समझने की कोशिश नहीं करते, सिख बनने का यत्न ही नहीं करते, आगे बढ़ना ही नहीं चाहते, वहीं पर ही रहना चाहते हैं। गुरू चाहे कुछ भी कहता रहे हम अपनी ज़िद नहीं छोड़ते, एक इंच भी हम आगे नहीं बढ़ना चाहते। जहाँ पैदा होते समय थे वहाँ से पीछे तो चले गये पर आगे न बढ़ सके, प्रगति न कर सके – बिल्कुल भी। उन्नति इसलिये न कर सके क्योंकि हम बाणी पर विचार करके कोशिश ही नहीं करते, चलने की उसके अनुसार।

महाराज कहते हैं ***'धावत थंमिआ सतिगुरि मिलिऐ'*** अर्थात जब गुरू ने मन्त्र दे दिया और युक्ति बता दी फिर यह मन स्थिर होकर अपने निज घर दसवें द्वार में प्रवेश कर जाता है –

*............हरि अंम्रितु नामु सुख वासु।* *पृष्ठ – 1414*

वहाँ फिर अमृत का भोजन मिलता है, भूख नहीं लगती। नाम के आहार से तृप्त रहता है। ***'सहज धुनि उपजै'*** सहज ही वहाँ नाम की धुन उठती है। ***'जितु सबदि जगतु थंमि रहाइआ'*** उस शबद की प्राप्ति हो जाया

करती है जिसके द्वारा अकाल पुरुष ने पहले दिन मुख से कहकर यह सारा संसार रच दिया –

*प्रथम ओअंकार तिन कहा। सो धुन पूरि जगत मो रहा॥*
*पृष्ठ - 1580 (स्त्री दसम ग्रन्थ)*
*कीता पसाउ एको कवाउ। तिस ते होए लख दरीआउ॥ पृष्ठ - 3*

*एक कवावै ते सभि होआ॥ पृष्ठ - 1003*

वह शबद तो कहीं गया नहीं, वह धुन तो अन्दर बज रही है –

*नाम के धारे सगले जंत। नाम के धारे खंड ब्रहमंड॥ पृष्ठ - 284*

*तह अनेक वाजे सदा अनहदु है सचे रहिआ समाए।*
*इउं कहै नानकु सतिगुरि मिलिऐ धावतु थंमिआ*
*निज घरि वसिआ आए॥ पृष्ठ - 441*

हमारा लक्ष्य मनुष्य यौनि को प्राप्त करके सिरे पर पहुँचने का है।

ये सारे विचार गुरू दसवें पातशाह से माता जीतो जी ने श्रवण किये। विचार करके फिर महाराज जी के पास आये। कहने लगी, ''सच्चे पातशाह! हमें सत्संग बहुत कम प्राप्त होता है। उस तरह से नहीं हम सत्संग में बैठकर सुन सकते जैसे गुरसिख सुनते हैं। ये आपके चरणों में आकर अपनी सारी दुख तकलीफें बताते हैं, नाम जपने की विधि पूछते हैं पातशाह! हम पर भी कृपा करो, कोई युक्ति बताओ कि कैसे हम नाम जप कर अपने निज घर में पहुँच सकते हैं, नाम की ऊपर वाली मंज़िल पर पहुँच सकते हैं।'' सो इसके बारे में महाराज फ़रमाने लगे कि देखो! यह सारा काम मन का है। यदि इसको दुनियां के धन्धों में लगा दो तो दुनियाँ दार बन जाता है और यदि परमेश्वर की ओर लगा दो फिर यह आत्माकार वृत्ति बनती चली जाती है परमात्मकार, ब्रह्माकार वृत्ति बनती चली जाती है। यह मन का ही काम है। सो सबसे पहले ज़रूरी है कि मन को प्यार से पुचकार कर, सजा देकर, समझा बुझा कर, इसे रास्ते पर लाने का यत्न करें –

*धारना - साध पिआरिआ, पहिलां मन आपणे नूं - 2, 2*
*मन आपणे नूं पहिलां मन आपणे नूं - 2, 2*
*साध पिआरिआ...................।*

माता जीतो जी हाथ जोड़कर कलगीधर पातशाह के चरणों में बैठे हैं। महाराज कहते हैं ''बताइये, कैसे आना हुआ? क्या मनशा है आपकी? मन में क्या विचार है?'' माता जी कहती हैं, ''पातशाह! यह जो परम पद को रास्ता जाता है, अकाल पुरुष की ओर जो रास्ता जाता है, यह

मैंने सुना है कि गुप्त मार्ग है, यह प्रत्यक्ष मार्ग नहीं है, गुरू के बिना यह मार्ग नहीं मिलता। कृपा करके मुझे भी इस रास्ते का ज्ञान दीजिए ताकि मैं भी परमपद की प्राप्ति करके जन्म मरण से सदा के लिये मुक्त हो जाऊँ और आपके चरणों में निवास करूँ।'' महाराज कहने लगे कि देखो! सबसे पहली बात यह है कि मन को साधना पड़ता है -

*मन ते सभि साधन बने, मन लग सभि उपदेस।*

*पृष्ठ - 5520 (श्री गु. पुर. सू. ग्रन्थ)*

जब तक मन है तब तक उपदेश है। जब मन 'अ-मन' हो गया, 'उनमन' हो गया उस समय फिर इसे किसी उपदेश की ज़रूरत नहीं रहती क्योंकि वहाँ पहुँच जाता है जहाँ जाकर आगे कोई उपदेश ही नहीं है। यह मन को समझाने के लिये ही सारा कुछ है -

*मन समझावन कारने कछूअक पड़ीऐ गिआन॥ पृष्ठ - 340*

ये सारे साधन मन के हैं -

*मनूआ पलटे गयान हुइ मन लागे रति शेश॥*

*पृष्ठ - 5520 (श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ)*

मन पलट जाये तो ज्ञान हो जाता है और यदि मन लग जाये तो वाहिगुरू जी के साथ प्यार हो जाता है। माता जी कहने लगी ''पातशाह! कृपा करके युक्ति बताओ। मेरे मन में बहुत चाव है इस बात का कि मैं इस पदवी को प्राप्त करूं।''

महाराज कहते हैं, देखो, काफी विचार गुरू नानक पातशाह ने राजा शिवनाभ के साथ की। (वह मुझे दोहराने की ज़रूरत नहीं है। वह सारा तुम सत्संग में सुन चुके हो) ये दस यम हैं और दस नेम। बाकी पाँच साधन और हैं ये सभी आपने सुने हुए हैं। अब तुम्हें practically (व्यवहारिक) रूप में प्रयोग करके बताते हैं। अपने श्वांस को देखो - अन्दर जाते हुए को और बाहर आते हुए को। कहाँ सुरत टिके कैसे पता चलेगा? कहते हैं जब नाक की करूमली (नाक के अग्र भाग) के पास सुरत को टिकाओगे फिर इसे पता चलेगा कि अब श्वांस मेरे अन्दर चला गया है, अब बाहर आ गया है, अब मैंने रोका हुआ है। जब सांस रुक गया तब इस पर मन सवारी करता है यह फिर मन भी साथ रूक जायेगा। इस प्रकार वृत्ति को अर्न्तमुख खींचो। अन्दर खींचकर मन को भागने से बचाओ। सांस पर मन को रोको फिर ध्यान सुरत के साथ या आज्ञा चक्र में या जहाँ से सांस आता है वहाँ टिका लो और सांस की निगरानी करो कि

खाली सांस अन्दर जा रही है या गुरू मन्त्र के साथ भर कर अन्दर जा रही है। करके देखो, पता चल जायेगा।

जिन्हें युक्ति आती है, उन्हें पता चल जाता है कि मेरा सांस अन्दर को भरा हुआ जा रहा है या खाली। युक्ति यह है साध संगत जी! पर पहली कक्षा वाले के लिये तो यह बहुत कठिन है यह समझना, आँठवी वाले के लिये भी मुश्किल है और दसवी वाले के लिए भी कठिन है। उनके लिये तो यह है कि माला ले ले 108 मनकों वाली, मूल मन्त्र का पाठ किया करें -

*१ओंकार सतिनामु करता पुरुखु निरभउ निरवैरु*
*अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि॥ जपु॥*
*आदि सचु जुगादि सचु। है भी सचु। नानक होसी भी सचु॥*

*पृष्ठ - 1*

जब यह मूल मन्त्र पक्का हो जाये, अन्दर रसना जपने लग जाती है तब समझ लो कि आँठवी जमात, मिडल पास कर ली रूहानियत की। इसके पीछे गुरू का आर्शीवाद चाहिए; अपने आप नहीं जपा जाता जब तक गुरू धारण नहीं करता। पाँच प्यारे अब गुरू धारण करवाने की रस्म कर रहे हैं। जिन्होंने गुरू धारण किया हुआ है वे आदमी जप सकते हैं, दूसरे का जपा हुआ फलीफूत नहीं हुआ करता।

फिर दसवीं कक्षा आ जाती है रूहानियत की। माला के साथ कहो 'सतिनाम वाहिगुरू' 'सतिनाम वाहिगुरू' 'राम राम' - जो भी किसी का मन्त्र है, माला के साथ जपो। चाहे पंचनाम है, चाहे १ओंकार सतिनाम वाहिगुरू है क्योंकि यह भी पन्च नाम है गुरू घर का, यह किसी विधि से जपो, जपो तो सही। पहले माला से जपना शुरू करो, जब माला से अढ़ाई घंटे जपने की आदत पड़ जाये, समझ लो कि दसवीं जमात (कक्षा) रूहानियत की पास कर ली।

फिर बाहरवीं कक्षा की पढ़ाई शुरू हो जाती है। वह ऐसे होती है कि होंठ हिलते हों पर बोलता नहीं। इसका हज़ार गुना फल बढ़ना शुरू हो गया अर्थात 1000 बार वाहिगुरू वाहिगुरू बोल कर कहो, एक वार होंठ हिलाकर जीभ से कह दो चुप-चाप, एक समान है।

इसके बाद फिर अगली पढ़ाई शुरू हो जाती है। इसे ***'मानसिक नाम'*** कहते हैं -

*बिनु जिहवा जो जपै हिआइ। कोई जाणै कैसा नाउ॥ पृष्ठ-1256*

इसकी विधि होती है श्वांस के साथ। पहले एकान्त में बैठकर पाँच सात सांस लो लम्बे लम्बे, और देखो कि अब मेरा सांस अन्दर को जाता है अब बाहर जाता है फिर अन्दर को जाते हुये सांस के साथ 'सतिनाम' कह दो, जब सांस बाहर को आता है तो वाहिगुरू कह दो। यह जब परिपक्व हो जाये तो फिर 'वाहि' अन्दर को जाते समय सांस द्वारा सुरत के साथ कहो और 'गुरू' बाहर को सांस छोड़ते समय कहो। इस प्राकर सांस ने धीमा पड़ते जाना है। फिर श्वांस को छोड़ देना है और आज्ञा चक्र में वृत्ति ने चले जाना है। आज्ञा चक्र में जाकर थोड़ा थोड़ा प्रकाश आने लग जाता है और अन्दर से ही नामधुन उठने लग जानी है। फिर नाम जपना नहीं, अन्दर से ही वाहिगुरू मन्त्र सुनना, धुन के साथ। धुन कैसी होती है? मेरे साथ बोलो सभी -

वा.............हि.............गु............रू...............
वा.............हि.............गु............रू...............
वा.............हि.............गु.............रू..............
वा.............हि.............गु..............रू.............

यह धुन बन जाती है। जब यह धुन बन गई फिर बोलना नहीं मुँह से, सांस छोड़ देना है। सांस आये, न आये; उसकी मौज है यह -

***धुनि महि धिआनु धिआन महि जानिआ गुरमुखि अकथ कहानी॥***
*पृष्ठ - 879*

यह धुन ऊँची होती चली जाती है। ज्यों ज्यों ऊँची होगी त्यों त्यों ऊपर को चढ़ती जायेगी त्रिकुटी में चली जायेगी।

यहाँ पर पहुँचते ही ध्यान शुरू हो जाता है - गुरू का ध्यान, शबद का ध्यान, अनहद का ध्यान - तीनों ध्यान। इस ध्यान में 'अनहद का ध्यान' जब शुरू हो जाता है तो गूंज पैदा होती है अन्दर, फिर यह दसवें द्वार की ओर रूख रखता है फिर धीरे धीरे दशम द्वार में पहुँच जाता है फिर इसे नहीं पता चलता कि सांस आ रही है या नहीं, मैं बैठा हूँ या नहीं, कितने घटों से बैठा हूँ अर्थात समाधि लग जाती है। इस प्रकार हम आराम से दसवें द्वार तक पहुँच सकते हैं। सो वासनाएं दूर करके सभी बातों को समझ कर करो।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, यह शरीर पाँच तत्वों का बना हुआ है, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं, पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं, पाँच प्राण, पाँच पवन हैं, मन, चित्त, बुद्धि, अहंमभाव है। इसके ऊपर हम रहते हैं जिसे ***आत्मा*** कहते

हैं। यहाँ वृत्ति लेकर चले जाओ। यह वृत्ति दसवें द्वार में जाकर खुल जानी है। जब खुल गई, वहीं स्वंय परमेश्वर 'परम तत्व' जिसे कहते हैं उसके साथ नाम ने मिला देना है। वहाँ पहुँच कर जो आनन्द है बताया नहीं जा सकता –

*कबीर चरन कमल की मउज को कहि कैसे उनमान।*
*कहिबे कउ सोभा नही देखा ही परवानु॥* पृष्ठ - 1370

सो माता जीतो जी को यह युक्ति बता दी महाराज जी ने कि आप इस तरह से नाम का सिमरण करो। करते करते जब श्वांस काबू में आ जायेगी, धुन जाग पड़ेगी, उस समय तुम्हारे रोम रोम में से नाम धुन आनी शुरू हो जायेगी सभी रोम रोम में vibration (कम्पन) होने लगेगी, शरीर नाम जपता लगेगा कि रोम रोम नाम जप रहा है। कितना फल मिलेगा? राजा जनक ने यही नाम एक पल भर जपकर सारे नरकों के कुण्ड खाली करवा दिये थे क्योंकि युक्ति थी, दशम द्वार का नाम था जो उसने जपा था। माता जीतो जी उसी समय समझ गये क्योंकि उत्तम अधिकारी थे। हमारे जैसे नहीं थे कि समझ में नहीं आती थी कि क्या बात है? है तो हम मनुष्य, आदमी हैं और सारी बातें हम समझ जाते हैं – ईर्ष्या, नफ़रत, चुगली, निन्दा आदि सारी बातें, पर यह नाम की बात नहीं समझते क्योंकि रुचि नहीं बनती हमारी, रुचि किसी और तरफ है। सो माता जी की रुचि थी। उन्हें महाराज जी ने कहा कि अल्प आहार किया करो, कम सोया करो और दिन रात लगे रहो।

माता जी चले गये तथा उसी समय से लग गये, एक सैकिन्ड भी बर्बाद नहीं किया। यदि एक श्वांस भी बिना नाम के चला जाये तो उन्हें पश्चाताप लग जाता है कि एक श्वांस मेरा बेकार चला गया। आप अमृत बेला में उठती हैं, नींद त्याग दी, बहुत कम नींद रह गई। सो महाराज कहते हैं कि अमृत बेला में कौन जागता है? वे जागते हैं प्यारे! जिन्हें लगन लग गई जिनके हृदय में आकर्षण पैदा हो गया –

*सीने खिच जिनां ने खाधी, उह कर आराम नहीं बहिंदे।*
*निहुं नाले नैणां की नींदर उह दिने रात पए वहिंदे।*
*इको लगन लगी लई जांदी, है टोर अनंत उनां दी।*
*वसलों उरे मुकाम न कोई, सो चाल पए नित रहिंदे॥*

*भाई वीर सिंह जी*

*धारना - अंम्रित वेले ओ, कौण जागदे - 2, 2*
*कोई जागदे ने, राम पिआरे - 2, 2*
*कोई जागदे ने राम पिआरे संगते, कौण जागदे,*

*अंम्रित वेले ओ,..................।*

रात का पिछला पहर सोने के लिये नहीं हुआ करता साध संगत जी! सुरत वालों को चाव उठता है उस समय -

*चउथै पहरि सुबाह कै सुरतिआ उपजै चाउ।*
*तिनां दरीआवा सिउ दोसती मनि मुखि सचा नाउ॥ पृष्ठ - 146*

*झालागे उठि नामु जपि निसि बासुर आराधि।*
*कारा तुझै न बिआपई नानक मिटै उपाधि॥ पृष्ठ - 255*

*भिंनी रैनड़ीऐ चामकनि तारे। जागहि संत जना मेरे राम पिआरे॥*
*पृष्ठ - 459*

राम के प्यारे, जिनके हृदयों में छिद्र हो गये, आकर्षण पैदा हो गई, वे नहीं सोये रहते, उठकर बैठ जाते हैं क्योंकि प्यार है हृदय में -

*राम पिआरे सदा जागहि नामु सिमरहि अनदिनो॥ पृष्ठ - 459*

वे सदा जागते हैं हर वक्त नाम सिमरण करते हैं, एक श्वांस को भी व्यर्थ नहीं जाने देना चाहते -

*चरण कमल धिआनु हिरदै प्रभ बिसरु नाही इकु खिनो॥*
*पृष्ठ - 459*

पलक झपकने जितना समय भी वाहिगुरू को नहीं भूलते। ये कठिन परिश्रम हुआ करता है साध संगत जी, इससे पहले नहीं मिला करता यह द्वार। इतनी लगन लग जाये तब मिलता है।

महाराज जी (सन्त ईशर सिंह जी राड़ा साहिब वालों)को जब लगन लगी, दसवीं कक्षा में पढ़ते थे और रेरू साहिब (रामपुर दोराहे के पास) आ गये। आपको (रेरू साहिब वाले सन्त अतर सिंह जी महाराज ने) नाम की दात दे दी। उसी समय से ही आपको सोना पूरी तरह से भूल गया कि सोना क्या होता है? एक बार प्रवचन करते हुये आपने बताया ''हमने 9 वर्ष तक धरती से पीठ नहीं लगाई। हर समय सिमरण में रहते थे या ध्यान में रहते थे; कोई वचन नहीं किया करते थे। या तो कीर्तन करना, या बाणी का पाठ करना, या नाम जपना; वचन नहीं करना। संगत को भी बहुत कम मिलते थे क्योंकि आकर्षण बहुत जबरदस्त था।'' 'वसलों उरे मुकाम न कोई सो चाल पये नित रहंदे' वे मिलाप से पहले नहीं रुकते, मिलाप तक पहुँचने के बाद ही ठहरते हैं क्योंकि यह परम तीव्र वैराग हुआ करता है।

एक ***'मन्द वैराग'*** हुआ करता है। वैराग हो गया, डेरे में आ गये पर यहाँ आकर वैराग भूल जाता है और कुछ दिनों के बाद छोड़ कर भाग जाते हैं। यह

मन्द वैराग हुआ करता है। इसे गधा वैराग भी कहते हैं।

दूसरा हुआ करता है ***'घोड़ा वैराग'।*** थोड़े दिन रहता है सेवा करता है बड़े चाव के साथ। पुन: वृत्ति फिर विषय विकारों में पड़ जाती है, लड़ाई झगड़े शुरू कर देता है फिर चला जाता है। यह घोड़ा वैराग कहलाता है। थोड़ी देर रहता है फिर टूट जाता है।

तीसरा होता है ***'शेर वैराग'***। घर बार छोड़ दिया। अब वाहिगुरू से मिलाप किये बिना नहीं रुकना। अब वहाँ पहुँच कर दम लेना है।

*चरण कमल धिआनु हिरदै प्रभ बिसरु नाही इकु खिनो।*
*तजि मानु मोहु बिकारु मन का कलमला दुख जारे।*
*बिनवंति नानक सदा जागहि हरि दास संत पिआरे॥ पृष्ठ - 459*

वे उठकर प्रभु का नाम लेते हैं। बाकी जो हम लोग हैं, हम तो दिन रात लुटे जा रहे हैं -

*इस देही अंदरि पंच चोर वसहि कामु क्रोधु लोभु मोहु अहंकारा।*
*अंम्रितु लूटहि मनमुख नही बूझहि कोइ न सुणै पुकारा।*
*पृष्ठ - 600*

*सगल सहेली अपनै रस माती। ग्रिह अपुने की खबरि न जाती।*
*मुसनहार पंच बटवारे। सूने नगरि परे ठगहारे॥ पृष्ठ - 182*

इन ठगों ने सूना नगर देखकर कि मालिक तो सोये पड़े हैं, लूट लिया इसे। इस प्रकार पढ़ लो -

*धारना - लुट्टे गए मनमुख, घूक सुत्ते रहिंदे रात नूं -2,2*
*सुत्ते रहिंदे रात नूं, सुत्ते रहिंदे रात नूं - 2, 2*
*लुट्टे गए मनमुख.................।*

गुरू के उपदेश को न मानने वाले शराब, कबाब खा पीकर सो गये, निश्‍चिन्त होकर सो गये। महाराज कहते हैं उन्हें नहीं पता कि हमारा समय बेकार जा रहा है, हमें पाँच चोर लूट रहे हैं। महाराज कहते हैं -

*गुरमुखि जागि रहे दिन राती॥ पृष्ठ - 1024*

गुरमुख कहते हैं कि एक श्वांस भी नाम के बिना न चला जाये -

*साचे की लिव गुरमति जाती॥ पृष्ठ - 1024*

क्योंकि उनके अन्दर लिव लगी हुई होती है -

*मनमुख सोइ रहे से लूटे गुरमुखि साबतु भाई हे॥ पृष्ठ - 1024*

गुरू से प्यार करने वाले पूरी की पूरी पूंजी साथ ले गये, नाम का धन अपने साथ ले गये, जो बाकी थे उनके 24 हज़ार सांस लुट गये।

दिन काम में लुट गया, रात सो कर लुट गई। ऐसे तो मिलती नहीं दातें, साध संगत जी! ये तो उन्हें मिलती हैं जो नींद को खण्डित करते हैं; अमृत बेला में उठकर बैठ जाते हैं स्नान करके, मन को एकाग्र करते हैं; चित्त वृत्ति को एकाग्र करके नाम सिमरण में लगा देते हैं। दूसरों को ये वर नहीं मिला करते। इस तरह पढ़ लो -

*धारना - किवें दातां पावेंगा, किवें दातां पावेंगा - 2, 2*
*सुतिआं रहि के रात नूं, सुतिआं रहि के रात नूं - 2*
*किवें दातां पावेंगा,.......................।*

*फरीदा राति कथूरी वंडीऐ सुतिआं मिलै न भाउ॥ पृष्ठ - 1382*

वाहिगुरू के द्वार पर जो रहमतें बांटी जाती हैं नाम की, वे रात को अमृत बेला में बांटी जाती हैं और जो सोये पड़े रहते हैं, उन्हें नहीं मिलती-

*जिना नैण नींद्रावले तिना मिलणु कुआउ॥ पृष्ठ - 1382*

जिनकी आखों में नींद भरी पड़ी है, उन्हें कैसे मिल जायेगी यह दात -

*कबीर सूता किआ करहि बैठा रहु अरु जागु।*
*जा के संग ते बीछुरा ताही के संगि लागु॥ पृष्ठ - 1371*

बैठा रह जागकर। क्यों बैठा रह? क्योंकि तेरा बिछोड़ा हो गया प्रभु से, तू उसके साथ मिलने का प्रयत्न कर ***'जा के संग ते बीछुरा ताही के संगि लागु॥'*** एक स्थान पर महाराज जी फ़रमान करते हैं कि प्यारिया! तू दिये गये उपदेश को तो समझता नहीं, तू अपने आपको ज़िन्दा समझता हैं?

*सो जीविआ जिसु मनि वसिआ सोइ। नानक अवरु न जीवै कोइ॥*
*पृष्ठ - 142*

कहते हैं वह ज़िन्दा है जिसके मन में वाहिगुरू बस गया, बाकी तो सारे मुर्दे ही हैं। जिज्ञासु कहते हैं कि सुन्दर आदमी भी मुर्दा हैं, पैसे वाले भी मुर्दा हैं, सियाने आदमी भी मुर्दा हैं? महाराज कहते हैं हाँ भाई! सारे मुर्दा हैं -

*अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि ङिआनी धनवंत।*
*मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत॥ पृष्ठ - 253*

इसलिये कहते हैं भाई! जाग! यदि नहीं जागता तो तू ज़िन्दा ही मर गया समझ -

*धारना - तूं जिउंदा मर गिया ओ गाफला पिछली रात न जागिआ - 4*

*फरीदा पिछल राति न जागिओहि जीवदड़ो मुइओहि॥ पृष्ठ -1383*

कहते हैं जीवित ही मर गया। अमृत बेला जागने का समय होता है, सोने

का नहीं होता।

*झालाघे उठि नामु जपि निसि बासुर आराधि।*
*कारा तुझै न बिआपई नानक मिटै उपाधि॥* *पृष्ठ - 255*

वह समय तो नाम जपने का होता है -

*जे तै रबु विसारिआ त रबि न विसरिओहि।* *पृष्ठ - 1383*

याद रख, एक दिन काल ने आ जाना है फिर किसी ने तुझे यह बात नहीं कहनी प्यारे!

*धारना - तैनूं किसे ने जगाउणा नहीं,*
*रज्ज के सौं लईं, रज्ज के सौं लईं - 2, 4*

*कबीर सूता किआ करहि उठि कि न जपहि मुरारि।*
*इक दिन सोवनु होइगो लांबे गोड पसारि॥* *पृष्ठ - 1371*

फिर चाहे कितनी आवाज़ें लगाते रहना, फिर नहीं जागता यह; न तो किसी के जगाने पर जागता है न आप। उससे पहले पहले प्यारे! अमृत बेला का लाभ उठा ले। अमृत बेला नाम जपने का हुआ करता है, सोने का वक्त नहीं हुआ करता। तू तो नाम जपने के समय सो जाता है और यदि पाप करना हो तो भागा फिरता है फिर नहीं सोता। सो इस प्रकार जिनके मन में शौक है वे दिन रात जागते हैं और नाम जपते हैं। शरीर को भी थोड़ा ठीक रखते हैं और समय नहीं बर्बाद जाने देते ऐसे ही। हर समय परमेश्वर का नाम जपते हैं।

इस प्रकार माता जीतो जी ने अपनी खुराक कम कर दी, नींद कम कर दी; जब देखो, चौकड़ा मार कर बैठी रहतीं, दासियों के साथ बातें करनी कम कर दीं। आसन एक जगह पर लगाया हुआ है, अमृत बेला में जागती हैं। गुरू महाराज से पहले उठकर आप स्नान करती हैं। महाराज अपने स्व स्वरूप में लीन हो जाते हैं और आप जाकर आसन पर चौकड़ी लगाकर बैठ जाती हैं और जिस प्रकार युक्ति बताई है, उसी प्रकार शुरू कर देती हैं। दो महीने के अन्दर दशम द्वार में वृत्ति चढ़ गई। चार महीने के अन्दर प्रकाश ही प्रकाश हो गया अन्दर, रोम रोम में से माता जी को ऐसे लगने लगा कि जैसे मेरा तो रोम रोम नाम जपता है। इस प्रकार फ़रमान किया है महाराज ने -

*धारना - रोम रोम हरि धिआवे, गुरमुख पिआरे दा - 4*

*गुरमुखि रोमि रोमि हरि धिआवै। नानक गुरमुखि साचि समावै॥*
*पृष्ठ - 941*

अकेले अकेले रोम में से आवाज़ आती है नाम की। जितनी आवाज़ें हैं सारी परमेश्वर के नाम की बन गईं -

*हरहट भी तूं तूं करहि बोलहि भली बाणि॥* *पृष्ठ - 1420*

जानवर बोलते हैं पर माता जी को नहीं लगता कि ये गुटरगूं-गुटरगूं करते हैं बल्कि ऐसे लगते हैं कि ये सभी वाहिगुरू वाहिगुरू करते हैं -

***धारना - नाम हरी दा जपदे, सारे वणां दे पंखेरू -2, 2***
***वणां दे पंखेरू सारे वणां दे पंखेरू - 2, 2***
***नाम हरी दा जपदे,.............।***

***जो बोलत है म्रिग मीन पंखेरू सु बिनु हरि जापत है नही होर॥***
***पृष्ठ - 1265***

जब नाम में वृत्ति लग जाती है, गूढ़ हो जाती है तब सारी प्रकृत्ति नाम जपती दिखाई देती है। हवा भी नाम जपती है, पानी भी नाम जपता है, आकाश भी नाम जपता है। नाम की धुन सारे आकाश में समा जाती है फिर कुछ करने की ज़रूरत नहीं; नेत्र बन्द, केवल सुनने की ही ज़रूरत रह जाती है। साध संगत जी! ऐसी अवस्था जब हो जाती है फिर फुरना समाप्त हो जाता है और गगन मण्डल में निवास हो जाता है। यह मन मर जाता है और उनमन, रूहानी मन इसके अन्दर जाग जाता है, जिसके बारे में फ़रमान है -

***इहु मनु ले जउ उनमनि रहै। तउ तीनि लोक की बातै कहै॥***
***पृष्ठ - 342***

जब ऐसी अवस्था आ जाती है फिर भूत, भविष्यत, वर्तमान का ज्ञान हो जाता है; हज़ारों साल पहले बीता हुआ समय, सारा नेत्रों के सामने आ जाता है। पिछले जन्म सारे सामने आ जाते हैं और भविष्य की सारी बातें कि अब क्या हो रहा है, थोड़ी देर बाद क्या होने वाला है; सब कुछ पता चल जाता है। सो माता जी ऐसी अवस्था में पहुँच गई -

***भूत भविखत की सभि बात। भई रिदे महिं सभि बखयात।***
***गुर की गति जबि हूं मनि जानी। जंग बीच हुइ संतति हानी॥***
***पृष्ठ - 5523 (श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ)***

आज चौकड़ी लगाकर बैठी हैं अमृत बेला में। क्या देखती हैं कि आनन्दपुर साहिब के चारों ओर तैयारियाँ हो रही हैं, बहुत बड़ी फौज चढ़ कर आ रही है - दिल्ली से, लाहौर से, सरहन्द से फौज़ें आ रही हैं, पेशावर से आ रही हैं; बाई धार के पहाड़ी राजा, मार धाड़ होती है। इधर गुरू महाराज जी के पास 5000 मरजीवड़े सिख हैं - जान कुर्बान

कर देने वाले। माता जी थोड़ा सा हिले, वृत्ति एकाग्र की कि ये किधर चली गई है? दोबारा वृत्ति में फिर यही बात आ गई। कहने लगी यह क्या दिखाई देने लगा? फौजें दिखाई दे रही हैं, आनन्दपुर साहिब को चारों ओर से घेर लिया, बेअन्त सिख शहीद हो रहे हैं; ऐसा वक्त आ गया कि खाने पीने को भी कुछ न बचा। एक मुट्ठी छोले (चनों) की महाराज एक दिन में खाते हैं, साहिबज़ादों को एक एक मुट्ठी चनों की खाने को मिलती है। फिर देखती हैं कि अब दो दो दिन बाद एक मुट्ठी चनों की मिलने लग गई और सिख पत्ते उबाल उबाल कर खा रहे हैं, वृक्षों की छाल पीस पीस कर खा रहे हैं। फिर आगे देखती है कि बहुत सारे सिख शहीद हो गये। किला छुड़वाने के लिये षड़यन्त्र रचे जा रहे हैं और सिंह बेदावा दे रहे हैं।

माता जी ने फिर नेत्र खोले, मूर्च्छा सी खाई, भयानक दृश्य देखा न गया, फिर 'वाहिगुरू वाहिगुरू' कह कर सुरत लगाई पर फिर वैसे ही दृश्य सामने आ जाता है सारा। जैसे फिल्म होती है उसी तरह से रुक गई पूरी फिल्म सामने, और देख रही है कि महाराज किला छोड़ रहे हैं और दुश्मनों ने हमला कर दिया। सरसा नदी के किनारे तथा परिवार बिछोड़े के स्थान पर बहुत भयानक युद्ध हुआ। वर्षा हो चुकी है, ठक्का (बहुत ठण्डी हवा) चल रहा है, बहुत सर्दी है, दरिया (नदी) पार कर रहे हैं। केवल 40 सिंह (सिख) महाराज जी के साथ रह गये हैं। साहिबज़ादे बिछुड़ गये। छोटे साहिबज़ादे किसी और तरफ जा रहे हैं। माताएं किसी और स्थान पर रह गईं। सरसा नदी पार करने के बाद सिर्फ 40 सिंह महाराज के साथ रह गये। बड़ा भयानक दृश्य है। बेहोशी सी आ गई है। हैं! यह क्या दिखाई दे रहा है मुझे? फिर नेत्र बन्द कर लिए, वृत्ति फिर उसी स्थान पर पहुँच गई।

क्या देखती हैं कि चमकौर की कच्ची गढ़ी में बहुत भयानक युद्ध हो रहा है। सारे पंजाब में 10 लाख फौज है, जगह जगह पर चौकियां बनाकर घेरा डाला हुआ है। न कोई सिख आ सकता है, न कोई जा सकता है, अकेले गुरू महाराज उस कच्ची गढ़ी के अन्दर सारा दिन युद्ध कर रहे हैं और इनके प्यारे साहिबज़ादे अजीत सिंह और जुझार सिंह शहीद हो रहे हैं। साहिबज़ादा अजीत सिंह माता सुन्दरी जी के पुत्र थे और तीन छोटे साहिबज़ादे माता जीतो जी के थे। 14 वर्ष के अपने बच्चे को महाभयानक शत्रु जिनके 6-6 फुट, साढ़े 6-6 फुट कद, हाथियों जैसे बलिष्ठ;

उनके साथ युद्ध करता देख रही हैं। बच्चों को जख्म हो रहे हैं, बर्छे लग रहे हैं, तीर लग रहे हैं। अन्त में देखा कि टुकड़े टुकड़े होकर गिर पड़े............सहन न कर सकी माँ यह दृश्य। नेत्र खोले, नेत्रों में से अश्रु बह चले। पातशाह! यह क्या दिखाई देने लगा मुझे? यह मेरे मन का फुरना है या यह कोई बात है।

फिर सुरत अन्दर को ले गई तो छोटे साहिबज़ादों को देखा, नीवों में चिने जा रहे हैं। बार बार उन्हें कहा जा रहा है कि तुम धर्म छोड़ दो और दीन इस्लाम कबूल करो अन्यथा तुम्हें सजाये मौत with torture (कष्ट दे देकर) दी जायेगी। छोटे छोटे बच्चे नीवों में चिने जाते देखे, दम घुटता है, ईटों से अंग दबते चले जाते हैं देखो! देखती है कि दीवार गिर गई और इसके बाद दो भारी भरकम ज़ालिम उन की छतियों पर घुटने रख कर ऐसे जिब्बा (जुल्म) कर रहे हैं जैसे बकरे को जिब्बा करते हैं। इधर गुरू महाराज गढ़ी में से निकल रहे हैं अकेले जा रहे हैं, माछीवाड़े के जंगलों में अकेले पड़े हैं और वहाँ जाकर दो सिख मिलते हैं और उसके बाद का सारा दृश्य देखकर माता जी की वृत्ति न लगी। उस स्थान पर नहीं पहुँच पाती जहाँ पर अगम निगम का ज्ञान हो जाता है।

अमृत बेला में उठकर महाराज जी से मिलने के लिये सेवादार से अनुमति मंगवाई। आज्ञा दे दी, भेज दो। उस समय माता जी ने कुछ प्रार्थनाएं कीं। कहने लगी, ''पातशाह! आप जो खाली (रीते) होते हैं उन्हें भर देते हैं और भरे हुओं को खाली कर देते हो। जो नाशवान होते हैं उन्हें स्थापित (अमर) कर देते हो और स्थापित हुए का नाश कर देते हो। कृपा करो दुनियाँ में वंश रख लो अपना, यह मेरी आस पूरी कर दो, मैं प्रार्थना करती हूँ।'' ऐसे प्रार्थना करती है, आधा आधा पढ़ो भाई -

***धारना - बंस रक्ख लै कलगीआं वालिआ***
***जग्ग ते निशान रहि जूगा - 2, 2***
***मेरे साहिबा जग्ग ते निशान रहि जूगा - 2, 2***
***बंस रक्ख लै कलगीआं वालिआ.........॥***

''पातशाह! आज जब मैं भजन कर रही थी क्या देखा, इतना भयानक दृश्य! आनन्दपुर साहिब को आप छोड़कर जा रहे हो; बच्चे एक एक करके शहीद हो रहे हैं, नीवों में चिने जा रहे हैं, माता जी शहीद हो रही हैं। सभी कोई इधर कोई उधर, गुरसिखों को कोई रास्ता नहीं सूझता, जिधर जिसका मुँह है उधर ही जा रहा है। पातशाह! यह क्या देखा मैंने?''

महाराज कहते हैं ''ठीक देखा आपने, ऐसे ही होगा।'' दोनों हाथ जोड़ लिये, माता जी के नेत्र सजल हो उठे। महाराज कहते हैं ''कुछ कहना चाहते हो?'' ''हाँ, महाराज! मेरी प्रार्थना है कि -

*जग महिं बंस राखिवो करीयहि। पुरहु आस इह आप बिचरीयहि॥*

*पृष्ठ - 5524 (श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ)*

वंश तो बचा लो आप, मेरी प्रार्थना है, मेरी आशा पूरी कर दो। आप इस पर विचार कर लो।'' महाराज कहने लगे ''यह तुमने भजन कैसा कर लिया?'' हंस पड़े महाराज -

*श्री जीतो ते सुनि मुसकाए। भूत भविखत तुव लखि पाए॥*

*पृष्ठ - 5524 (श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ)*

कहने लगे ''तेरी वृत्ति दशम द्वार में चली गई है, तुझे सारा भविष्य और बीता हुआ समय सारा दिखाई दे गया पर हैरानी है हमें कि तुमने बच्चे रखने के लिये योग कमाया है या परमपद प्राप्त करने के लिये किया है? यह कैसी माँग कर दी आपने हमारे पास?''

*संतति के हित जोग कमायो। कै परलोक भलो उर भायो॥*

*पृष्ठ - 5524 (श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ)*

परलोक के लिये भजन किया है या बच्चे रखने के लिये?''

*मोह आदि से सकल बिकारा। इन ते चरीयहि बनियो नयारा॥*

*पृष्ठ - 5524 (श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ)*

मोह जो है यह दुखी करता है आदमी को। जब तक मोह में आप फंसी हो, जन्म मरण में आना ही पड़ेगा। इससे आत्मा को अलग करो। आत्मा न मरती है, न कभी पैदा होती है, वह सदा एक रस रहा करती है -

*तै बिप्रीत सगल इह धारी। कयों नहिं लखी अरश सिरदारी॥*

*पृष्ठ - 5524 (श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ)*

उलट बात सोच ली, आने वाला भविष्य उज्जवल पक्ष नहीं देखा कि इन्होंने कहाँ जाना है? दूसरी और उज्जवल पक्ष देखना चाहिये था तुम्हें?'' कहने लगी, ''पातशाह! मेरी उधर सुरत ही नहीं गई क्योंकि सुरत मैंने यहीं रोक ली क्योंकि यह मुझ से सहन न हो सका।'' महाराज कहते हैं ''दूसरी ओर उज्जवल पक्ष भी देखना था, वह भी देख लो -

*धारना - वासा जा के सचखण्ड विच लैणगे,*

*दे के एथे सीस आपणा - 2, 2.*
*मेरे पिआरे, दे के एथे सीस आपणा - 2, 2*
*वासा जा के सचखण्ड विच लैणगे............।*

कहने लगे ''यह मोह तुम्हें कैसे पैदा हो गया?'' तुम्हें दरगाह की सरदारी नहीं दिखाई दी? यह धर्म युद्ध हो रहा है, धर्म के लिए बच्चों के शीश कुर्बान करने हैं। सो तूने तो अर्शों की सरदारी देखनी थी। ***'तैं बिप्रीत सगल इह धारी। कयों नहि लखी अरश सिरदारी।'*** यह पदवी बड़े बड़े योगियों को नहीं मिलती, वह अविनाशी पदवी तेरे पुत्रों को मिल जायेगी -

*सुत समेत जो पद अबिनाशी। तहिं को बनो सदा तुम बासी॥*
*पृष्ठ - 5524 (श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ)*

वह अविनाशी पद, जहाँ पर पहुँच कर फिर वापिस आना ही नहीं, अकाल पुरुष की दरगाह में रहना है, वह क्यों नहीं मांगती? क्यों मोह में फंस कर कहती हो कि अपनी सन्तति रख लो, बच्चों को बचा लो -

*नसवर जगत देखि कयों भूली। जोग धरे आनंद ब्रिति झूली॥*
*पृष्ठ - 5524 (श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ)*

''यह नाशवान जगत है। तुम्हें इस नाम का आनन्द लेना चाहिये था और ऐसी वृत्ति नहीं आने देनी चाहिये थी। यह तो संसार सारा ही नाशवान है।''

*धारना - इथे रिहा न जगत उते कोई, वारी आई उठ जावणा -2, 2*
*मेरे पिआरे वारी आई उठ जावणा - 2, 2*
*इथे रिहा न जगत................।*

*एक शिव भए एक गए एक फेर भए,*
*रामचंद्र क्रिशन के अवतार भी अनेक हैं।*
*ब्रहमा औ बिसन केते बेद औ पुरान केते,*
*सिम्रित समूहन कै हुइ हुइ बितए हैं॥*
*मोनदी मदार केते असुनी कुमार केते,*
*अंसा अवतार केते काल बस भए हैं।*
*पीर औ पिकांबर केते गने न परत एते*
*भूमि ही ते हुइ कै फेर भूमि ही मिलए हैं।*
*अकाल उस्तति, कबित्त पा: 10*

महाराज कहने लगे ''देखो, बात वह करनी चाहिये जो सच्च हो। संसार में रहना झूठ है और यहाँ से चले जाना सच्च है। कोई रहा है इस स्थान पर? बड़े बड़े इस संसार में आये लेकिन कोई भी न रहा। सो आप नाशवान जगत की क्रिया देखकर भूल गये। यह तो संसार ही एक दिन

नहीं रहेगा। आपको अपनी ब्रह्मानन्द वृत्ति से नीचे नहीं उतरना था -

*उचित नहीं इतयादिक कहिबो। तन ते भिंन आप को लहिबो॥*

*पृष्ठ - 5524 (श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ)*

आप आत्म स्वरूप में ही रहो; क्यों अपने आपको देह माना है?'' उस समय माता जी ने नमस्कार की, कहने लगी, ''पातशाह! मैं माँ हूँ। माँ दुख नहीं देख सकती, न बच्चों का, न तुम्हारा, न माता जी का। कितनी तबाही! कितनी बर्बादी! पातशाह! कैसे भागे फिरते हैं! यह मेरे से नहीं देखा जाना, मेरे लिये बहुत कठिन है। आप कृपा करके मुझे आज्ञा दें कि मैं अपना शरीर त्याग दूँ -

*धारना - भारी बिपता इह औखी हो जू देखणी,*
*तन छड्डां देवो आगिआ - 2, 2*
*मेरे साहिबा तन छड्डां देवो आगिआ - 2, 2*
*भारी बिपता इह औखी हो जू देखणी,............।*

*मुझ कौ खुशी करो तन छोरौं। महिद बिघन गल पिखयो न लोरौं।*

*पृष्ठ - 5524 (श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ)*

पातशाह! प्रसन्न होओ मुझ पर, आज्ञा दो, अपना तन त्याग दूँ। इतने विघ्न! इतनी कठिनाईयां! पातशाह! मुझ से नहीं देखे जाते। माँ से नहीं देखा जा सकता यह सभी कुछ। कृपा करो, मुझे आज्ञा दो।'' महाराज कहते हैं ''कोई बात नहीं, आप उस अवस्था में पहुँच चुकी हो; अब तुम्हारा मन करे यहाँ रहो, मन करता हो चले जाओ क्योंकि आप उस स्थान पर पहुँच चुकी हो जहाँ पहुँच कर गुरमुख अपनी मर्ज़ी से शरीर छोड़ सकते हैं।''

सन्त महाराज बाबा अतर सिंह जी रेरू साहिब वाले शरीर त्यागने से तीन दिन पहले बाहर से आये। सेवा करते करते कहते हैं ''चलो भाई चलें।'' वहाँ आ गये, जैलदार बुला लिया, सारे प्रेमी बुला लिए। कहते हैं ''महाराज! हुकम?'' सन्त कहने लगे ''देखो, यह चल्ला (गड्ढा) कितना खराब है, कितना कठिन है - पार करने वालों को इसे - आज ही भरना है शाम तक।'' आप चारपाई बिछा कर बैठ गये। सारे छकड़े लगा दिये और गड्ढा भर दिया। बढ़िया सड़क बना दी। कहते हैं ''ठीक हो गया।'' दूसरे दिन जैलदार को बुलाया और कहने लगे ''तुझे याद है वचन हमारा?'' ''महाराज! कौन सा?'' महाराज कहते हैं ''जब तू हमें होती मरदान से लेकर आया था।'' ''महाराज! याद है।'' कहने लगे, ''क्या?'' महाराज आपने फरमाया था कि जब हम शरीर छोड़ें, तो हमारा शरीर तुम यहीं

लेकर आना – होती मरदान में।'' महाराज कहते हैं, ''देख! किसी को बताना मत। हमने अब शरीर त्याग देना है और तू जाकर रेल का डिब्बा रिजर्व करवा ले क्योंकि इस काम के लिये कई दिन लग जाते हैं।'' उदास हो गया जैलदार। महाराज कहते हैं ''देखना, किसी को बात मत कर देना, यह वचन रहा तेरा हमारा।'' उसके बाद बाहर आकर लेट गये। छोटे महाराज (राड़ा साहिब वाले) भी पास थे, बड़े महारजा भी पास थे। ''महाराज! क्या बात है?'' कहते हैं ''यहाँ से दुखता है थोड़ा सा, धरण पड़ गई।'' बात मुँह से बाहर निकल गई, जाकर कम्पाऊडर को बुला लाये दोराहे से। कहते हैं ''ले यह तो ऐसे ही आ गया, हमने तो हाथ लगाकर ही दूर कर दी; चला जा।'' टाल दिया। दूसरा दिन हुआ। वैसे ही जैसे बैठे हैं, कहने लगे ''ऐसे करो, यह जगह तंग सी लगती है, हमारी चारपाई खुले दालान में बिछा दो।'' चारपाई खुले मैदान में डाल दी गई। फिर कहते हैं ''दरियां बिछा दो बरामदे में – बाहर दूर तक।'' किसी को कुछ भी पता न चले कि क्या कहे जा रहे हैं। इस प्रकार अमृत बेला हो गया, किसी को पता न चला कि दरियां क्यों बिछाई जा रही हैं? थोड़ी देर बाद स्नान किया उठकर। आप एक बजे स्नान किया करते थे। फिर आकर चारपाई पर लेट गये। महाराज जी (सन्त महाराज ईशर सिंह जी) ने पूछा, ''क्या बात है, आज आप लेट गये?'' कहते हैं ''कुछ तकलीफ सी है।'' ''महाराज! सिविल सर्जन को बुलवा लेते हैं?'' कहते हैं ''छोड़ो, सिविल सर्जन की बात नहीं है यह। रहने दो, किसी को नहीं बुलाना।''

छोटे महाराज जी बताया करते हैं कि हम पास ही थे। इतनी देर में थोड़ा सा समय बीता, आप उठकर बैठ गये। पहले चौकड़ी लगाकर सुरत अन्दर को खींच ली फिर लेट गये, दोनों पैर इकट्ठे कर लिये; एक झटका सा लगाया, शरीर में से निकल गये। हमने कहा ''पातशाह! बिना बताये ही छोड़ चले, किसी को जत्थेदार तो मुकर्रर कर दो।'' शोर मच गया, सारी संगत इकट्ठी हो गई। उठकर बैठ गये कहने लगे ''देखो भाई गुरमुखो! हमने गेंद फैंक दी है मैदान में, बेअन्त खिलाड़ी खेलने वाले आए हैं; जो ले जायेगा गोल कर देगा। तुम्हें अपने आप ही पता चल जायेगा, कौन जत्थेदार है? हमारा मुकर्रर करना उचित नहीं है।'' सो ऐसा कहकर फिर लेट गये उसके बाद फिर एक झटका सा लगाया और शरीर छोड़ दिया।

सो महाराज कहने लगे – माता जी को ''आप शरीर त्याग दो।'' उसी समय आप –

*आसन करि बैठी ततकाला।   पृष्ठ - 5525 ( श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ )*

घर महलों में गईं, चौकड़ी मारकर आसन जमा लिया, दासी को समझा दिया कि शोर मत मचाना -

*साधयो पूरब जोग बिसाला।   पृष्ठ - 5525 ( श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ )*

सुरत ऊपर खींच ली, दशम द्वार में ले गई -

*तिस अभयास बल ते खिचि स्वास।*
*दसम द्वार महिं करि तिह बास॥*

*पृष्ठ - 5525 ( श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ )*

दशम द्वार में सांस रोक लिये -

*पाइ जोर ब्रहमरंधर फोरा। गमनी गुरपुरि तन को छोरा॥*

*पृष्ठ - 5525 ( श्री गु. प्र. सू. ग्रन्थ )*

पैर दोनों मिला लिए, झटका मारा और ब्रह्म रूंधर फोड़ कर दशम द्वार के रास्ते तक प्राण निकाल दिये और गुरू धाम, सच खण्ड में पहुँच गई। सो यह गुरमुखों का शरीर त्यागना हुआ करता है -

*धारना - आवे जाइ निसंग, गुरमुख पिआरा, गुरमुख पिआरा - 2, 3*

अब क्योंकि समय इजाज़त नहीं देता। सभी प्रेमी अब गुरू सतोतर में बोलने का कष्ट करो। जो अब तक नहीं बोले वे भी अपनी रसना पवित्र कर लो।

- आनन्द साहिब -

- गुर सतोतर -

- अरदास -